वर्ष 11, अंक 39,अक्तुबर-दिसंबर 2021

मूल्य
₹ 150/-

UGC Care Listed
त्रैमासिक साहित्यिक पत्रिका
ISSN-2321-1504 Nagfani RNI No.UTTHIN/2010/34408

आज़ादी का
अमृत महोत्सव

नागफनी

अस्मिता,चेतना और स्वाभिमान जगाने वाला साहित्य

अतिथि संपादक- प्रो. आर. जयचंद्रन

आगामी अंक की सूचना

UGC CARE LISTED हिन्दी की स्तरीय पत्रिका 'नागफनी' का अंक " हिन्दी साहित्य में अस्मितामूलक-विमर्श" इस मुख्य विषय को लेकर मार्च, 2022 के अंत में प्रकाशित करने का निर्णय सम्पादक मंडल ने लिया है।यह विमर्शों का दौर हैं, ऐसे में विमर्श पर लेखन लाजमी है । सिर्फ हिंदी के विभिन्न विमर्शों की बात करें तो-दलित, नारी,आदिवासी, किन्नर, बाल,विकलांग, किसान, घुमंतू, ओबीसी, वृद्ध, अल्पसंख्यक आदि अनेक विमर्शों का उल्लेख किया जा सकता है। इसी परिप्रेक्ष्य में पुराने विमर्शों से लेकर नव्यतम-अद्यतन लगभग सभी विमर्शों की प्रस्तुति आवश्यक है। इक्कीसवीं सदी का प्रारम्भिक दौर समकालीन हिंदी साहित्य में सर्जनात्मकता और विभिन्न विमर्शों की दृष्टि से बहुत ही उल्लेखनीय और महत्त्वपूर्ण कहा जा सकता है। उक्त अवधि में विविध विमर्शों ने बहस-मुबाहिसे को जहाँ नए तेवर के साथ आगे बढाया,वहीं बाजारवाद, उपभोक्तावाद की संस्कृति ने हिंदी साहित्य में अनेक नवीन अवधारणाओं को लेकर वाद-विवाद,संवाद का मार्ग प्रशस्त किया। उत्तर आधुनिकता, उत्तर औपनिवेशिकता आदि के साथ-साथ संकीर्ण साप्रदायिकता, आभासी विकास, मीडिया एवं अनेक समाज-माध्यमों का गलत उपयोग करके राजनीतिज्ञों द्वारा सामान्य जनता को भ्रमित करना, झूठ एवं जुमलों के माध्यम से जनता को फंसाना जैसे बहुत से ज्वलंत विषय तथा अन्य प्रासंगिक मुद्दे वैश्विक परिप्रेक्ष्य में बदलते घटनाक्रम और विविध परिवर्तनों के कारण हिंदी साहित्य में रचना –आलोचना के केंद्र में रहे हैं। ऐसे महत्त्वपूर्ण पक्षों पर समीक्षात्मक लेखन एवं साहित्यिक संवाद को आगे बढ़ाने में बहुत प्रभावी एवं कारगर माध्यम मानी जाती हैं । 'अस्मितामूलक-विमर्श' एक नवीन विमर्श है। इस विमर्श पर कई विचार धाराओं का प्रभाव देखा जाता है। इस पर अस्तित्वाद, मार्क्सवाद,अम्बेडकर वाद, आधुनिकतावाद, संरचनावाद, उत्तर-संरचनावाद, उत्तर-आधुनिकतावाद, उत्तर-औपनिवेशवाद, नव- मार्क्सवाद या सबाल्टर्न दृष्टि जैसे कई विचार धाराओं एवं सिद्धांतों का प्रभाव है। परन्तु मुख्य रूप से उत्तर- आधुनिकतावाद, उत्तर-औपनिवेशवाद और सबाल्टर्न दृष्टि ही 'अस्मितामूलक-विमर्श' संबंधी अवधारणाओं एवं सिद्धांतों का निर्माण करती है। अतः हिंदी लेखकों, समीक्षकों एवं शोधार्थियों से अनुरोध है कि 'अस्मितामूलक- विमर्श' के साथ ही अन्य विमर्शों को लेकर आलेख भेजने का कष्ट करें। "नागफनी" अस्मिता,चेतना,और स्वाभिमान जगाने वाली त्रैमासिक साहित्यिक पत्रिका है । इस पत्रिका को ISSN-2321-1504 nagfani और RNI No-UTTHIN/2010/34408 नम्बर प्राप्त है। साथ ही यह peer Reviewed Referred journal है। आलेख–nagfani81@gmail.com पर 25 फरवरी 2022 तक भेजने का कष्ट करें। किसी भी तरह की जानकारी के लिए अतिथि संपादक प्रोफेसर दिनेश कुशवाह, मो.(09340730564) हिंदी विभाग, अवधेश प्रताप विश्वविद्यालय,रीवा, प्रोफेसर बलिराम धापसे, मो.(9420996125), डॉ. एन. पी. प्रजापति मो.(9752998467), प्रोफेसर संजय एल. मादार मो. (9945664379) से सम्पर्क करें। शोधालेख यूनि कोड kokila फॉन्ट 14 साइज में तथा एरियल युनिकोड में टाइप करके word और PDF दोनों में भेजने का कष्ट करें। अन्य किसी टाइप फ़ॉन्ट को स्वीकृत नहीं किया जाएगा।

धन्यवाद!!!

UGC Care Listed त्रैमासिक साहित्यिक पत्रिका ISSN-2321-1504 Nagfani RNI No.UTTHIN/2010/34408

संपादक
सपना सोनकर

सह-संपादक
रूपनारायण सोनकर

कार्यकारी संपादक
डॉ. एन. पी. प्रजापति
प्रोफेसर बलिराम धापसे

अतिथि संपादक
प्रोफेसर आर. जयचंद्रन

नागफनी

A Peer Reviewed Referred Journal

(अस्मिता, चेतना और स्वाभिमान जगाने वाला साहित्य)

UGC Care Listed त्रैमासिक साहित्यिक पत्रिका
ISSN-2321-1504 Naagfani RNI No. UTTHIN/2010/34408
वर्ष 11, अंक 39,अक्तुबर-दिसंबर 2021

सलाहकार मंडल (Peer Review Committee)

प्रोफेसर विष्णु सरवदे, हैदराबाद (तेलंगाना)
प्रोफेसर किशोरी लाल रैगर, जोधपुर (राजस्थान)
प्रोफेसर आर.जयचंद्रन तिरूअनंतपुरम (केरल)
प्रोफेसर दिनेश कुशवाह, रीवा (मध्यप्रदेश)
डॉ. एन. एस. परमार, बड़ोदा (गुजरात)
डॉ. दिलीप कुमार मेहरा, बी.बी. नगर (गुजरात)
प्रोफेसर विजय कुमार रोड़े, पुणे (महाराष्ट्र)
प्रोफेसर संजय एल. मादार, धारवाड (कर्नाटक)
प्रोफेसर गोबिन्द बुरसे, औरंगाबाद (महाराष्ट्र)
डॉ. दादासाहेब सालुंके, महाराष्ट्र (औरंगाबाद)
प्रोफेसर अलका गड़करी, औरंगाबाद (महाराष्ट्र)
डॉ. साहिरा बानो बी. बोरगल, हैदराबाद (तेलंगाना)
डॉ. बलविंदर कौर, हैदराबाद (तेलंगाना)
डॉ. उमाकांत हजारिका, शिवसागर, असम

मुख पृष्ठ- सुरेश मौर्या, ग्राफिक डिजाइनर, बैढ़न-सिंगरौली (म.प्र.)

प्रकाशन/मद्रण

प्रकाशक रूपनारायण सोनकर की अनुमति से डॉ. एन. पी. प्रजापति एवं प्रोफेसर बलिराम धापसे द्वारा
नमन प्रकाशन 423/A अंसारी रोड दरियागंज, नई दिल्ली 11002 में प्रकाशन एवं मुद्रण कार्य

संपादकीय / व्यवस्थापकीय कार्यालय

दून व्यू काटेज स्प्रिंग रोड, मसूरी-248179, उत्तराखण्ड दूरभाष: 0135-6457809 मो. 09410778718

शाखा कार्यालय

पी.डब्ल्यू. डी.आर-62 ए, ब्लाक कालोनी बैढ़न, जिला-सिंगरौली म.प्र. 486886, मो. 097529964467

सहयोग राशि-150/- रुपये, वार्षिक सदस्यता शुल्क (संस्था के लिए)-1000, रुपये पंचवार्षिक सदस्यता शुल्क (व्यक्ति के लिए)-2000/- रुपये
पंचवार्षिक संस्था और पुस्तकालयों के लिए 3000/- रूपये, विदेशों में $50 आजीवन व्यक्ति 6000/- रुपये 10000/- रुपये

सदस्यता शुल्क एवं सहयोग राशि-इंडिया पोस्ट पेमेंट बैंक AC83671001382 82 IFSC Code-IPOS0000001,Branch -SIDHI(NIRAT Prasad Prajapati)

नोट:- पत्रिका की किसी भी सामग्री का उपयोग करने से पहले संपादक की अनुमति आवश्यक है। संपादक - संचालक पूर्णतय: अवैतनिक एवं अध्यावसायिक है। **नागफनी'** में प्रकाशित शोध-पत्र एवं लेख, लेखकों के विचार उनके स्वंय के हैं, जिनमें संपादक की सहमति अनिवार्य नहीं। **"नागफनी"** से संबंधित सभी विवादास्पद मामले केवल देहरादून न्यायालय के अधीन होंगे। अंक में प्रकाशित सामग्री के पुनर्प्रकाशन के लिए लिखित अनुमति अनिवार्य है। सारे भुगतान मनीआर्ड बैंक/चेक/ बैंक ट्रांसफर /ई-पेमेन्ट आदि से किये जा सकते हैं। देहरादून से बाहर के चेक में बैंक कमीशन 50/- अतिरिक्त जोड़ दें।

लेख भेजने के लिए Mail ID: nagfani81@gmail.com **Website: http:naagfani.com**

नागफनी

अनुक्रम

पृष्ठ क्रमांक

संपादकीय..... 01

आजादी का अमृत महोत्सव

1. आजादी का अमृत महोत्सव और श्रमिक उद्घाटक : डॉ.बाबासाहेब अम्बेडकर - डॉ.नितीन कुंभार 02-03
2. आजादी के आंदोलन में हिन्दी का योगदान - मार्सेल लूविस मस्करेन्हस 04-05
3. कोयम्बतूर के स्वतंत्रता सेनानी-डॉ.जी शांति 06-07
4. भारत की आजादी और हिन्दी साहित्य : डॉ.बालेन्द्र सिंह यादव 08-13
5. राष्ट्रोत्थान में साहित्य का योगदान-डॉ. आर नागेश 14-15
6. स्वतंत्रता संग्राम और निराला की कविता -डॉ.जस्टी एम्मानुवल 16-17
7. हिंदी उपन्यासों में चित्रित स्वतंत्रता आंदोलन और आदिवासी -डॉ.संजय नाईनवाड 18-21
8. बंगाल नवजागरण का भारत के विभिन्न प्रांतों पर प्रभाव- डॉ.अपराजिता जॉय नंदी 22-25
9. स्वतंत्रता आंदोलन में पत्रकारिता का योगदान-डॉ. रेखा अग्रवाल 26-27
10. राम की शक्तिपूजा-स्वाधीनता के अमृत महोत्सव के संदर्भ में -डॉ. विजय गाडे 28-30
11. भारत के स्वतंत्रता संग्राम में छायावादी कवियों का योगदान - डॉ.वीरिश कुमार 31-32
12. 1857 की क्रान्ति : हाशिए के समाज की स्त्रियों की भूमिका -नित्यानन्द सागर 33-35
13. काका कालेलकर जी की वैचारिक दृष्टि -डॉ.बाबासाहेब माने 36-38
14. 'जिस लाहौर नइ देख्या ओ जम्याइ नइ' नाटक में अभिव्यक्त हिंदू-मुस्लिम एकता- दीपक वरक/ प्रो.वृषाली मांद्रेकर 39-41
15. महिला रचनाकारों के बाल एकांकियों में अभिव्यक्त राष्ट्रीयता-डॉ.शितल गायकवाड 42-43
16. भारतीय साहित्य में संस्कृति एवं लोकजीवन की अभिव्यक्ति-डॉ.नवनाथ गाडेकर 44-45
17. 'गौरी' कहानी में देशभक्ति- डॉ.वसंत माळी 46-47
18. दिनकर के काव्य में राष्ट्रीय भावना का स्वर - डॉ.अन्सा ए. 48-50
19. भारत विभाजन की त्रासदी एवं दलित विमर्श-सुकांत सुमन 51-54
20. आजादी पूर्व भारतीय नारी की दशा और दिशा-डॉ. जयश्री ओ 55-56
21. आचार्य विनोबा भावे के शैक्षणिक विचारों की वर्तमान में प्रासंगिकता-प्रो.मनीषा वर्मा 57-59
22. आधुनिक भारत के निर्माता : डॉ.बाबासाहब अम्बेडकर-डॉ.मनोहर भंडारे 60-62
23. महात्मा गांधी के आर्थिक विचारों की प्रासंगकिता-डॉ.जीतेन्द्र कुमार डेहरिया 63-64
24. राष्ट्रभाषा हिन्दी के विकास में गाँधीजी का योगदान -डॉ.धर्मराज पवार 65-68
25. ऐतिहासिक विचार और स्वतंत्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री-मोनी 69-70

कविता

1. कविताएँ- सार्जेंट अभिमन्य पाण्डेय 'मन्नू' 71-72
2. मुझे कुछ करके जाना है- समीर उपाध्याय 73
3. कविताएँ - लाल देवेन्द्र कुमार श्रीवास्तव 73-77

कहानी **पृष्ठ क्रमांक**

1. नेति-नेति-हरिप्रकाश राठी 78-79
2. नालायक-डॉ.रंजना जायसवाल 80
3. सफर से हमसफर-अंकुरसिंह 81
4. लघुकथा -गिद्ध-श्यामल बिहारी महतो 82

English Discourse

1. Alienation and Identity Crises in the select Novels of R.K.Narayan and Raja Rao, Dr. Anupama Soni 83-86
2. Artand Craftin The Selected Novelsof Nayantara Sahgal:acritique Of Artistic Characterization-p.ramesh/dr.s.veeramani 87-91
3. Tracing The Charismatic Life Of Maulana Abdul Hamid Khan Bhasani: A Forgotten Hero Of Masses -Shahiuz Zaman Ahmed 92-96
4. Decoding The Economic Philosophy Of India Since Independence- Aparna Samudra 97-100
5. Glimpses Of Himalaya Tourism Culture, Literacy &economy(special Reference To Uttarakhand Region) Dr. Hitesh M Dadmal 101-108
6. Influence Of Entrepreneurial Skills And Micro-finance On Performance Of Womenentrepreneurs In Villupuram District--r.senthilkumaran/dr.d.suthamathi 109-115
7. Philip K. Dick's Prophetic Warning-t. Sowmya 116-119
8. Technological Advances In Healthcare Industry – Factors Affecting Human Resource management In Multi- Specialty Hospitals In Tamil Nadu - shirpi M./dr.thirumoorthi P 120-126
09. Proposed Nagalim State : A Challenges To Integrity Of Other North-east States- pabitra Borah 127-129
10. Reading Toni Morrison's The Bluest Eye as a Narrative of Black Consciousness-Dr. Anupam Soni/ Arti Surothia 130-132
11. Emphasized Gender Issues And Inequalities In The Form Of Art In Indian Contemporary Art: A Study- Dr. Binoy Paul 133-135
12. Missing Tribe And Traditional Village Administration System-Dr.Papu Kumar Ngatey 136-140
13. Impact of Covid-19 on Debit Card Driven Transactions in India-Dr. Vinod Kumar Yadav/ Dr.Tade Sangdo 141-145
14. Relevance of Dr.Sarvapalli Radhakrishnan's Educational Ideas in 21st Century-Dr.Biman Ch.Borach 146-150
15. Cyber Security Strategy in India : An Overview -Dr.Prashant Saraf 151-153
16. An Ecocritical Study Of Manipuri Myths in Linthoi Chanu's Wari-Anannya Nath 154-157
17. Insurgent Movement In Assam And Its Outside Support With Special Reference To Bangalesh- Dr.Biman Chandra Das 158-160

सम्पादकीय .....

स्वतंत्रता आंदोलन को अहिंसक बनाए रखने के गांधी के संकल्प के कारण भारत में आजादी की अधिकतर लड़ाई कलम ले लड़ी गई। यह कलम ही थी जिसने जनमानस को सचेत किया। आजादी में कलम के सहारे से लेखकों ने राष्ट्र की एकता एवं भाई चारा बनाये रखने में काफ़ी हद तक महत्त्व पूर्ण भूमिका निभाएँ हैं | जब – जब समाज दिग्भ्रमित होता है , राजनीति पथ भ्रष्ट होती है, और जनसाधारण किंकर्तव्यविमूढ़ की अवस्था में आता है, तब- तब लेखनी के सिपाही उठकर लेखनी के माध्यम से इन सब का मार्गदर्शन करते हैं। भारत का स्वतंत्रता आंदोलन भी इसका अपवाद नहीं है। गुलामी के उस काल में जब सर्वत्र पराभव ही पराभव दिखाई देता था, तब हमारे देश में अनेकों ऐसे क्रांतिकारी और साहित्यकार उत्पन्न हुए, जिन्होंने अपनी पवित्र लेखनी के माध्यम से हमारे समाज का मनोबल और आत्मबल बनाए रखने का सराहनीय कार्य किया । स्वतंत्रता आन्दोलन के इस महायज्ञ में साहित्यकारों ने तत्कालीन समाज में चेतना के ऐसे बीज बोये, जिनके कोंपलों की सुवास से सुवासित वृक्षों ने ऐसी स्थिति पैदा की, जिससे समाज के हर वर्ग को इस आंदोलन में भाग लेना ही पड़ा।गोपालदास व्यास के शब्दों में-"आज़ादी के चरणों में जो जयमाला चढ़ाई जाएगी।वह सुनो, तुम्हारे शीशों के फूलों से गूंथी जाएगी"। यह सच है कि आज जब आजादी का अमृत महोत्सव की की धूम मचती है तो हमें अपने अनेकों महान क्रांतिकारियों और बलिदानियों की स्मृतियां आ घेरती हैं। हमारे चारों ओर उनकी स्मृतियां बहुत बड़ा सवाल खड़ा करता है,और हमसे पूछता है कि आपने हमारे सपनों का भारत बनाने की दिशा में क्या किया ? जब स्वतंत्रता आंदोलन की हमारे देश में लत लगी थी, तब लगभग हर प्रांत के, लगभग हर भाषा- भाषी क्षेत्र के महान साहित्यकारों, कवियों, लेखकों ने अपने – अपने ढंग से अपने- अपने क्षेत्र के लोगों से आजादी के आंदोलन में भाग लेने की उद्घोषणा की। माइकेल मधुसूदन ने बंगाली में, भारतेन्दु हरिशचन्द्र ने हिन्दी में, नर्मद ने गुजराती में, चिपलूणकर ने मराठी में, भारती ने तमिल मेंतथा अन्य अनेक साहित्यकारों ने विभिन्न भाषाओं में राष्ट्रीयता की भावना से परिपूर्ण उत्कृष्ट साहित्य का सृजन किया।

यह ऐसा साहित्य लेखन था जिसे पढ़कर या सुनकर हमारे देश की तत्कालीन युवा पीढ़ी के मन में क्रांति की चेतना जागृत हो जाती थी। उनकी बाजुए फड़कने लगती थीं, और मन राष्ट्र वेदी पर बलि होकर देश के लिए सर्वस्व न्योछावर करने की भावना से ओत प्रोत हो उठता था|स्वतंत्रता के इस आंदोलन में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का नाम अग्रणी है। भारतेंदु हरिश्चंद्र ने तत्कालीन युवा पीढी के भीतर ऐसा उबाल पैदा किया था कि उनके साहित्य को पढ़कर हमारे देश के अधिकांश युवा अंग्रेजी सरकार के अन्याय, प्रतिशोध और अत्याचार के विरुद्ध उठ खड़े हुए थे। उन्हें इस बात का बड़ा क्षोभ था कि अंग्रेज़ भारत की सारी सम्पत्ति लूटकर विदेश ले जा रहे हैं। वे 'भारत दुर्दशा' से अवगत कराते हुए लिखते है-"रोबहु सब मिलि, अबहु भारत भाई,हा! हा! भारत दुर्दशा न देखी जाई।"'अंधेर नगरी चौपट राजा' व्यंग्य के माध्यम से भारतेन्दु जी ने तत्कालीन राजाओं की कार्यशैली पर करारा व्यंग किया था। इसके माध्यम से उन्होंने जनता को बताने का प्रयास किया था कि हमारे वर्तमान शासक घोर स्वार्थी हैं , और जनता के दुख-दर्द से उन्हें कोई लेना देना नहीं है, इसलिए ऐसे स्वार्थी और कर्तव्यविमुख शासकों के विरुद्ध आंदोलन करना देशवासियों का परम धर्म है।

प्रताप नारायण मिश्र, बद्रीनारायण चौधरी, राधाकृष्ण दास, ठाकुर जगमोहन सिंह, पं. अम्बिका दत्त व्यास, बाबू रामकृष्ण वर्मा आदि समस्त साहित्यकारों ने स्वतंत्रता आंदोलन की धधकती हुई ज्वाला को प्रचंड रूप दिया। उन्होंने अपने स्तर से और अपने ढंग से क्रांति की ज्वाला को तो प्रचंड किया ही साथ ही यह बताने में भी संकोच नहीं किया कि अंग्रेजी सरकार का इस देश के प्रति कोई श्रद्धा नहीं है। वे अपने देश के प्रति कर्तव्यबद्ध है , और इस देश के लोगों को वे केवल दास मानते है। उनके विचारों में और उनकी कार्यशैली में कहीं पर भी ऐसा भाव नहीं झलकता कि वे लोकतंत्र में विश्वास रखते हुए भारत वासियों के प्रति थोड़ी-सी भी सहानुभूति रखते हैं ।इन सबकी रचनाओं ने राष्ट्रीयता के विकास में बहुत योगदान दिया। माखन लाल चतुर्वेदी, रामनरेश त्रिपाठी, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' और सुभद्रा कुमारी चौहान ने राष्ट्र प्रेम को ही मुखरित नहीं किया अपितु स्वतंत्रता आंदोलन में भी भाग लिया। माखनलाल चतुर्वेदी ने फूल के माध्यम से अपनी देशभक्ति की भावना को व्यक्त किया

-"चाह नहीं मैं सुरबाला के गहनों में गूंथा जाऊँ
चाह नहीं मैं प्रेमी माला में बिंध प्यारी को ललचाऊँ
मुझे तोड़ लेना ए वनमाली उस पथ पर देना फेंक
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने जिस पथ जाएँ वीर अनेक"

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने "भारत-भारती" में देशप्रेम की भावना को सर्वोपरि मानते हुए आव्हान किया

"जिसको न निज गौरव तथा निज देश का अभिमान है।
वह नर नहीं, नर-पशु निरा है और मृतक समान है।

सुभद्रा कुमारी चौहान की "झांसी की रानी" कविता को कौन भूल सकता है, जिसने अंग्रेजों की चूलें हिला कर रख दी। वीर सैनिकों में देशप्रेम का अगाध संचार कर जोश भरने वाली अनूठी कृति आज भी प्रासंगिक है-

"सिंहासन हिल उठे, राजवंशों ने भृकुटी तानी थी,
बूढ़े भारत में भी आई, फिर से नई जवानी थी,
गुमी हुई आजादी की, कीमत सबने पहिचानी थी,
दूर फिरंगी को करने की सबने मन में ठानी थी,
चमक उठी सन् सत्तावन में वह तनवार पुरानी थी,
बुन्देले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी की रानी थी।"

इसी श्रृंखला में शिवमंगल सिंह 'सुमन', रामनरेश त्रिपाठी, रामधारी सिंह 'दिनकर' राधाचरण गोस्वामी, बद्रीनारायण चौधरी प्रेमघन, राधाकृष्ण दास, श्रीधर पाठक, माधव प्रसाद शुक्ल, नाथूराम शर्मा शंकर, गया प्रसाद शुक्ल स्नेही (त्रिशूल), माखनलाल चतुर्वेदी, सियाराम शरण गुप्त, अज्ञेय जैसे अगणित कवियों के साथ ही बंकिम चन्द्र चटर्जी का देशप्रेम से ओत-प्रोत "वन्दे मातरम्" गीत-

वन्दे मातरम्!
सुजलां सुफलां मलयज शीतलां शस्य श्यामलां मातरम्! वन्दे मातरम्!
शुभ्र ज्योत्स्ना-पुलकित-यामिनीम् फुल्ल-कुसुमित-दुरमदल शोभिनीम्
सुहासिनीं सुमधुर भाषिणीम् सुखदां वरदां मातरत्। वन्दे मातरम्

……जो आज हमारा राष्ट्रीय गीत है, जिसकी श्रद्धा, भक्ति व स्वाभिमान की प्रेरणा से लाखों युवक हंसते-हंसते देश की खातिर फांसी के फंदे पर झूल गये। बंकिमचन्द्र ने 'आनंद मठ' व 'वंदेमातरम्' की रचना की। वंदे मातरम गीत ने हमारे सभी देशवासियों को एक सूत्र में पिरो कर उस समय ऐसा रोमांस खड़ा किया था कि अंग्रेज सरकार इस शब्द मात्र से ही कांपने लगे थे जहाँ पर भी वंदे मातरम का गुण सुनाई दे जाता था वही अंग्रेज सरकार अनुमान लगा लेती थी यहाँ पर निश्चय ही क्रांति की आग दहक रही है। बंकिम बाबू की आनंदमठ ने बंगाल में क्रांतिकारी राष्ट्रवाद की पाठ्य पुस्तक का कार्य किया। वहीं हमारे राष्ट्रगान "जनगण मन अधिनायक" के रचयिता रवीन्द्र नाथ ठाकुर का योगदान भी अद्वितीय व अविस्मरणीय है। आजादी के अमृत महोत्सव के परिप्रेक्ष्य में स्वाधीनता संग्राम में हिंदी साहित्य एवं अन्य विमर्शों पर केन्द्रित नागफनी का यह विशेषांक अत्यंत महत्वपूर्ण है इस अंक में ऐसे कई लेख शामिल है जो आजादी का अमतृ महोत्सव ,साहित्यिक विमर्श ,दलित विमर्श ,स्त्री विमर्श ,आदिवासी विमर्श ,कविता ,कहानी ,विविध विमर्श एवं अंग्रेजी डिस्कोर्स पर आधारित हैं | प्रस्तुत अंक प्रबुद्ध पाठकों के आस्वादन के लिए सहर्ष .....

प्रो.आर.जयचंद्रन

ISSN-2321-1504 Nagfani No. UTTHIN/20210/34408

आज़ादी का अमृत महोत्सव और श्रमिक उद्धारक: डॉ बाबासाहेब अम्बेडकर

-डॉ .नितीन कुंभार
सहायक प्राध्यापक हिंदी,
कला ,वाणिज्य एवं विज्ञान महाविद्यालय,
किल्ले –धारुर जि .बीड (महाराष्ट्र)

प्रस्तावना : गुलामी की बेड़ियों से देश को स्वतंत्र कराने की लड़ाई कब शुरू हुई बताना कठिन है, लेकिन गोस्वामी तुलसीदास ने जब 'पराधीन सपनेहुं सुख नाहीं'का उद् घोष किया तो उनके मानस में देश को स्वतंत्र कराने की ही कामना रही होगी। उन जैसे संतों ने ही हमारे अंदर स्वाभिमान की चिंगारी पैदा की, जो आगे चलकर स्वतंत्रता व स्वराज की मशाल बनकर उभरी और 1947 में हमने आजादी प्राप्त की। स्वाभिमान और स्वतंत्रता के बाद अब देश स्वावलंबन के रास्ते पर निरंतर आगे बढ़ रहा है। स्वतंत्रता की 75वीं वर्षगांठ पर शुरू हुआ 'आजादी का अमृत महोत्सव' स्वावलंबन की दिशा में उठाया गया एक महत्वपूर्ण कदम है, जिसे भारत सरकार ने 15 अगस्त 2023 तक मनाने का निर्णय किया है।

भारत एक विलक्षण विविधता संपन्न बहुल संस्कृतियों का देश है इस देश में विभिन्न दर्शन व चिंतन अनवरत रूप से पल्लवित पुष्पित होते रहे अगर हम व्यापक रूप से विचार करें तो पाते हैं कि भारत में दो प्रकार की संस्कृति या पल्लवित होती रही है एक संस्कृति जो श्रम को महत्व देती है श्रमण संस्कृति से जानी जाती है जिस के प्रवर्तक भगवान बुद्ध थे इस संस्कृति की व्यवस्था बनाए रखने के लिए कई साधु-संतों महापुरुषों ने अतुलनीय योगदान दिया है। 19वीं शताब्दी के अंतिम दशक में एक और मानव का जन्म हुआ था वे थे भीमराव रामजी सकपाल। जो आगे जाकर डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर बने। उन्होनें कोटि-कोटि लोगों के दुखों के प्राण करने व मूल लोगों का नेतृत्व करने के कारण वे दलित निर्धन और श्रमिक वर्ग के मुक्तिदाता हुए उनका व्यक्तित्व श्रम कल्याण वर्तमान भारत का संपूर्ण श्रमिक वर्ग कानूनी है उन्होंने श्रम कल्याण पृष्ठभूमि तैयार की, श्रम सुरक्षा व श्रम कल्याण के लिए कानून पारित करवाए और श्रमिक आंदोलन को एक नई दिशा दी यहां पर इन सभी पर विस्तृत प्रकाश डालना समीचीन नहीं होगा परंतु श्रमिकों के श्रम कल्याण के बारे में सामान्य जानकारी से सरोकार करें यही इस लेख में किया गया है आजादी के 70 साल बाद भी श्रमिक वर्ग आर्थिक रूप से कमजोर सामाजिक रूप से लाचार है श्रमिक वर्ग की सुध नहीं ली जा रही है। डॉ.आंबेडकर तथाकथित अछूत हिंदू परिवार में जन्मे थे उन्होंने अपनी बाल्यावस्था में मजदूरों के टिफिन पहुंचाने का कार्य किया मुंबई में मजदूर मोहल्ले में रहे और विश्व के तीनों महाद्वीपों के प्रसिद्ध विश्वविद्यालय में ऊंची से ऊंची डिग्रियां प्राप्त की विश्व की प्रसिद्ध लाइब्रेरी में जहां कार्ल मार्क्स ने भी अध्ययन किया अपनी ज्ञान पिपासा को शांत किया था एक और उन पर भारतीय प्रवेश का प्रभाव था वहीं उन पर प्रगतिवादी प्रयोजन मूलक पाश्चात्य प्रभाव भी थाइसको हम कह सकते हैं कि उन पर्यावरणकारों का विशेष प्रभाव पड़ा अपने अध्ययन में उन्होंने वस्तुनिष्ठ वैज्ञानिक सोच का विकास किया वह इतिहास की प्रवृत्ति का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया आर्थिक क्रियाओं के विश्लेषण में उनकी सोच जॉन डीवी के प्रकार्यवाद और कार्ल मार्क्स के द्वंदात्मक भौतिकवाद से निश्चित रूप से प्रभावित रही है बाबासाहेब आंबेडकर के श्रमिक वर्ग के उत्थान से जुड़े अनेक पहलूओं को भारतीय इतिहासकारों और मजदूर वर्ग के समर्थकों ने नज़रंदाज़ किया है। जबकि आंबेडकर के कई प्रयास मजदूर आंदोलन और श्रमिक वर्ग के उत्थान हेतु प्रेरणा एवं मिसाल हैं।

डॉ .बाबासाहेबआंबेडकर के ऐसे ही कुछ प्रयासों पर नज़र डालते हैं –

1. बाबासाहेब वाइसरॉय के कार्यकारी परिषद के श्रम सदस्य थे। उन्हींड की वजह से फैक्ट्रियों में मजदूरों के 12 से 14 घंटे काम करने के नियम को बदल कर 8 घंटे किया गया था।

2. बाबासाहेब ने 1936 में श्रमिक वर्ग के अधिकार और उत्थान हेतु 'इंडिपेन्डेंट लेबर पार्टी' की स्थापना की। इस पार्टी का घोषणा पत्र मजदूरों , किसानों , अनुसूचित जातियों और निम्न मध्य वर्ग के अधिकारों की हिमायत करने वाला घोषणापत्र था।

3.बाबासाहेब ने 1946 में श्रम सदस्य की हैसियत से केंन्द्रीय असेम्बली में न्यूनतम मजदूरी निर्धारण सम्बन्धी एक बिल पेश किया जो 1948 में जाकर 'न्यूनतम मजदूरी कानून' बना।

4. बाबासाहेब ने ट्रेड डिस्प्यूट एक्ट में सशोधन करके सभी यूनियनों को मान्यता देने की आवश्यकता पर जोर दिया। 1946 में उन्होंने लेबर ब्यूरो की स्थापना भी की।

5.बाबासाहेब पहले व्यक्ति थे जिन्होंने मजदूरों के हड़ताल करने के अधिकार को स्वतंत्रता का अधिकार माना और कहा कि मजदूरों को हड़ताल का अधिकार न देने का अर्थ है मजदूरों से उनकी इच्छा के विरुद्ध काम लेना और उन्हें गुलाम बना देना।

6. 1938 में जब बम्बई प्रांत की सरकार मजदूरों के हड़ताल के अधिकार के विरूद्ध ट्रेड डिस्प्यूट बिल पास करना चाह रही थी तब बाबासाहेब ने खुलकर इसका विरोध किया ।बाबासाहब ट्रेड यूनियन के प्रबल समर्थक थे। वह भारत में ट्रेड यूनियन को बेहद जरूरी मानते थे। वह यह भी मानते थे कि भारत में ट्रेड यूनियन अपना मुख्य उद्देश्य खो चुका है। उनके अनुसार जब तक ट्रेड यूनियन सरकार पर कब्जा करने को अपना लक्ष्य नहीं बनाती तब तक वह मज़दूरों का भला कर पाने में अक्षम रहेंगी और नेताओं की झगड़ेबाजी का अड्डा बनी रहेंगी ।बाबा साहेब का मानना था कि भारत में मजदूरों के दो बड़े दुश्मन हैं – पहला ब्राह्मणवाद और दूसरा पूंजीवाद। देश के श्रमिक वर्ग के उत्थान के लिए दोनों का खात्मा जरूरी है।

7.बाबा साहेब का मानना था कि वर्णव्यवस्था न सिर्फ श्रम का विभाजन करती है बल्कि श्रमिकों का भी विभाजन करती है। वह श्रमिकों की एकजुटता और उनके उत्थान के लिए इस व्यवस्था का खात्मा जरूरी मानते थे।

8. बहुत ही कम लोग इस बात को जानते हैं कि बाबा साहेब भारत में सफाई कामगारों के संगठित आंदोलन के जनक भी थे। उन्होंने बम्बई और दिल्ली में सफाई कर्मचारियों के कई संगठन स्थापित किए। बम्बई म्युनिसिपल कामगार यूनियन की स्थापना बाबा साहब ने ही की थी। इन तमाम कामों और प्रयासों के कर्ता डॉ .बाबासाहेबआंबेडकर को कहा जाता है। मज़दूर दिवस को आज भी एक खास विचारधारा से ही जोड़कर देखा जाता है। यही वजह है कि भारत में मज़दूर दिवस के मायने समय के साथ सीमित हो चुके हैं। आज जरूरी है कि किसी खास विचारधारा से प्रेरित होकर मज़दूर दिवस को देखने की बजाय यह देखा जाय कि भारत में मज़दूरों का वास्तविक हितैषी कौन था। वह कौन था जिसने न सिर्फ उनके हक की बात की बल्कि उसके लिए ठोस काम भी किया। इस मायने में आंबेडकर को कोई चाह कर भी नज़रंदाज़ नहीं कर सकता है।

डॉ .बाबासाहब आंबेडकर का श्रमिक वर्ग को राजनीतिक सत्ता में हिस्सेदारी का संदेश

डॉ .बाबासाहब आंबेडकर न केवल महान कानूनविद, प्रख्यात समाज शास्त्री एवं अर्थशास्त्री ही थे वरन वे दलित वर्ग के साथ-साथ श्रमिक वर्ग के भी उद्धारक थे। वे स्वयं

एक मजदूर नेता भी थे। अनेक सालों तक वे मजदूरों की बस्ती में रहे थे। इसलिये उन्हें श्रमिकों की समस्याओं की पूर्ण जानकारी थी। साथ ही वे स्वयं एक माने हुए अर्थशास्त्री होने के कारण उन स्थितियों के सुलझाने के तरीके भी जानते थे। इसी लिये उनके द्वारा सन 1942 से 1946 तक वायसराय की कार्यकारिणी में श्रम मंत्री के समय में श्रमिकों के लिये जो कानून बने और जो सुधार किये गये वे बहुत ही महत्वपूर्ण एवं मूलभूत स्वरूप के हैं। सन 1942 में जब बाबासाहेब वायसराय की कार्यकारिणी समिति के सदस्य बने थे तो उन के पास श्रम विभाग था जिस में श्रम, श्रम कानून, कोयले की खदानें, प्रकाशन एवं लोक निर्माण विभाग थे। डॉ .बाबासाहब आंबेडकर न केवल महान कानूनविद, प्रख्यात समाज शास्त्री एवं अर्थशास्त्री ही थे वरन वे दलित वर्ग के साथ-साथ श्रमिक वर्ग के भी उद्धारक थे। वे स्वयं एक मजदूर नेता भी थे। की श्रमिक वर्ग के अधिकारों एवं कल्याण के प्रति चिन्ता उन शब्दों से परिलक्षित होती है जो उन्होंने 9 सितम्बर, 1943 को प्लेनरी, लेबर परिषद के सामने उद्योगीकरण पर भाषण देते हुए कहे थे,"पूंजीवादी संसदीय प्रजातंत्र व्यवस्था में दो बातें अवश्य होती हैं। जो काम करते हैं उन्हें गरीबी से रहना पड़ता है और जो काम नही करते उनके पास अथाह दौलत जमा हो जाती है। एक ओर राजनीतिक समता और दूसरी ओर आर्थिक विषमता। जब तक मजदूरों को रोटी कपड़ा और मकान, निरोगी जीवन नहीं मिलता एवं विशेष रुप से जब तक वे सम्मान के साथ अपना जीवन यापन नहीं कर सकते, तब तक स्वाधीनता कोई मायने नहीं रखती। हर मजदूर को सुरक्षा और राष्ट्रीय सम्पत्ति में सहभागी होने का आश्वासन मिलना आवश्यक है।" उनका ध्यान इस बात पर था कि श्रम का मूल्य बढ़े।

इसके अतिरिक्त बाबासाहब ने दिसम्बर 1945 के प्रथम सप्ताह में श्रम अधिकारियों की एक विभागीय बैठक जो बम्बई सचिवालय में सम्पन्न हुई थी, का उदघाटन करते हुए कहा,"कि औद्योगिक झगड़े टालने के लिये तीन बातें आवश्यक है:- (1) समुचित संगठन, (2) कानून में आवश्यक सुधार और (3) श्रमिकों के न्यूनतम वेतन का निर्धारण। औद्योगिक शांति सत्ता के बल पर नहीं वरन न्याय नीति के तत्वों पर आधारित होनी चाहिये। श्रमिकों को अपने कर्तव्यों की पहचान होनी चाहिए. मालिकों को भी मजदूरों को उचित वेतन देना चाहिये। साथ ही, सरकार और श्रमिक समाज को भी अपने आपसी संबंध सौहार्दपूर्ण बनाए रखने की लगन से कोशिश करनी चाहिए."

डॉ .बाबासाहेब काफी समय तक मजदूरों की बस्ती में रहे थे। अतः वे मजदूरों की समस्याओं से पूरी तरह परिचित थे। अतः श्रम मंत्री के रूप में उन्होंने मजदूरों के कल्याण के लिए बहुत से कानून बनाये जिन में प्रमुख इंडियन ट्रेड यूनियन एक्ट, ईएसआईएक्ट, औद्योगिक विवाद अधिनियम, मुयावज़ा, काम के 8 घंटे तथा प्रसूतिलाभ आदि प्रमुख हैं ।अंग्रेजों के विरोध के बावजूद भी उन्होंने महिलायों के गहरी खदानों में काम करने पर प्रतिबंध लगाया। वे अन्तराष्ट्रीय श्रम संगठन की सिफारिशों पर दृढ़ता से अमल करने की कोशिश कर रहे थे। जो अधिकार एवं सुविधावाएं अन्य देशों में बहुत मुशिकल से मजदूरों ने प्राप्त कीं। डा. आंबेडकर ने अपने श्रम मंत्री काल में कानून बना कर मजदूरों को प्रदान कर दीं. वास्तव में वर्तमान में जितने भी श्रम कानून हैं उनमें से अधिकतर डॉ.बाबासाहेब के ही बनाये हुए हैं जिस के लिए भारत का मजदूर वर्ग उनका सदैव ऋणी रहेगा।

भूमंडलीकरण और श्रमिक

वर्तमान में नई आर्थिक नीति के अंतर्गत भूमंडलीकरण और कारपोरेटीकरण के दौर में पूरी दुनियां में श्रम कानूनों को शिथिल किया जा रहा है. हमारे देश में भी सरकार ने विदेशी निवेश को आकर्षित करने के लिए बहुत सारे श्रम कानूनों को शिथिल/रद्द कर दिया है। श्रम के घंटे बढाये जा रहे हैं । वेतन को उत्पादन से जोड़ा जा रहा है. मजदूरों की नियमित नियुक्तियों के स्थान पर ठेका व्यवस्था लागू की जा रही है जो काफी हद तक पहले ही लागू हो चुकी है । सरकार ने 44 अलग अलग कानूनों को ख़त्म करके इसे केवल 4 में ही संहिताबद्ध कर दिया गया है। इससे मजदूरों को श्रम कानूनों से मिलने वाले अधिकार एवं संरक्षण बहुत हद तक सीमित हो जायेंगे।

कोरोना और श्रमिक

वर्तमान कोरोना संकट के दौरान मनमाने ढंग से तथा बिना किसी विचार विमर्श एवं योजना के आकस्मिक लागू किये गए लाकडाउन ने मजदूरों की गरीबी एवं नाज़ुक स्थिति को पूरी तरह से नंगा कर दिया है. इसके दौरान कितने मजदूर भुखमरी का शिकार हुए हैं और कितने जो पैदल ही अपने घरों के लिए निकल पड़े थे रास्ते में मर गए, भूखे पेट रहना पड़ा और उस पर पुलिस की बर्बरता सहनी पड़ी। इस दौरान सरकार ने न तो खाने पीने का उचित प्रबंध किया और न ही उन्हें उचित आर्थिक सहायता ही दी. तथाकथित क्वारनटीन कैम्प वास्तव में यातनागृह साबित हुए हैं. यह भी विचारणीय है कि जो प्रवासी मजदूर अपने गांव वापस लौटेंगें और जो मजदूर अभी वहां पर हैं उनके रोजगार का क्या होगा? उनकी आजीविका कैसे चलेगी, इसकी कोई योजना सरकार के पास नहीं है। आप जानते ही हैं कि मजदूरों के ऊपर तो पहले से ही हमले हो रहे थे, जिन्हें कोरोना महामारी के इस संकटकाल ने और भी बढ़ा दिया है। कुल मिलाकर कहा जाए तो मौजूदा आर्थिक संकट बेहद गहरा है जो लगातार जारी आर्थिक-औद्योगिक नीतियों की देन है।

मजदूर वर्ग को अपने अधिकारों पर लड़ते हुए सरकार को बाध्य करना होगा कि वह जन कल्याण पर खर्च बढ़ाये। अर्थव्यवस्था का पुनर्गठन करके सार्वजनिक चिकित्सा, शिक्षा को मजबूत करे और लोगों की आजीविका को सुनिश्चित करे. तभी वास्तव में कोरोना महामारी जैसी संकटकालीन परिस्थितियों का मुकाबला किया जा सकता है । उसे किसानों समेत समाज के उन सभी उत्पीड़ित को अपनी इस जन राजनीति के पक्ष में गोलबंद करना होगा। अतःडॉ बाबासाहेबआंबेडकर का श्रमिक वर्ग को राजनीतिक सत्ता में हिस्सेदारी प्राप्त करने का सन्देश और भी प्रासंगिक हो जाता है।

निष्कर्ष :

डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर नए भारत के निर्माण में मजदूरों की महती भूमिका को स्वीकार करते थे। उनका मानना था कि भारत को स्वराज्य मिल जाना ही काफी नहीं है बल्कि यह स्वराज्य शोषितों, मजदूरों और पिछड़ों को मिलना चाहिए। इसके लिए मजदूरों को अपनी भूमिका निभानी होगी।

संदर्भ:

1.सामजिक परिवर्तन के युग पुरुष – डॉ आंबेडकर –डॉ मीता जमाल ,डॉ मीना पुरवार आशा प्रकाशन ,कानपुर पृ 128

2.वही पृ -132

3.वही पृ -135

****

आजादी के आंदोलन में हिन्दी का योगदान

-मार्सेल लूविस मस्करेन्हस
सहायक प्राध्यापक, हिन्दी,
दक्षिण कन्नड, कर्नाटक

प्रसन्नता की बात है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद विश्व में रहने वाला हर भारतीय नागरिक आज आजादी का अमृत महोत्सव वर्ष मना रहा है। कितनी खुशी की बात है कि आज भारत उद्योग, व्यापार, कृषि, शिक्षा जैसे अनेक क्षेत्रों में विकास करते हुए आर्थिक रूप से संपन्न होने जा रहा है। हमारी खुशी इतना होकर रुकती भी नहीं है क्योंकि आज भारत ने विश्व के अनेक देशों को कोरोनावायरस के विरोध में प्रतिरोधशक्ति बढ़ाने के लिए आवश्यक दवाइयाँ तथा वैक्सीन दी है। यद्यपि आज भारत विकास की ओर कदम बढ़ा रहा है फिर भी हम अपने अतीत को भूल नहीं सकते। भारत माता के पैरों में गुलामी की बेड़ियाँ पड़ी हुई थीं और हमारे पूर्वजों ने तन, मन, धन का विचार न करते हुए भारत को स्वतंत्र करने का प्रयास किया। इसमें कई स्वतंत्रता सेनानियों के साथ-साथ विभिन्न भाषा भाषी साहित्यकार भी थे। साहित्यकार समाज की उन्नति चाहते हैं तथा समाज को हर तरह से संपन्न देखना चाहते हैं। परंतु 1947 के पूर्व भारत पर अंग्रेजों का राज था। अंग्रेजों से पहले भी भारत पर अनेक देशों ने राज किया था। परंतु आधुनिक काल में शिक्षा के बढ़ते प्रचार-प्रसार के कारण भारतीय नागरिकों की अस्मिता जागृत हो गई और अंग्रेजों के शोषण के प्रति जागृति निर्माण होती रही और समस्त भारतवासियों ने भारत को स्वतंत्र करने का निर्णय किया, जिसे हम स्वतंत्रता संग्राम या स्वतंत्रता आंदोलन आदि नाम से जानते हैं।

इस स्वतंत्रता संग्राम में स्वतंत्रता सेनानियों के साथ-साथ कई हिन्दी साहित्यकारों ने भी अपूर्व योगदान दिया है। एक हाथ में झंडा तथा दूसरे हाथ में कलम धारण करते हुए मातृभूमि तथा मां भारती की सेवा करने वाले कई हिन्दी रचनाकारों ने भारतीय नागरिकों में चेतना निर्माण करने का काम किया है। इसमें कई हिन्दी साहित्यकारों के नाम हम सम्मान के साथ ले सकते हैं। रामवृक्ष बेनीपुरी, सुभद्रा कुमारी चौहान, मुंशी प्रेमचंद आदि। तत्कालीन समय में अनेक हिंदी पत्रिकाओं ने देश को स्वतंत्रता दिलाने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। महावीर प्रसाद द्विवेदी द्वारा संपादित सरस्वती पत्रिका महत्त्वपूर्ण मानी जाती है। इस पत्रिका के साथ साथ अन्य कई महत्त्वपूर्ण पत्रिकाओं में कवियों तथा रचनाकारों ने भारतीय नागरिकों में चेतना निर्माण की है।

नमक सत्याग्रह में तत्कालीन समय में पटना और उसके आसपास अंग्रेजों के खिलाफ बने माहौल में राष्ट्रीय भावना पराकाष्ठा पर पहुंची हुई थी। सभी नेता स्वाधीनता प्राप्ति के लिए हर तरह का कष्ट सहन करने के लिए तैयार थे। इसमें रामवृक्ष बेनीपुरी अपनी बाल्यावस्था में भी योगदान देते रहें। रामवृक्ष बेनीपुरी बालक थे, उन पर कोई शक नहीं कर सकते थे। ऐसी अवस्था में उन्होंने सीआईडी इंस्पेक्टर को चकमा देते हुए राष्ट्र की सेवा की थी। बाद में उन्हें गिरफ्तार भी किया गया था फिर भी लेखक ने अपने राष्ट्रीय काम में बाधा नहीं आने दिया।

सुभद्रा कुमारी चौहान का भी स्वाधीनता संग्राम में महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। स्वाधीनता संग्राम में भाग लेने के कारण उन्हें कई बार जेल की सजा हुई। उनकी 'झांसी की रानी' कविता एक ओर आम जनता में खूब ख्याति प्राप्त की थी तो दूसरी ओर अंग्रेजों के विरोध में भारतीय जनमानस में ऊर्ध्वचेतना निर्माण करने का काम इस कविता ने किया था। कवयित्री कहती हैं-

"सिंहासन हिल उठे, राजवंशों ने भृकुटी तानी थी,
बूढ़े भारत में भी आयी फिर से नयी जवानी थी,
गुमी हुई आज़ादी की क़ीमत सबने पहचानी थी,
दूर फिरंगी को करने की सबने मन में ठानी थी,
चमक उठी सन् सत्तावन में वह तलवार पुरानी थी।
बुंदेले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी।
ख़ूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी।।"

स्वतंत्रता संग्राम में रामकुमार वर्मा का योगदान भी महत्त्वपूर्ण रहा है। सन 1921 की बात है। असहयोग आंदोलन में महात्मा गांधी जी का आदेश था कि विदेशी सरकार से कोई सहयोग ना करें। तत्कालीन समय में वकील लोग भी अपनी वकालत छोड़ रहे थे और छोटे बालक स्कूलों में जाना बंद कर रहे थे। डॉ रामकुमार वर्मा नरसिंहपुर क्रिश्चियन हाई स्कूल में नौवीं कक्षा में पढ़ते थे। उनके पिता अंग्रेजों के यहाँ नौकरी करते थे। फिर भी रामकुमार वर्मा ने अपने हाथ में तिरंगा लेते हुए प्रभात फेरी में जाना तय किया इतना ही नहीं उन्होंने देश सेवा पर बाल्यावस्था में ही कविता लिखी थी जिस पर उन्हें पुरस्कार भी मिला था –

"जिस भारत की धूल लगी है मेरे तन में।
क्या मैं उसको कभी भूल सकता हूँ जीवन में?
चाहे घर में रहूँ अथवा मैं वन में।
पर मेरा मन लगा हुआ है इसी वतन में।
सेवा करना देश की बस मेरा उद्देश्य है।
मैं भारत का हूँ सदा, भारत मेरा देश है।।"

इन पंक्तियों के साथ कवि ने स्वतंत्रता संग्राम में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया था। हिन्दी साहित्य में मुंशी प्रेमचंद को कौन नहीं जानते हैं! 'सोज़े वतन'

नाम से ही मालूम होता है, इसमें देशप्रेम और देश की जनता के दर्द को रचनाकार ने प्रस्तुत किया। अंग्रेज शासकों को इस संग्रह में बगावत की झलक मालूम हुई। इस समय प्रेमचंद नवाबराय के नाम से लिखा करते थे। लिहाजा नवाबराय की खोज शुरु हुई। नवाबराय पकड़ लिए गए और शासक के सामने बुलाया गया। उस दिन उनके सामने ही उनकी उस कृति महात्मा गांधी के असहयोग आंदोलन में कूद पड़े। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के सक्रिय सेनानी के रूप में उन्हें 1930 ई. से 1942 ई. तक का समय जेल में ही व्यतीत करना पड़ा। इसी बीच वे पत्रकारिता एवं साहित्य-सर्जना में भी जुड़े रहे। पत्रकारिता के माध्यम से भी उन्होंने भारतीय जनमानस में अंग्रेजों के विरुद्ध आवाज उठाने का काम किया था।

भारतेंदु हरिश्चंद्र एक लेखक थे, पत्रकार थे और इसके अतिरिक्त समाज के दैनिक जीवन में उनकी काफी दिलचस्पी थी। तत्कालीन समय में डिबेटिंग क्लब और यंग मेंस एसोसिएशन खोलकर उन्होंने मूक हुए देश को वाणी और स्फूर्ति देने का सराहनीय कदम उठाया था । इतना ही नहीं दवाखाना खोलते समय उनके मन में देश की गरीब जनता के प्रति वैसा ही प्रेम था जैसा विद्यार्थियों के प्रति था । वे अपने घर में विद्यालय शुरू करते हुए भारतीय नागरिकों को अंग्रेजों द्वारा किए जा रहे शोषण से अवगत कराना चाहते थे। उन्होंने अपना पूरा जीवन भारत माता तथा हिंदी की सेवा करने में बिताया था । अंग्रेजों के विरुद्ध आवाज उठाते हुए वे लिखते थे ।

उनकी कविता में राजभक्ति , शासन की निंदा तथा देश प्रेम का समन्वय है। उन्होंने छल और छद्म से भरी अंग्रेजों की राजनीति का भंडाफोड़ करते हुए जनमानस में जागृति की। अंग्रेजों के कुशासन का यथार्थ चित्रण करते हुए कहा है –

"भीतर ही भीतर सब रस चूसे
हंसि के तन मन धन चूसे
जाहिर बातन में अति तेज
क्यों सखि सज्जन नहिं अंग्रेज। "

यहाँ तक कि भारतेंदु जी ने 'भारत दुर्दशा' नाटक में भारत के गौरव का वर्णन करते हुए " भारत किरन जगत उजियारा "कहा है। भारतीयों की श्रेष्ठता सिद्ध करने के लिए पूर्वजों का स्मरण करते हुए वे हमें याद दिलाते हैं कि हम उन्हीं वीरों की संतान हैं।

राम प्रसाद बिस्मिल को कौन नहीं जानता । वे एक कवि, शायर, अनुवादक, बहुभाषाभाषी, इतिहासकार व साहित्यकार भी थे। बिस्मिल उनका उर्दू उपनाम था जिसका हिन्दी में अर्थ होता है आत्मिक रूप से आहत। बिस्मिल के अतिरिक्त वे राम और अज्ञात के नाम से भी लेख व कवितायें लिखते थे। उन्होंने सन् 1916 में 19 वर्ष की आयु में क्रान्तिकारी मार्ग में कदम रखा था। 11 वर्ष के क्रान्तिकारी जीवन में उन्होंने कई पुस्तकें लिखीं और स्वयं ही उन्हें प्रकाशित किया। उन पुस्तकों को बेचकर जो पैसा मिला उससे उन्होंने हथियार खरीदे और उन हथियारों का उपयोग ब्रिटिश प्रशासन का विरोध करने के लिए किया। कई पुस्तकें उनके जीवन काल में प्रकाशित हुईं, जिनमें से अधिकतर सरकार द्वारा ज़ब्त कर ली गईं।

उन्हें तत्कालीन संयुक्त प्रांत आगरा व अवध की लखनऊ सेंट्रल जेल की 11 नंबर बैरक में रखा गया था। इसी जेल में उनके दल के अन्य साथियों को एक साथ रखकर उन सभी पर ब्रिटिश राज के विरुद्ध साजिश रचने का ऐतिहासिक मुकदमा चलाया गया था। वे अंग्रेजों से डरने वाले नहीं थे। उनकी मातृभूमि के प्रति ये पंक्तियाँ देख सकते हैं-

हे मातृभूमि! तेरे चरणों में शीश नवाऊं
मैं भक्ति भेंट अपनी तेरी शरण में लाऊं।।
माथे पर तू हो चंदन, छाती पर तू हो माला
जिह्वा पर गीत तू हो मेरा, तेरा ही नाम गाऊँ।।

इस तरह स्वतंत्रता संग्राम में कई भारतीय कवियों ने मातृभूमि का गान करते हुए तन-मन-धन का त्याग किया है। आजादी के अमृत महोत्सव में उनका स्मरण करना ही उनके प्रति श्रद्धांजलि है।

संदर्भ ग्रन्थ:-

1) बेनीपुरी ग्रंथावली – 4
2) संस्मरणों के सुमन – रामकुमार वर्मा
3) भारती का सपूत - जीवनीपरक उपन्यास :- रांगेय राघव
4) सुभद्रा कुमारी चौहान :- विकिपीडिया

****

कोयम्बत्तूर के स्वतंत्रता सेनानी

-श्री अबिरामी इल्लम
2/179B2 वनप्रस्था रोड,वडवल्लि,
कोयम्बत्तूर- 41, तमिलनाडु

-डॉ.जी.शांति
असोशियेट प्रोफेसर,
विभागध्यक्षा, हिन्दी,

विभिन्नता में एकता भारत का गौरवमय मन्त्र है। हाँ यहाँ विभिन्न जाति, धर्म, भाषा-भाषी के लोग वास करते हैं। चाहे हम जितने प्रांत या प्रदेश में विभक्त हो लेकिन हम राष्ट्रीय एकता के धागे से पिरोए हुए हैं। जिस प्रकार सभी नदियों का संगम सागर में होता है, उसी प्रकार ये विभाजन की रेखाएं एक ही भारत को आकार देती है। इतिहास साक्षी है कि स्वतन्त्रता संग्राम के यज्ञ में सभी प्रदेश के निवासियों ने अपना प्राण की आहुति दी है।तमिलनाडु में एक सुप्रसिद्ध एवं पहाडों से घेरे हुए सुन्दर नगर है कोयम्बत्तूर। इसे कोवै भी कहा जाता है। कोवै और उसके निकटतम क्षेत्र को 'कोंगु प्रदेश' या 'कोंगु नाडु' कहते हैं। कोयम्बतूर केवल मन्दिर, कपास एवं सिरुवानी पानी के लिए ही प्रसिद्ध नहीं है यहाँ की मिट्टी में अनगिने देश भक्तों की बलिदान एवं त्याग की वासना भी प्रसिद्ध है। इस लेख में केवल कोवै प्रदेश के देश भक्त और उनकी सेवाओं पर प्रकाश डाला गया है।

पद्मभूषण श्री अविनाशिलिंगम अय्या

सन् 1903 तिरुपूर में अय्या का जन्म हुआ। इनके पिता का नाम श्री के.सुब्रमण्य चेट्टियार और माता का नाम श्री मती पलनियम्माल है। वे बचपन में अपनी माता के साथ मंदिर जाते थे। इसलिए बचपन से ही उनमें भक्ति भावना प्रचुर मात्रा में थी। वे संसद के सदस्य बने और चेन्नै के प्रथम शिक्षा मंत्री भी थे।

श्री रामकृष्ण परमहंस, शारदादेवी, स्वामी विवेकानन्द और महात्मा गाँधी जी के सिद्धांतों से आकर्षित हुए। उनका कथन है कि, ''स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लेते ही गाँधी जी से सम्पर्क मिला, और वह सम्पर्क उनके जीवन को और श्रेष्ठ बना दिया था। सन 1920 में जब गाँधीजी चेन्नै आए तब अय्या उनसे पहली बार मिले। गाँधीजी ने जनता को अहिंसा का पालन और सदा खादी वस्त्र पहनने के लिए भी बताया जिससे गरीब बेरोजगारों को रोजगार मिले। यह भाषण सुनने के बाद अय्या तब से अपने जीवन पर्यन्त खादी ही पहनते थे। जब भी गाँधी जी तमिलनाडु आते थे, तब उनकी अंग्रेजी भाषणों को तमिल में अनूदित कर प्रस्तुत करने का श्रेय इनको ही है।

अय्या कोयम्बत्तूर जिले के कांग्रेस समिति के अध्यक्ष बने। सन् 1930 जुलाइ 5 को अय्या श्री टी.रागवाचारी के साथ वालांकुलम में नमक सत्याग्रह चलाया। दूसरे ही दिन वे गिरफ्तार हुए। पहले कोयम्बत्तूर जेल और फिर वेलूर जेल में छ: महीने तक रहना पडा और घोर अत्याचार भी सहना पडा। अपनी सेवा के लिए चार सालों में चार बार उन्हें जेल जाना पडा। जेल में रहते समय उन्होंने युवकों के मन में जागरण पैदा करने वाली कई पुस्तकों की रचना की। कराची एवं मुम्बई कोंग्रेस दलों में इनका मुख्य योगदान रहा। स्वतंत्रता के बाद समाज की प्रगति के लिए शैक्षिक संस्थानों की स्थापना की। बालकों के लिए श्री रामकृष्ण विद्यालय का निर्माण किया। स्त्रियों के भविष्य एवं उन्नतियों के लिए शिक्षा को अनिवार्य समझा। ग्रामीन स्त्रियों की अज्ञानता दूर करने और उनके प्रति होने वाले सामुहिक तिरस्कार को दूर करने हेतु, महिलाओं के लिए शैक्षिक संस्थान की स्थापना की। 'अविनाशीलिंगम इनस्टिट्यूट फॉर होम साइन्स एंड हॉयर ऐजुकेशन फॉर वुमेन' आज एक ऐसी महिला संस्थान है जहॉ नर्सरी से डिगरी तक शिक्षा दी जाती है। इस प्रकार अय्या एक श्रेष्ठ देश भक्त ही नहीं सामाजिक एवं महिलाओं की उन्नति के लिए अपने पूरे जीवन को समर्पित किया। वे श्रेष्ठ समाज सुधारक भी हैं।

श्री अय्या मुत्तु- श्रीमती गोविन्दम्माल

कोवैश्री अय्या मुत्तु और उनकी पत्नी ने हमारी देश की स्वतंत्रता के लिए जो सेवा की है उसका वर्णन हम शब्दों में नहीं कर सकते। सन् 1898 में एक सामान्य परिवार में श्री अय्या मुत्तु का जन्म हुआ। वे एक श्रेष्ठ लेखक, वक्ता, पत्रकार, देश भक्त ही नहीं,एक अच्छे इन्सान भी थे। जो इन्हें दुख पहुँचाते थे उनका भी वे भला ही करते थे। इनकी पत्नी के सहयोग द्वारा ही ये एक अच्छे देश भक्त बन पाए।

ताड़ बेचने वालों के खिलाफ इन्होंने मोर्चे किए। ताड़ बेचने वालों के पाँव पकडकर ताड़ मत बेचिए कहते थे। पुलियम पट्टी की दस मील दूरी पर सभी गाँव में जाकर वहाँ के किसानों से यह कसम ले ली कि वे नारियल के पेड से ताड़ न उतारे। इस कार्य से दुकानदार निराश हो गए। जनता के बीच खादी वस्त्रों के प्रति जागरण जगाने के लिए अधिक काम किया। मधु निषेद, छुआछूत, अन्धविश्वास का उन्मूलन आदि के प्रति इनकी सेवा सराहनीय है। छुआ छूत के विरुद्ध आंदोलन में श्रीमती गोविन्दम्माल का योगदान भी कम नहीं है, वे अपने पति से पहले ही जेल गई। सभी आंदोलनों में अपने पति के साथ उनकी परछाई की भाँति साथ रहकर काम किया जिसकी वजह से उन्हें एक साल का जेल दंड भी मिला।

तिरुपूर कुमरन

चेन्निमलै में सन् 1904 में इनका जन्म हुआ। इनके पिता का नाम नाचिमुत्तु और माता का नाम है करुपाई, वे तिरुपूर में एल.ई.आर.आर संस्थान में काम किया। इनकी पत्नी का नाम रामायम्माल था। तिरुपूर के युवा देश भक्त संघ में ये सदस्य थे। सुबह, शाम प्रतिदिन ये संघ जाकर देश की स्वतंत्रता से संबंधित काम किया करते थे। एक बार पटाखों की दुकान के सामने जाकर यह नारा लगाते थे कि ''विलायती पटाखे मत खरीदो, पैसों को राख मत करो'' गुस्से में आकर दूकानदार एक पटाखा जलाकर इन पर फैंक देता है। घायल होने पर भी इन्होंने अपना नारा नहीं रोका।

सन् 1921 में गाँधी जी की सलाह के अनुसार नारंगी, सफेद और हरे रंग के साथ चरखे का चिन्ह लगाकर एक झंडे का निर्माण किया गया। सभी ने इसके लिए सहमति दी और इस झंडे को काँग्रेस समिति ने राष्ट्रीय झंडे के रूप में सभी जगह फहराया। लेकिन पुलिस वालों ने इस झंडे को फहराने के विरुद्ध रोक लगाई। यह झंडा जहाँ-जहाँ फहराता था उसे निकाल कर यूनियन के झंडे फहराया गया।

सन् 1932 जनवरी 10 को ब्रिटिश सरकार के विरूद्ध श्री पी.एल.सुन्दरम की अध्यक्षता में काँग्रवालों ने एक आन्दोलन चलाया। उस भीड के आगे कुमरन ने हमारे राष्ट्रीय झंडे को हाथ में पकडकर गंभीरता से चले। सुबह आठ बजे ''अच्चम इल्लै, अचम इल्लै'';भय नहीं है, भय नहीं है , घोषणा करते हुए आगे बढे। इनको जनता का सहयोग मिला।पुलिस इनस्पैक्टर मोहमद वहाँ आकर, सबको छोड कर जाने का आदेश दिया है। इनके न मानने पर पुलिस वालो ने इन पर हमला किया।पुलिस वाले की पहली मार कुमरन पर पड़ती है। कुमरन का सिर फूट जाता है और खून बहने लगता है। वे झंडे को छोडे बिना बेहोश होकर नीचे गिर जाते हैं। सरकारी अस्पताल में उनका इलाज कराया गया लेकिन फिर भी उन्हें बचाया न जा सका। अपने अंतिम क्षण तक उन्होंने झंडे को अपने हाथ से नहीं छोडा। आज भी तमिलनाडु में ''कोडि कात्त कुमरन'' ;झंडे की रक्षा करने वाला कुमरनद्ध के नाम से प्रसिद्ध है।

श्री. लक्ष्मण चेटियार

ये एक तीव्र देश प्रेमी थे। गाँधी जी के भाषणों से प्रभावित होकर ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध आवाज़ उठाई। श्री वेन्कटरामन के साथ मिलकर इन्होंने ब्रिटिश सरकार के न्यायालय और बस को आग लगा दी। इस कार्य के लिए ब्रिटिश सरकार ने सादे चार साल का जेल दंड और 1000 रु का फाइन भी लगाया। ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध आवाज़ उठाने की वजह से इन्हें जेल में बहुत सारे अत्याचारों का सामना करना

पड़ा। जेल से रिहा होने के बाद ब्रिटिश सरकार से डर कर किसी ने भी इन्हें नौकरी नहीं दी। जिसकी वजह से इनकी जीविका भी एक प्रश्न चिन्ह बन गई।

श्री आर.कन्दसामी

सन् 1915 में कोवै जिल्ले के कारमडै में एक किसान परिवार में इनका जन्म हुआ। पढ़ते समय ही श्री.अविनाशिलिंगम अय्या के साथ मिलकर स्वतंत्रता संग्राम में भाग लिया। स्वतंत्रता की महिमा पर इन्होंने प्रचार-प्रसार किया, खादी वस्त्र बेचना और ग्राम्य स्वच्छता आदि की सेवा की। सन् 1942 आगस्त महीने में कई कांग्रेस नेताओं को गिरफतार किया गया। तब अविनाशिलिंगम अय्या ने उन्हें कारमेडै जाकर स्वतंत्रता का प्रचार-प्रसार करने का आदेश दिया। इस कार्य की वजह से ब्रिटिश सरकार ने उन्हें एक साल, नौ महिने जेल निवास के साथ 300 रूपये का जुरमाना भी लगाया। जेल में इन्हें खाने के लिए अच्छा खाना नहीं मिलता था। उनको खाने के लिए चावल का पानी ही मिलता था जिसमें बहुत कीडे हुआ करते थे। जेल से आने के बाद पाँच साल कोयम्बतूर कोंग्रेस कमीटी के सचिव बने थे।

श्री.प.सुब्रमनियम

सन् 1921 में कोवै जिल्ले के ओन्डीपुदूर में इनका जन्म हुआ। 16 वर्ष की आयु में ही इन्होंने अपने जीवन को स्वतंत्रता संग्राम के लिए समर्पित कर दिया। 1930 मील दूरी पर स्थित वारदा के निकट सेवा ग्राम में गाँधी जी से मिलने के लिए उन्होंने 95 पैदल दिन चले। इतनी दूर पैदल जाने के कारण इनका शरीर दुर्बल हो गया था इसलिए वे गाँधी जी के आश्रम में एक सप्ताह ठहरे। गाँधी जी से मिलकर एक घंटे से अधिक बात करने का अवसर मिला। इस अवसर के कारण इनके मन में एक नई उत्तेजना जागृत हुई।

1940-1942 में कोवै में अय्यामुत्तु की अध्यक्षता में खादी के प्रचार-प्रसार में इन्होंने भाग लिया। 26-08-1942 में कोवै कांगेयम पालयम में फोजी हवाई अड्डे को ऑग लगा दी। इनके साथ 50 लोगों को गिरफतार किया गया। इसके लिए तीन साल इन्हें जेल दंड मिला। सन् 1999 में इन्होंने ''कोंग नाटिल इंदिय सुदन्दिर पोराटम'' ;कोंग देश में भारतीय स्वतंत्रता आंदोलनद्ध नामक चारसों पृष्ठों की पुस्तक का प्रकाशन भी किया।

श्री.सेंगोड काउंडर

सन् 1923 में कोवै जिल्ले के सूलूर में इनका जन्म हुआ। युवा अवस्था में ही स्वतंत्रता संग्राम के लिए इन्होंने अपना जीवन समर्पित किया। कई आंदोलनों में भाग लेने के कारण इन्हें कई बार जेल जाना पड़ा। ये काँग्रेस दल के सदस्य थे। श्री के.वी.रामसामी की अध्यक्षता में मद्य निषेद, रेल पटरी को तोडना आदि आन्दोलन में भाग लिया। जिसकी वजह से साडे तीन साल इन्हे जेल में दंड मिला। जेल में कई अत्याचारों का सामना करना पड़ा, जेल में इन पर लाठी चार्ज अधिक होने के कारण, एक महिना अस्पताल में रहना पड़ा।

श्रीमती वीरपाण्डि सुन्दरम्बाल

स्वतंत्रता संग्राम में पुरुष ही नहीं महिलाएं भी अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। तिरुप्पूर त्यागी सुन्दरम्बाल का जन्म सन् 1913 में हुआ। जब गाँधीजी सन 1928 में तिरुप्पूर आए तब हरिजनों की सेवा के लिए अर्थिक मदत करने के लिए नोय्यल नदी के किनारे एक बैठक की आयोजना की गई। तब वहाँ उपस्थित लोगों ने अपनी शक्ति के अनुसार रूपये, गहने आदि दिए। उस बैठक में युवती सुन्दरम्बाल भी थी। गाँधी जी के भाषण से प्रभावित होकर सुन्दरम्बाल ने अपने सारे गहने गाँधी जी के सामने रख दिए। खादी के प्रति गाँधी के विचारानुसार सुन्दरम्बाल ने अपने अंतिम समय तक खादी ही पहना। व्यक्तिगत रूप से सत्याग्रह करने के लिए गाँधी जी से अनुमति लेना आवश्यक था। कोवै जिल्ले में होने वाले सत्यागृह की जिम्मेदारी श्री अविनाशींलिंगम अय्या को थी। सुन्दरम्बाल को सत्याग्रह करने के लिए इन्होंने गाँधी जी से अनुमति लेकर दी। सत्याग्रह करने की वजह से सुन्दरम्बाल को ब्रिटिश सरकार ने गिरफ्तार किया और तीन महिने के लिए जेल दंड भी दिया।

सन् 1941 में सुन्दरम्बाल ने अपने तीन महीने के बच्चे को भी साथ लेकर जेल गई। सन् 1942 में भारत छोडो आंदोलन में बहुत जोशपूर्ण रूप से काम किया। उसके लिए उन्हें सात महीनें के लिए जेल जाना पड़ा। सन् 1943 में पल्लडम तालुका की काँग्रेस समिति की अध्यक्ष बनी। ब्रिटिश शासन के नियमों के विरुद्ध आन्दोलन चलाए गए, और उसके लिए उन्हें जेल जाना पडा।

सुन्दरम्बाल ने अपनी 23 एकड ज़मीन को चरखा संघ को दे दिया जहाँ राजाजी ने जम्नालाल बजाज विद्यालय आरंभ किया। आज उसका नाम खादी ग्रामोदय विद्यालय है और यह तमिलनाडु सर्वोदया संघ के द्वारा चलाया जाता है। यहाँ अनाथ एवं निराधार बच्चों के ठहरने, भोजन, वस्त्र के साथ शिक्षा की व्यवस्था सुन्दरम्बाल की कृपा से मिलती है।

किसान संघ, त्यागी संघ, मुरुग भक्त संघ, सन्मार्ग संघ आदि कई संघो में भी सुन्दरम्बाल ने अपने जीवन में कई सेवाएं की है। सभी इन्हें प्यार से 'वीरपांडी आता' ;वीरपांडी माता, कहकर पुकारते है। इनकी महत्वपूर्ण सेवाओ के लिए लोग इन्हें 'कोंगु सीमयिन पोनविलकु' (कोंगु सीमा का स्वर्ण दीप) कहते थे। इस प्रकार एक नारी होते हुए भी अपने व्यक्तिगत एवं पारिवारिक जीवन को महत्व न देकर, देश एवं समाज सेवा को अपना लक्ष्य मानकर आजीवन कार्य किया।

इनके अलावा श्री सी. आरुमुगम, श्री आर.एम.आरुमुगम, श्री.एल.रामकृष्णन, श्री एम.जी.रामसामी, श्री.कु.रामसामी चेटियार, श्री टी.पी. रामसामी, श्री एस.रामसामी नायडु, श्री वी.रामसामी काउन्डर, श्री पी.एन. रामलिंगम, श्री कन्नाकुट्टी, श्री आर.कंदसामी, श्री टी.पी.कनगराजन, श्री कामाची पल्लन, श्री वै.गिरीकृष्णन, श्री के. कृष्णसामी चेटियार, श्री आर.कुप्पुसामी, श्री के.वे.सदासिवम, श्री ती.आ.सामनायडु, श्री सी.सुब्रमनियम, श्री पी.सेंगालिअप्पन, श्री के.पी.नटराज, श्री सो.सोमसुन्दरम, श्री ए.दुरैसामी, श्री एस.नारायनसामी, श्री पलनीकाउन्डर, श्री बालकृष्णन, श्री भीमाराव, श्री वे.पुरुषोतम, श्री पी.ए.मुत्तुकृष्णन, श्री न.पुन्नसामी पिल्लै, श्री मादैयन, श्री मारीअप्प देवर, श्री मारिअप्पन, श्री.रंगसामी, श्री रंगनादन, श्री वेंगडरंगन, श्री रा.वेंगिडुसामी, श्री वेदासामी, श्री जी.पी वेलन, श्री पी.वेलुचामी, श्री टी.पी.श्रीधरन और श्रीमती पोन्नमाल कोयम्बतुर जिल्ले के भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के वीर एवं त्यागी है।

संदर्भ ग्रन्थ:

संपादक - पा.नीलावति, कोवै मावट्ट त्यागीगलिन वालकै कुरिपेड, गांधी जी शिक्षा केन्द्र और अविनाशिलिंगम विश्वविद्यालय, 2008

****

भारत की आजादी और हिन्दी साहित्य

—डॉ. बालेन्द्र सिंह यादव
सहायक आचार्य, हिन्दी
डॉ. अंबेडकर राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
ऊँचाहर—रायबरेली (उ.प्र.)

'ऐ मेरे वतन के लोगों, जरा आंख में भर लो पानी' गीत की गूँज के साथ स्वतंत्रता की खातिर अपने प्राण न्योछावर करने वाले अमर शहीदों को याद करते हुए हम सभी देशवासी 15 अगस्त को अपना स्वतंत्रता दिवस हर्षोल्लासपूर्वक मनाते हैं। आने वाली 15 अगस्त 2022 को देश अपनी आजादी के 75 वर्ष पूरे करेगा और ये हमारे लिए खुशी की बात है कि हम इस वर्ष अपनी आजादी की 75वीं वर्षगाँठ मना रहे हैं। देश भर में इस साल चतुर्दिक आजादी के उत्सव की ही दुंदुभि बज रही है। भारत सरकार द्वारा घोषित 'आजादी का अमृत महोत्सव' देशभक्ति और राष्ट्रीयता से ओतप्रोत विविध कार्यक्रमों का लगातार आयोजन कर मनाया जा रहा है।

भारत को लगभग दो सदी के लंबे संघर्ष के बाद आजादी की खुशी प्राप्त हुई थी। बाबू गुलाबराय जी का यह कथन कि—''15 अगस्त का शुभ दिन भारत के राजनीतिक इतिहास में सबसे अधिक महत्त्व का है। आज ही हमारी सघन कलुष—कालिमामयी दासता की लौह श्रंखला टूटी थी। आज ही स्वतंत्रता के नवोज्ज्वल प्रभात के दर्शन हुए थे। आज ही दिल्ली के लाल किले पर पहली बार यूनियन जैक के स्थान पर सत्य और अहिंसा का प्रतीक तिरंगा झंडा स्वतंत्रता की हवा के झोंकों से लहराया था। आज ही हमारे नेताओं के चिरसंचित स्वप्न चरितार्थ हुए थे। आज ही युगों के पश्चात् शंख—ध्वनि के साथ जयघोष और पूर्ण स्ततंत्रता का उद्घोष हुआ था।''[1] स्वतंत्रता दिवस के सुअवसर पर हमारी खुशी की अभिव्यक्ति का सटीक उदाहरण है।

हर साल देशभक्ति की भावना से भर कर हम सब आजादी का दिन मनाते हैं। पर आजादी कहते ही हमारे मन में अनेक तरह के प्रश्न उमड़ते—घुमड़ते हैं कि क्या आजादी के बाद देश को ऐसा ही होना चाहिए था, जैसा वह है। क्या वाकई आजादी मिल जाने से हम किसी आजाद और आत्म निर्भर देश की तरह हो गए हैं जहां से हमारी सारी दैहिक, दैविक, भौतिक व्याधियां मिट चुकी हैं। क्या सिर्फ कहने, लिखने, बोलने की आजादी ही आजादी का बुनियादी अभिप्राय है और क्या आज भी सच कहने की हर शख्स को आजादी है। एक शायर का यह कहना कि 'सच बोलना है लाजिम जीना भी है जरूरी। सच बोलने की धुन में मंसूर हो न जाना।' इस दौर की सच्चाई है। स्वतंत्रता के बाद देश के नव निर्माण की दिशा में बनने को तो अनेक पंचवर्षीय योजनाएं बनीं। बड़े—बड़े बांध बने, बड़े उद्योगों की नींव पड़ी। रोटी, कपड़ा और मकान सबको मिले यह संकल्प लिए गए। पर आज देखें तो आज भी सबको रोजी—रोटी और कपड़ा सम्मानजनक ढंग से मुहैया नहीं हो रहा। कोरोना जैसी वैश्विक महामारी ने तो वर्तमान में देश की आधारभूत जीवन सुविधाओं की नंगी सचाई उजागर कर दी है। लोग बड़े पैमाने पर यहां से वहां दर—ब—दर होकर अपनी नौकरियां और जान गंवाई। इस प्रजातांत्रिक देश में प्रजातंत्र तो जैसे अपनी सुंदर पारिभाषिकी के साथ केवल बातों और हमारे पाठ्यक्रमों का हिस्सा बन कर रह गया है। आम आदमी अपनी बुनियादी जीवन सुविधाएं बामुश्किल हासिल कर पा रहा है।सन् सैंतालिस के पहले देश में जिस तरह की राष्ट्रीयता, राष्ट्रभक्ति व देशप्रेम का बोलबाला था आजादी के बाद वैसी देशभक्ति का अभाव उत्तरोत्तर दीख रहा है। आजकल तो देशभक्ति के नाम पर राष्ट्रवाद और भारतमाता के केवल जयकारे ही लगते हैं। अब तो ऐसे शिक्षकों का अभाव सा हो गया है जो बच्चों में राष्ट्रभक्ति के बीज बोयें। जाहिर है ऐसे में आज के बच्चों को इस बात से प्रायः सरोकार नहीं रहता कि हमें आजादी कैसे मिली? कैसे—कैसे संघर्ष करने पड़े? गुलामी के दौर का भारत क्या था? कैसे जलियांवालां बाग में हजारों नागरिकों को मौत के घाट उतार दिया गया था? कैसे तमाम अहिंसक लोगों पर जुल्म ढाए जाते थे? कैसे आजादी के सिपाहियों को सेल्युलर जेल में बंद कर दिया जाता था? गुलामी के दौर के ऐसे खौफनाक मंजर को याद करते ही रोंगटे खड़े हो जाते हैं। हमारा स्वतंत्रता आंदोलन भारतीय इतिहास का वह युग है जो पीड़ा, कड़वाहट, दंभ, आत्मसम्मान, गर्व, गौरव तथा सबसे अधिक शहीदों के लहू को समेटे है। हमारी विडंबना है कि हमें आजादी विभाजन की त्रासदी के साथ खंडित होकर मिली। इसलिए आजादी के इतिहास और उसमें क्रांतिकारी सेनानियों और उनको प्रेरित करने वाले साहित्यकारों के योगदान को जानना व समझना लाजिमी है।

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का एक लंबा इतिहास है। व्यवस्थित देशव्यापी आंदोलन की बात करें तो यह 1857—1947 तक आता है। 1700 सदी के आरंभ में व्यापारियों के रूप में आये अंग्रेजों ने मुगलों के लंबे शासन के बाद भारत पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया। उन्होंने सोने की चिड़िया कहे जाने वाले इस देश के प्राकृतिक—भौतिक संसाधनों को लूटना शुरू कर दिया। इतना ही नहीं उन्होंने यहां के हिंदू और मुसलमानों में उनके आपसी भाईचारे के बीच फूट डालकर धार्मिक वैमनस्य भर दिया। अंग्रेजों की कूटनीति के खिलाफ आखिरकार पराधीनता की बेड़ियों में जकड़े भारत में स्वाधीनता की चेतना जाग गई और 1857 में आजादी की लड़ाई का पहला संग्राम छिड़ गया। उस दौर में अंग्रेजों के पास तोपों से सुव्यवस्थित सैन्य दस्ते थे और स्वतंत्रता सेनानियों के पास जो अपने देशी हथियार थे वे बहुत अच्छी कोटि के न थे। फिर भी देश को अंग्रेजों के चंगुल से छुड़ाने के लिए सेनानियों ने भरसक प्रयास किया। इस प्रथम संग्राम में हमें भले ही असफलता मिली हो पर आजादी के लिए भारतीय राष्ट्रवाद का उदय हो गया था और राष्ट्रवादियों ने 1947 तक तमाम स्तरों पर संघर्ष करते हुए स्वतंत्रता के लिए संघर्ष किया।

1885 ईस्वी में स्थापित कांग्रेस ने आजादी की लड़ाई में निर्णायक भूमिका निभाई। कुछ उदारवादी और कुछ अतिवादी विचारों

के भारतीय बुद्धिजीवी इस संघर्ष के अगुवा बने। एक तरफ महात्मा गांधी अफ्रीका से लौट कर देश की आजादी के लिए समर्पित हो चुके थे तो दूसरी तरफ सुभाषचंद्र बोस के नेतृत्व में आजाद हिंद फौज ने मोर्चा सम्हाला हुआ था। गांधी का चरखा राष्ट्र के स्वाभिमान का प्रतीक बन गया था। अंग्रेजी वस्त्रों की होली जलाई जा रही थी। नमक सत्याग्रह व अंग्रेजों भारत छोड़ो के नारे तेज हो रहे थे। तिलक कह रहे थेदृ 'स्वाधीनता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है'। डॉ. आनंद प्रकाश ने स्वतंत्रता के उस दौर में राष्ट्र प्रेम की दीवानगी की चर्चा निम्न पंक्तियों में करते हैंः–''यह प्रभात फेरियों का दौर था जब छोटे–छोटे जुलूसों में राष्ट्रप्रेम के दीवाने गाते और जन जागरण पैदा करते हुए चल रहे थे। आजादी के तराने हर भारतीय के मन में गूंज रहे थे।''[२]

स्वतंत्रता आंदोलन के महायज्ञ में समाज के प्रत्येक वर्ग ने अपने–अपने तरीके से अपनी भूमिका अदा की। साहित्यकारों ने भी देश के नायकों को अपनी लेखनी से उद्दीप्त कर स्वतंत्रता के आन्दोलन में अपना भरपूर योगदान दे रहे थे। साहित्यकार की लेखनी प्रत्येक काल में समाज का पथप्रदर्शन करती आई है। जब–जब समाज दिग्भ्रमित हुआ और राजनीति पथभ्रष्ट हुई है। जब–जब जनसाधारण किंकर्तव्यविमूढ़ की अवस्था में पहुँचा है तब–तब साहित्यकारों ने अपनी पवित्र लेखनी के माध्यम से समाज के मनोबल और आत्मबल को बनाए रखने का प्रशंसनीय कार्य किया। पराधीनता के उस दौर में जब सर्वत्र पराभव ही पराभव दिखाई दे रहा था तब हमारे देश के लगभग हर प्रांत के, लगभग हर भाषा–भाषी क्षेत्र के महान कवियों और लेखकों ने अपने–अपने ढंग से देश के लोगों को आजादी के आंदोलन में कूदने का आवाहन किया। साहित्यकारों ने अंग्रेजों के खिलाफ देश के क्रांतिकारियों से लेकर आम लोगों तक के अंदर अपने शब्दों से जोश भर कर राष्ट्रप्रेम का जज्बा पैदा किया। माइकेल मधुसूदन ने बंगाली में, भारतेन्दु हरिशचन्द्र ने हिन्दी में, नर्मद ने गुजराती में, चिपूलूंपणकर ने मराठी में, भारती ने तमिल में तथा अन्य अनेक साहित्यकारों ने विभिन्न भाषाओं में राष्ट्रीयता की भावना से परिपूर्ण उत्कृष्ट साहित्य का सृजन किया। इस संदर्भ में विमल कुमार साहित्यकारों के योगदान को दर्शाते हुए कहा है किः–''साहित्यकारों के राष्ट्रप्रेम से ओतप्रोत साहित्य को पढ़कर या सुनकर हमारे देश की तत्कालीन युवा पीढ़ी के रक्त में क्रांति का उबाल आ जाता था । उनकी बाजुए फड़कने लगती थीं और मन राष्ट्र वेदी पर बलि होकर देश के लिए सर्वस्व न्योछावर करने की भावना से भर उठता था।''[३]

साहित्यकारों ने अपनी साहित्यिक कृतियों के ओजस्वी उद्गारों से भारतवासियों के हृदयों में सुधार व जागृति की उमंग उत्पन्न कर सम्पूर्ण भारतीय जनमानस को आंदोलित किया जिससे भारत विजय का स्वप्न साकार हुआ। निश्चय ही कवियों की इस महत्वपूर्ण भूमिका को भुलाया नहीं जा सकता। पर यह अत्यंत दुर्भाग्यपूर्ण है कि हमारे इतिहासकारों ने साहित्यकारों के इस योगदान को विशेष रूप से रेखांकित करने की बजाय अनदेखा ही कर दिया। ताराचंद या विपिन चन्द्र जैसे इतिहासकारों ने अमर शहीद गणेशशंकर विद्यार्थी की दंगे में हत्या की घटना का तो जिक्र किया लेकिन माखनलाल चतुर्वेदी, राहुल सांकृत्यायन, बालकृष्ण शर्मा नवीन, सुभद्रा कुमारी चौहान, पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र', जगदंबा प्रसाद 'हितैषी', रामबृक्ष बेनीपुरी, बनारसी प्रसाद, यशपाल, फणीश्वर रेणु आदि के जेल जाने की कथा और आजादी की लड़ाई में उनके योगदान की चर्चा तक नहीं की है।

यही कारण है कि आज बहुत सारे लोगों को नहीं मालूम कि हिन्दी की पहली कहानी 'टोकरी भर मिट्टी' लिखने वाले माधवराव सप्रे पहले व्यक्ति थे जिन पर 1905 में राजद्रोह का मुकदमा दर्ज हुआ था। यशपाल जी की तो शादी ही बरेली जेल में हुई थी जो भारतीय जेल के इतिहास में अपने किस्म की पहली घटना थी। जेल में ही रहकर उन्होंने विश्व साहित्य का अध्ययन किया था। आजादी की लड़ाई में अंग्रेजी सरकार द्वारा सैकड़ों किताबें जब्त कर ली गयी थीं और वे किताबें अब नहीं मिलती हैं। इन सभी लेखकों के संपूर्ण योगदान पर आज तक कोई मुकम्मल किताब न होने और उनकी अच्छी जीवनियों के प्रकाश में न आने से नई पीढ़ी को उनके विस्तृत योगदान के बारे में जानकारी प्राप्त नहीं हो पाती। हिंदी में जहां–तहां इन लेखकों के बारे में कुछ लिखा मिलता है और कुछ वर्षों से जब्तशुदा साहित्य के संचयन प्रकाशित होने और उनके बारे में शोध कार्य होने से एक झांकी अब जरूर मिल जाती है।

स्वतंत्रता के इस आंदोलन में हिंदी साहित्य लेखकों ने राष्ट्र के प्रति प्रेम जगाने में प्रभूत योगदान दिया है। इस संबंध में आधुनिक खड़ी बोली हिन्दी कविता के प्रवर्तक बाबू भारतेंदु हरिश्चंद्र का नाम अग्रणी है। उन्होंने जिस आधुनिक युग का प्रारंभ किया था उसकी जड़ें स्वाधीनता आंदोलन में ही थीं। अंग्रेजों की शोषणकारी नीतियों एवं निरीह भारतीय जनता पर किये जा रहे उनके जुल्म–ओ–सितम का भारतेंदु और उनके मंडल के साहित्यकारों ने खुलकर विरोध किया। इन सबने यह बताने में तनिक भी संकोच नहीं किया कि अंग्रेजी सरकार भारत देश के प्रति नहीं अपितु अपने ब्रितानी देश के प्रति कर्तव्यबद्ध है। उसे इस देश के लोगों के प्रति कोई सहानुभूति नहीं है वह तो इस देश के लोगों को केवल और केवल अपना दास मानती है।

भारतेंदु ने अपने साहित्य से तत्कालीन युवा पीढी के भीतर ऐसा उबाल पैदा किया कि देश के अधिकांश युवा अंग्रेजी सरकार के अन्याय, प्रतिशोध और अत्याचार के विरुद्ध उठ खड़े हुए थे। उन्होंने जनता को बताया था कि हमारे वर्तमान शासक घोर स्वार्थी हैं और उन्हें जनता के दुख–दर्द से कोई हमदर्दी नहीं है। इसलिए ऐसे स्वार्थी और कर्तव्यविमुख शासकों के विरुद्ध आंदोलन करना देशवासियों का परम धर्म है। 'अंधेर नगरी चौपट राजा' नामक व्यंग्य के माध्यम से भारतेंदु ने तत्कालीन राजाओं की निरंकुशता, अंधेरगर्दी और उनकी मूढ़ता का सटीक वर्णन किया हैः–

'भीतर भीतर सब रस चुसै,
हंसी हंसी के तन मन धन मुसै।
जाहिर बातिन में अति तेज,
क्यों सखि साजन, न सखि अंग्रेज।'

उन्हें इस बात का क्षोभ था कि अंग्रेज यहां से सारी संपत्ति लूटकर विदेश ले जा रहे थे। अंग्रेजों द्वारा की जा रही लूट–खसोट

का भारतेंदु ने यह कह कर विरोध किया है कि–

'अंग्रेज राज सुख साज सजे सब भारी।
पै धन विदेश चलि जात इहै अति ख्वारी।।'

भारतेंदु ने भारत दुर्दशा का बड़ा ही मार्मिक चित्रण किया है। अपनी भावनाओं को व्यक्त करते हुए उन्होंने लिखा हैः–

'सबके ऊपर टिक्कस की आफत आई।
रोबहु सब मिलि, अबहु भारत भाई,
हा! हा! भारत दुर्दशा न देखी जाई।।'

भारतेंदु के अलावा उनके मंडल के साहित्यकारों ने भी स्वतंत्रता आंदोलन की धधकती हुई ज्वाला को प्रचंड रूप दिया। प्रताप नारायण मिश्र, बद्रीनारायण चौधरी, राधाकृष्ण दास, ठाकुर जगमोहन सिंह, पं. अम्बिका दत्त व्यास, बाबू रामकृष्ण वर्मा आदि ने स्वाधीनता संग्राम और सेनानियों की भूरि–भूरि प्रशंसा करते हुए तत्युगीन चेतना को पद्य और गद्य दोनों में अभिव्यक्ति दी। इन्होंने राष्ट्रीयता एवं देशप्रेम की ऐसी गंगा बहाई जिसके तीव्र वेग से जहां विदेशी हुक्मरानों की नींव हिलने लगी, वहीं नौजवानों के अंतस में अपनी पवित्र मातृभूमि के प्यार का जज्बा गहराता चला गया।

भारतेंदु युग के बाद द्विवेदी युग, छायावाद युग और प्रेमचंद युग के साहित्यकारों ने हिंदी समाज को प्रेरित और शिक्षित किया। द्विवेदी युग में महावीर प्रसाद द्विवेदी, मैथिलीशरण गुप्त, श्रीधर पाठक, माखनलाल चतुर्वेदी आदि ने अपनी लेखनी को तलवार की भाँति पैना कर आम जनता में राष्ट्रप्रेम की भावना जगाते हुए भारतीय स्वाधीनता आंदोलन का हिस्सा बनने के लिए प्रेरित किया। महावीर प्रसाद द्विवेदी जी ने बीस वर्ष तक 'सरस्वती' पत्रिका निकाल कर हिंदी पट्टी में तर्क, विवेक और वैज्ञानिक चेतना फैलाई। सरस्वती पत्रिका ने अपने समय के अनेकों साहित्यकारों को स्थापित कर महान बनाया। माखनलाल चतुर्वेदी, रामनरेश त्रिपाठी, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' और सुभद्रा कुमारी चौहान ने राष्ट्र प्रेम को ही मुखरित नहीं किया अपितु स्वतंत्रता आंदोलन में भी भाग लिया।

माखनलाल चतुर्वेदी के बारे में कहा जाता है कि वे बारह बार जेल गए थे और 69 बार उनके घर की तलाशी ली गई थी। 'पुष्प की अभिलाषा' शीर्षक से उनकी एक ऐसी रचना है जिसके जरिए उन्होंने आजादी की बलिवेदी पर शहीद हुए वीर सपूतों के प्रति अगाध श्रद्धा समर्पित करते हुए बलिदानों को सर्वोपरि बताया है। उन्होंने अपनी इस प्रसिद्ध कविता में अगली पीढ़ी को भी प्रेरणा प्रदान करते हुए फूल के माध्यम से देश के प्रति अपनी भक्ति भावना की अभिव्यक्ति की हैः–

'चाह नहीं मैं सुरबाला के गहनों में गूंथा जाऊं।
चाह नहीं मैं प्रेमी माला में बिंध प्यारी को ललचाऊं।।
चाह नहीं सम्राटों के द्वार पर हे हरि! डाला जाऊं!
चाह नहीं देवों के सिर पर चढ़ूं, भाग्य पर इतराऊं
मुझे तोड़ लेना ए वन माली, उस पथ पर देना फेंक।
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने, जिस पथ जाएं वीर अनेक।।'

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने बहुत सरल शब्दों में देश के लोगों की चेतना को झकझोरते हुए राष्ट्रीयता का प्रचार–प्रसार किया। उन्होंने अपनी रचना 'भारत–भारती' के द्वारा भारत के रणबांकुरों को स्वतंत्रता आंदोलन मंच कूदने के लिए प्रेरित किया। देशप्रेम की भावना को सर्वोपरि मानते हुए उन्होंने 'भारत–भारती' में सोई हुई भारतीयता को जगाने का कार्य कियाः–

'जिसको न निज गौरव तथा निज देश का अभिमान है।
वह नर नहीं, नर–पशु निरा है और मृतक समान है।'

इतना ही नहीं उन्होंने तो भारतवासियों को स्वर्णिम अतीत की याद दिलाते हुए वर्तमान और भविष्य को सुधारने की बात कीः–

'हम क्या थे, क्या हैं, और क्या होंगे अभी
आओ विचारे मिलकर ये समस्याएं सभी।'

राष्ट्रकवि सोहनलाल द्विवेदी प्रमुख गांधीवादी माने जाते हैं। उनकी अनेक रचनाओं का उपयोग स्वतंत्रता आन्दोलन की प्रभात फेरियों में किया जाता था। देश पर मर मिटने वाले वीर शहीदों के कटे सिरों के बीच अपना सिर मिलाने की तीव्र चाहत लिए वे कहते हैंः–

'हो जहां बलि शीश अगणित, एक सिर मेरा मिला लो।'

कवयित्री सुभद्रा कुमारी चौहान ने अंग्रेजों की चूलें हिला कर रख देने वाली वीरांगना महारानी लक्ष्मीबाई की वीरता पर आधारित 'झांसी की रानी' कविता की रचना की। वीर सैनिकों में देशप्रेम का अगाध संचार कर जोश भरने वाली ऐसी अनूठी कृति को भला कौन भूल सकता है। उसकी एक–एक पंक्ति आज भी प्रासंगिक हैः–

'सिंहासन हिल उठे, राजवंशों ने भृकुटी तानी थी,
बूढ़ेभारत में भी आई, फिर से नई जवानी थी,
गुमी हुई आजादी की, कीमत सबने पहिचानी थी,
दूर फिरंगी को करने की सबने मन में ठानी थी,
चमक उठी सन् सत्तावन में वह तलवार पुरानी थी,
बुंदेले हरबोलों के मुंह हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी।'

बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' ने अपनी कविताओं के माध्यम से 'विप्लव गान' गाकर और सक्रिय रूप से भाग लेकर भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में महती भूमिका निभाईः–

कवि कुछ ऐसी तान सुनाओ, जिससे उथल–पुथल मच जाए।
एक हिलोर इधर से आए,
एक हिलोर उधर को जाए।।
नाश ! नाश! हां महानाश!!
की प्रलयंकारी आंख खुल जाए।।'

ष्याम नारायण पांडेय ने महाराणा प्रताप के घोड़े 'चेतक' के लिए 'हल्दी घाटी' में लिखाः–

'रणबीच चौकड़ी भर–भरकर, चेतक बन गया निराला था।
राणा प्रताप के घोड़े से, पड़ गया हवा का पाला था।
गिरता न कभी चेतक तन पर, राणा प्रताप का कोड़ा था।
वह दौड़ रहा अरि मस्तक पर, या आसमान पर घोड़ा था।'

जगदम्बा प्रसाद मिश्र ''हितैषी'' की वो पंक्तियाँ आज भी बड़े गर्व से गायी जाती है जिसमें वे कहते हैंः–

'शहीदों की चिताओं पर लगेंगे हर बरस मेले।
वतन पे मरने वालों का यही बाकी निशाँ होगा।'

कविवर श्यामलाल गुप्त 'पार्षद' का झंडा गीत स्वतंत्रता सेनानियों के लिए शास्त्र ही बन गया थाः–

'विजयी विश्व तिरंगा प्यारा। झंडा ऊँचा रहे हमारा।।'

गोपालप्रसाद व्यास ने अपने उन महान क्रांतिकारियों जिन्होंने देश के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दिया था के प्रति मानो समस्त राष्ट्र की ओर से भावपूर्ण शब्दों में श्रद्धांजलि अर्पित किया हैः–

'आजादी के चरणों में जो जयमाला चढ़ाई जाएगी।
वह सुनो, तुम्हारे शीशों के फूलों से गूंथी जाएगी।'

कवि गोपालदास 'नीरज' की निम्न पंक्तियों से स्वतंत्रता आंदोलन में उनके योगदान की स्पष्ट झलक प्राप्त हो जाती हैः–

'मैं विद्रोही हूं जग में विद्रोह कराने आया हूं।
क्रांति का सरल सुनहरा राग सुनाने आया हूं।।'

इतना ही नहीं वे लोगों को अत्याचार के आगे न झुकने की प्रेरणा देते हुए कहा था किः–

'देखना है जुल्म की रफ्तार बढ़ती है कहां तक।
देखना है बम की बौछार है कहां तक।।'

छायावादी युग में महाकवि जयशंकर प्रसाद 'अरुण यह मधुमय देश हमारा' कहते हुए अमर्त्य वीर पुत्रों को दृढ़ प्रतिज्ञ होकर आगे बढ़ने का आह्वान कर रहे थे। उनकी काव्य–कृतियों और चंद्रगुप्त व स्कंदगुप्त नाटकों में देशप्रेम की अनुगूँज के साथ गुलामी की कारा को तोड़ने का आह्वान भी मिलता है। उनकी निम्न पंक्तियां देशप्रेम की भावना जगाने का कार्य करती हैः–

'हिमाद्रि तुंग श्रृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती
स्वयंप्रभा समुज्जवला स्वतंत्रता पुकारती।'

सुमित्रानंदन पंत ने 'ज्योति भूमि, जय भारत देश', निराला ने 'भारती! जय विजय करे। स्वर्ग सस्य कमल धरे।', कामता प्रसाद गुप्त ने 'प्राण क्या हैं देश के लिए, देश खोकर जो जिए तो क्या जिए', तो इकबाल ने 'सारे जहां से अच्छा हिंदोस्तां हमारा' का भाव भरकर जनमानस को उद्वेलित किया।

मतलब स्पष्ट है कि अब देश के लोगों को किसी भी कीमत पर पराधीनता स्वीकार नहीं थी और स्वाधीनता की लड़ाई लड़ रहे वीर सैनिक ही नहीं वफादार प्राणी भी 'पराधीन सपनेहुं सुख नाहीं' का मर्म जान चुके थे। बंकिम चंद्र चटर्जी का 'वंदे मातरम' गीत देशप्रेम से ओत–प्रोत आजादी के लाखों परवानों को हंसते–हंसते देश की खातिर फांसी के फंदे पर झूलने के लिए लगातार प्रेरित कर रहा था। 'वंदेमातरम' हमारा राष्ट्रीय गीत है और आज भी यह हमें श्रद्धा, भक्ति व स्वाभिमान की प्रेरणा देता हैः–

'वंदे मातरम्
सुजलां सुफलां मलयज शीतलां
शस्यश्यामलां मातरम् वंदे मातरम्
शुभ्र ज्योत्सना–पुलकित–यामिनीम्
फुल्ल–कुसुमित–द्रुमदल शोभिनीम्
सुहासिनीं सुमधुर भाषिणीम्
सुखदां वरदां मातरम् वंदे मातरम्'

कवियों के अतिरिक्त तत्कालीन गद्य लेखकों ने भी मृतप्रायः लोगों में प्राण फूंकने का कार्य किया। कलम के सिपाही प्रसिद्ध कथाकार मुंशी प्रेमचंद्र ने अपनी तीन सौ से अधिक कहानियों और 'रंगभूमि', 'कर्मभूमि' आदि उपन्यासों के माध्यम से जहां एक ओर भारत के सामंतवाद और ब्रिटिश नौकरशाही की आलोचना की तो वहीं दूसरी ओर गुलामी व ब्रिटिश शोषण के अनेक रुपों को उजागर किया। उनके साहित्य ने अफसरशाही के बोझ तले दबी व शोषित जनता में कर्तव्य–बोध का ऐसा बीज अंकुरित किया कि वो क्रूर तानाशाही के खिलाफ आंदोलित हो गयी। मुंशी प्रेमचन्द के साहित्य की प्रेरणा से देशवासियों के मन में अपने ऊपर हो रहे अत्याचारों के खिलाफ बोलने की हिम्मत आई जिससे वे आजादी के आंदोलन के भागीदार बने।

अंग्रेज सरकार को प्रेमचंद का प्रेरक साहित्य काँटे की तरह चुभने लगा। गुप्तचर विभाग की सहायता से अंग्रेजों ने मुंशी प्रेमचंद को उनकी रचना 'सोजे वतन' के लिए तलब कर नवाब राय की स्वीकृति पर उन्हें डराया–धमकाया और 'सोजे वतन' की प्रतियां जलवा दी। परन्तु प्रेमचंद की लेखनी अपेक्षाकृत अधिक प्रखर होकर अंग्रेजों की दमनकारी नीति से प्रभावित हुए बिना स्वतंत्रता आंदोलन में विस्फोटक का काम करती रही। राकेश कुमार आर्य ने प्रेमचंद की प्रसांगिकता को दर्शाते हुए सही लिखा है किः–''प्रेमचंद हमारे स्वतंत्रता आंदोलन में साहित्यकारों की ओर से वह हस्ताक्षर हैं जिन पर हम सबको गर्व और गौरव की अनुभूति होती है। उन्होंने अपने अधिकारों के प्रति उदासीन लोगों को जगाने और क्रूर तानाशाही के विरुद्ध उठ खड़े होने का सफल आवाहन किया।''[४]

आजादी मिलते ही देश विभाजन की त्रासदी से लहूलुहान हो गया था। विभाजन के दंश आजादी के काफी दिनों बाद तक कचोटते रहे हैं। देश में धार्मिक कट्टरता दिनोंदिन बढ़ती गई। 1948 में महात्मा गांधी की हत्या की वजह भी धार्मिक कट्टरता ही रही। कुछ लोग हिन्दी साहित्य पर यह आरोप लगाते हैं कि विभाजन से उपजे दर्द की अभिव्यक्ति कथा साहित्य की अपेक्षा कविताओं में कम ही दिखाई पड़ती है। हाँ अज्ञेय ने जरूर शरणार्थी सीरीज में दस–ग्यारह कविताएँ विभाजन पर लिखी हैं जिनमें 'पक गई खेती' शीर्षक कविता ध्यानाकर्षित करती हैः–

'वैर की प्रणालियों से हँस हँस के,
हमने जो सींची राजनीति की रेती।
खाक मिट्टी कह के कल ही जिसमें थूका था हमने
घृणा की आज उसमें पक गई खेती।।
उसमें बह रही खूँ की नदियाँ हैं।
फसल काटने को अगली सदियाँ हैं।।'

ऐसा लगता है कि हिन्दी कवियों की नजर विभाजन की त्रासदी पर कम आजाद भारत की बागडोर संभालने वाले नेताओं पर अधिक थी। वे उनके द्वारा बनाये जा रहे स्वतंत्र भारत की उस तस्वीर को देख रहे थे जिसमें गाँधीवादी राजनीति के बहाने लोग अपनी राजनीति चमकाने में लगे थे। बाबा नागार्जुन इन राजनेताओं पर व्यंग्य करते हुए लिखते हैंः–

'बापू के भी ताऊ निकले तीनों बन्दर बापू के।

सरल सूत्र उलझाऊ निकले तीनों बन्दर बापू के।।'

भीष्म साहनी का 'तमस', यशपाल का 'झूठा–सच', राही मासूम रजा के 'आधा गांव' और कृष्णा सोबती की विभाजन विषयक कहानियां जिसने भी पढ़ी वे जानते हैं कि विभाजन के दर्द से हम आज तक नहीं उबर पाए हैं। आजादी के बाद की इन औपन्यासिक रचनाओं में विभाजन के दंश को मार्मिक ढंग से उसी रूप में उकेरा गया है जिस रूप में वह जख्म बन कर फैला और जहर बन गया था। आजादी के बाद की इन औपन्यासिक रचनाओं में विभाजन के दंश को मार्मिक ढंग से उसी रूप में उकेरा गया है जिस के बाद नेताओं व लेखकों का सपना था कि अपना देश होगा, अपना शासन होगा, अपनी भाषा होगी, देश हर मामले में तरक्की करेगा पर आजादी के एक दशक के भीतर ही जनता ठगी हुई महसूस करने लगी थी। साहित्य में आजादी मिलने के थोड़े ही दिनों बाद आजादी का मोहभंग लेखकों के मन में जन्म लेने लगा। हिंदी उपन्यासकार श्रीलाल शुक्ल का उपन्यास 'रागदरबारी' आजादी के बाद की कारगुजारियों का कथा रिपोर्ताज है जिसमें आजादी के दो दशकों बाद के 'गांवों के बदलते परिदृश्य' का कच्चा चिट्ठा खोला गया है। उपन्यासकार लिखते हैं कि '' यह उपन्यास भारतीय जीवन में आई मूल्यहीनता और शासन के स्तंभों के ढहते जाने का श्वेतपत्र है। गांवों की राजनीति का जो स्वरूप यहां प्रस्तुत हुआ है वह आज के राष्ट्रव्यापी और मुख्यतः मध्यम और उच्च वर्गों के भ्रष्टाचार और तिकड़म को देखते हुए बहुत अदना जान पड़ता है।''[४]

स्वतंत्रता के बाद लगभग दो दशक तक कई काव्यधाराएँ समानांतर रूप से एक समय में सक्रिय रहीं। तीन तरह के कवियों की सक्रियता देखने को मिलती है– एक उत्तर छायावाद काल के बच्चन–दिनकर आदि दूसरे प्रगतिशील कवि नागार्जुन, केदारनाथ अग्रवाल, त्रिलोचन आदि। तीसरे प्रयोगवाद और नई कविता के कवि अज्ञेय एवं मुक्तिबोध आदि। कवि रामधारी सिंह दिनकर भी कहां खामोश रहने वाले थे। मातृभूमि के लिए हंसते–हंसते प्राणोत्सर्ग करने वाले बहादुर वीरों व रणबांकुरों की शान में उन्होंने कहाः–

'कमल आज उनकी जय बोल
जला अस्थियां बारी–बारी छिटकाई जिसने चिंगारी
जो चढ़ गए पुण्य–वेदी पर लिए बिना गर्दन का मोल
कलम आज उनकी जय बोल।'

उनकी 'उर्वशी' ने अपने प्रकाशन के साथ जबरदस्त लोकप्रियता हासिल की। 'उर्वशी अपने समय का सूर्य हूँ मैं' वाली काव्य पंक्तियाँ तो पाठकों के मन में अब तक गूँज रही हैः–

'मर्त्य मानव की विजय का तूर्य हूँ मैं,
उर्वशी! अपने समय का सूर्य हूँ मैं
अंध तम के भाल पर पावक जलाता हूँ,
बादलों के सीस पर स्यंदन चलाता हूँ। '

नागार्जुन भी अपनी नई विषय वस्तु और भाषा विन्यास के साथ हिन्दी कविता करते हुए गँवई किसान–मजदूर के योगदान को भी अहमियत देते हैंः–

'नए गगन में नया सूर्य जो चमक रहा है,
यह विशाल भूखंड आज जो दमक रहा है,
मेरी भी आभा है उसमें।'

नई कविता आंदोलन के साथ सामान्य मनुष्य और उसका दुःख दर्द हिन्दी कविता के केंद्र में आया। अज्ञेय, मुक्तिबोध, शमशेर बहादुर सिंह, धर्मवीर भारती, रघुवीर सहाय, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना आदि दर्जनों कवियों ने व्यंग्य, विडंबना, तनाव आदि नई कविता के प्रतिमानों के साथ हिन्दी कविता को वैश्विक ऊँचाई तक ले जाने की सफल कोशिश की। गिरिजा कुमार माथुर ने लिखा थाः–

'आज जीत की रात पहरुए सावधान रहना।' अज्ञेय अपनी कविता 'कवि मन' में इस चिंता के साथ याद आते हैंः–

'मिला बहुत कुछ : सब बेपेंदी का। शिक्षा मिली,
उसकी नींव भाषा नहीं मिली। आजादी मिली,
उसकी नींव आत्म गौरव नहीं मिली। राष्ट्रीयता मिली,
उसकी नींव अपनी ऐतिहासिक पहचान नहीं मिली।'

मुक्तिबोध की कविता 'अंधेरे में' एक ध्रुवीकृत होते विश्व' के आयाम में विलीन आजाद भारत पर एक सवालिया निशान है जिसमें उन्होंने 'सब चुप साहित्यिक चुप' के साथ चुप्पी साधे मूकदर्शक बने समाज पर गहरी चोट की थी। इस कविता में पूंजीवाद की चरम विकृतियां और मूल्यों के पतन की ओर अग्रसर व्यक्ति का पूरा अधोपतन दिखाई देता है। रघुवीर सहाय लोकतांत्रिक व्यवस्था में आस्था रखने वाले एक सचेत कवि थे किन्तु उन्होंने उस आजादी की आलोचना की जिसमें राष्ट्रगीत गाने वाले व्यक्ति की औकात कुछ भी नहीं हैः–

'राष्ट्रगान में भला कौन वह भारत–भाग्य–विधाता है।
फटा सुथन्ना पहने जिसका गुन हरचरना गाता है।
मखमल टमटम बल्लम तुरही पगड़ी छत्र चँवर के साथ
तोप छुड़ाकरढोल बजाकर जय–जय कौन कराता है।
पूरब–पच्छिम से आते हैं नंगे–बूचे नरकंकाल
सिंहासन पर बैठा, उनके तमगे कौन लगाता है।
कौन–कौन है वह जन–गण–मन– अधिनायक वह महाबली
डरा हुआ मन बेमन जिसका बाजा रोज बजाता है।'

इसके बाद इनकी अगली पीढ़ी के कवियों में साठोत्तर कवियों का अधिकांश वर्ग आजादी की फलश्रुति से संतुष्ट नहीं था। चाहे वह धूमिल हों, राजकमल चौधरी हों, रघुवीर सहाय, सर्वेश्वर, आलोक धन्वा हों, ज्ञानेंद्रपति या गोरख पांडे, सबका मोहभंग आजादी के बाद के परिदृश्य से हुआ। हिन्दी पाठकों के बीच सहज ही अपनी जगह बनाते हुए इन कवियों ने जनतंत्र पर तरह तरह के सवाल किये। उन्होंने नई काव्य शैली के साथ ऐसी कविता की कि नई कविता का नयापन फीका पड़ गया। आजादी का लाभ उठाने वाली नई पीढ़ी की उदासीनता को देख क्षोभ से धूमिल ने सवाल दागा थाः–

'आजादी क्या तीन थके हुए रंगों का नाम है,
जिसे एक पहिया ढोता है।
या इसका कोई और मतलब होता है।।'

धूमिल अपनी 'पटकथा' कविता में आजादी के बाद के भारत का असली चेहरा दिखलाते हुए कहते हैंः–

'वे सब के सब तिजोरियों के दुभाषिये हैं।
वे वकील हैं, वैज्ञानिक हैं, अध्यापक हैं।
नेता हैं, दार्शनिक हैं, लेखक हैं।।
कवि है, कलाकार है।
यानी कि कानून की भाषा बोलता हुआ
अपराधियों का एक संयुक्त परिवार है।'

धूमिल लिखते हैंः–

'एक आदमी रोटी बेलता है,
दूसरा आदमी रोटी खाता है,
तीसरा आदमी है जो न रोटी बेलता है और न ही रोटी खाता है।
बल्कि वो रोटी से खेलता है।
मैं पूँछता हूँ यह तीसरा आदमी कौन है?
मेरे देश की संसद मौन है।'

दुष्यंत कुमार इस पीड़ा से उद्विग्न होकर कह रहे थेः–

'यहां तक आते–आते सूख जाती हैं कई नदियां,
हमें मालूम है पानी कहां ठहरा हुआ होगा।'

गोरख पांडे ने आजादी के बाद चलाए गए कथित समाजवाद पर चुटकी लेते हुए लिखा थाः–

'समाजवाद बबुआ धीरे धीरे आई।'

कवि अरुण कमल हिंदी की आधुनिक पीढ़ी के तेजस्वी कवियों में से हैं। उनकी कविताओं में नए प्रगतिशील सामाजिक–राजनैतिक मूल्यों के साथ नई ताजगी देता आत्मीय संसार भी थाः–

'अपना क्या है इस जीवन में, सब तो लिया उधार।
सारा लोहा उन लोगों का, अपनी केवल धार।।'

अरुण कमल आजादी के बाद के प्रजातंत्र की एक तस्वीर अपने ही अंदाज में खींचते हैंः–

'प्रजातंत्र का महामहोत्सव, छप्पन विधि पकवान।
जिसके मुंह में कौर मांस का, उसको मगही पान।'

चंद्रकांत देवताले लिख रहे थे किः–

'प्रजातंत्र की रथयात्रा निकल रही है,
औरतों और बच्चों को रौंदा जा रहा है,
गुंडों ओर नोटों की ताकत से।
हतप्रभ लोग खामोश खड़े हैं।'

लीलाधर जगूड़ी 'नाटक जारी है' नामक अपनी कविता में प्रजातंत्र को तमाशा बनाए जाने पर आम आदमी के पक्ष में दृढता दिखाते हुए कहते हैंः–

'हर हरियाली के हम अंतिम परिणाम हैं/हम जलेंगे
तो धरती दूर से दिखायी देगी/काली और उपजाऊ।'

निष्कर्षतः आजादी के इतने वर्षों बाद भी भीख मांग कर गुजारा करने वालों और भूखे सोने वालों की संख्या कम नहीं है। देश के किसान को अपनी उपज पर एमएसपी तय करने की आजादी नहीं है इसे भी कारपोरेट और उद्योगपतियों के हिसाब से सरकार तय करती है। असली आजादी तो इन्हीं उद्योगपतियों को है जो चुनावी चंदे देकर सरकार का मुंह बंद रखते हैं और जब चाहें तब वे अपने उत्पाद का दाम बढ़ा सकते हैं। आज देश की जो परिस्थितियां बनी हुई है उनमें भी सर्वत्र एक आवाहन है एक चुनौती है, चौलेंज है। ''आजादी को लेकर जो स्वप्न लेखकों, कवियों ने देखे हैं वे तमाम तरक्की के बावजूद शतप्रतिशत प्रतिफलित होते हुए नहीं दिखते। तमाम चौनलों के माध्यम से हमारी सोच को परिचालित एवं परिवर्तित कर हमारे स्वविवेक पर प्रायोजित विवेक का आच्छादन किया जा रहा है। इसलिए आजादी का जैसा प्रतिफलन समाज में और जीवन के विभिन्न हलके में जिस तरह होना चाहिए था, वह प्रतिबिम्बित होता हुआ नहीं दिखता।''[8]आजादी के अमृत महोत्सव में 75 साल बाद भी स्वतंत्रता सेनानियों की गौरव गाथा हमें यह प्रेरणा प्रदान करती है कि हम स्वतंत्रता के मूल्य को बनाए रखने के लिए कृत संकल्पित रहें। प्रेमचंद की रंगभूमि, कर्मभूमि (उपन्यास), भारतेंदु हरिश्चंद्र का भारत–दर्शन (नाटक), जयशंकर प्रसाद का चंद्रगुप्त, स्कंदगुप्त (नाटक) आज भी उठाकर पढिए, देशप्रेम की भावना जगाने के लिए बड़े कारगर सिद्ध होंगे। वीर सावरकर की '1857 का प्रथम स्वाधीनता संग्राम' हो या पंडित नेहरू की 'भारत एक खोज' या फिर लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक की 'गीता रहस्य' या शरद बाबू का उपन्यास 'पथ के दावेदार' –जिसने भी इन्हें पढ़ा, उसे घर–परिवार की चिंता छोड़ देश की खातिर अपना सर्वस्व अर्पण करने के लिए स्वतंत्रता के महासमर में कूदते देर नहीं लगी।कहने का अभिप्राय यह है कि राष्ट्र जागरण, राष्ट्रोद्धार और राष्ट्रोत्थान ही कवियों की लेखनी का एकमात्र व्रत है, एकमात्र विकल्प है। आज के हमारे कवियों और साहित्यकारों का यह महती दायित्व बनता है कि वे इस देश के बारे में सोचें और उसी परंपरा को जीवित रखें, जो मैथिलीशरण गुप्त की परंपरा है, प्रेमचंद की परंपरा है, नीरज की परंपरा है। आज के समय में भी वैसी ही धारदार रचनाओं की जरूरत है, जो जन–जन को आंदोलित कर सके, उनमें जागृति ला सके। भ्रष्टाचार व अराजकता को दूर कर हर हृदय में भारतीय गौरव–बोध एवं मानवीय–मूल्यों का संचार कर सके।

संदर्भ सूचीः–

1.बाबू गुलाब राय– स्वाधीनता आंदोलन और हिन्दी निबंध।
2.डॉ. आनंद प्रकाश– स्वतंत्रता संग्राम और हिन्दी।
3.विमल कुमार– जंग–ए–आजादी में कलमकारों की कहानी।
4.राकेश कुमार आर्य– स्वतंत्रता आंदोलन में हमारे साहित्यकारों का योगदान।
5.ओम निश्चल– स्वतंत्र भारत एवं समकालीन साहित्यकारों के स्वप्न।
6.ओम निश्चल– स्वतंत्र भारत एवं समकालीन साहित्यकारों के स्वप्न।

'**********

राष्ट्रोत्थान में साहित्य का योगदान

-डॉ. आर नागेश
विभागाध्यक्ष,हिन्दी विभाग,
संत आग्नेस कालेज (स्वायत्त),मंगलूर (कर्नाटक)-575002

प्रस्तावना : साहित्य सत्यम शिवम सुंदरम का प्रतीक है। जीवन में सत्य ,कल्याण एवं सौंदर्य- इन तीनों का समन्वित रुप जीवन को गति एवं शक्ति प्रदान करता है, रागात्मकता उत्पन्न करता है, जिजीविषा के भाव को बल दान करता है,जीने की कला का निर्माण करता है,जीवन जीने सिखाता है, जीवन को सर्वजन सुखाय एवं सर्वजन हिताय दृश्य प्रदान करता है तथा राष्ट्रीय मूल्यों के अनुसार संस्कार निर्माण की भूमिका का निर्वाह करता है।

यद्यपि साहित्य इतिहास नही है,फिर भी वह इतिहास के घटनाक्रम से अछूता नहीं होता है, उससे दूर नहीं होता है ।यह अपने युग के इतिहास का कलात्मक तथा साथ ही यथार्थवादी दृश्य से साक्षी भी होता है । किसी भी काल के महत्वपूर्ण प्रसंगों एवं घटनाचक्रों के साथ काव्य न्याय युगानुरुप भी होता है और शाश्वत मूल्यों पर आधारित भी । अतः इसकी विश्वसनीयता किसी प्रामाणिक निष्पक्ष तथा पूर्वाग्रह से दूर इतिहासकार की कृति से कम नहीं होती । साहित्य समाज का प्रतिबिंब होता है । यह किसी भी घटनाक्रम की प्रासंगिकता को उपेक्षित नहीं करता , जिसका राष्ट्रीय एवं सामाजिक महत्व हो । इस प्रकार यह स्वयंसिद्ध है कि साहित्य जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अपनी प्रभावी भूमिका अदा करता है।

अ)साहित्य का उद्देश्य :-

साहित्य का निर्माण मानव के कल्याण के लिए युगों-युगों से किया जाता रहा है। साहित्य का अर्थ ही है हित के साथ । जिसका उद्देश्य हित है, कल्याण है, वह साहित्य है। ऐसे तो साहित्य का निर्माण का अर्थ और यश के लिए भी होता है। स्वांतः सुखाय के लिए भी इसकी रचना होती है । फिर भी, सर्वजन हिताय, सर्वजन सुखाय वाली दृश्य इसकी प्राणाधार है।

"जिस साहित्य में विकृति है, संस्कृति नहीं , वह साहित्य की श्रेणी में नहीं आ सकता चाहे उसकी लोकप्रियता कितनी ही बडी क्यों न हो । मनोरंजन भी साहित्य का उद्देश्य होता है, किन्तु हमारी वासनाओं को उत्तेजित कर , सद्संस्कारों को विनष्ट कर यदि उसे हमारे जीवन का अंग बनाया जाए , तो उसके उदात्त उद्देश्य की स्वयं में पराजय हो जाएगी" ।[१].

साहित्य का उद्देश्य समाजिक जीवन में कालविशेष में घटित घटनाक्रम का चित्रण भी होता है ।वह इतिहास की तरह क्रमबद्ध सा तथ्यात्मक भले न हो, किन्तु वस्तुस्थिति से वह परे भी नहीं होता । साहित्य इसलिए अपने युग का प्रतिनिधित्व करता है। साहित्य समाज का प्रतिबिंब होने के कारण सत्यापन का कार्य भी करता है।

साहित्य का एक उद्देश्य यह भी है कि यह हजारों वर्षो की संचित ज्ञान राशि को पीढी दर पीढी देता जाता है। पुराने अनुभवों को, सत्यान्वेषण को, ज्ञानराशि के एक- एककण को नई पीढि को स्थांतरित करते जाना यही साहित्य एवं साहित्यकार का मानव मात्र के लिय एक बेजोड योगदान है। अतः साहित्य का उद्देश्य मनुष्य को पशुत्व से मानवत्व की ओर ले जाने का एक उपक्रम है।

आ)साहित्यकार का सामाजिक जीवन में योगदान :- "साहित्यकार का सामाजिक जीवन में अपूर्व योगदान होता है , इसमें कोई संदेह नहीं है। वह हमें अंधकार से प्रकाश की ओर उन्मुक करता है , संभ्रम से मुक्तकर , स्पष्टता की ओर ले जाता है ।शास्वत मुल्यों की लम्बी यात्रा को आगे बढाने में वह अपनी भूमिका अदा करता है , नए जीवन मूल्यों की सृष्टि करता है"।[२]

सत्य की रक्षा करना , जीवन मूल्यों पर ध्यान रखना , पुरस्कारों के लालच में न फंसना , अभावों में भी निर्भीकता की जिंदगी जीना ,सुविधाभोगी मानसिकता से सर्वथा दूर रहना , उपभोक्ता संस्कृति से कही बहुत दूर मानवीय संस्कृति की शांतिपूर्ण छाया में रहना , अपनी कृतियों सार्वकालिक जीवन मूल्यों एवं आदर्शो की लम्बी परम्पराओं को बनाए रखना, सौंदर्य एवं कला के समन्वय के आधार पर संसार में व्याप्त कुरुपता को अपसरित करना , सामाजिक अन्यायों को अपने सशक्त माध्यम से ध्वस्त करना तथा जीवन जीने की कला को सुंदर से सुंदरतर बनाना यही सहित्यकार का योगदान हो सकता है।

धर्म, अर्थ, काम,मोक्ष- चार पुरुषार्थो को प्रतिफलित करने की दृष्टि प्रदान करना भी साहित्य का उद्देश्य है।**धर्म** का अर्थ पूजा पद्धति से नही है। धर्म के द्वारा समाज की धारण होती है अर्थात धर्म के माध्यम से हमें ऐसे सिद्धांतों की प्राप्ति होती है जो सामाजिक व्यवस्थाओं को सम्यक प्रकारेण चलाने की सीख देते है। अर्थ -----धन तो अर्जित किया , किंतु एक मर्यादित सीमा में। इसी के माध्यम से समाज में सुख शांति रहेगी । काम …… इच्छाओं की परिपूर्ति को हमारे यहाँ बुरा नहीं समझा गया है , किन्तु अनियंत्रित काम को हमारे यहाँ बुरा समझा गया है। इसी से समाज में अव्यवस्थाएं पैदा होती हैं। वासनाओं का असीमित होना और उन्हें पूरा करने के लिए दिन-रात पागलों के समान दौडना ….मनाव के हित के विपरित माना गया है।

इन दिनों घटिया साहित्य काफी मात्रा में रचना हो रहा है। वासना , रहस्य , रोमांच के तत्वों से भडकीले उपन्यासों लिखे जा रहे है । इन उपन्यासों के माध्यम से विकृति के अलावा और क्या प्राप्त हो सकता है ?इस प्रकार के सहित्य

से कैसे बचा जाए, यह एक प्रश्न बन गया है।

फिर भी विश्वास है कि अच्छे साहित्यकार ही सदसाहित्य निर्माण कर सामाजिकों की रुचि परिष्कृत करते हुए उन्हें सम्यक दृष्टि प्रदान करेंगे और सामाजिक जीवन में अपनी महती भूमिका अदा करेंगे।

इ)**चिंतन के क्षेत्र में साहित्य की भूमिका**:-

मानव समाज से जुडे सभी सिद्धांतों का निरुपण साहित्य के माध्यम से होता है ।मनुष्य अपनी सभ्यता की विकास यात्रा में नए-नए सिद्धांतों को जन्म देता है और शाश्वत जीवन मूल्यों को स्थायित्व प्रदान करता है ,साथ ही परंपराओं एवं रीतियों को समयानुसार बदलता भी रहता है ।इस प्रकार चिंतन के विकास की प्रवाह चलता रहता है और राष्ट्र विशेष की सभ्यता एवं संस्कृति के विकास की प्रक्रिया का इतिहास बनता रहता है। इस प्रक्रिया में उत्थान एवं पतन का चित्रण भी होता रहता है। साहित्य किसी भी राष्ट्र के चिंतन , उसके बनाए रखकर, उसे संजोकर , राष्ट्र के लिए योगदान देता है।

ई) **नवचेतना प्रदान करने में साहित्य की भूमिका** :-

"किसी राष्ट्र एवं समाज के जीवन में जीवन में कुछ ऐसे अवसर भी आते है जब राष्ट्र प्रेम का अभाव है , अवसाद आ गया है ,जीवन शक्ति समाप्त सी हो गई है , उत्साह क्षीण हो गया है……. तब साहित्य ही नवचेतना प्रदान करता है और फिर से राष्ट्रजीवन में शक्ति का संचार करता है ।"[३]इस प्रकार राष्ट्र जीवन का अवरुद्ध प्रवाह फिर से वेगवान हो जाता है।

उ) साहित्य --- राष्ट्र प्रेम, शौर्य एवं पराक्रम के भाव पैदा करने वाला सशक्त माध्यम:-

विश्व के अनेक देशों के जीवन में ऐसे प्रसंग उत्पन्न हुए,जब युद्ध के क्षेत्र में जीती हुई बाजी हारी और हार स्वीकार कर ली हो…..मैदान छोडकर भागने लगे हो ।उस समय साहित्य अपना काम करता है – उस समय वीर रस से ओत प्रोत गीतों ने फिर से भागते हुए सैनिकों में नया जीवन, नई चेतना उत्पन्न कर और विजय की बात करता है, शत्रु को परास्त कर राष्ट्रीय गौरव की रक्षा करने की बात करता है ।काव्य में अपार शक्ति है जो देश के प्रति मर-मिटने की बात करता है। "प्राचीन काल में सभी राजाओं और महाराजाओं के दरबारों में साहित के रचयिताओं को इसीलिए महत्वपूर्ण पदों पर नियुक्त किया जाता था जिससे वे अपने जीवंत रचनाओं से नई चेतना ,नई जीवन ,नयी उत्साह और विजय का विश्वास उत्पन्न करने में सक्षम होते है"।[४]

ऊ)साहित्य – देश की आचार संहिता को प्रभावित करने वाला सक्षम माध्यम:- "हम जानते है कि विकृत साहित्य याने श्रृंगारिकता एवं अश्लीलता से भरा साहित्य किसी भी राष्ट्र के पौरुष को ध्वस्त करता है, वासनाग्रस्त कर सकता है,पतनोन्मुखकर सकता है । यदि साहित्य के विकृत रुप से तरुण पीढी कमी, पथभ्रष्ट एवं सामाजिक मूल्यों से दूर हो जाता है, यो उसके क्षरण में देर नहीं लगती ।प्रत्यक्ष युद्धक्षेत्र में हारने से पहले ही राष्ट्र पराभूतहो जाते है" ।[५]

फ्रांस का उदाहरण सबसे सामने है ।जिस फ्रांस ने प्रथम विश्व युद्ध जीता था वही द्धितीय विश्व युद्ध में धराशायी हो गया। उसे तीन दिन में विश्व के सुंदरतम नगर **पेरिस** को जर्मनी के हाथों में देना पडा । ऐसा क्यों हुआ ? उत्तर सबको मालूम है। प्रथम विश्व युद्ध और द्धितीय विश्व युद्ध के मध्य अंतराल केवल 20 वर्ष का था । इन बीस वर्षो में फ्रांस का साहित्य ,कला तथा जीवन का व्यवहारिक क्षेत्र …….सभी क्षेत्र श्रृंगारिकता एवं कामुकता के रंग में पूर्णतया रंग गए थे। उसका शौर्य एवं पराक्रम के भावों से दूर चला गया था। इसके विपरीत जर्मन साहित्य में अपने खोए राष्ट्रीय स्वाभिमान को जगाने का प्रयत्न हुआथा। परिणामतः फ्रांस की पराजय एवं जर्मनी की विजय हुई ।यह बात दूसरी है कि मित्र राष्ट्रों की सेना ने फांस को फिर से स्वतंत्र करा दिया। **राष्ट्रोत्थान की दृष्टि से साहित्य की भूमिका कितनी महत्वपूर्ण है यह हम देख सकते है।**

निष्कर्ष –

आज के आधुनिक युग में बडे पैमाने में विकृत साहित्य का निर्माण हो रहा है ।करोडों रुपयों की कीमत का साहित्य विश्वभर में धडल्ले से बिक रहा है हमारा देश भी इस क्षेत्र में किसी से पीछे नहीं है । पतन की दिशा में इस प्रकार का साहित्य हमें दौडा रहा है।

आवश्यकता है सद्साहित्य की,शाशवत मूल्यों से संपन्न साहित्य की, चिरंजीवी साहित्य की। तभी गंदे परिवेश में डूबी , नई पीढी को दिशा प्राप्त हो सकती है और हमारा राष्ट्र उन्नति एवं समृद्धि की दिशा में कदम आगे बढा सकता है।

संदर्भ सूची:-

१. कुमार गुप्त दिनेश- हिन्दी संरचना-राधा कृष्ण –पहला संस्करण, पृ. 15-16

२. वर्मा रामचन्द्र- अच्छी हिन्दी-लोकभारती प्रकाशन -3-संस्करण, पृ. 11

३. कृष्णमूर्ति आर- हिन्दी विजन- जुलाई-सितबर 2015पृ. 7-8

४. मृदुल मरुधर –प्रतिश्रुति-त्रैमासिक –अंक-3- पृ 40-41

५. नंदा रकेश -सौरभ अमन प्रकाशन -पृ . 127

****

स्वतंत्रता संग्राम और निराला की कविता

-डॉ.जस्टी एम्मानुवल
सहायक आचार्या,
अल्फोंसा कालेज पाला,केरल

अंग्रेजी शासन से मुक्ति का मुठभेड़ भारत में 19वीं सदी से ही शुरू हुई थी ।अंग्रेजी शासन से मुक्ति पाना भारतवासियों का स्वप्न था। राजनैतिक नेताएं, आम जनता, मीडिया, साहित्यकार आदि बहुत लोगों और संस्थाओं का अनवरत श्रम स्वाधीनता संग्राम के इतिहास के पीछे छिपी हुई है।बीसवीं सदी के दूसरे दशक से गांधीजी इस आंदोलन के नेतृत्व में आते ही संग्राम ज्यादा मजबूत हो गया।

गांधी जी के नेतृत्व में भारतीय जनता एकमत होकर एकत्र करके अंग्रेजी शासन के खिलाफ लड़ने लगा। अंग्रेजों ने 'फूट डालो शासन करो' की नीति अपना कर किसी भी तरफ भारतवासियों को कमजोर बनाने की कोशिश की। इसी वातावरण में राजनैतिक नेता, मीडिया, साहित्यकार आदि की भूमिका विशेष उल्लेखनीय है। राजनैतिक नेता मजबूत भाषण के द्वारा जनता को संगठित करने तथा स्वतंत्रता संग्राम में शामिल कराने की कोशिश की। उस युग में मीडिया उतना विकसित नहीं था फिर भी समाचार पत्रों जैसे माध्यमों का खूब इस्तेमाल किया। जनता में राष्ट्रप्रेम की भावना अंकुरित कराने में साहित्य की महत्वपूर्ण भूमिका है । साहित्यकारों ने अपनी साहित्यिक कृतियों के माध्यम से जनता में राष्ट्रप्रेम की भावना जगाने में तथा अंग्रेजों को यहां से भगाने के लिए संगठित करने की प्रेरणा दी।अनेक साहित्यकार प्रेषकों के दिल में राष्ट्रप्रेम की भावना जगाने योग्य उपन्यास, कहानी, कविताएं तथा नाटकों, निबंधों का सृजन किया। इसी कारण से कई साहित्यकारों को जेल जीवन बिताना पड़ा । रविंद्र नाथ ठाकुर जैसे साहित्यकार अंग्रेजों द्वारा दी गई सर उपाधि छोड़ दिया।अनेक लोग अंग्रेजों से प्राप्त नौकरी छोड़कर साहित्यकार बन गया। अंग्रेजी शासक वर्ग कई साहित्यकारों के साहित्य कृतियों पर पाबंदी लगाई। प्रेमचंद का 'सोजे वतन' ,मुक्तिबोध का 'भारत इतिहास और संस्कृति' आदि इसका ज्वलंत दस्तावेज है। 'कलम तलवार से तेज होती है' यही सत्य को खूब समझने वाला अंग्रेजी शासक वर्ग का ध्यान साहित्यकारों पर खूब पडी थी। उन्होंने साहित्यकारों को दबाने की कोशिश की।

अंग्रेजी शासक वर्ग के कूटनीतियों के खिलाफ जनता के मन में आक्रोश जगाने वाले साहित्यकारों में सूर्यकांत त्रिपाठी निराला का स्थान अप्रतिम है। छायावादी एवं प्रगतिशील धारा के एक मशहूर साहित्यकार के रूप में सूर्यकांत त्रिपाठी निराला का महत्वपूर्ण स्थान है। आधुनिक हिंदी कविता में विद्रोह, क्रांति और परिवर्तन के कवि के रूप में विख्यात निराला का जन्म 1896 में बंगाल के महिषादल में हुआ। निराला का रचनाकाल मुख्यतः कांग्रेस और ब्रिटिश राज के बीच घोर संघर्ष के दौरान था। गुलामी से मुक्ति का स्वप्न देखते हुए वे अपनी सृजनात्मक ऊर्जा के द्वारा भारतीय जनमानस को जगाने और उठ खड़े होने के लिए ललकारती है। पूरे दिल और दिमाग के साथ रहने वाले ये साहित्यकार लडकपन में बंग-भांग विरोधी स्वदेशी आंदोलन देखा भारत को मुक्त कराने के प्रयास में प्राण त्याग दिये अनेक वीर युवकों की कहानियां पढ़ी। विदेशी शासन के विरुद्ध अपने इलाके के किसानों को संगठित करने का काम भी उन्होंने किया।

अपने सृजनात्मक जीवन के शुरू से लेकर राष्ट्रप्रेम भरित अनेक कविताएं लिखी। पराधीनता की पीड़ाओं से भरित,स्वाधीनता की आकांक्षाओं से युक्त, ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध आक्रोश प्रकट करने वाले अनेक कविताएं उनकी काव्य कृतियों में देखने को मिलती है। 'अनामिका' संकलन की मुक्ति' शीर्षक कविता की पंक्तियां देखिए-

तोड़ो, तोड़ो, तोड़ो कारा
पत्थर, की निकलो फिर,
गंगा -जल -धारा (अनामिका 'मुक्ति' कविता)

विदेशी कारा से मुक्ति पाकर सत्यम शिवम सुंदरम को पुनः प्रतिष्ठित करने की आकांक्षा कवि निराला की कविता प्रकट करती है। निराला की कविता तमाम बंधनों से मुक्ति की कविता है। वे देश की मुक्ति के साथ परिवार की धुरी स्त्री की मुक्ति भी चाहता है। उनकी राय में सबसे पहले मुक्ति की भावना नारी मन में उगना है।नारी में अपने अधिकारों का अवबोध जगाने की ज़रूरत है। नारी मुक्ति के बिना राष्ट्र की मुक्ति असंभव है जाति व्यवस्था की कुछ अंधी भावनाएं नारी को आज अस्वतंत्रता के गर्त में खीच लिया है। प्रगतिशील मानवतावादी साहित्यकार निराला मानव मुक्ति की संकल्प धरमी कवि है। वे देश की आजादी के रूप में पहले भारतीय जनमानस में क्रांतिकारी परिवर्तन चाहा।धर्म के नाम पर,जाति व्यवस्था के नाम पर, राजनीतिक या सामाजिक दल के नाम पर भारतीय जनमानस में जो मतभेद या भेदभाव था उस भेदभाव को मिटा कर भारतीय जनमानस की एकता वे चाहते थे इन तमाम भेदभाव से मुक्ति , तथा भारतीय जनता का विदेशी शासन से मुक्ति वे चाहते थे कवि निराला साम्राज्यवाद पूंजीवाद और सामंतवाद के प्रबल विरोधी थे । साम्राज्यवादी शक्ति अंग्रेज ,भारत भूमि को शोषण करते पूंजी इकट्ठा कर विदेश की ओर ले चला। भारत में साम्राज्यवाद के साथ पूंजीपतियों की एक हिस्सा भी प्रगति के रास्ते पर थे।उनका लक्ष्य साम्राज्यवाद खत्म करके उस स्थान पर पूंजीवादी शासन व्यवस्था स्थापित करना है। कवि इन दोनों व्यवस्थाओं के विरोधी है। 'कुकुरमुत्ता' कविता में नवाब के बगीचे पर फारस के गुलाब और करीब ही पहाड़ी की गंदगी में उगा हुआ एक कुकुरमुत्ता के बीच के संवाद अत्यंत प्रतीकात्मक ढंग से चित्रित किया है। गुलाब यहां पूंजीपति का प्रतीक है और कुकुरमुत्ता जनसाधारण का प्रतीक है। कुकुरमुत्ता ने पूंजीपति गुलाब पर सवाल उठाता है।

"कितनों को तूने बनाया है गुलाम ,
माली कर रक्खा, सहाया जाड़ा घाम ;
हाथ जिसके तू लगा,

पैर सर रखकर वह पीछे को भगा" (कुकुरमुत्ता)
याद रख तूने खाद का खून चूस कर यह सब कुछ प्राप्त किया है तूने पूंजीपति के सामान कितनों को अपना गुलाम बना रखा है ?अपने देखभाल के लिए माली रखे हुए है। बेचारे सर्दी गर्मी किसी की भी परवाह न कर सब सहते हैं ।तू शाहनशाहों राजाओं और अमीरों का प्यारा है इसी कारण तू साधारण फूलों से अलग थलग है।अर्थात पूंजीपति जन-साधारण में नही मिल पाते । उसी प्रकार गुलाब का फूल भी अन्य फूलों में नहीं समा पाता। कवि की राय में लोगों की भूख और विवशता का मुख्य कारण यह पूंजीवादी और उनकी व्यवस्था ही हैयह पूंजीवाद मानवता का शोषण कर उनकी रोटी छीन रहा है निराला राष्ट्रीय जागरण के कवि है भारत भूमि के प्रति, भारतीय संस्कृति के प्रति आदर भाव निराला की अनेक कविताओं में दिखाई पडते हैं।कृषकों का देश भारत में कवि ने भारत माता रूपी सरस्वती ने अनाज रूपी कमल अपने हाथों में धारण करके देखा है।

'भारति जय विजय करें कनक- शस्य-कमल धरे!
लंका पदतल शतदल, गरजितोर्मि सागर-जल
गेता शुचि चरण युगल स्तव कर बहु-अर्थ -भरे।'
(भारति जय विजय करें)

'जागो फिर एक बार' *निराला जी का एक श्रेष्ठ उद्बोधन गीत है। प्रस्तुत कविता में विदेशी गीदडों को वीरों की जन्मभूमि भारत देश से भगाने के लिए जाग उठकर गुरु गोविंद सिंह की तरह युद्धभूमि की ओर कूदने के संदेश दिया है।साथ ही भारतीय संस्कृति का गुणगान भी किया है*

'जागो फिर एक बार! समर अमर कर प्राण,
महासिन्धु -से सिंधु नदी तीरवासी'

*कवि युवकों को जाग उठने की प्रेरणा देते हुए कहते हैं कि हे भारतवासियों तुम अपने आप को पहचान कर एक बार फिर जाग उठो । सिंधु -नद-*तट वासी तुम्हीं ने महासागर के समान गंभीर गीत गाकर युद्ध भूमि में अपना प्राण देकर वीरगति प्राप्त कर अपने को अमर बना लिया था। उन्होंने हाथी ,रथ ,घोड़े और पैदल ये चार प्रकार के सेनाएं लेकर सिंधुदेश के फुर्तिले घोड़ों पर सवार होकर शत्रुओं से निर्णायक युद्ध किया था। याद करो वह गुरु गोविंद सिंह जी को जिन्होंने प्रतिज्ञा की थी कि सवा सवा लाख शत्रुओं पर अपने एक एक वीर सिंह को चढाकर ही मैं अपने नाम को सार्थक रूप में धारण करूंगा याद करो कि वीरों के मन को मोहित करने वाले अधिक कठिन संग्राम के राग को किसी ने सुनाया था और बताया कि गुरु गोविंद सिंह बारहों महीने युद्ध में शत्रुओं के रक्त से होली खेला करते थे ऐसे वीरों की भूमि में आज विदेशी गीदडों ने अधिकार जमाया है। एक बार फिर जाग उठो और विदेशी भेड़ियों को भगा दो।

"सत श्री अकाल , भोल अनल धक-धक कर जला,
भस्म हो गया था काल - तीनों गुण ताप त्रय,
अभय हो गए थे तुम मृत्युंजय व्योमकेश के सामान, अमित संतान!"

हे भारतवासियों आप अपना गौरवपूर्ण अतीत को याद करो। जिस समय गुरु गोविंद सिंह सत श्री अकाल का नारा लगाकर युद्ध भूमि में कुद पड़ते थे तब क्रोध से भर कर उनके मस्तक से शत्रुओं को जलाने वाली आग निकल पड़ती थी(अर्थात उनका मस्तक शिव के तीसरे नेत्र के समान शत्रुओं पर आग बरसाने वाला था)। उस आग में , आग की लपट में काल, तीनों प्रकार का गुण और तीनों प्रकार के दुख भस्म हो गये थे । तब तुम एकदम निडर हो गया था। तुम मृत्यु को जीतने वाले शिव के समान अमर पुत्र हो । तुम योग -साधना में कथित माया के सात आवरणों को काट-भेद कर इस मृत्युलोक से ऊपर उठकर उस स्थान पर जा पहुंचे थे कि जहां योग साधना का अंतिम केंद्र हंज़ार पंखुड़ियों वाला कमल स्थित है जहां पूर्ण मुक्ति है अर्थात तुम पुनर्जन्म से मुक्त हो गया है।

भाव यह है कि हमारे पूर्वज अपनी वीरता से मृत्यु को भी जीत लिया था अपने उस अतीत को याद करके फिर जागो। इस प्रकार निराला जी ने अपनी कविताओ के द्वारा भारत के युवकों को हिम्मत रखने का खूब प्रयास किया है। भारतीय संस्कृति के महत्व पर इशारा करते हुए कवि आगे कहते हैं

डूबे आनंद में सच्चिदानंद -रूप
महामंत्र क्षत्रियों का
अणुओं परमाणु में पूरा हुआ-
तुम हो महान तुम सदा हो महान

हे भारतवासियों तुम जानवर नहीं वीर पुरुष हो ।तुम तो युद्ध विद्या में निपुण तेजस्वी राजकुमार के समान हो। आज तुम कालचक्र में दब गए हो। नहीं तो बंधनों से मुक्त छंद के सामान सब प्रकार के बंधनों से मुक्त अर्थात स्वतंत्र हो ।तुम सच्चिदानंद स्वरूप ब्रह्म के रूप में लीन रहने वाले हो। हमारी ऋषियों की वाणी सृष्टि के कण-कण में व्याप्त है कि तुम महान हो सदा से महान रहो तुम साक्षात ब्रह्म हो तुम अपने को पहचानो समस्त विश्व तुम्हारे पैरों की धूली के बराबरी भी नहीं तुम आत्म स्वरूप का स्मरण करके जाग उठो ।कवि यहां अद्वैतवाद की प्रतिष्ठा करके मानव के महत्व का प्रतिपादन किया है। अपने साहित्यिक कृतियों के सहारे अपने विरासत का पूरा पहचान करके भारत के युवकों की चेतना में देश भक्ति रूपी इतना प्राण फूंकने वाले दूसरा कोई कवि शायद नहीं होंगे। श्रीमती महादेवी वर्मा के शब्दों में "निराला का व्यक्तित्व उनके काव्य से कम निराला नहीं है वह अत्यंत जटिल और बहुत से विरोधों का सामंजस्य है" सूर्यकांत त्रिपाठी निराला ने अपने साहित्यिक कृतियों के सहारे भारतीय जनमानस में देशभक्ति की ऊर्जा प्रदान करके आम जनता को हिम्मत और ताकत प्रदान करके महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।अपनी संस्कृति, अपना इतिहास,और अपना विरासत को वे अपनी कविताओं में सुरक्षित रखा। इस प्रकार निराला स्वाधीनता संग्राम के साहित्यकारों में जीवंत हस्ताक्षर हैं।

संदर्भ सूची

परिमल- निराला
रागविराग-निराला
निराला और उनका राग बिराग प्रोफ. राजेश शर्मा

****

हिंदी उपन्यासों में चित्रित स्वतंत्रता आंदोलन और आदिवासी

-डॉ. संजय नाईनवाड
सहयोगी प्राध्यापक, हिंदी,
एस.बी. झाडबुके महाविद्यालय, बार्शी, जि. सोलापुर

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन की शुरूआत 1857 के सैनिक विद्रोह से मानी जाती है। किंतु यह आंदोलन आदिवासी इलाकों में इससे पहले शुरू हुआ था। पूर्वोत्तयर भारत, मध्य भारत, उत्तर भारत व दक्षीण भारत इन सभी इलाकों में बसे आदिवासियों ने भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में अपना योगदान दिया है। आदिवासी स्वितंत्रता आंदोलनों की लंबी परंपरा रही है। जिनमें – ''पहाड़िया विद्रोह (1766), चुआड़ विद्रोह (1769), ढाल विद्रोह (1773), तिलका मांझी का विद्रोह (1784), तमाड़ विद्रोह (1819-20), लरका विद्रोह (1821), कोल विद्रोह (1831-32), भूमिज विद्रोह (1832-33), सरदार आंदोलन (1860-1895), भील विद्रोह (1881), बिरसा मुंडा का 'उलगुलान' (1895-1900), बस्तंर क्रांति 'भूमकाल' (1910), भील आंदोलन 'धूमाल (1913), ताना भगत आंदोलन (1914), भील-गरासिया 'एकी' आंदोलन (1922), नागा संघर्ष जेलियांगरांग आंदोलन (1932), संथाल विद्रोह (1917, 1932) और वारली संघर्ष (1945-48)[1]'' मुख्य हैं। इतिहास की पुस्तकों में इस पर विस्तार से लिखा नहीं गया है। इस कमी को आदिवासी जीवन पर लिखे जा रहे उपन्यास पुरा कर रहे हैं।

झारखंड में सिदो, कान्हो, चाँद और भैरो के नेतृत्व में चली संथाल क्रांति अंग्रेजों को देश से खदेड़ने की पहली जनसंगठित क्रांति के रूप में जानी जाती है। संताल क्रांति का चित्रण मधुकर सिंह ने 'बाजत अनहद ढोल' उपन्याहस में किया है। उपन्यास में वर्णन है कि ईस्ट इंडिया कंपनी ने मुगल शासन नेस्तनाबूत कर देश की बागडौर हाथ में लेकर जमींदारी प्रथा शुरू कर लगान वसूली शुरू की। उस दौर में संथाल इलाके में कंपनी के नील व्यापारियों द्वारा किसानों से नील खेती करने के इकरारनामें जबरदस्ती लिखवा लेना, आदिवासियों को भूमि से बेदखल करना, सरकार के कारिंदो द्वारा आदिवासियों पर अन्याय-अत्याचार किये जाना, जैसे मामले घटित हो रहे थे। उपर से ब्रिटिशों ने 'फूट डालो और राज करो' नीति अपनाते हुए चूनिंदा लोगों को जमींदार बनाकर अपने अधीन करते थे। ये लोग अंग्रेजों के इशारे पर आदिवासियों पर अन्याय-अत्याचार करते थे। ब्रिटिश राज विरोधी आदिवासियों को गिरफ्तार कर यातनाएँ दी जाती थीं। बावजूद विद्रोह व स्वाधीनता की भावना भीतर ही भीतर सुप्त रूप में धधकने लगी थी। आदिवासियों की स्वाधीनता की चेतना का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि संताल इलाके में वीरसिंह माँझी ने नये गाँव को बसाकर उसे 'आज़ाद गाँव' नाम दिया था। भोगनाड़ीह निवासी चुन्नु माँझी के लड़कों - सिदो, कान्हो, चाँद और भैरो ने इलाके के आदिवासियों तथा गैर आदिवासियों को देश की आज़ादी के लिए एकजुट किया था। अंग्रेजों को आधुनिक बंदूकें, तोप, लंबी चौडी फौजें, दलाल महाजन और जमींदारों का साथ था किंतु आदिवासियों का विश्वास था, "हमारा तीर-धनुष उनके तोप-बंदूक से भी बलवान है। वीरसिंह, सूकेल, सिदो-कान्हो गाँव-गाँव में जन्म ले चुके हैं। एक सिदो के बदले एक सौ सिदो रोज जन्म ले रहे हैं।"[2] संतालों ने भोगनाडीह में सभा आयोजित करके सिदो को संताल राजा और कान्हु को सलाहकार, चाँद को प्रशासक और भैरो को सेनापति बनाया। सिदो ने संतालों से अपील की "तुम संताल-राज कायम करो। कंपनी राज को खत्म करो। अंग्रेजों, ठेकेदारों, नीलहों और उन देशद्रोहियों से बदला लो, जो अंग्रेजी सल्तनत कायम रखने में अंग्रेजों के मददगार हैं। राजस्व तुम स्वयं वसूलो, भैसों के हल पर दो आने और बैलों के हल पर एक आना सालाना कर वसूल करो। अगर कोई महाजन या दरोगा इस कानून का विरोध करें तो वह देश का दुश्मन समझा जाए और देश के लिए उसका वध कर दिया जाए।"[3]

सिदो ने बीस हजार आदिवासी सैनिकों को संगठित कर अंबर परगने पर धावा बोला और परगने पर कब्जा किया। सैनिकों के उत्साह को बढ़ाते हुए सिदो ने कहा था, "मेरे प्यारे सेनापतियों हममें और अंग्रेज फौजों में आकाश-जमीन का फर्क है। हमें सुराज चाहिए-स्वाधीन मातृभूमि। संथाल परगने का बच्चा-बच्चा हमारा सिपाही है। लड़ाकू हथियार है। मरता भी है तो आज़ादी के लिए। इसके भीतर कहीं गुलाम मानुष नहीं। एक अंग्रेज फौजी के बराबर एक संताल सुराजी सवा लाख फौजियों के समान है। वे सभी भाड़े के हैं, कंपनी के नौकर-गुलाम हैं। इन भाड़े के टट्टुओं में कोई देशप्रेम नहीं होता। उनमें मृत्यु का डर बराबर रहता है, हमारे भीतर मृत्यु जैसी कोई चीज नहीं होती।"[4] संथालों ने क्रूर अंग्रेज अधिकारी, जमींदार व महाजनों का वध करना शुरू किया। सिदो के नेतृत्व में विजय पताका फहराती फौज पाकुड़ पहुँची। पाकुड, अंग्रेजों का केंद्र था। यहाँ अंग्रेज अधिकारियों एवं रेल पदाधिकारियों के लिए सरकार ने विशालकाय 'मारटेल टावर' बनाया था। पाकुड़ में जब सुराजियों ने इन्हें चारों ओर से घेरा तो फौजों ने भागकर इसी टावर में अपनी प्राण रक्षा की थी। अंग्रेजों ने टावर से अंधाधूंध गोलियाँ दागकर कई सुराजियों को शहीद किया। आज भी मारटेल टावर भारत में स्वाधीनता की पहली लड़ाई की गाथाएँ सुनाता खड़ा है। अगली कार्यवाही में आदिवासी वीरों ने वीरभूम पर कब्जा किया। इसमें कान्हो की शहादत हुई। यहीं पर विद्रोहियों ने कंपनी राज का खात्मा और स्वाधीन संताल-राज स्थापित होने की घोषणा की थी।

भागलपुर कमिश्नर ने संतालों की घोषणा से क्रुद्ध होकर लार्ड डलहौजी से मार्शल लॉ जारी कर संताल अंचल फौजों के हाथ में सौंपने का अनुरोध किया। कमिश्नर ने विद्रोही नेताओं की गिरफ्तारी के लिए पुरस्कारों की घोषणा करके विद्रोहियों को देखेते ही गोलियाँ दागने का आदेश भी जारी किया। कई आदिवासी नेताओं की गिरफ्तारियाँ हुई। ब्रिटिश सेना संथाल गाँवों को जलाती और कत्लेआम करती आगे बढ़ रही थी। बावजूद इसके

आदिवासियों ने छापामार पद्धति अपना कर वीरभूम के शेष हिस्से पर कब्जा करके गुणपुर लेफ्टीनेंट का वध किया। भयभीत मेजर बरोज ने भागलपुर कमिश्नर को चिट्ठी भेजी जिसकी इबारत थी, "हमें खबर मिली है कि विद्रोही छोटे-छोटे दलों में बँटकर चलते हैं। मगर मादल की आवाज सुनते ही विद्रोही दस-दस हजार के दलों में लूट-मार के लिए इकट्ठा हो जाते हैं। मेरे अधीन सेना इतनी छोटी है कि अगर और भी दस्तों में बाँटा जाय तो उसमें युद्ध करने की क्षमता नहीं रहेगी।"[5] सरकार ने विचार-विमर्श के बाद घोषणा की - यदि संथाल आत्मसमर्पण कर दें तो उनके नेताओं को छोड़कर माफी दी जाएगी। यहीं नहीं पूर्ण शांति के बाद उनकी शिकायतों पर सरकार विचार करेगी। इसके बाद भी वे आत्मसमर्पण नहीं करते हैं तो उन्हें अत्यंत कठोर दंड दिया जाएगा। संताल नहीं माने। कई संताल नेताओं की गिरफ्तारियाँ हुई। कइयों को फाँसी हुई। बुढे, बच्चों, महिलाओं को कत्ल कर बस्तियाँ वीरान कर दी गयी। दमन और युद्ध के सामने विद्रोही पीछे हटते गए। चाँद और भौरव भागलपुर लड़ाई में शहीद हुए। भागलपुर पराजय से सिदो टूटते गये। अंग्रेज, आत्मसमर्पण की प्रतीक्षा करते रहें। किंतु आदिवासियों ने लड़कर वीरगति को प्राप्त होना बेहतर समझा, आत्मसमर्पण नहीं। अंग्रेजों ने विद्रोहियों की धर-पकड़ शुरू की। दो सौ इक्यावन लोगों पर केस चला। बच्चों को बेंत लगाने की और बडों को चौदह साल तक की सजा मिली। सिदो को फाँसी दी गयी। अंग्रेजों को लगा-अब विद्रोह थम जाएगा किंतु सिदो ने संथालों में जगायी चेतना कहाँ बुझनेवाली थी। सिदो के बाद आज़ादी की जंग सुकेल, तुरिया, किरता, सुन्नो माझी और गोको नायक के नेतृत्व में जारी रखी गयी। संथालों ने मरते दम तक अंग्रेजी सत्ता का विरोध करते हुए देश से उन्हें खदेड़ देने की ठान ली थी। फिर से आदिवासी परंपरागत हथियारों से लौस होकर लड़ने के लिए निकल पडे। अंतत: हुकूमत ने संथाल इलाके में 14 नवंबर, 1855 को मार्शल लॉ लागू करके 25 हजार से भी ज्यादा फौज बिछा दी। इसीके बल पर बड़ी ही निर्ममता से संथाल स्वतंत्रता आंदोलन को दबाया।

हरिराम मीणा द्वारा लिखा 'धूणी तपे तीर' उपन्यास भील आदिवासियों द्वारा चलाए गए स्वजतंत्रता आंदोलन पर लिखा है। भीलों का स्वतंत्रता आंदोलन गोविंद गुरू के नेतृत्व में दक्षिणी राजस्थान की रियासतें एवं गुजरात की संतरामपुर रियासत में चलाया गया था। यह वह दौर था जब ब्रिटिश सत्ता नये-नये कानून बनाकर हस्तक्षेप की रणनीति तैयार कर रही थी ताकि देसी रियासतों में उनकी पकड मजबूत बने। अंग्रेज व रियासती शासक आदिवासियों को अलग-अलग जातियों, गोत्र, पाल व खाप के नाम से संबोधित करके फूट डाल रहे थे। कुरिया भगत इस षडयंत्र से आदिवासियों को जाग्रत करते हुए कहता है, "ये सब बातें हमको बाँटने के लिए फैलायी जा रही हैं। हमारे पुरखे एकजूट होकर अपने हकों के लिए लड़ते थे और जीते थे। तुम्हें पता नहीं कि इस पूरे आदिवासी इलाके में पुराने जमाने में हमारे राजा महाराजा हुआ करते थे। कोई दूसरा हम पर राज नहीं कर सकता था...डूंगर भील ने डूंगरपुर बसाया था। बाँस्या भील ने बांसवाड़ा। इसी तरह बूँदा मीणा के नाम पर बूँदी और कोट्या भील के नाम पर कोटा शहर बसे। इन परदेसी फिरंगियों ने हमारे राज छीने हैं। और हमारे इलाकों पर राज कर रहे हैं। फिरंगियों को रजवाड़े ही बुलाकर लाये हैं और अब दोनों मिलकर हमारा खून चूस रहे हैं।"[6]

गोविंद गुरू ने फिरंगी एवं देसी शासकों के दमनचक्र के खिलाफ 'सम्प सभा' गठित कर आदिवासियों को एकजूट करके मानगढ़ को स्वतंत्रता आंदोलन का केंद्र बनाया था। सम्प सभा के कार्य से ब्रिटिश और रियासतें आग बबूला हो उठीं। हुकूमत ने गुरू के जाग्रृति कार्य को राजविरोधी करार देकर उन्हें देश निकाला दिया। "गोविंद गुरू वागड़ प्रदेश को ही जंबूखंड मानते थे। फिरंगियों को वे अपना असली दुश्मन मानते थे। चूँकि उन्हीं के कारण देसी राजाओं ने आदिवासी विरोधी नीतियाँ लागू की थीं। अंग्रेजी सत्ता केंद्र दिल्ली था.....गोविंद गुरू का लक्ष्य दिल्ली की गद्दी था। अर्थात् अंग्रेज राज का खात्मा।"[7] रियासती इलाकों में आर-पार की लड़ाई के लिए मानगढ़ पर इकट्ठा होने का संदेश आदिवासियों तक पहुँचाया गया। रियासती शासकों ने गोविंद गुरू की हरकत आदिवासी राज की स्थापना का पूर्व संकेत मानी। सरकार ने संभवित विद्रोह दबाने के लिए गोविंद गुरू की गिरफ्तारी का फैसला किया। इस कार्रवाई को 'ऑपरेश मानगढ़' कहा गया। इसका नेतृत्व मेजर स्टोकले ने किया था। स्टोकले ने मानगढ़ पर आदिवासियों की बड़ी तादाद और सीधे टकराव का मनसूबा देख गोविंद गुरू से बातचीत के द्वारा सुलह की कोशिश के उद्देश्य से संदेश भेजा कि "अगर गोविंद गुरू मानगढ़ खाली कर दें तो कोई फौजी कार्रवाई नहीं की जायेगी...।"[8] जवाब में गोविंद गुरू ने वार्ता हेतु शिष्टमंडल के जरिए स्पष्ट कहा - जब तक तमाम माँगे पूरी नहीं होती तब तक आदिवासी मानगढ़ नहीं छोडेंगे। सेना अधिकारियों ने शिष्टमंडल के जरिए प्रति संदेश भेजा - आदिवासियों का यह रवैया अड़ियल किस्म का है। भारी संख्या में आदिवासियों का एकत्रित होना समर्थनीय नहीं है। यह राजद्रोह है। मानगढ़ पर्वत खाली नहीं किया गया तो तमाम विरोधियों को कत्ल कर दिया जाएगा।

मेजर वेली ने सेना अधिकारियों संग कार्यवाही के दौरान अपनायी जानेवाली रणनीति पर चर्चा की। इसके तहत वेली ने 17 नवंबर, 1913 को 104 वेल्सले रायफ्ल्स की एक कंपनी, मेवाड़ कोर की दो कंपनियाँ, पंचमहल पुलिस अधिक्षक के नेतृत्व में 40 सशस्त्र जवानों की टुकडी, बारिया के ठाकुर के नेतृत्व में घुड़सवार दस्ता, संथ राज्य पुलिस, मेवाड़ घुडसवार पलटन, डुंगरपुर फौज एवं मेवाड़ भील कोर की मदद से मानगढ़ की घेराबंदी की। गोविंद गुरू व आदिवासी बेखबर थे। वे यही मानकर चल रहे थे - फौजों का डेरा अंबादरा गाँव में ही है पर सच्चाई भयावह थी। स्टोकले ने स्थिति का जायला लेते हुए पाया कि लगभग 25 से 30 हजार की आदिवासी भीड़ इकट्ठा है। वे कोई उत्पाती कदम उठाए इसके पूर्व ही उसने सेना को हमले का आदेश दिया, फायर!' तड़-तड़....तड़ातड़....तडातड़....फायर!!' तड़तड़.... तडातड़.... तडा़तड़.... मशिन गनें व रायफलें गोलियों की बौछारें उगल रही थी। दूसरी तरफ मोर्चाबंद

आदिवासी एक के बाद एक ढेर होने लगे। शिलाखंड़ों की सुरक्षित ओट से उन पर अंग्रेज फौजों द्वारा सीधी गोलियाँ दागी जा रही थी।"[9] फौजों द्वारा चुहओर से घेरकर दागी जा रही गोलियों की बौछारों से आदिवासी वीरों के बदन एक के बाद एक छलनी हो रहे थे। खून से लथपथ मृत शरीरों से मानगढ़ पटने लगा। मंजर भयानक से भयानक बनता गया। स्टोकले ने महिलाएँ, छोटे बच्चे और बुढ़ों को तक नहीं छोडा। उसने निर्ममता से गोलियाँ चलाने का आदेश दिया था। नतीजा हार ही है यह जानते हुए भी बहादुर आदिवासी मौत हथेली पर रख परंपरागत हथियारों के सहारे साम्राज्यवादी सामंती ताकतों की विकसित बंदूकों एवं अग्नेयास्त्रों से भीड़े। और अंतिम साँस तक लड़कर अतुलनीय शौर्य का परिचय दिया। इस लड़ाई में लगभग डेढ़ हजार वीर शहीद हुए। आदिवासी नायकों गोविंद गुरू, पूंजा भगत एवं अन्य नौ सौ क्रांतिकारियों की गिरफ्तारियाँ हुई। मानगढ़ नरसंहार के लिए गोविंद गुरू को जिम्मेदार मानकर आजीवन कारावास सुनाया गया। जिसे बाद में संभवित विद्रोह की आशंका से देश निकाला में परिवर्तित कर दिया। गुजरात के रेवाकांठा एवं पंचमहाल इलाके की नायकदास जनजाति में जन्मे जोरिया भगत ने बेगार, जंगलों से आदिवासियों के परंपरागत अधिकार को खत्म कर देने और लगान के मुद्दे पर अंग्रेजों से बगावत की। हुकूमत के खिलाफ जोरिया भगत ने तमाम आदिवासियों को संगठित किया। 1818 से 1848 के बीच अंग्रेज एवं रियासतों के बीच हुई संधियों के चलते गुजरात रियासती इलाके अप्रत्यक्ष रूप से अंग्रेजों के अधीन हो गए थे। 1857 के बाद यह सारा इलाका प्रत्यक्ष ब्रिटिशों के अधीन आ गया किंतु जोरिया की बगावत ब्रिटिशों के लिए अब भी चुनौती थी। जोरिया के नेतृत्व में पनपते विद्रोह को दबाने के लिए जो भी फौजी कार्यवाही होती उसका केंद्र राजगढ़ पुलिस थाना हुआ करता था। राजगढ़ पर जोरिया ने बागियों की सहायता से धावा बोला और वहाँ के थाना अफसर की गर्दन काटकर थाने पर कब्जा किया। वहाँ से विद्रोहियों का जत्था जंबूगोड़ा की ओर रवाना हुआ। सूचना मिलने पर विद्रोह को कुचलने के लिए कंपनी ने फौज रवाना की। जंबूगोड़ा के जंगलों में परंपरागत हथियारों से लैस आदिवासियों ने बहादुरी से ब्रिटिशों से लोहा लिया। लेकिन फौजों की बंदूकों व मशीनगनों से तड़ातड़ निकलनेवाली गोलियों के सामने मुकाबला संभव नहीं था। जोरिया ने आमने-सामने की लड़ाई टालकर छापामार पद्धति से युद्ध का विचार किया। पीछे हटते सुरक्षित स्थल की खोज में निकले विद्रोही ऐसे स्थान पर पहुँचे जहाँ पानी भरा था। वहाँ से निकलना मुश्किल हुआ। अवसर का लाभ उठाकर फौजों ने अंधाधूंध गोलियाँ दागी। सैंकड़ों आदिवासी मारे गए। कुछ ने भागकर जान बचायी लेकिन जोरिया तथा उसके साथी नेता रूपा तथा गललिया को अंग्रेज नहीं पकड़ पाये। अंग्रेज भलीभाँति जानते थे कि जब तक इन तीनों को खासकर जोरिया को नही पकड़ा जाता तब तक विद्रोह को नहीं कुचला जा सकता। छल-बल का सहारा लेकर अंतत: तीनों को गिरफ्तार किया गया। इन पर राजद्रोह का मुकदमा चलाकर तीनों को फाँसी पर लटकाया गया।"[10]

'मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ' उपन्यास में झारखंड के सिंग दिशुम के आदिवासियों द्वारा चलाए गये स्वतंत्रता आंदोलन को उजागर किया गया है। यह आंदोलन डबरू मानकी, गोनो हो, पोटो, नारा, बेराई, पंडुआ, सुरदन, टोपाये, हाडुवाकोमो, पांडुवा, कोचे हो आदि आदिवासी नायकों के नेतृत्व में चलाया गया था। हो आदिवासियों के स्वतंत्रता आंदोलन के मूल में - आदिवासी भूमि पर अंग्रेज और रियासती राजाओं द्वारा कब्जा किया जाना, आदिवासियों का वनों से पुश्तै नी हक खत्म कर देना, राज द्वारा भूमि पर लगान लगाये जाना तथा आदिवासी औरतों के साथ बंदुक की नोक पर की गयी बदसलूकी जैसे कई कारण थे। सेरेंगेटिया घाटी में किया गया घमासान युद्ध स्वाभिमानी आदिवासियों द्वारा चलाये गये स्वतंत्रता आंदोलन की महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में जाना जाता है। सेरेंगेटिया घाटी की गुफाओं से निकलकर छापामार पद्धति से आदिवासी तीर धनुष, टोंगा, अ:सर, हुतुरला जैसे पारंपारिक अस्त्रों से बहादुरी के साथ लड़े थे। इसमें कई लड़ाकुओं को वीरगति प्राप्त हुई थी। कइयों की गिरफ्तारियाँ हुई थीं। कई लड़ाकु हँसते-हँसते फाँसी पर लटक गये पर सिंग दिशुम की आज़ादी को बरकरार रखने की पूरी कोशिश हो आदिवासियों ने की। दक्षिण कोल्हन के बड़पीड़ पर आक्रमण करके लौट रही अंग्रेजी सेना जब मोगरा नदी पार कर रही थी तब झाड़ियों में छिपकर हो योद्धाओं ने उन पर तीरों की बौछारें कर दी। इसमें कई अंग्रेज सैनिक मारे गये। इससे तिलमिलाकर सरकार ने अत्याधुनिक शस्त्रों से लौस फौजियों की विशाल टुकड़ियों को भेजकर आदिवासियों पर अत्यंत सख्ती से कहर बरपाया था। लेखिका हो आदिवासियों की बहादुरी, स्वाधीनता और देशप्रेम की भावना को व्यक्त करते हुए लिखती है, "हमारे पूर्वजों ने अंग्रेजों की गुलामी नहीं स्वीकारी। अंग्रेजों का खजाना भरने के लिए राजाओं तथा जमींदारों को लगान देने से इनकार करते रहे। उनका प्रभुत्व स्वीकार नहीं करना चाहा। जो भी उन पर अधिपत्य जमाने आया, जो भी उनसे लगान मांगने आया उन सभी से वे लड़े....हमारा हौसला पस्त करने के लिए, हमें गुलाम बनाने के लिए अंग्रेज सरकार फौज पर फौज भेजती रही। आसपास के राजाओं तथा उनके जमींदारों (सामंत सरदारों) को अपने अधीन करके हमारे खिलाफ उनकी मदद करती रही या उन राजाओं के कहने पर भी सैन्ये शक्ति के प्रयोग से हमें परास्त करना चाहा मगर हमारे पुरखे उनसे लड़ते रहे....लड़ते रहे...."[11]

राकेशकुमार सिंह द्वारा लिखा 'हुल पहाडिया' उपन्यास आदि विद्रोही शहीद तिलका माझी पर लिखी समरगाथा है। तिलका माझी ने जुलमी व अनाचारी ब्रिटिश हुकूमत के साम्राज्यवादी नीतियों के विरोध में राजमहल की पहाडियों में बगावत का नगाडा बजाकर भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन की शुरूआत की थी। तिलका बचपन से ही स्वाभिमानी, वीरप्रवृत्ति व साहसी थे। तिलका ने बचपन में अपने पिता सुगना से ये कथाएँ सुनी थीं कि सदियों से राजमहल की जंगल तराई में पहाडिया आबाद थे। जंगल तराई में पहाडियों का ही राज था। तेलीयागढ़ी का किला पहाडियों के सत्ता का प्रतीक था। परंतु बाहर से आकर मोगल, मराठे,

पठानों ने पहाडियों को परेशान किया था। इसके बाद अब किस तरह विदेशी फिरंगी आकर जंगल छीनने की कोशिशों में लगे हैं, सुगना और तिलका की बातों से पता चलता है कि अफगान शेरशहा के बेटे जलाल खाँ ने तेलीयागढ़ी पर अफगानी झंडा फहराया था। 1535 में यह घटना हुई थी। बहिरागतों ने पहाडियों को खूब लूटा, उनका शोषण किया। 1639-1660 के बीच राजमहल की पहाडियों तक आते-आते फिरंगी दीकू सेंध लगाने में सफल हुए। ग्रेब्रियल ब्राउटन शुजा से व्यापार का अनुमतिपत्र प्राप्त करने में सफल रहा।

व्यापार की अनुमति वाले पत्र के जरीए अंग्रेज इलाके में फैलने में सफल रहे। उन्होंने राजमहल में छोटा अंग्रेज व्यापारी केंद्र भी स्थापित किया। उधवानाला के युद्ध से तो मानो ईस्ट इंडिया कंपनी को जंगल तराई में दोहन का अधिकार ही मिल गया। अंग्रेजों ने जंगल तराई में सस्ते श्रम का दोहन, भूगर्भ में दबी खनिज सम्पदा, जंगल तराई में बसी जमींदारियों से राजस्व की अनाधिकार वसूली जैसी चीजों को अंजाम पर पहुँचाया। यहीं नहीं अब तेलियागढ़ी पर फिरंगियों की पताका लहराने लगी। तिलका बचपन से सुनी तेलीयागढ़ी की करूण-कथा को नहीं भूला। तिलका को सीधे-सीधे अंग्रेजों से बगावत करने के लिए 1768 के दौर में पडे अकाल के पूर्व की अंग्रेजों द्वारा जंगल तराई के पहाडियों से मात्र चवन्नी के दाम में छह मन चावल खरीदने और इसी चावल को अकाल में चवन्नी के दाम में मात्र एक सेर बेचने की घटना ने बाध्य किया। इसी गुस्से में तिलका ने अपने साथियों को एकजुट किया। और ब्रिटिशों के विरोध में बगावत का बिगुल बजाया। और अपने साथियों के साथ मिलकर अंग्रेजों के राजस्व वसूली के खजाने को लूटा। इस घटना से "ईस्ट इंडिया कंपनी के अधिकारी सन्न थे। गजब घटित हुआ था। कंपनी का खजाना लुटा गया दिन दहाडे जंगल तराई के क्षेत्र में पहली बार कंपनी के खजाने की लूट हुई थी। कंपनी की सुरक्षा-व्यवस्था पर ही कालिख नहीं पूती थी वरन् जंगल तराई पर कंपनी के स्थापित होते दबदबे की नींव को कमजोर होने का संकेत हो सकती थी खजाने की यह लूट"[12] अब कंपनी का कहर दिन-ब-दिन जंगल तराई में बढ़ता ही जा रहा था। कंपनी ने इस लूट के पीछे किसका हाथ है, इसके लिए जोरों पर जाँच-पडताल शुरू की। कंपनी नहीं चाहती थी कि इस तरह उन्हें कोई ललकारे। अब कंपनी ने इलाके के सभी परगनों पर लगान देना अनिवार्य कर दिया। असल में पहाडियों का मानना था कि वे किसी की रैयत नहीं हैं। वे किसी राजा-कंपनी की माजगुजारी नहीं भरेंगे। उनका यह भी मानना था कि बाघ, भालू, हाथी, अजगर, सबसे लडे थे पहाडिया। जंगलों को काटकर साफ करने में न जाने कितनी पीढियाँ बीत गई तब जाकर पहाडियों के गाँव बसे थे। उन्होंने अपने ही दम पर जमीन बनाई थी तो दूसरों को लगान क्यों दें। जंगल तराई के तमाम पहाडिया परगना माझियों ने तय किया कि किसी भी हालत में कंपनी को लगान नहीं दिया जाएगा। उपन्यास का लगन सरदार कहता है, "हम सबको मरना है एक दिन। आगे पीछे सब जाएँगे, लेकिन बाल-बच्चों के सिर पर लगान का भूत बोझ कर क्यों मरें पहाडिया?"[13] ब्रिटिशों ने और एक चाल चलते हुए जंगल तराई को दक्षिणी-पश्चिम सीमांत का नाम देकर जंगल तराई में देशी व्यापारियों, मित्रों और सूदखोर महाजनों को बसाना प्रारंभ किया और इस तरह जंगल तराई में आदिवासियों को ही अल्पसंख्यक बनाने की कोशिशें करते हुए आदिवासियों व गैर-आदिवासियों के बीच कंपनी दलालों-बिचौलियों को स्थापित करने की नीति चली। यहीं नहीं जंगल तराई के गाँवों पर नियंत्रण रखने के हेतु पुलिस थाने और चौकियाँ भी बनायी गयीं। कुल मिलाकर जंगल तराई में विदेशियों ने मूलनिवासियों का जीना मुश्किल कर दिया था इससे तंग आकर तिलका ने फैसला किया कि "हम जिएँ या मरें, कोई बात नहीं। मर गए तो अपने पुरखों के बीच गर्व के साथ जा बैठेंगे। जी, बच गए तो माथ ऊँचा कर के जिएँगे पहाडिया....अब विजय या वीरगति।"14 इस तरह का निर्णय लेते हुए तिलका ने जंगल तराई में तमाम मूलनिवासी जातियों को एकजुट करते हुए 1771 से 1784 तक गुरील्ला तरीके से युद्ध लडते हुए अंग्रेज शासक, सामंतों और महाजनों का कडा प्रतिरोध किया। कुल मिलाकर यह हुल ही आगे चलकर भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन को व्यापक आयामों तक पहुँचाने वाला साबित हुआ।

संदर्भ

1 . केदार प्रसाद मीणा, आदिवासी विद्रोह–परंपरा और साहित्यिक अभिव्ययक्ति की समस्याएँ, अनुज्ञा प्रकाशन, दिल्ली, संस्क रण, 2015, अनुक्रम से

2. मधुकर सिंह, बाजत अनहद ढोल, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली द्वितीय संस्कंरण, 2005, पृ.88

3.वही, पृ.82

4.वही, पृ.92

5.वही, पृ.113

6.हरिराम मीणा, धूणी तपे तीर, साहित्यर उपक्रम, हरियाणा, जनवरी, 2008, पृ.118

7.वही, पृ.309

8.वही, पृ.340

9.वही, पृ.366

10.वही, पृ.128

11.महुआ माजी, मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्लीण, प्रथम संस्करण, 2012, पृ.241

12.राकेशकुमार सिंह, हुल पहाडिया, सामायिक बुक्स्, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2012, पृ.36

13.वही, पृ.125

14.वही, पृ.314

****

बंगाल नवजागरण का भारत के विभिन्न प्रांतों पर प्रभाव

-डॉ.अपराजिता जॉय नंदी
सहायक प्राध्यापक,
श्री शंकराचार्य कॉलेज ऑफ प्रोफेशनल स्टडीज,रायपुर, (छत्तीसगढ़)

19वीं सदी के दूसरे दशक में भारत के संदर्भ में सबसे पहले बंगाल में नवजागरण आया, परंतु उसी देश के अन्य हिस्से में पहुँचने में थोड़ा समय लगा। किंतु 20वीं सदी के आरंभिक दशकों तक नवजागरण की प्रक्रिया काफी हिस्सों में फैल चुकी थी, क्योंकि भारत इतना विशाल देश था तथा यहाँ विभिन्न बहुभाषिकता, बहुधार्मिकता, बहुजातीयता थी। सभी की सामाजिक पृष्ठभूमि भी अलग–अलग थी। देश के कुछ हिस्सों में जातीयता रूकावटों का कारण था तो कुछ हिस्सों में धार्मिक अंधविश्वास उभरकर सामने आ रहा था। कहीं–कहीं पर संपूर्ण समाज ही निष्क्रिय पड़ा हुआ था। अतः 19वीं सदी के नवजागरण का संघर्ष काफी कठिन था। फिर भी सुधारकों ने संघर्ष जारी रखा तथा सामाजिक कुरीतियों को दूर करने स्त्रियों की शिक्षा, स्त्रतंत्रता, निम्न वर्गों को समाज में उचित स्थान दिलाने, धार्मिक पाखण्डों तथा अंधविश्वासों को दूर करने आदि के लिए तीव्र आंदोलन करते रहे। बस अंतर केवल इतना था कि कहीं पर यह स्वर उग्र था और कहीं पर धीमा। फिर भी संघर्ष निरंतर जारी रहा, इसलिए भारतीय नवजागरण कई अंतर्धाराओं में बँटी हुई थी, लेकिन सुधार का स्वरूप एक ही था। जैसे बंगाल में बुद्धिवाद नवजागरण की उत्पत्ति का कारण बना, केरल और तमिलनाडु में ब्राह्मणवाद को निशाने पर रखा गया, आंध्रप्रदेश तथा गुजरात में शिक्षा और धार्मिक सुधार पर बल दिया गया, महाराष्ट्र में दलितों के शोषण एवं ब्राह्मणवाद का विरोध किया गया, किंतु कहीं–न–कहीं इन सभी में समानता यह थी कि इनमें किसी–न– किसी विपरीत परिस्थितियों के विरूद्ध मानवीय शांतिवाद की आवाज बुलंद हो रही थी। अंग्रेजों के भारत में आने के पश्चात भारतीय समाज का आधुनिकता से परिचय का सिलसिला प्रारंभ हुआ। अंग्रेजों का शासन, आधुनिक शिक्षा का प्रसार, पाश्चात्य संपर्क आदि के संयोग से भारतीय समाज में आत्मबोध का बीज अंकुरित हुआ। भारतीय समाज में स्थापित तत्कालीन शासन प्रणाली पूर्व के शासन प्रणालियों से कुछ भिन्न थी। यह भिन्नताएँ कहीं सकारात्मक थी तो कहीं नकारात्मक। मुसलमान शासकों ने अपने शासन को स्थापित करने के उद्देश्य से जनता के नजदीक पहुँचने के लिए स्थानीय भाषा एवं साहित्य का सहारा लिया। स्थानीय भाषा को सीखकर उनके साहित्यिक रचनाओं को सुरक्षित रखने तथा परिस्थितियों के सुधार के लिए जनता के पक्ष में कार्य करने लगे, जिससे भारतीय जनता को यह लगा कि भारतीय समाज की जो दयनीय स्थिति है, उससे अब ये शासक ही उन्हें बचा सकते हैं। ऐसी भावनाओं के साथ मुसलमान शासकों के शाषन को जनता ने भी अपनाया। जनता पर शासन का अधिकार प्राप्त होते ही उन्होंने अपना उग्र रूप दिखाना आरंभ किया तथा दिन–प्रति–दिन अत्याचारों का सिलसिला बढ़ता गया। भारतीय जनता जागृत हुई उम्मीद पूर्णतः नीरस पड़ गई। उन्हें फिर धोखा हुआ। जनता ने सोचा था कि नए शासक के आने से वे अब सुव्यवस्थित जीवन व्यतीत करेंगे, किंतु यह न हो सका, बल्कि परिस्थितियाँ और बिगड़ गई। मुसलमान शासक मुख्य रूप से निम्न वर्ग के लोगों विशेषकर हिंदुओं को धर्म परिवर्तन के लिए बाध्य करते थे। यदि वह ऐसा न करें या तो उन्हें मार दिया जाता था या फिर उन पर इतने अत्याचार किए जाते थे कि विवश होकर वे धर्म परिवर्तित कर लेते थे। कुछ लोग धर्म परिवर्तन न करके मृत्यु को ही अपना लेते थे। जब भारत में अंग्रेजों का शासन प्रारंभ हुआ तो जनता में फिर से नई आशा जगी कि अंग्रेजों के आने से मुसलमान शासकों द्वारा किए जा रहे अत्याचारों से उन्हें राहत मिलेगी, क्योंकि अंग्रेजों की शासन व्यवस्था, रहन–सहन, तौर–तरीके सब आधुनिक थे। प्रारंभ में मुसलमान शासकों की भाँति अंग्रेजों ने भी जनता के पक्ष में रहकर इन शासकों के अत्याचारों से जनता को बचाया तथा मुसलमाना शासकों पर अपना नियंत्रण स्थापित किया। इससे जनता बहुत प्रसन्न थी कि अब उनका भाग्य बदलेगा और वे अब शांति से अपना जीवन व्यतीत कर सकेंगे। प्रारंभ में ऐसा हुआ भी, किंतु कुछ समय बाद अंग्रेजों ने समाज के निम्न वर्ग को अपनी कूटनीति का शिकार बनाया। अंग्रेजों ने समाज के निम्न तथा उपेक्षित वर्ग के लोगों को भी अपनी सेना में सम्मिलित किया। इससे यह हुआ कि निम्न वर्ग के लोग समाज तथा शासन में स्थान पाकर काफी प्रसन्न थे। उनके लिए अंग्रेज किसी फरिश्ते से कम नहीं थे, क्योंकि न जाने कितनी शताब्दियों से इन वर्गों का समाज ने अप्रत्यक्ष रूप से बहिष्कार कर रखा था। इसके कारण निम्न वर्ग पीढ़ी–दर–पीढ़ी अंग्रेजों के पक्ष में ही रहे, जिसके कारण अंग्रेजों को भारतीय समाज के एक विशाल भाग का समर्थन प्राप्त हो गया। धीरे–धीरे अंग्रेजों की शक्ति में वृद्धि होती गई। अंग्रेजों की ऐसी नीति से दो प्रकार के परिणाम उभर कर सामने आया– पहला समाज के निम्न वर्ग का समाज में एक पहचान स्थापित हुआ, जो सकारात्मक पक्ष था तथा दूसरा उससे समाज में उच्च वर्ग को निम्न वर्ग के प्रति आक्रोश और अधिक बढ़ गया। उच्च वर्ग पहले से ही निम्न वर्ग की उपेक्षा करता था और अब समाज में उसके सम्मानजनक स्थिति से उच्च वर्ग विचलित था एवं उसमें आक्रोश बढ़ता गया, जो इस नीति का नकारात्मक पक्ष था। मूल रूप से देखा जाए तो भारतीय समाज का उच्च एवं निम्न वर्ग एक–दूसरे का विरोधी बन गया, जिसका फायदा अंग्रेजों ने कई शताब्दी तक उठाया। यही तो अंग्रेजों की वास्तविक नीति थी फूट डालो शासन करो। मुसलमानों एवं अंग्रेजों की जनता के मध्य अपने को स्थापित करने की नीति पर कुर्मेन्दु शिशिर ने लिखा है कि– ''जब मुसलमान आए थे, तो उन्होंने निम्न वर्गों को धर्म–परिवर्तन के अनुकूल समझकर उन्हें अपने साथ करने का प्रयत्न किया। आगे चलकर ऐसा हुआ भी। कुछ समय बाद अंग्रेजों ने भी ऐसा ही किया।''[1] भारतीय समाज एक के बाद एक शासकों को झेलता रहा, जिससे समाज की स्थिति अपनी जर्जर अवस्था में पहुँचती गई। ऊपर से अंग्रेजों की गुलामी ने इस स्थिति को और अधिक विषम बना दिया। केवल राजनीतिक पक्ष को छोड़कर सामाजिक एवं धार्मिक दोनों ही क्षेत्र में सुधार की आवश्यकता थी, ताकि पथ–भ्रष्ट हो रहे भारतीयों को एकत्रित कर उन्हें एकता के सूत्र में बाँधकर उनको स्वतंत्र (शारीरिक एवं मानसिक दोनों ही पक्षों से) किया जा सके एवं देश व समाज के वास्तविक रूप को बचाया जा सके। भारत को राजनीतिक, सामाजिक एवं धार्मिक क्षेत्रों में जो अराजकता फैली थी वह राजनीति में इसलिए नहीं थी, क्योंकि सत्ता को ईस्ट इंडिया कम्पनी के माध्यम से अंग्रेजों ने संपूर्ण भारत में विस्तार किया, जिससे एक सुव्यवस्थित शासन व्यवस्था कायम हुई। राजनीति में जैसे सुव्यवस्था थी, वैसी सुव्यवस्था भारतीय समाज के सामाजिक एवं धार्मिक पक्ष में नहीं थी। अधिकांश भारतीय अंधविश्वास एवं कुप्रथाओं से घिरे हुए थे। ऐसी स्थिति भारत के प्रायः सभी प्रातों में थी, अब इनमें सुधार करना आवश्यक हो गया था। इसी आवश्यकता के कारण प्रत्येक प्रांतों में कुछ–न–कुछ सुधार कार्य प्रारंभ हो चुके थे, केवल उनका रूप एक–दूसरे से भिन्न था, किंतु विषय एक ही था। सत्यकेतु विद्यालंकार के अनुसार– ''इसमें कोई संदेह नहीं कि नवयुग का सूत्रपात करने वाले विविध आंदोलन व कार्य भारत में एक समय में ही शुरू हुए और वे एक साथ ही निरंतर उन्नति करने लगे।''[2] वैसे तो सुधार कार्य सभी प्रांतों में प्रारंभ हो चुके

थे, किंतु बंगाल में हो रहे सुधार कार्य को एक आंदोलन का रूप दिया गया। सुधार आंदोलन न केवल एक सामाजिक कार्य के रूप में सामने आया, बल्कि साहित्यिक रूप से भी सुधार लाने का प्रयास किया गया, जिसका प्रत्यक्ष परिणाम बंगाल के समाज में देखने को मिला, इसलिए बंगाल के सुधार आंदोलन को भारत के अन्य प्रांतों ने भी अपनाया। वास्तविक रूप से देखा जाए तो बंगाल में नवजागरण की प्रक्रिया प्रारंभ हुई उसे एक आदर्श रूप मानकर देश के अधिकांश हिस्सों में नवजागरण की कई अंतर्धाराएँ प्रवाहित हुईं, जिनका मूल उद्देश्य एक ही था कि राष्ट्रीय स्वत्व को पहचान कर आधुनिकता को अपनाना। डॉ. शंभूनाथ के अनुसार– ''भारत में सामाजिक सुधार के जितने भी काम हुए और आधुनिकीकरण से सम्पर्क लगातार सघन करते हुए राष्ट्रीय आत्मपहचान का संघर्ष जितना भी आगे बढ़ा वह कम महत्पूर्ण नहीं है।''[3] राजा राममोहन राय द्वारा बंगाल में स्थापित 'ब्रह्म समाज' नामक संस्था के सुधार कार्य से प्रभावित होकर अनेक समाज सुधारकों ने अपने–अपने क्षेत्रों में ऐसी ही संस्थाएँ खोली। प्रत्येक प्रांतों में स्थापित ये संस्थाएँ तत्कालीन समाज के नवजागरण के केंद्र–बिंदु होते थे। ऐसी ही एक सुधार संस्था सन् 1867 ई. में केशवचंद्र सेन द्वारा महाराष्ट्र के बंबई शहर में खोली गई, जिसका नाम 'प्रार्थना समाज' रखा गया। 'प्रार्थना समाज' के दो मुख्य उन्नायक थे– महादेव गोविंद रानाडे तथा रामकृष्ण गोपाल भंडारकर। इस संस्था पर 'ब्रह्म समाज' का काफी गहरा प्रभाव रहा। उन्होंने भी उन्हीं मुद्दों को सामने लाया, जिन्हें 'ब्रह्म समाज' ने सुधार आंदोलन के मुख्य मुद्दे बनाए थे अर्थात् 'प्रार्थना समाज' ने भी जाति–प्रथा, विधवा–पुनर्विवाह तथा स्त्री–उद्धार आदि तथ्यों को समाज के सामने लाया, क्योंकि इन्हीं समस्याओं में सर्वाधिक सुधार की आवश्यकता थी। 'प्रार्थना समाज' के सुधार–कर्मियों ने इन्हीं विषयों को लेकर सुधार–कार्य प्रारंभ कर दिया। रानाडे ने अपना यह कार्य केवल अपने प्रांत तक सीमित नहीं रखा, बल्कि उसे पूरे भारत में फैलाने के उद्देश्य से 'भारतीय राष्ट्रीय सामाजिक सम्मेलन' नामक एक और संस्था की स्थापना की, जिसमें विभिन्न विचारकों के साथ मिलकर सामाजिक समस्याओं के विषय में चर्चा की जाती थी तथा उनके निवारण के उपाय खोजे जाते थे। उनका मानना था कि जब तक समाज नहीं सुधरेगा, तब तक समाज की न तो आर्थिक स्थिति में उन्नति होगी और न ही राजनीतिक क्षेत्र में उन्नति हो पाएगी। इसके लिए लोगों में साम्प्रदायिक एकता का होना अति आवश्यक है। रानाडे के शब्दों में– ''जब तक हिन्दू–मुसलमान एक–दूसरे से हाथ नहीं मिलाते, तब तक इस विशाल देश में कोई प्रगति नहीं हो सकती।''[4] रानाडे की भाँति ही महाराष्ट्र के एक और समाज सुधारक गोविंद राव फुले ने पूणे में भी 'सत्यशोधक समाज' नामक संस्था की स्थापना की, जिसके द्वार सभी जातियों के लिए हमेशा खुले थे। फुले ने मुख्य रूप से दलित जातियों के सम्मान एवं अधिकारों के लिए संघर्ष किया। यह स्वाभाविक था कि वे दलित वर्ग के समर्थक थे, इसलिए ब्राह्मण वर्ग का घोर विरोध किया करते थे। उन्होंने अपना विरोध प्रदर्शन करने के लिए ब्राह्मणों के बिना विवाह समारोह संपन्न करने की प्रथा का चलन प्रारंभ किया। पूणे की यह संस्था महाराष्ट्र में प्रारंभ हुए सुधार आंदोलन का एक महत्वपूर्ण केंद्र था। उन्होंने अपनी संस्था के माध्यम से अपने विचारों का प्रचार–प्रसार किया तथा समाज सुधार के कार्यक्रमों को क्रियान्वित भी किया।तत्कालीन समाज में स्थापित ये संस्थाएँ, उनके संस्थापक तथा कार्यकर्ता एक सुधारवादी सैनिकों की भाँति थे, जो समाज में फैली बुराइयों को समाप्त करने के लिए कटिबद्ध थे। ऐसा ही संघर्ष दक्षिण भारत में देखने को मिला। दक्षिण भारत में भी सुधार की आवश्यकता थी, क्योंकि दक्षिण भारत के समाज में ब्राह्मणवाद तथा जातिवाद का प्रभाव सर्वाधिक था। इसके प्रभाव के कारण मंदिरों में अनेक कुप्रथाएँ फैली हुई थीं। उदाहरण के रूप में वहाँ के मंदिरों में देवदासी प्रथा को लिया जा सकता है। इन सबको समाप्त करने के लिए कुछ समाज सुधारकों ने मिलकर 'वेद समाज' नामक संस्था की स्थापना की। यह संस्था भी 'ब्रह्म समाज' से काफी प्रभावित था। 'वेद समाज' ने भी 'ब्रह्म समाज' को अपना आदर्श मानकर दक्षिण भारत में सुधार आंदोलन प्रक्रिया की शुरूआत की। इस संस्था ने जात–पात, छुआछूत का विरोध किया तथा स्त्री–स्वतंत्रता तथा मंदिरों में सबके प्रवेश का समर्थन किया। साथ ही वे चाहते थे कि मंदिरों की सम्पत्ति पर जनता का अधिकार हो, न कि पंडित–पुरोहितों का। विपिन बिहारी सिन्हा ने तत्कालीन दक्षिण भारत की स्थितियों पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि– ''दक्षिण भारत के कुछ मंदिरों में निम्न जाति के लोगों का प्रवेश वर्जित था और कुछ अवसरों पर मंदिरों के समीप के रास्ते भी उनके लिए बंद कर दिए जाते थे। दक्षिण भारत के सुधारकों ने निम्न जाति के लोगों का मंदिर में प्रवेश के लिए और उनके साथ जुड़ी कई कुप्रथाओं को बंद करने के लिए जबरदस्त आंदोलन शुरू किया।''[5] दक्षिण भारत में फैले ब्राह्मणवाद एवं जातिवाद के कारण ही मंदिरों की ऐसी स्थिति थी। इससे समाज में अंधविश्वास भी फैलता जा रहा था। ब्राह्मण अपने आपको ही ईश्वर का एकमात्र कार्यकर्ता मानते थे। ईश्वर केवल उन्हीं का था। इस ब्राह्मणवाद एवं जातिवाद के लिए समाज में अछूत, शुद्र एवं पिछड़े वर्ग (जो यहाँ की कुल आबादी के सत्तर प्रतिशत से ज्यादा थे) को उनके सभी मूल एवं सामान्य अधिकारों से वंचित कर दिया गया। इन सभी व्यवस्थाओं के विरोध में तमिलनाडु के रामास्वामी नायकर ने 'आत्मसम्मान आंदोलन' प्रारंभ किया। इस आंदोलन के तीन मुख्य उद्देश्य थे– प्रथम ब्राह्मणों के धर्म का विरोध करना, द्वितीय पुरोहितों द्वारा किया जाने वाला शोषण मिटाना तथा तृतीय भाषा, साहित्य एवं संस्कृति में जातीय स्वाभिमान का भाव उत्पन्न करना। लोगों के प्रति उद्धार की इन्हीं भावनाओं के लिए श्रद्धापूर्वक इन्हें 'पेरियार' भी कहा गया। रामास्वामी नायकर कभी अपने विचारों एवं कार्यों से पीछे नहीं हटे। हमेशा वे बुद्धिवादी बने रहे। इनका विरोध केवल ब्राह्मणों तक ही नहीं था वरन् ईश्वर तक पहुँच गया था अर्थात् उनका मानना था कि चाहे उत्तर भारत हो चाहे दक्षिण भारत, दोनों के ईश्वर एक ही हैं। ईश्वर को बाँटकर उनकी पूजा करने वाले लोगों का उन्होंने विरोध भी किया। वे लोगों के मन में इस विचार को प्रवाहित करना चाहते थे कि उस ईश्वर की पूजा करो जो तुम्हारे हृदय में बसते हों, जो मात्र दिखाई दे रहा है, वह ईश्वर नहीं उसके नए–नए रूप हैं, जिसे प्रत्येक जाति–वर्ग के लोगों ने अपने–अपने अनुसार बाँटा है। नायकर के इस भावना का एक स्पष्ट उदाहरण यह है कि वे इस्लाम तथा बौद्ध धर्म दोनों के ही विचारों से प्रभावित थे। इस आंदोलन के अतिरिक्त उन्होंने 'आत्मसम्मान विवाह' नाम का आंदोलन भी चलाया, जिसमें बाल–विवाह तथा आजीवन विधवा बने रहने की प्रथा के विरूद्ध आवाज उठाई गई, साथ ही कन्यादान प्रथा का भी विरोध किया गया। उनका मानना था कि कन्या कोई वस्तु नहीं है, जिसे दान में दिया जाए। वह भी एक मनुष्य ही है। माता–पिता ने अपनी कन्या को दुनिया में लाया अवश्य है, किंतु उसे कोई वस्तु समझकर दान दिया जाए, उसके पीछे भी माता–पिता का स्वार्थ ही है कि उनका जीवन धन्य हो जाएगा। लोगों की ऐसी भावनाओं का नायकर ने विरोध किया। उसके अनुसार समाज में पुरुषों का जो स्थान है, वही महिलाओं का भी होना चाहिए। नायकर द्वारा किए गए आंदोलन से तमिलनाडु के समाज की स्थिति पूर्ण रूप से ठीक तो नहीं हो पाई, पर हाँ कुरीतियों में थोड़ी कमी जरूर आई, किंतु इस प्रयास को दक्षिण भारत के समाज में नवजागरण लाने के प्रयास की सूची में अवश्य गिना जा सकता है। डॉ. शंभुनाथ ने रामास्वामी नायकर के प्रयासों के बारे में कहा है कि– ''तमिलनाडु के सामाजिक जीवन पर पेरियार का एक समय काफी प्रभाव पड़ा, हालांकि अंधविश्वास और कुरीतियों में ज्यादा कमी नहीं आई, किन्तु जातीय एवं उपेक्षित वर्गों के आत्मसम्मान का भाव जरूर पनपा।''[6] तमिलनाडु एवं केरल की सामाजिक स्थिति लगभग एक समान ही

थी। केरल में भी जातिवाद एवं ब्राह्मणवाद फैला हुआ था। केरल के समाज से इस गंदगी को मिटाने का जिम्मा केरल के एक लोकप्रिय सुधारवादी नायक नारायण गुरू ने अपने कंधों पर लिया। वे शंकराचार्य से काफी प्रभावित थे, जिसके कारण उन्होंने एक शिव मंदिर बनवाया है, किंतु तत्कालीन ब्राह्मणों ने इस मंदिर में पूजा करने से इंकार कर दिया। ब्राह्मणों के इस व्यवहार का विरोध करे हुए नारायण गुरू ने स्वयं ही पूजा शुरू की। उनके व्यक्तित्व में एक कहावत काफी सटीक बैठता है– 'सादा जीवन उच्च विचार'। लोग इसके जीवन एवं स्वभाव से काफी प्रभावित थे, जिसके कारण उनका जीवन दिखावा रहित था। तमिलनाडु के रामास्वामी नायकर की भाँति कर्नाटक के साहित्यकारों ने सुधार आंदोलन का जिम्मा अपने ऊपर लिया। कर्नाटक में नवजागरण के तीन मुख्य आधार स्तंभ थे– शिक्षा, साहित्य एवं रंगमंच। इन तीनों के बलबूते कर्नाटक में नवजागरण का कार्य प्रारंभ हुआ। कर्नाटक के कन्नड़ कवि बी.एम. श्रीकांतय्या ने अपनी रचना के माध्यम से लोगों के विचारों में परिवर्तन लाने का प्रयास किया। उनके अनुसार जब विचार बदलेगा तभी समाज भी सुधरेगा। इन्होंने कर्नाटक को कभी मन से पराधीन नहीं माना, भले ही देश पराधीन हो। इसको स्वतंत्र करने तथा समाज को सुधारने के उद्देश्य से उन्होंने देशभक्ति से संबंधित कविताओं का सृजन किया। अपनी प्रारंभिक कविता 'भारतमाता' में उन्होंने समुद्रों की रानी विक्टोरिया से प्रार्थना की कि वह उनके भारत देश की अव्यवस्था को दूर करें। उनके जैसे विचारों वाले कन्नड़ के एक और रचनाकार टी.पी. कैलासम हैं, जिन्होंने जब–जब लिखा तब–तब सामाजिक समस्याओं को ही केंद्र में रखा। इन्होंने अंग्रेजी शासन व्यवस्था की भी आलोचना की। कैलासम कनार्टक को एक ऐसे रूप में देखना चाहते थे, जिसमें कोई जातिवाद की भावना न हो। सभी तमिल, तेलगु, कन्नड़ भाषा–भाषी के लोग एक भारतीय के रूप में रमे बसे, आपस में कोई मतभेद न हो।

कुछ ऐसे ही विचार कन्नड़ की पहली स्त्री लेखिका तिरूमालंबा की भी थी। उन्होंने लोगों में एकता बढ़ाने के लिए जातीय चेतना को अधिक महत्व दिया। इसलिए इनके द्वारा रचित अधिकांश कविताओं के मुख्य विषय जातीयता ही रहे। तिरूमालंबा ने स्त्री के आत्मसम्मान के लिए भी काफी संघर्ष किया। वह खुद एक विधवा स्त्री थी। मात्र तेरह वर्ष की अल्पायु में ही वह विधवा हो गई थी। उन्होंने भले ही स्त्रियों के आत्मसम्मान के लिए संघर्ष किया, किंतु कभी भी उन्होंने विधवा–विवाह का समर्थन नहीं किया। उनके ऐसे विपरीत विचार का एक मुख्य कारण यह था कि वे चाहती थीं कि विधवा स्त्रियाँ घर से बाहर आकर समाज में कुछ काम–काज करें तथा अपने बलबूते अपने पैरों में खड़े होकर अपना जीवन–यापन करें। विवाह करके क्यों पुनः अन्य पर आश्रित रहे। इसके लिए विधवा स्त्री भी शिक्षा ग्रहण करे और अपने आप समाज के एक महत्वपूर्ण अंग के रूप में पहचान बनाए। कर्नाटक के एक समाज सुधारक अंबल नसिम्यंगर ने कर्नाटक में जिस स्त्री–शिक्षा की नींव डाली थी, उसे तिरूमालंबा ने आगे बढ़ाया। डॉ. शंभुनाथ के अनुसार– ''तिरूमालंबा ने अपने उपन्यास में विधवा विवाह का समर्थन नहीं किया, पर इसके लिए जरूर संघर्ष की कि विधवाएँ समाज में निकलकर काम करें और आत्म–सम्मान के साथ जिएँ।''[7] कर्नाटक की तरह आंध्रप्रदेश के लेखक रूपी समाज सुधारकों ने भी नवजागरण की मशाल को अपने प्रांत में सुलगाए रखा। ये साहित्यकार केवल लेखन–कार्य ही नहीं करते थे, बल्कि वे तो सक्रिय रूप से सामाजिक समस्याओं का निराकरण भी कर रहे थे। आंध्रप्रदेश के ऐसे साहित्यकारों में लक्ष्मी नरसिंहम, रघुपति वेंकटरत्मम् नायडु, वीरेश लिंगम, अप्पाराव आदि का नाम लिया जा सकता है, जिन्होंने समाज को सुधारने के लिए अनेक सुधारवादी आंदोलन चलाए। इस प्रांत में भी समाज का निम्न वर्ग तथा स्त्री वर्ग दोनों ही सुधार आंदोलन के तथा तत्कालीन साहित्यिक रचनाओं के विषय केंद्र रहे। अप्पाराव ने विधवा समस्या, बाल–विवाह तथा वेश्याओं आदि की स्थितियों एवं सामाजिक समस्याओं के विषय में अनेक नाटकों की रचना की जो समाज को दर्पण दिखाने की भाँति था। फकीर मोहन, ईश्वरचंद विद्यासागर एवं बंकिमचंद्र चटर्जी के समकालीन थे तथा वे इनके सुधार कार्यों से काफी प्रभावित भी थे। बंगाल के सुधारकों की भाँति इन्होंने भी उड़ीसा के समाज में सुधार लाने के लिए मुख्य रूप से साहित्य को ही अपना माध्यम बनाया। फकीर मोहन सेनापति की भाँति उड़ीसा के राष्ट्रकवि राधानाथ ने भी अपने प्रांत की स्थिति को सुधारने के लिए अनेक प्रयास किया। उन्हें उड़ीसा का प्रथम राष्ट्रकवि एवं उड़िया काव्य के नए युग के प्रवर्तक के रूप में भी जाना जाता है। उन्होंने सजीव प्रकृति को अपनी कल्पनाओं में अनुप्राणित कर उनको अपनी रचनाओं में समवोश किया। ऐसा प्रयास उड़िया साहित्य में पहली बार हुआ। उनके काव्य की सर्वाधिक ख्याति का प्रमाण यह है कि उड़ीसा के स्मारकों एवां मंदिरों में वही कहानियाँ प्रचलित हुई, जिसकी राधानाथ ने अपने काव्यों में वर्णन किया था। आधुनिक उड़िया साहित्य के तीसरे नायक मधुसूदन दास है, जिन्हें उड़ीसा के श्रेष्ठ भक्त–कवि के रूप में जाने जाते हैं। उन्होंने ऐसी रचनाओं का सृजन किया जो आज भी उड़ीसा में नवीन चेतना को प्रभावित करता है। एक अध्यापक, कवि, शिक्षाशास्त्री एवं धार्मिक नेता के रूप मधुसूदन दास ने उड़ीसावासियों में राष्ट्रीय चेतना को जागृत करने में अपना अनूठा योगदान दिया। ये विक्टोरिया युग के कवि थे, इसलिए मानव–समाज के जागरण के प्रति उनकी विशेष आस्था थी। आधुनिक उड़िया साहित्य में इन तीनों साहित्यकारों को त्रिमूर्ति कवि कहा जाता है, जिनके अनेक अनुयायी थे, जिन्होंने अपने–अपने मार्गदर्शकों के द्वारा प्रारंभ किए गए कार्यों को आगे बढ़ाया तथा उड़ीसा की जनता के सांस्कृतिक जीवन के अभावों को पूरा किया। उड़ीसा में जो सुधार का चलन प्रारंभ हुआ, वैसे ही सुधार का आगाज असम में हो रहा था। असम में सुधार–कार्य को प्रारंभ करने तथा उसे गति प्रदान करने से पहले वो धर्म–प्रचार का योगदान रहा। उसके बाद असम के कुछ जागरूक लोगों ने यह अनुभव किया कि स्वाधीनता छीन जाने के कारण पूरे असम की सामाजिक एवं आर्थिक दुर्दशा दयनीय स्थिति में पहुँच गई, जिसमें सुधार अतिशीघ्र आवश्यक है, अन्यथा समाज को बचा पाना मुश्किल हो जाएगा। इसके समाधान के लिए असम के श्री आनंदराम नेकिपाल फुकन सामने आए। आनंदराम नेकिपाल फुकन राजा राममोहन राय के समकालीन थे तथा उनके सुधार कार्यों से काफी प्रभावित भी थे, इसलिए फुकन ने भी असमिया लोगों को जागरूक करने के लिए राष्ट्रीयता की भावना को प्रचारित करना प्रारंभ किया और लोगों को अराजकता की गहरी नींद से जगाकर देश एवं समाज की परिस्थितियों से अवगत कराया। वे कहते थे कि– ''हमारे देशवासियों को भी अंग्रेजों जैसा ही परिश्रमी और ज्ञानवान होना चाहिए।''[8] इसी शताब्दी के कुछ लेखकों में देशभक्ति की यही भावना उत्कृष्ट रूप से दिखाई देती है। संपूर्ण भारतीय नवजागरण का एक ही प्रधान स्थल था, जो बंगाल से शुरू होते हुए केरल, तमिलनाडु, असम, उड़ीसा आदि सभी प्रांतों में पहुँचा। आगे बढ़ते हुए पंजाब तथा गुजरात की जमीं को भी छुआ, किंतु इन क्षेत्रों में परिवर्तन की हवा थोड़ी देर से पहुँची। अंग्रेजी शासकों के साम्राज्य की स्थापना के बाद लगभग पचास वर्ष तक इस क्षेत्र में कोई विशेष गतिविधियाँ नहीं थी। इन प्रांतों को राजनीतिक परिवर्तन के प्रभाव से उबरने एवं आधुनिकता को ग्रहण करने में अनेक वर्ष लग गए, क्योंकि बंगाल से जब नवजागरण की हवा चली तो इसके परिवर्तन की खुशबू बंगाल के आस–पास के प्रांतों में तो शीघ्रता से पहुँची, किंतु अन्य क्षेत्रों में आते–आते थोड़ा अधिक समय लगा। मोटे तौर पर पंजाब में सुधार का समय तब प्रारंभ हुआ, जब वहाँ सिंह सभा आंदोलन के परिणाम स्वरूप सामाजिक एवं राजनीतिक परिवर्तन समाज में घटित हुए। बंगाल नवजागरण के कारण संपूर्ण देश में नवजागरण की जो प्रक्रिया चली उसने पंजाब के सिक्खों को धार्मिक एवं सामाजिक

सुधार हेतु प्रेरित किया, जिसके कारण सिक्खों ने संगठित रूप से समाज में ऐसा सुधार–कार्य प्रस्तावित किए, जिससे पंजाब के सामाजिक पक्ष में उथल–पुथल मच गई। पंजाब के समाज सुधारक भाई वीरसिंह जो जातिवाद तथा नस्लवाद के घोर विरोधी थे, उन्होंने यह महसूस किया कि अंग्रेजी शिक्षा समाज की कुरीतियों को समाप्त नहीं कर पा रही, इसलिए कि अंग्रेजी शिक्षा को वही प्राप्त कर सकता है, जो शिक्षित है, किंतु तत्कालीन पंजाब की अधिकांश जनता निरक्षर थी तथा सामाजिक स्थिति भी इतनी विषम थी कि यह संभव नहीं था कि पहले लोगों को शिक्षित किया जाए, तत्पश्चात् अंग्रेजी शिक्षा के माध्यम से उनके दृष्टिकोण में बदलाव लाया जाए, इसलिए भाई वीरसिंह ने पंजाब की साधारण बोलचाल की भाषा पंजाबी में ही अपनी रचनाओं का सृजन कर लोगों मं रुचि जागृत की। इन्होंने साहित्य के प्रायः सभी क्षेत्रों में अपनी कलम चलाई और लोगों को जागरूक किया। डॉ. आतमजीत सिंह ने लिखा है कि– ''वीरसिंह के रचनाओं की मुख्य कथा सिखों की वीरता और साहस तथा उनके धर्म की नैतिक श्रेष्ठता पर आधारित है।''[9] उनकी रचनाओं का पंजाबी साहित्य में उतना ही महत्वपूर्ण रहा है, जितना उनसे पूर्व के सिक्खों के गुरुनानक जी के साहित्यिक रचना की थी। गुरुनानक एवं उनके सहयोगी समाज सुधारक रूपी साहित्यकारों ने साहित्य को अपना हथियार बनाया। उनके द्वारा रचित रचनाओं ने सिक्खों के मध्य जल्द–से–जल्द अपना प्रभाव डालना शुरू किया। ऐसे ग्रंथों में गुरुनानक द्वारा रचित 'गुरुग्रंथ साहिब' का नाम सर्वाधिक प्रसिद्ध है। यह ग्रंथ स्वयं में एक आध्यात्मिक एवं सामाजिक क्रांति के बीच समन्वय स्थापित करने वाला ग्रंथ है। पंजाब में 'गुरुद्वारा' जनजागरण का एक मुख्य केंद्र–बिंदु रहा, जिसमें सामाजिक सुधार के अतिरिक्त राष्ट्रवाद की भी लहर थी। यह राष्ट्रीय जनजागरण का भी केंद्र रहा। गुरुनानक के अतिरिक्त अन्य सुधारक जिन्होंने पंजाब में नवजागरण को सच्चे अर्थों में दिशा दी, वे हैं– असर मोहन सिंह वैद, तेजा सिंह, पूर्ण सिंह, प्रीतलड़ी धनीराम चत्रिक आदि। वे न केवल समाज सुधारक थे वरन् एक अच्छे कवि एवं लेखक भी थे। इन लोगों ने पंजाब की मातृभाषा, साहित्य तथा संस्कृति के लिए आधुनिक जमीन तैयार किए। संपूर्ण देश की एक ज्वलंत समस्या स्त्री–स्वतंत्रता को लेकर भी इन लोगों ने खुलकर आवाज उठाई तथा प्रगतिशील विचार को लोकप्रिय बनाया। उनका मानना था कि जब तक विचारों में प्रगति नहीं आएगी, तब तक समाज कैसे प्रगति करेगा, इसलिए मनुष्य के विचारों में जब नवीनता आएगी, तभी सुधार कार्य संभव होगा। इसी प्रकार गुजरात में आए नवजागरण की विचारधारा पंजाब से भले ही कुछ अलग थी, लेकिन उद्देश्यक एक ही रहा, सुधार। 'दुर्गाराम' को गुजरात के नवजागरण के अग्रदूत कहे जाते हैं, जिन्होंने सूरत में 'मानवधर्म सभा' की स्थापना की। इस सभा का मुख्य उद्देश्य धार्मिक और सामाजिक सुधार के लिए किए जाने वाले प्रयासों पर चर्चा करना एवं कार्यक्रम तैयार करना। इसी कार्य में गुजरात के अन्य सुधाराक दादाभाई नैरोजी, नर्मदाशंकर तथा करसनदाास मूलजी भी शामिल रहे, जिन्होंने सामाजिक एवं शिक्षा से संबंधी अनेक संस्थाएँ स्थापित की और पत्रिकाएँ प्रकाशित करवाए वे मुख्य रूप से अंग्रेजी साहित्य में निहित राजनीतिक, बौद्धिक एवं सामाजिक स्वतंत्रता के विकास से बड़े प्रभावित थे तथा उन्हें साहित्यिक ज्ञान और सामाजिक सुधार के लिए आवश्यक मानते थे। इनमें से नर्मदाशंकर का प्रयास काफी उल्लेखनीय रहा। इन्होंने गुजराती लोगों के शिक्षा, साहित्य एवं संस्कृति के लिए संघर्ष किया। उनकी चिंता का मुख्य विषय यह था कि गुजराती लोग इन क्षेत्रों में अन्य प्रांतों की तुलना मं इतना पीछे क्यों है ? चूँकि गुजरात में उद्योग धंधों की स्थिति काफी अच्छी है। लोग प्रतिष्ठित वर्ग के भी हैं, फिर क्यां वे सिर्फ पैसे की ओर आगे बढ़ रहे हैं और शिक्षा को पीछे छोड़ते जा रहे हैं। इस असमानता एवं शिक्षा में गुजरातियों की अरुचि को दूर करने के के लिए नर्मदा शंकर ने शिक्षा, साहित्य, देशभक्ति एवं व्यापारिक उन्नति जैसे पक्षों का प्रचार–प्रसार करना प्रारंभ कर दिया। इन सबके साथ नर्मदा शंकर का झुकाव पश्चिमी सभ्यता की ओर भी था। इसका मुख्य कारण यह था कि पश्चिमी सभ्यता की दो प्रमुख कड़ियाँ– आधुनिकीकरण एवं शिक्षा प्रणाली। नर्मदा शंकर इन दो महत्वपूर्ण विचारों के माध्यम से राष्ट्रीयता की भावना को लोगों के विचारों में लाना ही इनका मुख्य उद्देश्य था। उन्होंने हिंदुओं के पतन पर एक महाकाव्य की भी रचना की। साथ ही देशभक्ति, स्वतंत्रता, वीरता, व्यक्तिगत प्रेम और प्रकृति आदि विषयों पर भी लेख एवं गीत लिखकर गुजरात में नवयुग के परिपाठी का सूत्रपात किया। नर्मदा शंकर के जैसे ही नरसिंह मेहता एवं मणिलाल नभुभाई भी थे, जिन्होंने पुनरूत्थानवादी चेतना के लिए बार–बार आवाज उठाई, जिसके परिणामस्वरूप गुजरात में सांप्रदायिक एकता की भावना तीव्र होती गई, जिसका प्रत्यक्ष उदाहरण आज भी गुजरातियों में देखा जा सकता है। इस प्रकार बंगाल नवजागरण की प्रक्रिया से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से भारत के अन्य प्रांत भी प्रभावित हुए और सुधार कार्य का सिलसिला जारी रहा। इन सुधार कार्यों में उन महान व्यक्तित्व एवं विभूतियों का योगदान विस्मरणीय रहा, जिनका नवजागरण के अग्रदूतों की श्रेणी में गिना जाता है। इन सुधारवादी आंदोलनकारियों द्वारा प्रारंभ किए गए सुधार आंदोलन धीरे–धीरे संपूर्ण भारतीय समाज में ऐसा फैला, जिसके परिणाम बड़े ही दूरगामी निकले। समाज में हलचल पैदा हुई तथा सामाजिक गतिशीलता बढ़ी। भारतीय समाज पहली बार अपने प्रबुद्धता के भरोसे खड़ा होने लगा। बंगाल नवजागरण के प्रभाव से अधिकांश प्रांतों के समाज सुधारकों का एक कतार समाज में उभरने लगा, जो भारतीय समाज के प्रत्येक बुराइयों को जड़ से उखाड़ फेंकने के लिए तत्पर थे। इन नायकों के लोक–व्यवहारों, सामाजिक कार्यों तथा रचनात्मक कार्यक्रमों का आंकलन ही नवजागरण का ताना–बाना है। इन नवजागरणकारी नायकों में भारतीय नवजागरण के प्रथम अग्रदूत राजा राममोहन राय, बंगाल तथा अन्य प्रांतों के सुधारकों के अतिरिक्त बाल गंगाधर तिलक, लाला लाजपत राय, स्वामी रामतीर्थ, मोतीलाल नेहरू, सैयद अमजद खाँ, मजरूद्दीन सैयब, के.टी. तैलंग, वीरेशलिंगम, भारतेंदु हरिश्चंद्र आदि अनेक नाम हैं, जिन्होंने अपने विचारों एवं कार्यों से निष्क्रिय भारतीय समाज में नवजागरण की प्रक्रिया को आगे बढ़ाया। इन महान विभूतियों में से किसी ने अपने कलम का सहारा लिया, तो किसी ने अपने कार्य को हथियार बनाया। कुछ ने समाज में फैले अराजकता पर अपने लेखों के माध्यम से वार किया, तो किसी ने अपने प्रत्यक्ष कार्यों के माध्यम से उसमें सुधार लाया। सभी का उद्देश्य केवल एक ही था सुधार, सुधार और सुधार, किंतु इस बात से इंकार भी नहीं किया जा सकता कि नवजागरण की शक्ल में भारतीय परिदृश्य पर जो आधुनिकता उभरकर विकसित हुई, उसकी प्रेरणा बंगाल नवजागरण से ही प्रदीप्त हुई थी।

संदर्भ ग्रंथ–सूचीः

1.शिशिर, कर्मेन्दु. नवजागरण और संस्कृति, पृ. 60.
2.विद्यालंकार, सत्यकेतु. भारत के राष्ट्रीय आंदोलन का इतिहास, पृ. 20.
3.डॉ. शंभुनाथ. सामाजिक क्रांति के दस्तावेज, भाग–एक, पृ. 41.
4.सिन्हा, विपिन बिहारी. भारत का सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक इतिहास, पृ.317.
5.वही,पृ 318.
6.डॉ. शंभुनाथ. सामाजिक क्रांति के दस्तावेज, भाग–एक, पृ. 37.
7.वही, पृ. 39.
8.डॉ. नगेन्द्र. भारतीय साहित्य, पृ. 444.
9.वही, पृ 89.

****

स्वतंत्रता आंदोलन में पत्रकारिता का योगदान

-डॉ.रेखा अग्रवाल
मैसुर विश्वविद्यालय,मैसुर

यह तो सर्वविदित है कि "पंडित युगल किशोर ने, जो कानपुर के रहनेवाले थे, संवत् 1883 (1826 ई) में "उदंत मार्त्तण्ड" नाम का एक संवाद पत्र निकाला, जिसे हिंदी का पहला समाचार-पत्र समझना चाहिए..."[१] इसके बाद धीरे-धीरे हिंदी में समाचार पत्रों और पत्रिकाओं के छपने और उनके बंद होने का सिल-सिला शुरु हुआ। ऐसा उस समय की अन्य प्रमुख भारतीय भाषाओं में भी चल रहा था। जैसे—बांग्ला, मराठी, उर्दू आदि। इस सिलसिले की अगली कड़ी के रूप में संवत् 1902 (ई. 1885) में राजा शिवप्रसाद 'सितारे हिंद' के प्रयासों से 'बनारस अखबार' का प्रकाशन किया गया। इस पत्र की भाषा उर्दू शब्द प्रधान थी लेकिन इसकी लिपि देवनागरी थी। इस अख़बार के प्रकाशन के बाद बनारस से ही हिंदी सेवी बाबू तारामोहन मित्र के उद्योग से 'सुधाकर' नामक अखबार संवत् 1907 (ई. 1850) में निकला। इसके बाद आगरे के मुंशी सदासुखलाल द्वारा संपादित और प्रकाशित 'बुद्धिप्रकाश' नामक पत्र का जिक्र आता है जो संवत् 1909 अर्थात् ई. सन् 1852 में छपा।यह कहना सही नहीं होगा कि इन समाचार पत्रों के द्वारा सीधे-सीधे देशभक्ति की भावना को जगाने का काम हुआ। लेकिन इनके द्वारा अंधविश्वास, छुआछूत, विधवा-दुर्दशा, बाल विवाह, बेमेल विवाह, अकाल,सूखा, स्त्री शिक्षा और हिंदी भाषा का विकास जैसे मुद्दे उठाए गये जिनसे लोगों में जन-जागृति फैलाने का काम हुआ। इसी जागृति या चेतना का विकास भारतेंदु युग में आकर देशभक्ति की भावना के रूप में हुआ। और हम इस युग में आकर हिंदी पत्राकरिता के क्षेत्र में एक विस्फोट की स्थिति देखते हैं। इस संदर्भ में आचार्य रामचंद्र शुक्ल लिखते हैं कि "हिंदी गद्य की सर्वतोमुखी गति का अनुमान इसी से हो सकता है कि पचीसों पत्र-पत्रिकाएँ हरिश्चंद्र के जीवन-काल में ही निकलीं...."[२]

1.	अल्मोड़ा अखबार	1871 ई.	सदानंद सलवाल
2.	हिंदी-दीप्ति-प्रकाश (कलकत्ता)	1872 ई.	कार्तिक प्र. खत्री
3.	बिहार-बंधु	1872 ई.	केशवराम भट्ट
4.	सदादर्श (दिल्ली)	1874 ई.	लाला श्रीनिवास दास
5.	काशी-पत्रिका	1876 ई.	बालेश्वर प्र. बी.ए.
6.	भारत-बंधु (अलीगढ़)	1876 ई.	तोताराम जी
7.	भारत-मित्र (कलकत्ता)	1877 ई.	रुद्रदत्त जी
8.	मित्र-विलास (लाहौर)	1877 ई.	कन्हैयालाल जी
9.	हिंदी-प्रदीप (प्रयाग)	1877 ई.	बालकृष्ण भट्ट
10.	आर्य-दर्पण (शाहजहाँपुर)	1877 ई.	बख्तावर सिंह
11.	सार-सुधानिधि (कलकत्ता)	1879 ई.	सदानंद मिश्र
12.	उचितवक्ता (कलकत्ता)	1879 ई	दुर्गाप्रसाद मिश्र
13.	सज्जन-कीर्ति-सुधाकर (उदयपुर)	1879 ई.	वंशीधर जी
14.	भारत सुदशा प्रवर्तक (फरूखावाद)	1879 ई.	गणेश प्रसाद जी
15.	आनंद कादंबिनी (मिर्जापुर)	1881 ई.	प्रेमघन जी
16.	देश-हितैषी (अजमेर)(संदिग्ध)	अज्ञात	
17.	दिनकर प्रकाश (लखनऊ)	1883 ई.	रामदास वर्मा
18.	धर्म-दिवाकर (कलकत्ता)	1883 ई.	देवी सहाय जी
19.	प्रयाग समाचार	1883 ई.	देवकीनंदन त्रिपाठी
20.	ब्राह्मण (कानपुर)	1883 ई.	प्रतापनारायण मिश्र
21.	शुभचिंतक (जबलपुर)	1883 ई.	सीताराम जी
22.	सदाचार मार्तंड (जयपुर)	1883 ई.	लालचंद्र शास्त्री
23.	हिंदोस्थान (इंगलैंड)	1883 ई.	राजा रामपाल सिंहजी
24.	पीयूष-प्रवाह (काशी)	1884 ई.	अंबिका दत्त व्यास
25.	भारत-जीवन (काशी)	1884 ई.	रायकृष्ण वर्मा
26.	भारतेंदु (वृंदावन)	1884 ई.	राधाचरण गोस्वामी
27	कविकुलकंज-दिवाकर (बस्ती)	1884 ई.	रामनाथ शुक्ल

ऊपर की इस सूची के अवलोकन से हिंदी पत्रकारिता के इतिहास के कई दिलचस्प तथ्य उजागर होते हैं। जैसे—सबसे ज्यादा समाचार-पत्र 1883 ई. में छपे जिनकी कुल संख्या – 7 है।- इसके बाद वर्ष 1877 और 1884 का स्थान आता है जिनमें क्रमशः चार-चार पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन शुरू हुआ।- भौगोलिक दृष्टि से देखें तो इन हिंदी पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन भाषा-क्षेत्रों की सीमा को लांघते हुए बंगाल के कलकत्ता से लेकर पंजाब के लाहौर तक से हुआ।- एक शहर की दृष्टि से देखें तो सबसे अधिक यानी चार पत्रिकाओं का प्रकाशन कलकत्ता शहर से हुआ।-इसके अलावा काशी (बनारस-मिर्जापुर), और प्रयाग इसके मुख्य केंद्र रहे।- भौगोलिक विविधता की दृष्टि से देखें तो इस युग में हिंदी पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन क्षेत्र उत्तराखंड के अल्मोड़ा से लेकर बंगाल के कलकत्ता तक फैला हुआ है।-एक अखबार 'हिंदोस्थान' का प्रकाशन इंगलैंड से भी हुआ।- इनमें से एक अखबार ऐसा है जिसके नाम से देशभक्ति की सीधी सुगंध आती है। वह है अजमेर, राजस्थान से प्रकाशित 'देश-हितैषी'। लेकिन दुःख की बात यह है कि ना तो इसके प्रकाशन वर्ष का सही-सही पता हैं, ना ही इसके संपादक का। यह अज्ञातता या सूचना हीनता अकारण नहीं है। अवश्य ही यह अखबार देशभक्ति के प्रति अपनी मुखरता के कारण ब्रिटिश सरकार का कोपभाजन बना होगा जिसमें पत्र को प्रतिबंधित कर उसकी सारी प्रतियों को जब्त करना और जला देना शामिल है। इसके अलावा यह भी घोषणा की जाती थी कि इस अखबार की जो भी प्रति जिसके भी पास हो वह उसे अधिकारियों के हवाले करे या स्वयं नष्ट कर दे। अन्यथा पकड़े जाने पर जेल और जुर्माने की सजा हो सकती है। परिणाम यह है कि 'देश-हितैषी' का आज नाम तो बाकी है लेकिन इसके बारे में कोई अन्य सूचना नहीं मिलती है। यहाँ प्रसंगवश यह बताना ज़रूरी लगता है कि हिंदी पत्रकारिता या रचनाशीलता के प्रति अंग्रेजी की यह दमन-नीति दिन-प्रतिदिन बढ़ती ही गयी। इसका परिणाम यह हुआ कि 'प्रतिबंधित-साहित्य' के नाम से रचनाओं की एक पृथक कोटि ही तैयार हो गयी जिस पर आगे चलकर अनेक शोधकार्य भी किये गये हैं। इस सिलसिले में डॉ. रुस्तम राय जी का नाम लिया जा सकता है जिन्होंने जे.एन.यू. के प्रोफेसर मैनेजर पांडेय के मार्ग-दर्शन में इस विषय पर कार्य किया है जो दो खंडों में पुस्तकाकार प्रकाशित है।[३] हिंदी पत्रकारिता के प्रति इस प्रकार के दमन चक्र की एक हलकी सी झलक श्री जाहिद ख़ान ने 'देशबंधु' अखबार के दिनांक 18-8-2015 अंक में प्रकाशित अपने आलेख में दी है। वे लिखते हैं—"हमारे देश के स्वाधीनता संघर्ष में पत्र-पत्रिकाओं की अहम भूमिका रही है। आजादी की लड़ाई में भाग ले रहा हर आम और खास आदमी कलम की ताकत से वाकिफ था। यही कारण है कि राजा राममोहन राय, महात्मा गांधी, मौलाना अबुल कलाम आजाद, बालगंगाधर तिलक, बाबा साहेब भीमराव अंबेडकर और मदनमोहन मालवीय जैसे आला दर्जे के लीडर सीधे-सीधे तौर पर पत्र-पत्रिकाओं से जुड़े थे और लिख रहे थे। इसका असर देश के दूर-सुदूर गाँवों तक में रहनेवाले देशवासियों पर पड़ रहा था।"[४] लेकिन जैसे-जैसे पत्रकारिता के माध्यम से शासन का विरोध बढ़ा वैसे-वैसे शासन की दमनकारी नीतियाँ भी बढ़ने लगीं। इस संदर्भ में वे आगे लिखते हैं कि "भारतीय पत्रकारिता की स्वाधीनता को बाधित करने वाला पहला प्रेस अधिनियम गवर्नर जनरल लार्ड वेलेज़ली के शासन काल में सन् 1799 में सामने आया। ...कालांतर में सन् 1857 में गैंगिक एक्ट, 1878 में वर्नाकुलर प्रेस एक्ट, 1908 में न्यूजपेपर्स एक्ट,

1910 में इंडियन प्रेस एक्ट, 1930 में इंडियन प्रेस आर्डिनेंस और 1931 में दि इंडियन प्रेस एक्ट जैसे दमनकारी कानूनों को प्रेस की स्वतंत्रता को बाधित करने के उद्देश्य से लागू किया गया। लेकिन बावजूद इसके समाचार-पत्रों के संपादकों के तेवर उग्र से उग्रतर होते चले गये। जेल, जब्ती और जुर्माना से उनके हौसले पस्त नहीं हुए।"[4] इस संदर्भ में श्री ख़ान ने समाचार सुधा वर्षण, अभ्युदय, शंखनाद, हलधर, सत्याग्रह समाचार, युद्धवीर, क्रांतिवीर, स्वदेश, नया हिंदुस्तान, कल्याण, हिंदी-प्रदीप, ब्राह्मण, बुंदेलखंड, केसरी, मतवाला, सरस्वती, विप्लव, अलंकार, चांद, हंस, प्रताप, सैनिक, क्रांति, बलिदान और वालेंटियर जैसे अखबारों के नाम गिनाए हैं जिनमें से अनेक के नामों में ही उसकी वैचारिक और भावनात्मक प्रतिबद्धता साफ-साफ दिखाई देती है। श्री खान के अनुसार "इन पत्र-पत्रिकाओं ने आहिस्ता-आहिस्ता लोगों के सोये हुए वतनपरस्ती के जज्वे को जगाया और क्रांति का आह्वान किया। इस संदर्भ में अभ्युदय का भगतसिंह विशेषांक और किसान विशेषांक, स्वदेश का विजय अंक, चाँद का अछूत अंक और फांसी अंक तथा विप्लव का चंद्रशेखर आजाद अंक विशेष महत्वपूर्ण हैं।"[5] हिंदी पत्रकारिता की स्वतंत्रता की चाह और अंग्रेजी हुकूमत के दमनचक्र की एक बहुत ही मनोरंजन घटना प्रकाश में आती है। भारतेंदु हरिश्चंद्र की प्रेरणा से प्रयाग के पंडित बालकृष्ण भट्ट ने सितंबर 1877 में 'हिंदी प्रदीप' का प्रकाशन आरंभ किया। इसमें अंग्रेजी व्यवस्था के खिलाफ लेख व अन्य सामग्रियाँ छपा करती थीं। 1909 ई. में इसमें 'बम क्या है'? नामक कविता प्रकाशित हुई जिसके कवि पं. माधव शुक्ल थे। यह बात अंग्रेजों को इतनी नागवार लगी कि पत्रिका पर उस ज़माने में 3000 रू. का जुर्माना ठोका गया। इसे ना अदा करते हुए भट्ट जी ने पत्रिका को ही बंद कर देना मुनासिव समझा। इस प्रकार यह पत्रिका 33 वर्ष लगातार चलकर बंद हो गयी जो अपने आप में एक रिकार्ड है। बाद में साहित्यिक मंडली में यह मजाक चला करता था कि अंग्रेजी सरकार बम पर लिखी कविता से इतना डरती है तो बम का सामना होने पर इसका क्या होगा!ऐसी ही एक और मनोरंजक घटना है इंदर सभा बनाम बंदर सभा की। इन्दर सभा आगा हसन अमानत लखनवी द्वारा 1853 में लिखित और मंचित एक मशहूर ऑपेरा (नृत्य नाटिका) है जो हिंदू पौराणिक कथाओं में वर्णित देवराज इंद्र की सभा पर आधारित है। भारतेंदु हरिश्चंद्र ने इसी की पैरोडी में एक रचना लिखी—बंदर सभा। अंग्रेजी हुकूमत का यह मानना था कि यह रचना उनका उपहास करने के लिए लिखी गयी है। हालाकि हरिश्चंद्र हमेशा इस आरोप से इनकार करते रहे और इस रचना की भूमिका में उन्होंने लिखा—"इन्दर सभा उर्दू में एक प्रकार का नाटक वा नाटकाभास है और यह बन्दर सभा उसका भी आभास है..." हिंदी पत्रकारिता की चर्चा हो और दलित पत्रकारिता की बात ना हो तो यह अधूरा सा लगता है।दलित पत्रकारिता की शुरुआत मराठी में 1 जनवरी 1899 से 'दीनबंधु' अखवार से मानी जाती है। इसका संपादन ज्योतिबा फूले के हाथों में था। लेकिन हिंदी दलित पत्रकारिता का आरंभ अंबेडकर साहब के 'जनता' पत्र से माना जाता है। यह पत्रिका बाद में 'प्रबुद्ध भारत' के नाम से प्रकाशित हुई। आजादी के पूर्व की प्रमुख दलित पत्रिकाओं का ब्योरा इस प्रकार है—

1. मूकनायक-1920-डॉ.भीमराव अंबेडकर
2. बहिष्कृत बारत-1927- डॉ.भीमराव अंबेडकर
3. समता-1928- डॉ.भीमराव अंबेडकर
4. जनता-1930- डॉ.भीमराव अंबेडकर
5. दलित-मित्र-1937-बाबू रघुनंदन प्रसाद
6. नवजीवन-1937-बाबू चंद्रिका प्रसाद

इन पत्रिकाओं के बारे में भी यही कहा जा सकता है कि इनके द्वारा सीधे-सीधे विदेशी सत्ता का विरोध नहीं किया गया। इन समुदायों की स्थिति और देश की परिस्थिति को देखते हुए यह एक साथ दो मोर्चे खोलने जैसा होता :- पहला, भारतीय समाज की जातिवादी –सामंती व्यवस्था का विरोध और दूसरा, अंग्रेजी सत्ता का विरोध। यह स्थिति बुद्धिमत्तापूर्ण नहीं कही जा सकती थी। लेकिन इन पत्र-पत्रिकाओं ने भारत के बहुजन समाज में जागरूकता फैलाने का काम बहुत ही मजबूती के साथ किया और इस जातीय चेतना का समाहार कहीं-न-कहीं जाकर व्यापक राष्ट्रीय चेतना में हुआ। यह इन पत्रिकाओं का महती योगदान है। अंत में हम भारतेंदु की 'कविवचन सुधा' में छपी दो संपादकीय टिप्पणियों का उद्धृत करते हुए इस आलेख को समाप्त करेंगे। इनसे हमारे पाठकों को यह पता चलेगा कि अपने युग की तमाम बंदिशों के बावजूद हमारे लेखकों और पत्रकारों ने विरोध की आग को और स्वतंत्रता की ज्योति किस प्रकार जलाए रखने का काम किया।

'कवि वचन सुधा'-22 दिसंबर 1874 "चाहे कैसे भी द्रव्य एकत्र किया हो अन्त में सब जाएगा विलायत में...यहाँ से द्रव्य जाएगा तो परिणाम यह होगा कि चाहे किसी उपाय से द्रव्य लो अंत में तुम्हारे देश से निकल ही जाएगा।" **कविवचन सुधा, 16 फरवरी 1874** "जाने को तो यहाँ से तत्व खिंचकर जाता है और आने को शीशा, खिलौना और कलम, पिंसिल आती है। ...तो हे देशवासियों, तुम भी इस निद्रा से चौंको, इनके न्याय के भरोसे फूले मत रहो। ये विद्या कुछ काम न आवेगी। यदि तुम हाथ के व्यापार सीखोगे तो तुम्हें कभी दैन्य न होगा नहीं तो अंत में यहाँ का सब धन विलायत चला जाएगा और तुम मुँह बाये रह जाओगे।"[9] ऐसे अधिकांश संपादकीय टिप्पणियाँ, कविवचन सुधा, हरिश्चंद्र मैगजीन, बनारस अखवार में छपी है।

संदर्भ सूची:

1. *रामचंद्र शुक्ल, 1940, हिंदी साहित्य का इतिहास, नागरी प्रचारिणी सभा, पृ. 427*

2. *वही, पृ. 456*

3. *राधाकृष्ण प्रकाशन, 1999*

4. *स्रोत-deshbandhu.co.in/vichar/स्वाधीनता-संघर्ष-में-पत्र-पत्रिकाओं-की-भूमिका-30088-2*

5. *उपरोक्त*

6. *उपरोक्त*

7.हेमंत शर्मा, 1989 भारतेंदु समग्र, हिंदी प्रचारक संस्थान, वाराणसी, पृ. 1090-91

****

'राम की शक्तिपूजा'– स्वाधीनता के अमृत महोत्सव के संदर्भ में

-डॉ. विजय गाडे
एसोसिएट प्रोफेसर,
शोध-निर्देशक एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग,
बाबासाहेब चितळे महाविद्यालय, भिलवडी जि. सांगली (महाराष्ट्र)

'अर्जुनस्य प्रतिज्ञे द्वेव न दैन्यम् न पलायनम्
आयू रक्षति मर्माणि आयुरन्नं प्रयच्छति।'

महामानव के नायक अर्जुन की तरह निराला और उनके राम भी 'न दैन्यम् न पलायनम्' व्यक्तित्व के स्वामी हैं इसके प्रति हमारे मन में कोई संशय नहीं है। 'राम की शक्तिपूजा' यह रचना जिसे भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के संदर्भ में जोडकर देखा जाता है। सीता यह न केवल स्वतंत्रता का प्रतीक है अपितु वह मानवता का प्रतीक भी हो सकती है। प्राचीन काल से विश्व में सज्जन-दूर्जन, मानवता-दानवता, स्वतंत्रता-दास्यत्व का संघर्ष चल रहा है। पंडित सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की यह रचना इसी बात को स्पष्ट करती है। १९३६ के अंतिम दिनों में इस कविता का प्रकाशन हुआ था। यह प्रबंध काव्य भारतीय स्वतंत्रता के आंदोलन में अपनी अलग भूमिका निभाता है। उस समय की दुनिया की आबादी का बहुत बडा हिस्सा गुलामी में अपना जीवन व्यतीत कर रहा था। स्वनामधन्य सुभाषचंद्र बोस ने एक भाषण में कहा था 'जिस दिन भारत स्वतंत्र होगा, उस दिन मानवता अपने आप मुक्त हो जाएगी।'[२] इसका अर्थ ही यहीं संकेत देता है कि स्वतंत्रता आंदोलन केवल स्वाधीनता के लिए नहीं था बल्कि मानवता को मुक्त करने के लिए था। जब तक सभी लोग साथ आकर आजादी आंदोलन नहीं लडेंगे, देश मुक्त नहीं हो सकेगा। राम-रावण संघर्ष के माध्यम से निराला जी ने इसी बात को स्पष्ट किया है। मुक्तिबोध ने लिखा भी है -

'अरे जन-संग-उष्मा के बिना / व्यक्तित्व के स्तर जुड नहीं सकते /
प्रयासी प्रेरणा के स्त्रोत /
सक्रिय वेदना की ज्योति / सब सहाय उनसे लो / तुम्हारी मुक्ति उनके प्रेम से होगी /
कि अपनी मुक्ति के रास्ते अकेले में नहीं मिलते।'[३]

अक्षरशः यह बात सच है और उसका बिंब राम-रावण के संघर्ष से उभरता है। भारतीय स्वतंत्रता को ७५ वर्ष पूर्ण हुए हैं और आजादी आंदोलन में लोगों के साथ साहित्य ने भी अपना किरदार अदा किया है। अनेक भारतीय साहित्यकारों ने साहित्य सृजन करते हुए आजादी के आंदोलन को प्रेरणा दी और अपना योगदान तथा साहित्य धर्म भी निभाया। अनेक रचनाकारों ने तत्कालीन आजादी आंदोलन के नेताओं को अपने काव्य के द्वारा रेखांकित तथा रूपायित किया। इसी साहित्य शृंखला की एक कडी के रूप में 'राम की शक्तिपूजा' यह रचना है। और आज आजादी का अमृत महोत्सव मनाते समय यह प्रबंध काव्य फिर एक बार नए सिरे से सामने आता है। इस कविता की प्रतीक योजना पर विचार करते समय काफी विकल्प सामने आते हैं। एक ओर सीता भारतीय स्वतंत्रता या भारतमाता का प्रतीक है जो अंग्रेजों की कारा में कैद है। दूसरा प्रतीक मानवता का भी हो सकता है। तीसरे प्रतीक के रूप में निराला जी की स्वर्गीय पत्नी मनोहरा देवी भी हो सकती है। इसलिए इस कविता की प्रतीक योजना बहुआयामी है ऐसा मानने में हमें कोई संकोच नहीं है। आजादी का अमृत महोत्सव मनाते समय हमने भारतमाता के रूप में सीता को देखा है, यह हमारी अपनी निजी नम्र अवधारणा है। 'राम की शक्तिपूजा' यह प्रबंध रचना छायावादी काव्यधारा की एक सशक्त रचना है। छायावाद के अंतिम चरण 1936 में प्रकाशित यह रचना निराला जी की सर्वोत्तम रचनाओं से एक रचना है। प्रसाद जी का महाकाव्य 'कामायनी' और निराला जी की 'राम की शक्तिपुजा' यह छायावाद की दो मौलिक रचनाएँ हैं इसके प्रति की संदेह नहीं है। अलग शब्दों में कहें तो यह दोनों रचनाएँ छायावाद की शिखर रचनाएँ हैं ऐसा कहते हुए हमें कोई संकोच नहीं है और न इस पर किसी को आपत्ति होगी। 'सरोज-स्मृति' का पिता आगे चलकर तुलसीदास बन जाता है और अंत में तुलसीदास ही स्वयं राम बन जाते हैं। अर्थात इन प्रबंध रचनाओं के माध्यम से निराला जी के व्यक्तित्व का विकास ही परिलक्षित होता है। 'राम की शक्तिपूजा' की समीक्षा करते हुए डॉ. रामविलास शर्मा ने लिखा भी है -

'राम की शक्तिपूजा' में दो कविताओं का सारतत्व है। 'तुलसीदास' और सरोज-स्मृति और इनके अलावा उसमें नई सामग्री है एक पराजित मन और दूसरे अपराजित मन के अस्तित्व की अनुभूति। सरोज-स्मृति का शर-क्षेप और रण-कौशल अब राम-रावण के अपराजेय समर के विशद चित्रण में परिवर्तित हो गया है। पराजय की वेदना और गहरी है। राम की आँखों से मुक्तादल के समान दो आँसू ढूलक पडते हैं। ये आँसू राम के हैं, मन में यह विचार आते ही महावीर – स्वयं शक्ति के सागर हैं – विक्षुब्ध हो उठते हैं। निराला ने 'रामचरित मानस' को जिस ढंग से पढा, समझा और आत्मसात् किया था, उस बोध के प्रतीक हैं महावीर। यही बोध तुलसी दास कविता में प्रकट हुआ था।[३] मानवी मन संघर्ष करता रहता है। बहुत बार वह बाह्य संघर्ष ही अधिक होता है किन्तु निराला, प्रसाद और मुक्तिबोध जैसे कवियों का संघर्ष दोहरा होता है। 'आत्म-संघर्ष' और 'बाहय संघर्ष' और इन दोनों संघर्षो का शिवधनुष उठाना कोई साधारण बात नहीं होती। विशेषतः मुक्तिबोध और निराला में यह बात हमें नजर आती है। भले ही निराला ने रामचरित मानस का गहरा अध्ययन किया था लेकिन इस कृति लेखन के समय उनका आत्मसंघर्ष ही अधिक प्रतीत होता है। उनका आत्मसंघर्ष कृतिबास रामायण का सहारा लेते हुए अपना विराट रूप प्रकट करता है। तुलसीदास रचना का अगला पडाव 'राम की शक्तिपूजा' को मानते हुए डॉ. रामविलास शर्मा लिखते हैं - 'तुलसीदास भक्त हैं, ज्ञानी भी। उनके संस्कार सब जानते हैं, तब उसमें अपार शक्ति आ जाती है, वे पुरानी संस्कृति पर ज्ञानोद् धत प्रहार करते हैं। उसके विषम वज्रदवार तोडने को उद्यत होते हैं। महाकाश में शिव को गस्त करने वाले महावीर यहीं कार्य करते हैं।'[४]
निराला जी लिखते हैं -

'वज्रांग तेजघन बना पवन को, महाकाश
पहुँचा, एकादश रूद्र क्षुब्ध कर अट्टहास।'[५]

यह कोई अचरज की बात नहीं है निराला जी की मातृभाषा बैसवाडी थीं और उनके जीवन का बहुत सारा समय बंगाल में गुजरा था। बंगाली मानव जन्म से ही माँ दूर्गा का भक्त होता है और निराला जी इसके अपवाद नहीं हैं। निराला शक्ति के उपासक थे और राम तथा हनुमान के परम भक्त भी थे। निराला एक साधक थे भक्त नहीं इसलिए इस कृति की समीक्षा करते हुए डॉ. रामविलास शर्मा ने आगे लिखा है –

'तुलसीदास ने लिखा थाः मोरे मन अस दृढ विस्वासा। राम ते अधिक राम कर दासा। निराला ने इसी सूत्र के सहारे लिखाः अर्चना राम की मूर्तिमान अक्षय शरीर।

एक बार राम भले ही विचलित हो जाएँ किन्तु वह जिसे न सीता चाहिए, न अयोध्या, राम की अर्चना का वह जीवंत स्वरूप विचलित नहीं हो सकता। इस तरह तुलसीदास का सारतत्व राम की शक्तिपूजा में है।[६] निराला जी का निजी जीवन दुखपूर्ण था इसलिए इन प्रबंध काव्यों में इसकी झाँकी कई स्थानों पर मिलती है। सरोज-स्मृति का पिता (निराला जी) अपने जीवन का विश्लेषण इन शब्दों में करते हैं -

'दुःख ही जीवन की कथा रहीं
क्या कहूँ आज, जो नहीं कही।'[७]

'राम की शक्तिपूजा' एक अनुठी रचना है जिसे स्वयं निराला जी ने अपने मौलिक शक्तिपूजा छंद से अलंकृत किया है। सरोज स्मृति के बाद तुलसीदास और राम की शक्ति पूजा के प्रमुख व्यक्तित्व के रूप में स्वयं निराला जी प्रस्तुत होते हैं। अलग शब्दों में कहे तो निराला ही स्वयं तुलसी भी है और उनके आराध्य राम भी। इस प्रबंध काव्य का सृजन 23 अक्तुबर 1936 को पूर्ण हुआ था। इलाहबाद से प्रकाशित दैनिक पत्र 'भारत' में पहली बार 26 अक्तुबर 1936 को इस रचना का प्रकाशन हुआ था। इसका मूल निराला के कविता संग्रह 'अनामिका' के काव्य संकलन के प्रथम संस्करण में छपा था। यह कविता 312 पंक्तियों की लंबी कविता है। चूँकि यह एक कथात्मक कविता है इसलिए संश्लिष्ट होने के बावजूद भी इसकी संरचना अपेक्षाकृत सरल है। बहुत सारे समीक्षकों ने विवेच्य रचना को लंबी कविता कहा है लेकिन इस बात से हम सहमत नहीं है। लंबी कविता की सबसे बडी विशेषता यह है कि यह कविता काव्यशास्त्रीय चौखट को तोडकर बाहर आती है। अलग शब्दों में लंबी कविता, कविता की चौखट तोडकर बाहर आती है और काव्य शास्त्रीय मानदंडो का इसमें निर्वाह नहीं होता किन्तु विवेच्य रचना काव्यशास्त्रीय चौखट से बाहर नहीं आती और न ही इस कविता में कही छंदो का बिखराव हमें नजर आता है। वर्तमान परिवेश में कविता सिर्फ भावों का प्रत्ययीकरण अथवा विचारों की लंबी सूची नही है बल्कि मानवीय सरोकारों से मेल रखने का प्रयास लंबी कविता में होता है। वह खुद को तोडती है और जोडती भी है। अपनी राह खुद तलाश करती है, नये प्रतिमानों को गढती है। इसलिए लंबी कविता को किसी विशिष्ट वाद या प्रवृत्ति के अंतर्गत नहीं रखा जाता। इसलिए डॉ. रजनी बाला ने लिखा है – 'निराला की 'राम की शक्तिपूजा' में आख्यान है लेकिन यह आख्यान बिंब रूप में राम से ज्यादा निराला और उनके स्वयं आम आदमी के तनाव का माध्यम बना है।'[८] इसलिए 'राम की शक्तिपूजा' को लंबी कविता के दायरे में रखना उचित प्रतीत नहीं होता। क्योंकि विवेच्य कविता काव्यशास्त्र के मानदंडों का निश्चित की निर्वाह करती हुई नजर आती है। विवेच्य रचना सिर्फ राम या किसी अवतारी पुरूष की पूजा नहीं है, बल्कि जीवन में आम आदमी के मानवीय संघर्ष की अभिव्यक्ति है जहाँ विवेच्य रचनाकार स्वयं खडे हैं। जैसा कि हमने पहले ही कहा है यह संदर्भ बाहर से नहीं बल्कि भीतर से हैं इसलिए हमने इसे आत्मसंघर्ष कहा है। इस कविता की प्रारंभिक 18 पंक्तियाँ सामासिक शब्दावली से युक्त है। जो मानसिक स्तर की खामोशी, भीतर की टकराहट, युद्ध की मानसिकता और इसके लिए मन की कश्मकश को प्रकट करती है। मिसाल के तौर पर कुछ पंक्तियाँ -

'रवि हुआ अस्तः ज्योति के पत्र पर लिखा अमर
रह गया राम-रावण का अपराजेय समर
आज का, तीक्ष्ण-शर-विधृत-क्षिप्र-कर, वेग प्रखर
शतशेल सम्वरणशील, नील नभ गर्ज्जित स्वर।'[९]

इन पंक्तियों के माध्यम से हमें जीवन में संघर्ष करने की प्रेरणा मिलती है और हम जीवन के संदर्भ में प्रतिपल आगे बढते रहते हैं। यही कारण है कि आज भी 'राम की शक्तिपूजा' की प्रासंगिकता अक्षय है। जीवन में संघर्ष करने के लिए संबल की जरूरत होती है और यह जरूरत शक्ति की आराधना करने से सफल होती है। आजादी के आंदोलन में भी यही बात थी, फलस्वरूप हम अंग्रेजों की गुलामी से आजाद हुए। इसके लिए भारतीयों ने कोई भी परवाह नहीं की। कृतिवास रामायण और मानस की कथावस्तु पौराणिक है जब कि वाल्मीकि की रामकथा एक साधारण मानव की कथा है किन्तु यह साधारण मानव जो असाधारण कार्य करता है इसलिए वाल्मीकि के राम केवल राम नहीं रहते अपितु वे मर्यादा पुरूषोत्तम के रूप में उभरते हैं। राम की शक्तिपूजा में रचनाकार ने प्रतीकों का बहुत ही सुंदर प्रयोग किया है। जिस समय इस रचना का लेखन हो रहा था, उस समय भारत आजाद नहीं था। जैसा कि हमने पहले ही कहा है कि सीता क्रमशः स्वतंत्रता, गुलाम भारतीयों का, मानवता और भारतमाता का प्रतीक है। आप अपने हिसाब से उसका मनचाहा अर्थ लगा सकते हैं और निराला स्वयं राम ही हैं इसके प्रति हमारे मन में कोई आशंका नहीं है। सरोज के पिता, तुलसीदास और अन्त में राम यह निराला जी के चरित्र का विकास यहाँ परिलक्षित होता है। राम-रावण का युद्ध अविरत चल रहा है लेकिन शक्ति राम के नहीं, रावण के पक्ष में थी इसलिए राम को उस दिन सफलता नहीं मिलती। शाम होने के बाद युद्ध समाप्त हो जाता है और अपनी सेना के साथ त्रस्त राम रणभूमि से शिबिर की ओर लौट आते हैं। थके हार राम मन में सोच रहे हैं कि इस युद्ध में किस तरह विजय प्राप्त हो सकती है ? उस वक्त का चित्रण करते हुए कवि लिखता है -

'हैं अमानिशा, उगलता गगन घन अंधकार
खोरहा दिशा का ज्ञान; स्तब्ध है पवन-चार;
अप्रतिहत गरज रहा पीछे अम्बुधि विशाल
भूधर ज्यों ध्यान-मग्न; केवल जलती मशाल।
स्थिर राघवेन्द्र को हिला रहा फिर-फिर संशय
रह-रह उठता जग-जीवन में रावण-जय-भय।'[१०]

राघव स्थिर बुद्धि के हैं लेकिन फिर भी रह-रह कर उनके मन में संशय जाग रहा है। इसी समय राम को सीता की प्रथम भेट याद आती है और सहजीवन की सारी स्मृतियाँ जाग्रत हो जाती है। उनका दुःख और भी बढ जाता है। रावण का अट्टाहास राम का पीछा कर रहा था और निराश राम की आँखों से दों आँसू गिरते हैं। हनुमान राम के पास बैठे थे और उन्हें राम का यह दुःख देखा नहीं जाता। उडान भरकर महाकाश में वे शिव को त्रस्त करते हैं। शक्ति क्रुद्ध होकर हनुमान पर प्रहार करना चाहती है किन्तु शिव उसे रोकते हैं। शक्ति ने अंजनी का रूप धारण किया और वह हनुमान के साथ वार्तालाप करने लगती है। उसकी बात सुनकर महाकपि शांत होकर राम के पास वापस आते हैं। राम अपनी सेना के साथ बात करते हुए खुद का धिक्कार करते हैं। आजादी के लिए अनेक आंदोलन लडे गए थे किन्तु नतीजा सिफर ही था। इसलिए भारतीय जनमानस राम की तरह दुविधाग्रस्त और संशय से व्याप्त था। कई आंदोलन होने के बावजूद भी स्वतंत्रता दूर-दूर तक क्षितिज पर दिखाई नहीं दे रही थीं। इसलिए भारतीय जनता की हताशा और निराशा दूर करना जरूरी था। राम भी बिलकुल उसी मनस्थिति का प्रतिनिधित्व करते हैं। लेकिन राम फिर भी राम हैं, वे खामोश नहीं बैठ सकते और परिस्थिति की शरण में जाने के बजाय परिस्थिति पर मात करना चाहते हैं। भारतीय जनता की तरह राम भी त्रस्त जरूर है लेकिन वे हार नहीं मानते। इसलिए निराला जी ने

राम की मनस्थिति को इन शब्दों में स्पष्ट किया है -

'आया न समझ में यह दैवी विधान;
रावण अधर्मरत भी, अपना मैं हुआ अपर
यह रहा खेल शक्ति का खेल समर, शंकर, शंकर।'

आगे राम कहते हैं -

'देखा, हैं महाशक्ति रावण को लिए अंक
लांछन को ले जैसे शशांक नभ में अशंक
हत मंत्रपूत शर संवृत्त करती बार-बार
निष्फल होते लक्ष्य पर क्षिप्र वार पर वार।'[१२]

राम के कथन के अनुसार उन्होंने जो-जो मंत्र बाण चलाए थे वह सारे व्यर्थ हुए क्योंकि महाशक्ति रावण का रक्षण कर रही है और जब तक शक्ति रावण के पक्ष में हैं राम रावण का कुछ भी बिगाड नहीं सकते इसलिए राम विवश होकर कहते हैं –

विचलित लख कपिदल कृद्ध युद्ध को ज्यों-ज्यों
झक-झक झलकती वन्हि वामा के दृग त्यों-त्यों
पश्चात देखने लगी मुझे बंध गए हस्त
फिर खींचा न धनु, मुक्त ज्यों बंधा मैं हुआ त्रस्त।[१३]

राम शक्ति की आराधना करने का प्रण लेते हुए हनुमान को एक सौ आठ इंदिवर लाने की आज्ञा देते हैं। हनुमान जाकर एक सौ आठ कँवल ले आते हैं। राम की आराधना का आरंभ होता है और वे शक्ति पूजा में लीन हो जाते हैं। राम की परीक्षा लेने हेतु दुर्गा एक कँवल उठाकर ले जाती है। राम बैठे हैं लेकिन अंतिम कँवल उन्हें नहीं मिलता तो वे बहुत दुःखी होकर कहते हैं -

'धिक् जीवन को जो पाता ही आया विरोध
धिक साधन जिसके लिए सदा ही किया शोधा।'[१४]

भले ही राम दुःखी है लेकिन वे अपने संकल्प को अधूरा नहीं छोडते इसलिए कहते हैं –

'जानकी ! हाय, उद्धार प्रिया का हो न सका'[१५]

फिर भी राम का संकल्प हार स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं है -

'वह एक और मन राम का जो न थका
जो नहीं जानता है दैन्य, नहीं जानता विनय
कर गया भेद वह मायावरण प्राप्त कर जय।'[१६]

मातृभूमि के लिए तन, मन, धन निछावर करने का अगर वक्त आता है तो हमें पीछे नहीं हटना चाहिए। हमारे देश को स्वतंत्र करने के पीछे यहीं अवधारणा थी जिसके कारण हम स्वतंत्र हुए और आज हम आजादी के माहौल में खुली साँस ले रहे हैं, इस बात की ओर निराला ने संकेत किया। अब राम के सामने यह दुविधा है कि पूजा अधुरी छोडकर वे उठ नहीं सकते थे। अचानक उन्हें याद आता है कि उनकी माता कौशल्या उन्हें राजीव नयन कहती थी। इसका अर्थ है कमल जैसी आँखों वाला। राम मुस्कराते हुए अपन हाथ में एक बाण उठाते हैं और अपनी एक आँख निकालकर देनी के चरणों पर समर्पित करना चाहते हैं। जैसे ही राम के अपना हाथ उठाया और दाहिने नेत्र की ओर ले गए, उनका हाथ बीच में कोई पकडता है। राम आँखें खोलकर देखते हैं कि सामने साक्षात दूर्गा थी जिसके साथ लक्ष्मी, सरस्वती, गणेश, कार्तिकेय और मस्तक पर भगवान शिव थे। राम ने सभी को सादर प्रणाम किया। शक्ति राम को विजय का आशिर्वाद देते हुए कहती है -

'होगी जय होगी जय, हे पुरूषोत्तम नवीन।'[१७]

ऐसे कहते हुए महाशक्ति राम में लीन हो जाती है। अर्थात अब शक्ति ने राम को सहायता करने का अभिवचत दिया और वे राम में समा-गई। संक्षेप में 'न दैन्यम् न पयायनम्' व्यक्तित्व के राम स्वामी हैं। इस कविता के द्वारा निराला जी ने लोगों को, विशेषतः त्रस्त भारतीयों को संघर्ष करने की प्रेरणा दी है। अंग्रेजों के अत्याचारों से पीडित भारतीय जनता को संघर्ष करने की प्रेरणा देनेवाला यह प्रबंध काव्य छायावाद ही नहीं अपितु भारतीय काव्यधारा की एक सशक्त रचना है।

निष्कर्ष - 'राम की शक्तिपूजा' यह प्रबंध रचना कालजयी रचना है। मानव को अपना लक्ष्य पूर्ण करने के लिए अपने सर्वस्व का बलिदान देना चाहिए और जब तक ध्येय पूर्ण नहीं होता, अपने कदम पीछे हटाना नहीं चाहिए बल्कि मंजिल प्राप्त करने के लिए सदैव प्रयासरत रहना चाहिए। संघर्ष करने की प्रेरणा देनेवाली यह रचना कालजयी रचना बन गई और आज भी इसकी प्रासंगिकता बरकरार है। आज के परिवेश में भी इस रचना के द्वारा हमें जो प्रेरणा मिलती है वह अनूठी है। आज हम आजादी का अमृत महोत्सव मना रहे हैं ऐसे माहौल में इस रचना की प्रासंगिकता और भी बढ जाती है। मर्यादा पुरूषोत्तम राम की तरह हमें भी विजय श्री पाने के लिए प्रयासरत रहना चाहिए और मंजिल तक पहुँचना चाहिए। ब्रिटीशों के साथ लडते हुए लाखों लोगों ने संघर्ष के प्रेरणा लेकर अपनी आहुती दी फलस्वरूप हम आजाद हुए ऐसा मानते हुए हम अपनी बात को यहाँ विराम देते हैं।

संदर्भ संकेत

1. *लिमये मधु, स्वातंत्र्य चळवळीची विचारधारा, समाजवादी मित्र बिरादरी, पुणे 2010 पृ. 115*
2. *मुक्तिबोध – चकमक की चिंगारियाँ, चौंद का मुँह टेढा है, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन नई दिल्ली 2004 पृ. 131*
3. *शर्मा रामविलास सं. – निराला, राग-विराग, लोकभारती प्रकाशन, इलाहबाद, 2004 पृ. 32*
4. *वहीं पृ. 32*
5. *वहीं पृ. 96*
6. *वहीं पृ. 32*
7. *वहीं पृ. 91*
8. *भारद्वाज शशि सं. – भाषा, केंद्रीय हिन्दी निदेशालय दिल्ली, जनवरी, फरवरी 2004 पृ.*
9. *शर्मा रामविलास सं. – निराला, राग-विराग, लोकभारती प्रकाशन, इलाहबाद 2004 पृ. 32*
10. *वहीं पृ. 93-94*
11. *वहीं पृ. 99*
12. *वहीं पृ.99*
13. *वहीं पृ. 99*
14. *वहीं पृ. 103*
15. *वहीं पृ.103*
16. *वहीं पृ. 103*
17. *वहीं पृ. 104*

****

भारत के स्वतंत्रता संग्राम में छायावादी कवियों का योगदान

-डॉ. वीरेन्द्र कुमार
पीएच.डी,
रिसोर्स पर्सन राष्ट्रीय परीक्षण सेवा-भारत
भारतीय भाषा संस्थान, मैसूरु मो.नं. 9916336696

भारत के स्वतंत्रता संग्राम में छायावादी कवियों का भी योगदान हो सकता है – प्रथम दृष्टतया यह बात हमको अटपटी सी लगती है। क्योंकि इस श्रेणी के कवियों के बारे में हमारे मन में एक अलग प्रकार की धारणा बैठाई गयी है और यह काम हिंदी साहित्य के पुरोधा इतिहासकारों और समालोचकों के द्वारा ही किया गया है। छायावादी कवियों के बारे में आम धारणा यह रही है कि वे मसृण-मृदु विचारों वाले, कोमल-कांत पदावली का प्रयोग करने वाले, अपनी बनाई एक अलग दुनियाँ में मस्त रहनेवाले स्वप्नजीवी रहे हैं। इसके अलावा उन्हें पलायनवादी, रहस्यवादी, कल्पना प्रेमी और गगनचारी आदि उपाधियों से भी विभूषित किया गया है और यह कहा गया है कि इनकी इन्हीं विशेषताओं या कमज़ोरियों के कारण इन्हें छायावादी अर्थात् यथार्थ जगत् से दूर एक छाया जगत् (Shadow world) में मगन रहने वाले कहा गया। इस संबंध में आचार्य रामचंद्र शुक्ल की व्यंग्य भरी वाणी देखें—"ईसाई संतों के छायाभास तथा यूरोपीय काव्य-क्षेत्र में प्रवर्तित आध्यात्मिक प्रतीकवाद के अनुकरण पर रची जाने के कारण....ऐसी कविताएँ 'छायावाद' कही जाने लगीं। ...'छायावाद' नाम चल पड़ने का परिणाम यह हुआ कि बहुत से कवि रहस्यात्मकता, अभिव्यंजना के लाक्षणिक वैचित्र्य, वस्तु-विन्यास की विश्रृंखलता, चित्रमयी भाषा और मधुमयी कल्पना को ही साध्य मानकर चले...। ....शैली की इन विशेषताओं और दूरारूढ़ साधना में ही लीन हो जाने के कारण अर्थभूमि के विस्तार की ओर उनकी दृष्टि न रही..."[१]

शुक्ल जी लिखते हैं— "चित्रभाषा या अभिव्यंजना-पद्धति पर ही जब लक्ष्य टिक गया तब उसके प्रदर्शन के लिए लौकिक या अलौकिक प्रेम का क्षेत्र ही काफी समझा गया। इस बँधे हुए क्षेत्र के भीतर चलनेवाले काव्य ने 'छायावाद' का नाम ग्रहण किया।"[२] लेकिन हिंदी आलोचना के बाद के युग में छायावाद के प्रति मान्यताओं में परिवर्तन हुआ और इसे इसके युग की परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में देखा जाने लगा। इसके पीछे यह सोच थी कि कोई भी 'टेक्स्ट' अपने 'कॉन्टेक्स्ट' से अछूता और अप्रभावित कैसे रह सकता है। हाँ, जरूरत इस बात की है कि हम अपने देखने का नज़रिया बदलें। इसलिए कहा भी गया है **बदली मेरी नज़र तो नजारे बदल गये!** इस संबंध में छायावाद के प्रति ऐसी ही दृष्टि रखनेवाले समालोचक डॉ. बच्चन सिंह लिखते हैं-- "प्रारंभिक पूँजीवाद में जिस व्यक्ति-स्वातंत्र्य का जन्म हुआ, उसका प्रभाव समस्त छायावादी कविता पर पड़ा है। छंद के बंधन से कविता को मुक्त किया गया, साम्राज्यवादी बंधनों से देश को मुक्त करने की कामना की गयी, स्त्री-स्वातंत्र्य की भी आवाज़ उठाई गयी। पुरुष कवियों ने स्त्री स्वातंत्र्य को वाणी दी।"[३] "छायावाद विशेष रूप से हिन्दी साहित्य के 'रोमांटिक' उत्थान की वह काव्यधारा है जो लगभग ईस्वी सन् 1921 से 36 (उच्छवास से युगांत) तक की प्रमुख युगवाणी रही, जिसमें प्रसाद, निराला, पंत और महादेवी प्रभृति मुख्य कवि हुये और सामान्य रूप से इस में भावोच्छवास प्रेरित स्वच्छंद कल्पना-वैभव की वह स्वच्छंद-प्रकृति है जो देशकाल गत वैशिष्ट्य के साथ संसार की सभी जातियों के विभिन्न उत्थानशील युगों की आशा-आकांक्षा में निरंतर व्यक्त होती रही है।"[४] यह छायावाद के कवियों ने बखूबी अनुभव किया और इसी अनुभव का उद्घोष उन्होंने अपनी रचनाओं में किया यही उनका विद्रोह है। प्रसाद जी का यह खुला आह्वान देखें-

हिमाद्रि तुंग श्रृंग से प्रबुद्ध-शुद्ध भारती
स्वयंप्रभा समुज्जवला स्वतंत्रता पुकारती

निराला की यह प्रसिद्ध प्रार्थना भी इसी विद्रोह का परिणाम है-

वर दे, वीणावादिनी वर दे!
प्रिय स्वतन्त्र-रव अमृत-मन्त्र नव भारत में भर दे।

अतः छायावादी कवियों की व्यक्तिगत स्वतंत्रता की भावना को उनकी राष्ट्रीय स्वाधीनता की कामना से अलग करके नहीं देखना चाहिए।

निराला का व्यक्तिगत स्वतंत्रता और विद्रोह- इस दृष्टि से विचारणीय उनकी कुछ महत्वपूर्ण कविताओं का परिचय नीचे दिया जाता है।

जागो फिर एक बार **(1)**- 'जागो फिर एक बार', जैसा कि इसके शीर्षक से ही स्पष्ट है, एक आह्वान गीत है जो स्वयं भारत माता अपने लाड़लों से कर रही हैं।

जागो फिर एक बार (2)-यह कविता पहली कविता से अधिक अभिधात्मक है। उसमें तो कुछ श्रृँगार का परदा भी था। परन्तु बाद में शायद कवि को लगा कर कि इस तरह पर्दे दारी से बात नहीं बनेगी। वह समय निकल चुका है। अतः अब वह खुलकर अपनी बात कह रहा है।

बादल राग (6)-इस शीर्षक के अंतर्गत कवि ने अनेक कविताएँ लिखी हैं। लेकिन यह 6 नम्बर की रचना बहु विश्रुत है। इसे 'विप्लव की कविता' कहा जाये तो अत्युक्ति नहीं होगी क्योंकि इसमें पाँच संदर्भों के 'विप्लव' शब्द का प्रयोग किया गया है जिसका सीधा अर्थ होता है-क्रांति।

टूटें सकल बन्ध-यह निराला की छोटी सी कविता है जिसपर बड़े आलोचकों का ध्यान कम ही जाता है। इसमें कवि ने सारे बंधनों के टूटने की कामना की है। प्रस्तुत कविता में कवि कहता है कि जल की जो धारा रुद्ध है वह निर्झर के समान मुक्त होकर बहे। इस प्रकार यदि बादल राग विप्लव का गीत है तो यह कविता मुक्ति का गान है।

मरण को जिसने वरा है-निराला ने मृत्यु पर कई गीत और कविताएँ लिखी हैं। उनकी शीर्षस्थ रचना 'सरोज-स्मृति' एक उत्कृष्ट शोकगीत है। लेकिन प्रस्तुत कविता का स्वर कुछ दूसरा ही है जिसमें शोक-संताप का नाम तक नहीं है। यह तो मृत्यु को गौरवान्वित करने वाली कविता है।

व्यक्तिगत स्वतंत्रता और विद्रोह-

सुमित्रानंदन पंत-पंतजी के काव्य में व्यक्तिगत स्वतंत्रता और विद्रोह खोजने वालों को कठिनाई का सामना करना पड़ता है क्योंकि छायावादी अभिव्यंजना शैली की दृष्टि से ये इस आंदोलन के प्रतिनिधि कवि हैं। अन्योक्ति पद्धति में लिखी गई इनकी रचनाओँ के वास्तविक संदर्भ और अर्थ को पकड़ने के लिए एक भिन्न उपागम या एप्रोच की आवश्यकता पड़ती है। इनके प्रतीकात्मक प्रयोगों के मध्य से इनके आशय को पकड़ना आसान नहीं है। आगे हम पंत की कुछ प्रतिनिधि कविताओं के आधार पर उनके 'स्वातंत्र्य' की आकांक्षा को देखने का प्रयास करेंगे।

प्रथम रश्मि- प्रथम रश्मि का आना रंगिणी तूने कैसे पहचाना ?

यहाँ 'प्रथम रश्मि' अंधकार भरी रात्रि के अवसान की पूर्व घोषणा है। आगे की पंक्तियों में अतीत के सुख-स्वप्न में डूबी सोयी पड़ी हिन्दी जाति की अवस्था का वर्णन बड़े ही सटीक ढंग से हुआ है-

सोयी थी तू स्वप्न नीड़ में,
पंखों के सुख में छिपकर,
ऊंघ रहे थे घूम द्वार पर,
प्रहरी-से जुगनू नाना.....

यह स्वप्न नीड़, प्रहरी, स्नेहहीनता का पूरा परिवेश, श्वास-शून्यता और पूरी धरती पर छाया हुआ अंधकार का वितान-ये सब मिलकर परतंत्रता के हजारों सालों की कहानी कह रहे हैं। लेकिन अचानक ही पूरे परिदृश्य में परिवर्तन होता है। कवि के शब्दों में-

कूक उठी सहसा तरुवासिनी !
गा तू स्वागत का गाना.....

इसी वातावरण में सहसा एक तूर्यनाद होता है। वह है कोयल की तान जो मानो उस संपूर्ण परिवेश में परिवर्तन का आह्वान है। विद्रोह का सीधा स्वर पंत के काव्य में नहीं मिलता है परन्तु इस भावना के प्रति आदर इनके हृदय में अवश्य है। ऊपर पंत की तुलना निराला से करने का प्रयास किया गया है। निराला की ही तरह पंत ने भी बादलों पर, वर्षा पर और वसंत पर कविताएँ लिखी हैं। इनके यहाँ भी बादल और वर्षा जीवन के तथा वसंत यौवन के प्रतीक के रूप में ही आया है। इस दृष्टि से इनकी 'आओ हम अपना मन टोवें' शीर्षक कविता भी महत्वपूर्ण है जिसमें कवि हमें हमारे अंदर के बंधनों के प्रति आगाह करता है जो हमारी बाह्य स्वतंत्रता कि अर्हताओं को कम करते हैं। पंत जी के एक काव्य संकलन का नाम 'मुक्तियज्ञ' भी है। इसमें संकलित कविताओं में अपनी आत्मा के बंधनों की आहुति देने का आह्वान किया गया है।

जयशंकर प्रसाद-प्रसाद जैसे सुव्यवस्थित व्यक्तित्व में विद्रोह की भावना का होना स्वाभाविक नहीं है। लेकिन स्वतंत्रता की भावना उनमें खूब मिलती है। यह कहीं तो व्यक्ति स्वातंत्र्य है, कहीं राष्ट्रीय स्वाधीनता है और कहीं इन दोनों का सम्मिश्रित रूप है। उनकी 'हिमाद्रि तुंग श्रृंग' कविता को पढ़ते समय उनके द्वारा खुले आम व्यक्त किये गये विद्रोही विचारों से चकित और प्रभावित हुये बिना नहीं रहा जा सकता कि 'कामायनी' आदि कृतियों में प्रतीकों और रूपकों के महाजाल के

भीतर से अपनी नैया खेने वाला कवि इतनी सीधी-सीधी बातें कैसे कर रहा है। इनकी 'बीती विभावरी जाग री' एक आह्वान गीत है जो निराला के 'जागो फिर एक बार' कविता से बहुत हद तक तुलनीय है। कवि परतंत्रता की बेड़ी में जकड़ कर सोयी हुई भारतीय जाति को कुछ इस प्रकार संबोधित करता है -

बीती विभावरी जाग री !
अम्बर-पनघट में डुबो रही-
तारा-घट ऊषा-नागरी।
खग-कुल कुल-कुल-सा बोल रहा,
किसलय का अंचल डोल रहा,
लो यह लतिका भी भर लाई
मधु मुकुल नवल रस गागरी।
अधरों में राग अमंद पिए,
अलकों में मलयज बंद किये
तू अब तक सोयी है आयी !
आँखों में भरे विहाग री।

इस कविता को पढ़ते समय पंत की 'प्रथम रश्मि का आना' कविता और निराला की 'जूही की कली' की भी स्मृति होना सुविज्ञ पाठक के लिये आवश्यक हो जाता है। प्रसाद जी की स्वातंत्र्य भावना या चेतना बहुधा सीधे-सीधे न व्यक्त होकर एक दूसरे ही ढंग से व्यक्त हुई है। वह है अपने देश और जाति के अतीत के गौरव की याद करना, उसके द्वारा वर्तमान की दुर्दशा की अनुभूति को और तीव्रतर बनाना और इस दुरवस्था से उभर कर पुनः उसी गौरव को प्राप्त करने की चेष्टा करना। इसे पुनुरुत्थानवाद भी कहते हैं। हालाकि इस भावना से आधुनिक युग का हर बड़ा कवि प्रभावित रहा है। 'भारत महिमा' संकलन में ही 'अरुण यह मधुमय देश हमारा' शीर्षक कविता संकलित है जो इसी अतीत के गौरव का गान है। प्रसाद की 'आत्म कथ्य' कविता व्यक्ति की निजी स्वतंत्रता की अभिव्यक्ति के इतिहास के राह में एक मील का पत्थर है। प्रो. नामवर सिंह ने लिखा है कि बीसवीं सदी की काव्य सीमा में प्रवेश करने पर हिन्दी कविता के पाठक का ध्यान सबसे पहले जिस विशेषता की ओर जाता है, वह है वैयक्तिक अभिव्यक्ति। व्यक्तिगत अनुभूतियों की अभिव्यक्ति में जो निर्भीकता और साहस आधुनिक कवि ने दिखाया, वह पहले किसी कवि में नहीं मिलता। आधुनिक 'लीरिक' अथवा 'प्रगीत' इसी वैयक्तिता के प्रतीक हैं। ..... 'आत्मकथ्य' उसका विषय हो गया और 'मैं' उसकी शैली।.....अपनी दुर्बलताएँ भी उसने साहस के साथ कहीं और जिन बातों को अब तक लोग समाज के भय से छिपाते उन्हें भी छायावादी कवि ने खोलकर रख दिया। प्रसाद जी की आत्मकथ्य शीर्षक प्रस्तुत कविता इसी प्रवृत्ति का परिणाम है। वे लिखते हैं-

"तब भी कहते हो कह डालूँ दुर्बलता अपनी बीती ।
तुम सुनकर सुख पाओगे, देखोगे गागर रीती ।।
मिला कहाँ वह सुख जिसका मैं स्वप्न देखकर जाग गया ।
आलिंगन में आते-आते मुसक्या कर जो भाग गया ।।
सुनकर क्या तुम भला करोगे मेरी भोली आत्म कथा ?
अभी समय भी नहीं, थकी सोयी है मेरी मौन व्यथा ।।"

इस प्रकार हम देखते हैं कि कवि ना-ना कहते हुये भी बहुत कुछ कह देता है।

महादेवी वर्मा- इनके संबंध में आलोचक नामवर सिंहजी लिखते हैं कि तत्कालीन समाज में 'जब पुरुष की यह स्थिति है तो इस पुरुष-प्रधान समाज में नारी की आत्माभिव्यक्ति पर कितनी रोक हो सकती है तथा एक नारी को स्पष्ट आत्माभिव्यक्ति में कितनी कठिनाई आ सकती है, इसका पता महादेवी जी के रहस्य-गीतों से ही लगाया जा सकता है।' (देखें-आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ, पृ.18) लेकिन महादेवी के काव्य में व्यक्तित्व की चर्चा करते हुये डॉ. बच्चन सिंह ने लिखा है कि 'वे (महादेवी)' और चाहे जो कुछ भी हों, रहस्यवादी नहीं हैं। वे अंधेरे से जूझती हुई दीपशिखा हैं। प्रिय और प्रियतम शब्द परमात्मा के प्रतीक नहीं हैं। वे उन्हीं के व्यक्तित्व के अंग हैं। उन्हें रहस्यवादी कहने का अभिप्राय है, उनके आत्मसंघर्ष पर, जो समूची नारी जाति का आत्मसंघर्ष है, पर्दा डालना। उनकी कविता को उनकी गद्य कृतियों जैसे-श्रृँखला की कड़ियाँ, स्मृति की रेखाएँ आदि के साथ पढ़ना चाहिए। उनके काव्य और जीवन दोनों की मूल टेक है-'कीर का प्रिय आज पिंजर खोल दो!' .....महादेवी इस परतंत्रता की भोक्ता थीं। इस भोग और स्वतंत्रता के दो पाटों के बीच वे बुरी तरह पिस रही थीं। महादेवी की कविताओं पर पुरुषों द्वारा निर्धारित सिद्धांतों को चस्पा किया जाता रहा है। इधर स्त्रियों की रचनाओं के प्रति दृष्टिकोण बदल गया है। इसके लिए समीक्षा की एक नई प्रणाली-फेमिनिस्ट क्रिटिसिज्म विकसित हो चुकी है। इस दृष्टि से विचार करने पर महादेवी की कविताओं की संरचनात्मक जटिलता और अभिव्यक्ति की सूक्षमता पर नया प्रकाश पड़ेगा। यह मूलतः समाज द्वारा उत्पीड़ित नारी की आत्माभिव्यक्ति है जो विद्रोह और आत्मदमन दोनों छोरों को छूती रहती हैं।" अब महादेवी वर्मा की कविताओं से कुछ उदाहरण देकर हम अपने आशय को और स्पष्ट करेंगे।

किर का प्रिय आज पिंजर खोल दो। हो उठी है चंचु छूकर
तीलियाँ भी वेणु सस्वर वन्दिनी स्पंदित व्यथा से
सिहरता जड़ मौन पिंजर! अब अलस बंदी युगों का
ले उड़ेगा शिथिल कारा पंख पर वे सजल सपने तोल दो!

इन पंक्तियों में अभिव्यक्त स्वतंत्रता की भावना और युगों की परतंत्रता के विरुद्ध विद्रोह के भावों का समझने के लिये किसी और व्याख्या की आवश्यकता नहीं है।विद्रोह और स्वतंत्रता के मार्ग में शहादत का खतरा भी रहता है। विद्रही के लिये दो ही विकल्प होते हैं- सिंहासन या सूली। महादेवी इस सत्य से परिचित हैं। इसी लिये वे अपनी एक कविता में अपने 'मिटने के अधिकार को सुरक्षित' रखना चाहती हैं। इस कविता की शीर्षक ही है 'अधिकार'। महादेवी की एक कविता है-'अश्रु यह पानी नहीं है'। इस कविता में भी कवयित्री ने अपने प्रतीक विधानों की वास्तविकता को बताया है। वे लिखती हैं-

अश्रु यह पानी नहीं है, यह व्यथा चंदन नहीं है।
यह न समझो देव पूजा के सजीले उपकरण ये,
यह न मानो अमरता से माँगने आये शरण ये।

महादेवी की एक कविता है-चाहता है यह पागल प्यार ध् अनोखा एक नया संसार! स्पष्ट है कि इन रचनाओं में मिलने वाला एक-एक शब्द स्वतंत्रता या मुक्ति और नवजीवन के ऊपर लिखे गये एक-एक महाकाव्य के बराबर है। महादेवी वर्मा की एक चर्चित कविता है-उत्तर इसकी शुरूआत कुछ इस प्रकार होती है-

इस एक बूँद आँसू में, चाहे साम्राज्य बहा दो,
वरदानों की वर्षा से,यह सूनापन बिखरा दोय
इसका अंत इन शब्दों में होता है-पर शेष नहीं होगी यह,
मेरे प्राणों की क्रीड़ा, तुमको पीड़ा में ढूँढ़ा,

कीर और पिंजर की श्रृँखला में प्राणों की क्रीड़ा का तात्पर्य मुक्ति के सिवा और क्या हो सकता है!इस रोशनी में महादेवी की अन्यान्य कविताओं को देखें तो उनकी पुनर्व्याख्या की संभावनाएँ दिखाई देंगीं। आज तक जिन कविताओं को रहस्यवादी रचनाएँ माना गया था उनमें उनकी स्वतंत्रता की आकांक्षा और विद्रोह के नये स्वर सुनाई देंगे। महादेवी की निजी स्वतंत्रता का समाहार संपूर्ण नारी जाति की स्वतंत्रता की कामना में हुआ है। इस दृष्टि से महादेवी सहित सभी छायावादियों के पाठों के पुनरावलोकन की गंभीर आवश्यकता है।

।।इति।।

संदर्भ सूची

1. शुक्ल रामचंद्र, १९४२, हिंदी साहित्य का इतिहास, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, पृ. ६५१
2. वही, पृ. ६६७
3. सिंह बच्चन, हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, २००९, पृ. 361
4. सिंह नामवर, आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ, लोकभारती, इलाहाबाद, १९६४, पृ.11
5. सिंह बच्चन, हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, २००९, पृ. ३६१

****

1857 की क्रान्ति: हाशिए के समाज की स्त्रियों की भूमिका

-नित्यानन्द सागर
एम.फिल (हिंदी),
महात्मा गांधी केन्द्रीय विश्वविद्यालय,
बनकट, मोतिहारी-845401(बिहार),भारत
मो : 9999368657 15

जब हमलोग 1857 की क्रान्ति पर बात करते हैं तो हम देखते हैं कि किस तरह एक बनी बनाई अवधारणा हमारे सामनें विकसित की जा रही हैं । कहा जाता है कि 1857 की क्रान्ति भारत का प्रथम स्वाधीनता संग्राम है जबकि सत्य इससे बिल्कुल इतर है । मुख्यधारा के इतिहासकारों एंव साहित्यकारों नें हमारे सामने 1857 की क्रान्ति को एक विशेष नजरिये से परोसतें हैं और वर्गीय लाभ के लिए अपने नायकों और नायिकाओं को खड़े किये हैं । हाशिए के समाज से आने वालें नायकों-नायिकाओं के नाम लेने से भी कोताही बरततें हैं , ताकि उनके कलम की ताकत वाली वर्चस्ववादी संस्कृति कायम रह सकें इसलिए उन्होंने इतिहास के पन्नों से तमाम क्रांतिकारियों का नाम हरसम्भव मिटाने का प्रयास करतें हैं जिनके योगदान 1857 की क्रान्ति में सबसे ज्यादा रहे हैं। " इस समस्त लेखन में भारतीय समाज के अभिजात वर्ग को ही ज्यादा तरजीह दी गई । बहुत समय तक इस विद्रोह का अध्ययन नाना पेशवा , झांसी की रानी , तात्या टोपे , कुँवर सिंह आदि कुलीन और नामवर नेताओं के उद्देश्य और उसकी पूर्ति की दिशा में उनके द्वारा किए गए प्रयासों को केन्द्र में रखकर ही किया जाता रहा "[9] लोक परम्परा में जीवित उन तमाम क्रान्तिकारियों के नाम आज भी किसी पर्व त्योहार पर गीतों के माध्यम से पीढ़ी दर पीढ़ी स्थानांनतरण होते चले आ रहे हैं । आज हाशिए के समाज भी अपनी पूर्वजों की सभ्यता और संस्कृति में गोता लगाकर उसे शब्दबद्ध करने के प्रयास कर रहें हैं और अपनी आत्म इतिहास खोज रहें हैं , जिसे एक विशेषा वर्ग के द्वारा छल- प्रपंच के तहत दबाया गया था ।नई- नई शोध के जरिए 1857 की क्रान्ति के नायकों-नायिकाओं की अवधारणा बदल गई हैं । 1857 की क्रान्ति न तो पहला सैनिक विद्रोह था और न ही इस युद्ध को किसी विशेष वर्ग के द्वारा लड़े गये थे । इसकी पृश्टभूमि वर्षों पहले से तैयार हो रही थी , जिसका मुख्य कारण था साम्राज्यवादी नीति , भारतीय गाँव की सामंतवादी नीति और जमीनदारी नीति इसलिए 1857 की क्रान्ति में सभी तबके से लोग आते हैं और अपने अपने हित के लिए लड़ते हैं । इसी कारण से यह क्रान्ति सफल नहीं हो पायी और न ही उस समय एक राश्ट्र की अवधारणा विकसित हो पाई थी । अर्थात् कह सकते हैं कि उस समय राष्ट्रवाद की अवधारणा का अभाव था , लेकिन 1857 की क्रान्ति होते ही भारतीय लोग सोचने लगे कि भारत देश क्या है ? शासन कौन करेगा ? और यही से राष्ट्रवाद की अवधारणा विकसित होने लगता हैं ।किसी भी समाज में कोई घटना या क्रान्ति अचानक नहीं घटित होती है उसका एक लम्बा संघर्षरत इतिहास होता है । 1857 की क्रान्ति से पहले कई बड़ी क्रान्तियाँ हो चुकी थी जो सब मिलकर 1857 की क्रान्ति की पृश्टभूमि तैयार कर रही थी । कहा जा सकता है कि 1857 की क्रान्ति की अवधारणा का विकास सौ साल पहले से हो रही थी , जिसमें छोटे-बड़े कई क्रान्तियाँ शामिल हैं जिसके चरमोत्कर्श 1857 में देखने के लिए मिलते हैं जैसे पृथ्वी की सतह में मैग्मा कई वर्शों से पनपते रहते हैं और एक दिन वह लावा बन कर फूट पड़ते हैं।ब्रिटिश शासन ने भारतीय सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और आर्थिक पक्षों पर प्रहार किये । अगर हम उस समय आर्थिक पक्ष की बात करें तो वह भारत से कच्चे माल अपने यहाँ ले जाकर औद्योगिक क्रान्ति में सहयोग कर रहें थे , जिसके कारण भारत में हस्त-शिल्प उद्योग नश्ट हो रहें थे । भारतीय वस्तुओं पर बहुत ज्यादा कर लगाए जाते थे जिसके कारण बेरोजगारी , अकाल ,किसानों में दरिद्र होने जैसी प्रवृत्ति पनप रही थी । राजनीतिक और प्रशासनिक पक्ष की बात करें तो सहायक संधि जिसके तहत ब्रिटिश शासन ने राजाओं- महाराजाओं के क्षेत्राधिकार को अपने कब्जे में लेकर उस क्षेत्र में अपनी सेना बहाल कर दी और उसकी खर्च राजाओं-महाराजाओं को वहन करने के लिए कहे गये , अगर समय पर खर्च वहन नहीं कर पाए तो राजाओं-महाराजाओं के उस क्षेत्र को ब्रिटिश शासक अपने अधिकार में ले लेते थे । विलय की नीति भी एक प्रमुख कारण थी , जिसके तहत जिस राजाओं-महाराजाओं को संतान नहीं होते थे, उसके सम्पत्ति पर ब्रिटिश शासक अधिकार कर लेते थे ।1856 में वाजिद अली पर कुशासन का आरोप लगा कर उसे कोलकाता भेज दिये जिसके कारण अवध की जनता में बहुत रोश थी । ब्रिटिश शासन का वह विदेश नीति जिसमें सेना को जबरन युद्ध करने के लिए विदेश भेजते थे , लेकिन जब अफगान युद्ध में भारतीय सेनाओं को भेजे गये तो उसके सकारात्मक और नकारात्मक दोनों रूप उभर कर सामने आते है। एक तरफ जहाँ भारतीय सभ्यता और संस्कृति का उल्लंघन हो रहा था तो वही दूसरी तरफ भारतीय सेनाओं को यह भान हो गई थी कि अब वह इन अंग्रेजो से युद्ध जीत सकती है , क्योंकि अफगान युद्ध में अंग्रेजों का हार हो चुका था । भारतीय समाज में परम्परा से यह बात चली आ रही है कि कोई व्यक्ति समुद्र पार नहीं करेंगे ऐसा करने पर उस व्यक्ति का धर्म भ्रश्ट हो जाते हैं , जिसे ब्रिटिश शासक ने 1850 में एक कानून ब्रिटिश जनरल सर्विस एलेस्मेंट ऐक्ट में भी कहा गया है कि अब सभी सिपाही को समुद्र पार करके युद्ध करने के लिए विदेश जाना पड़ेगा। वहीं चर्बी लगे कारतूस से भी सिपाहियों के धार्मिक भावना आाहत होते थे । सिपाही धार्मिक चिह्न धारण करते थे उसे ब्रिटिश सरकार द्वारा हटाने के लिए कही जाती थी । सिपाही के वेतन भी यूरोपीय सिपाहियों की अपेक्षा भारतीय सिपाहियों को कम दिये जाते थे। भारतीय सामाजिक क्रान्ति की बात करें तो अंग्रेजों नें विधवा पुनर्विवाह और सती प्रथा पर कानून बना कर रोक लगाए । जिसके कारण भारतीय धार्मिक ठिकेदारों के बीच रोश पनप रहे थे " भारतीय समाज बहुत समय से अपरिवर्तित रहा है। "[2] 1857 की क्रान्ति के समर्थन में हस्त-शिल्प उद्योग वालों ने अपना अँगूठा काट लिये थे । उस समय के नियुक्तियों में भी नस्लीय भेद-भाव किये जाते थे । विद्रोह में किसान के रूप में सैनिक थे जो सिपाही की वर्दी पहन कर युद्ध कर रहे थे अपने सामंत और शोशक से । युद्ध में भाग लेने वालें सिपाहियों नीच कहे जाने वाला समाज से आते थे जिसके संख्या बहुत ज्यादा थे। " इसका विवरण इस प्रकार है ब्राह्मण -235, क्षत्रिय-237 ,नीच जातियों के हिंदू-231, ईसाई-12, मुसलमान-200, सिक्ख-75, थे जिसमें ब्रिटिश अपसरों को छोड़कर सभी मैदान में उतर आया "[3] इतना ही नहीं इस क्रान्ति में भाग लेने वाली हाशिए की स्त्रियों की बात करें तो वह हाशिए के पुरूशो के अपेक्षा ज्यादा की संख्या में थी " 1857 की क्रान्ति में भाग लेने वाली दलित महिलाओं की संख्या दलित पुरूषों से अधिक थी , यह किसी भी समाज के लिए गर्व की , संतोश की बात है "[4].1857 में अछूत समस्या को समझने के लिए उत्तर भारत के किसी भी गाँव को देख सकते हैं कि किस तरह एक हाशिए के समाज गाँव के ही सामंत ,जमीनदार ,और सवर्ण कहे जाने वाले व्यक्ति के यहाँ किस तरह से काम करते थे । उसके खेत-खलिहान में भी काम करते थे जिसके कारण मालिक के साथ मानवीय संबंध स्थापित हो जाते थे। इसी वजह से हाशिए के समाज की भूमिका युद्ध में और बढ़ जाती है, जिससे हमारे मुख्यधारा के इतिहासकारों और साहित्यकारों ने अपना मुँह फेर लिये । इस स्थिति में 1857 की क्रान्ति में हाशिए के समाज से आने वाली वीरांगनाओ की बात कैसे कर सकते थे जो बहुजन नायक के नाम लेने से भी बचते हैं। वह 1857 की नायिका की खोज राजघराने में करते है ,जिसके पास विरासत के रूप में समृद्धशाली अतीत है जिसके दरबार कवि ,लेखक ,वैद्य और सेना आदि से भरे परे हैं । उस कवि कीर्तन के आधार पर हमारे मुख्यधारा के इतिहासकारों एंव साहित्यकारों नें 1857 की क्रान्ति में नायिकाओं के रूप में रानी लक्ष्मी बाई और बेगम हजरत महल को उभारते हैं , लेकिन रणभूमि में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाली झलकारी बाई ,अवंती बाई ,ऊदा देवी ,महाबीरी देवी ,आशा देवी ,असगरी बंगम ,ताजआरा बेगम ,वैश्या अजीजन ,हबीबा बेगम , रहीमी खातून ,सब्जपोश खातून , नाजनीन ,हैदरी बाई ,अजीनुन्निशा ,शीला देवी ,गन्नो देवी और

रणवीरी आदि जो हाशिए के समाज से आती थी उनके ऊपर अपनी लेखनी नहीं चलाते हैं ,जबकि सेनानायिकाओं के स्थान पर युद्ध में यही सब लड़ रही थी । इस प्रकार की अवधारणा को हम भारतीय इतिहास में नवजागरण से लेकर वर्तमान समय तक देख सकते हैं । नवजागरण में महात्मा ज्योतिबा फूले और राजाराममोहन राय दोनों का महत्वपूर्ण योगदान हैं । दोनों समकालीन भी थे लेकिन हमारे मुख्यधारा के रचनाकारों ने किस प्रकार राजाराममोहन राय को नवजागरण का अग्रदूत के रूप में हमारे सामने ले आते हैं और महात्मा ज्योतिबा फूले के योगदान को भूल जाते हैं ,जिनका स्थान राजाराममोहन राय को दिया जाता हैं । ''ज्योतिबा फूले महाराष्ट्र में माली जाति में जन्में और स्वाध्याय और संवेदना को ही आधार बना समाज की रूढ़ियों को झकझोर कर रख दिया …उन्होंने विधवाओं ,अवैध संतानो, किसानों ,मजदूरों ,देवदासियों अर्थात् समाज के हर उत्पीड़ित और दलित समुदाय के लिए अनेक प्रयास किए ''[5] विधवा पुनर्विवाह और सती प्रथा जैसी समस्या मुख्य रूप से महात्मा फूले के समाज की नहीं थी । जिस समाज से महात्मा फूले आते थे उस समाज में तो उसकी पुनः विवाह हो जाती थी। इसी प्रकार 1857 की क्रान्ति में भी क्रान्ति के अग्रदूत मंगल पाण्डेय को बनाये गये लेकिन वहीं मातादीन भंगी को मुख्यधारा के रचनाकार भूल जाते हैं । जब हम 1857 की क्रान्ति में स्त्रियों की बात करते हैं तो हम देखते हैं कि किस प्रकार रानी लक्ष्मीबाई और बेगम हजरत महल की चित्र साहसी और आदर्श के रूप में प्रस्तुत करते हैं । वहीं हाशिए के समाज से आने वाली स्त्रियों की नाम भी लेना पसंद नहीं करते हैं , जबकि रानी लक्ष्मीबाई के साथ ही वीरांगना झलकारी बाई भी झांसी में लड़ाई लड़ रही थी और कानपुर में ऊदा देवी । '' बुंदेलों हरबोलों के मुँह में झलकारी कोरी शब्द बनकर झांसी की लक्ष्मीबाई से इतिहास में अपना हिस्सा मांग रही हैं , शहीद झलकारी बाई कोरी हुई , अंग्रेजों से लोहा उसने लिया और इतिहास में अमर लक्ष्मीबाई हो गई ''[6] इस प्रकार के मिथक गढ़ने की प्रवृत्ति बाद के मुख्यधारा की इतिहासकारों और साहित्यकारों में भी रहें हैं ,जो आज भी वर्तमान है । स्वतंत्रता आंदोलन में जिस प्रकार गाँधी को नायक के तौर पर उभारते हैं ,उसी प्रकार से डॉ. बाबासाहब अम्बेडकर के चरित्र को क्यों नहीं उभारते हैं ,डॉ. अम्बेडकर को मुख्यधारा के रचनाकारों ने दलितों के मसीहा बता कर उनके कार्य को सीमित कर देते हैं । अर्थात् हमारे मुख्यधारा के रचनाकारों के प्रारम्भ से ही जातीय चरित्र रहें हैं ।जब कभी इतिहास में नायिका की अवधारणा पर बात होगी तो सबसे पहले यह देखा जाएगा कि उस नायिका की जीवन कितनी संघर्षों में बीती है। एक ही कार्य को अंजाम देने वाली दो महिला हो सकती है , लेकिन जब उसमें नायिका की बात होगी तो सबसे पहले संघर्शरत जीवन जीने वाली महिला को रखी जाएगी न कि विरासत में मिले सुख समृद्धि वाली महिला को । हाँ यह अलग बात है कि युद्ध जीतने का श्रेय या रणभूमि में प्रचंड ताण्डव मचाने की श्रेय विरासत के रूप में प्राप्त सुख समृद्धि वाली उन महारानियों को दिये जाय , वैसे भी रणभूमि में सेनानायिका की मुख्य भूमिका में सेना ही होती हैं ,जिसे 1857 की क्रान्ति के दौरान झांसी में देख सकते है और विश्व इतिहास में भी । 1857 में भी केन्द्रीय भूमिका के रूप में बहादुरशाह जफर जरूर थे लेकिन रणभूमि में सेना की टुकड़ी ही थी। एक-दो को छोड़ दिया जाय तो यह हाल भारत की सभी रियासतों की थी जो मजबूरी में युद्ध कर रहें थे । वैसे तो अधिकतर रियासतें अंग्रेजों के साथ दे रहें थें और जो लड़ रहें थे उसमें रणभूमि में भाग लेने वालें लोग अधिकतर हाशिए के समाज से आते थे , जिसे वर्तमान समय में सेना की भूमिका में देखी जा सकती है । झांसी की बात ही अलग थी ,जहाँ रानी एक तरफ अंग्रेजों से संधि के लिए वार्तालाप करती थी वही दूसरी तरफ सेना मैदान में उतर चुकी थी अंततः रानी लक्ष्मीबाई भी मजबूरी बस सेनाओं के साथ हाँ मे हाँ मिलाकर रणभूमि में उतरती है ।''लेकिन झांसी की सेना ने अंग्रेजों के खिलाफ युद्ध करना शुरू कर दिया । हारकर लक्ष्मीबाई को भी झांसी की तरफ से युद्ध लड़ना पड़ा ''[7] झांसी की रणभूमि में मारी गई झलकारी बाई जिन्होंने पहले ही रानी को भंडारी गेट से बाहर निकाल कर भगा दी थी और स्वयं रानी की रूप धर कर रणभूमि में रणचंडी बनकर अंग्रेजों से लोहा ले रही थी , तब तक रानी कुछ दिनों में प्रतापगढ़ के रास्ते नेपाल चली गई , यही रानी की देशभक्ति थी । दुर्भाग्य हमारे यहाँ के चित्रकारों , इतिहासकारों और साहित्यकारों के जो रणभूमि में शहीद हुई उनकी नाम की जिक्र करने से भी कतराते हैं और चित्रकारों के द्वारा चित्र को पलट दिये जाते हैं । भंडारी गेट से पीठ पर बच्चा को बांधे घोड़े पर सवार होकर भागती हुई रानी की चित्र रणभूमि में दिखाया जाता है जो भारत की महान परम्परा रही है । हम देख सकते हैं कि किस प्रकार राजा रविवर्मा ने महात्मा बुद्ध के विचारों और प्रतीकों को चुराकर पहले का ब्राह्मण धर्म और आज की हिन्दू धर्म को स्थापित करने का काम किये हैं जैसे अशोक स्तम्भ के ऊपर तीन सिंह वाला चित्र को कमल पर बैठे ब्रह्मा ,विष्णु और महेश , नाग की क्षत्र-छाया में महात्मा बुद्ध के रूपों में विष्णु की नागशया पर दिखाना ,या फिर आज के वर्तमान समय में भी हम इसे गया , वाराणसी ,कश्मीर आदि स्थानों पर देख सकते हैं कि किस प्रकार से सांस्कृतिकरण किये गये हैं । भारत की सभ्य कहे जाने वाले समाज में जहाँ महिलाओं की स्थिति प्राचीन समय से ही दयनीय रही है उन्हें आज भी उनकी अधिकार से वंचित की जा रही हैं ,अगर हम हाशिए की स्त्रियों की बात करें तो उनकी स्थिति और भी दयनीय हैं । स्त्रियाँ हमारे समाज में कभी माँ ,कभी बहन ,बेटी के रूप में प्रतिष्ठित हैं । हम उसे कभी अबला तो कभी मंदिर की देवी मानते हैं और उसे पर्दे के भीतर ही रहना पसंद करते हैं । अर्थात् उनकी इच्छा पुरूषों की इच्छा हैं । कुछ बाते इससे इतर भी है ,इस तरह की प्रथा समूचे समाज में लागू नहीं होती हैं । भारत की अधिकतर महिलाएं पुरूषों के साथ मिलकर काम करती हैं और कोई निर्णय भी दोनों मिलकर ही लेतें हैं । विशेष रूप से बहुजन स्त्रियों में यह खास बातें देखने के लिए मिलती हैं जिसे 1857 की क्रान्ति के समय भी देख सकते हैं । सभ्य कहे जाने वाले समाज में जहाँ पर्दा-प्रथा थी वही बहुजन स्त्रियाँ बड़ी संख्या में पितृसत्तात्मक समाज में भी अपनी क्षेत्रीय अस्मिता के लिए घर से बाहर निकल कर रणभूमि में आ गई थी । ''1857 के जिस दौर में महिलाएँ की पर्दे से बाहर निकलने की मनाही थी उस दौर में भी दलित वीरांगनाओं ने मर्दो से भी चार कदम आगे बढ़कर अंग्रेजों के संगीनो को भी झेली थी ''[8] जिनमें कानपुर की वैश्या अजीजन जो विद्रोह प्रारम्भ होते ही अपनी धंधा छोड़कर विद्रोही के साथ हो गई और महिलाओं की एक टोली बनाकर विद्रोह में भाग लेती थी । अंग्रेजों ने जब कानपुर पर फिर से अपना शासन कायम किये तो इन महिला क्रान्तिकारियों को अंग्रेज के सामने हथियार डालना पड़ा , जिसका सूची अंग्रेजों ने जब तैयार किये तो पहले स्थान पर अजीजन को ही रखे थे । ''अजीजन एक रक्कासा थी परंतु उसका प्रेम साधारण बाजार में धन के लिए नहीं बिकता था .....अजीजन की मुस्कुराहट ,उसके तेवर और उसकी बातचीत सिपाहियों के हौसले बुलंद करती जिसका परिणाम यह होता कि बुजदिल से बुजदिल सिपाही भी जोश में आकर मैदाने जंग की ओर चल पड़ता था ''[९] सब्जपोश खातून कुँवर सिंह से कम नहीं थी , 80 वर्ष की उम्र में वह दिल्ली में घोड़े पर सवार होकर विद्रोह के लिए लोगों को घूम-घूम कर उत्साहित करती थी । महाबीरी देवी जो हाशिए के समाज से आती थी और महिलाओं को संगठित करके अंग्रेजों पर हमला करती थी और अपनी क्षेत्रीय अस्मिता की रक्षा करती थी । ऊदा देवी पासी समाज से आती थी जो बेगम हजरत महल के द्वारा बनाई गई सैन्य टुकड़ी में सेनापति थी , इनकी एतिहासिक कारनामे सिकंदर बाग में वह पीपल का पेड़ आज भी मूक रूप में बतलाता है । जिस पर बैठ कर इन्होंने बड़ी संख्या में गोली से अंग्रेजो को भून दी थी ,लेकिन अंग्रेज कप्तान कैम्बल के द्वारा हमला में कई वीरांगना मारी गई और पहचान सिर्फ ऊदा देवी की हो सकी , इनकी साहसिक कारनामें वहाँ के लोक गीतों में आज भी गूंजता हैं ।

''कोई उनको हश्सी बतलाए ।कोई कहता नीच अछूत ।
अबला कोई उन्हें बतलाए । कोई कहे उन्हें मजबूत ।'' [10]

रणवीरी वाल्मीकि मुज्जफरनगर में जब शामली पर चौधरी मुहर सिंह ने कब्जा कर लिया , लेकिन फिर अंग्रेजों ने चढ़ाई कर दिये जिसमें रणवीरी देवी मारी गई । लाजो देवी जो अंग्रेजी सैनिक छावनी में सफाई की काम करती थी ,जिसके कारण उसके पास अंग्रेजों की हाव-भाव की जानकारी होती थी जिसे वह अपने पति मातादीन से बताती थी । बाँदा की रहनेवाली शीला देवी जो महिलाओं को संगठित करके अंग्रेजों पर हमला करती थी आज भी वहाँ के लोकगीतों में उनकी चर्चा होती है ।

'' बाँदा लूटो रात के गुइयाँ सीला देवी
लड़ी दौर के संग में सोमिहरियाँ
अंग्रेजन के करी लड़ाई मारे लोग लुगइयाँ गिरी गुसाई तब दौरे हैं,
लरन लगे भै मइयाँ
भागीं सहेली तब गाँवन से लेके बाल मुनइयाँ
गंगासिंह टेर कें रै गए , भगौं इते ना रइयाँ ।''[११]

हाजी बेगम जो कुँवर सिंह के साथ मिलकर १८५७ की क्रान्ति में अंग्रेजो के छक्के छुड़ाए। मध्य प्रदेश की रानी अवंती बाई जो आसपास के गाँव के जमीनदारों को युद्ध के लिए संगठित करती है और उसमें हाशिए के स्त्री-पुरुष बढ़ चढ़ कर भाग लेते हैं जो रानी को अपना रक्षक के समान मानते थे । मध्य प्रदेश के मण्डला जिले के रामगढ़ किला आज भी अवंती बाई की वीरता को बताता हैं । '' रानी अवंती बाई के बारे में मध्य प्रदेश शासन द्वारा प्रकाशित मध्य प्रदेश में स्वाधीनता आंदोलन का इतिहास ' में लिखा है कि मण्डला जिले के वीर नायकों में रामगढ़ की रानी भी थी ,यद्यपि वह झांसी की रानी से कम प्रख्यात है। लेकिन उसने अपनी मातृभूमि के प्रति जिस प्रेम तथा शौर्य का प्रदर्शन किया ,उसके कारण उसे हमारे देश की महानतम वीरांगनाओं में स्थान मिलना चाहिए '' [१२] १८५७ की क्रान्ति का जब सौ वर्ष पूरे हुए तो सभी पार्टियों और सरकारों ने चुनावी लाभ के लिए अपनी हैसियत के अनुसार रूपये खर्च करके शहीदों को याद किये । सभी पार्टियाँ अपनी-अपनी वीरांगनाओं की छवि अच्छे से जनता के सामने लाने की प्रयास करती हैं । अब मध्य प्रदेश में भी अवंती बाई के नाम पर राजनीति शुरू हो चुकी है तो वहीं उत्तर प्रदेश में पहले से ही विद्यमान हैं लेकिन याद करने के क्रम में उनकी भावनाओं को किस तरह से आहत किये गये इसको समझने के लिए '' एतिहसिक नायकों के स्मरणों के पीछे छिपी राजनीति का अंदाजा इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि जहाँ बसपा झलकारी बाई का स्मरणोंत्सव मनाती है, वही भाजपा अपने जनाधार को दृढ़ करने के लिए लक्ष्मीबाई की स्मृति में तरह-तरह के आयोजनों करती रहती हैं, भाजपा की महिला शाखा की एक उपशाखा का नाम लक्ष्मीबाई शाखा हैं , भाजपा हर वर्ष लक्ष्मीबाई जयंती का आयोजन करती हैं , जिसमें झांसी की रानी की साहसिक कारनामें का उल्लेख करतें हुए गीतों ,कविताओं और कथाओं के माध्यम से उसे महिमामंडित किया जाता है, पार्टी रानी लक्ष्मीबाई को स्त्रियों के लिए आदर्श के रूप में चित्रित करती हैं और उनकी देश भक्ति , स्त्रीत्व , पतिव्रतता और धर्मपरायणता जैसे गुणों पर जोड़ देती हैं ,यह पार्टी के विचारधारा के साथ मेल खाता हैं , भाजपा के शासन काल में मानव संसाधन विकास मंत्रालय ने लक्ष्मीबाई और सती अनुसूया (एक अन्य विवाहिता हिन्दू स्त्री) के स्मृति में एक पुरस्कार की स्थापना भी की थी ....इन समारोंह में झलकारी बाई का कोई उल्लेख नहीं किया जाता हैं , इससे दलितों में भी यह भावना पनपती हैं इतिहास में उनकी भूमिका को जानबूझकर नजरअंदाज किया जाता रहा ''[१३] इतना ही नही जब १८५७ की क्रान्ति का १५० साल हुआ तों कांग्रेस प्रमुख सोनिया गाँधी रानी लक्षमीबाई , बेगम हजरत महल के साथ-साथ इन हाशिए की नायिकाओं के साहसिक कारनामों का भी जिक्र लालकिला से की थी । आज इन हाशिए के नायिकाओं पर बहुजन समाज भी गर्व कर रहें हैं और उन वीरांगनाओं के नाम पर गाँव घर में थान या ढ़िह बनाकर उनकी पूजा करतें हैं । समय की मांग यह है कि आज उन नायिकाओं को सांस्कृतिक रूप से श्रेष्ठ बनाना ताकि बहुजन वैचारिकी की गौरवशाली अतीत कायम रह सकें ।

निष्कर्षः यह कहा जा सकता है कि हमारे मुख्यधारा के रचनाकारों ने अपनी कलम की ताकत वाली वर्चस्ववादी संस्कृति कायम करने के लिए और बहुजन एकता को खंडित करने के लिए जानबूझकर हाशिए के समाज की भूमिका को नकारते हैं । यह सब इनके यहाँ परम्परा के रूप में चली आ रहीं हैं लेकिन लोक में जीवित तथ्यों को कोई कैसे बदल सकते हैं । वह आज न कल विश्व पटल पर आ ही जाएगा । १८५७ की क्रान्ति में हाशिए के समाज की नायिकाओं की संख्या बहुत बड़ी थी । इस क्रान्ति में जहाँ राजाओं-महाराजाओं ,जमीनदार और सामंत अपने-अपने हित के लिए लड़ रहें थे वही ये नायिकाएँ अपनी क्षेत्रीय अस्मिता के लिए लड़ रही थी , जिसे मुख्यधारा के रचनाकारों ने कोई श्रेय नहीं दिए और उल्टे इन्हें बदमाश ,गुण्डा और डकैत आदि कहने लगें । आज यह अवधारणा बदल गई है नए-नए शोध के जरिए इनकी साहसिक कारनामें सामने आ रही हैं और जिस पर बहुजन समाज गर्व कर रहें हैं और आज इनकी नामों पर चुनावी राजनीति में संगठित हो रहें हैं ।

संदर्भ :

1. भारत का पहला मुक्ति संघर्ष, पृ. सं -35 , प्रकाशन संस्थान नई दिल्ली .

2. भारतीय प्रश्न पृ. सं-102 , उदभावना पत्रिका , खंड-75.

3.1857 का संग्राम और शूद्र अतिशूद्र-सुभाश गताडे,पृ.सं -276 ,उदभावना पत्रिका , खंड-75.

4.1857 की क्रान्ति में दलितों का योगदान-सतनाम सिंह , पृ. सं -50 ,सम्यक प्रकाशन ,नई दिल्ली .

5. भारत का पहला मुक्ति संघर्ष,, पृ. सं -247 , प्रकाशन संस्थान नई दिल्ली .

6. भारत का पहला मुक्ति संघर्ष, , पृ. सं -248 , प्रकाशन संस्थान नई दिल्ली .

7.भारत का पहला मुक्ति संघर्ष, , पृ. सं -250 , प्रकाशन संस्थान नई दिल्ली.

8.1857 की क्रान्ति में दलितों का योगदान-सतनाम सिंह, पृ.सं.08 ,सम्यक प्रकाशन ,नई दिल्ली.

9.1857 का स्वातंत्रय समर -विनायक दामोदर सावरकर ,पृ. सं-115

10.1857 की क्रान्ति में दलितों का योगदान-सतनाम सिंह , पृ. सं -52 ,सम्यक प्रकाशन ,नई दिल्ली.

11.लोक साहित्य में राष्ट्रीय चेतना -डॉ. शांति जैन ,पृ.सं.126 ,ज्ञान गंगा नई दिल्ली.

12.स्वतंत्रता संग्राम के दलित क्रांतिकारी -मोहनदास नैमिशराय , पृ.सं-142 नीलकंठ प्रकाशन नई दिल्ली

****

काका कालेलकर जी की वैचारिक दृष्टि

('जीवन का काव्य' निबंध संग्रह के विशेष संदर्भ में)

-डॉ. बाबासाहेब माने
अध्यक्ष, हिंदी विभाग,
श्री शिवछत्रपति महाविद्यालय, जुन्नर, पुणे

प्रस्तावना:-

वर्तमान समय में समाज जीवन निरंतर परिवर्तित हो रहा है। ऐसे में हमारे मानस की शांति एवं आनंद के लिए ऐसे विचारों की आवश्यकता है कि जो विचार हमारे जीवन को सही रास्ते पर ले जा सकेंगे। ऐसे में काका कालेलकर जी के विचारों को देखना एवं उन्हे आत्मसात करना जरुरी प्रतीत होता है। महाराष्ट्र के सतारा में सन् 1885 ई. में जन्में दत्तात्रेय बालकृष्ण कालेलकर उर्फ काका कालेलकर जी की जीवन दृष्टि जितनी व्यापक, उदार, गहन एवं राष्ट्र-कल्याण के प्रति दृढ़ थी, उतनी ही उनकी वैचारिक दृष्टिव्यापक, बहुआयामी, सहिष्णु और सुधारवादी थी। उन्होंने विपुल मात्रा में साहित्य लेखन किया है। भारतीय इतिहास, संस्कृति, भूगोल, धर्म, नीति के साथ ही तत्कालीन समस्याओं पर उन्होंने सशक्त लेखनी चलाई है। निबंध संग्रह, यात्रा वृत्तांत, संस्मरण, आत्मचरित्र, सर्वोदय साहित्य आदि बहुआयामी लेखन उनके गहन अध्ययन, प्रगल्भ बौद्धिक चिंतन और व्यापक अनुभवों का प्रतिफल है। हिंदी के प्रचार-प्रसार में भी उनका खासा योगदान रहा है। किसी विषय के संदर्भ में सोचने का उनका ढंग निष्पक्ष और युगीन एवं भावी पीढ़ी के जीवन को संवारने हेतु सकारात्मक दृष्टि लिए हुए था। इसका मूर्तिमंत उदाहरण उनके द्वारा रचित "जीवन का काव्य" नामक वैचारिक निबंधों का संग्रह प्रतीत होता है। कालेलकर जी, महात्मा गांधी जी के सानिध्य में काफी दिनों तक रहे थे। अतः गांधीजी के विचारों का प्रभाव इनके साहित्य पर स्पष्टतः से दिखाई देता है।

विषय वस्तु:-

काका कालेलकर की वैचारिक दृष्टि सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक, आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक विषयों के प्रति सर्वसमावेशक एवं सुधारवादी रही है। उनका 'जीवन का काव्य' निबंध संग्रह हमारे त्योहारों का परिमल है। इसका हिंदी में अनुवाद श्रीपाद जोशी ने किया है। इस पुस्तक का पुनर्मुद्रण-2000 में हुआ है। नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद से इसका मुद्रण किया गया है। इस कृति में लगभग 56 निबंध संग्रहीत हैं। इन निबंधों में कालेलकर जी की वैचारिक दृष्टि त्योहारों, उत्सवों, उपवास-वृत्तों, देवताओं, संत-महात्माओं, वीर-पुरुषों एवं महापुरुषों के जयंती समारोहों के माध्यम से उजागर हुई है। भारतीय जनमानस में सहिष्णुता, प्रेम, सद्भव, परस्पर आदर, भक्तिभाव एवं सेवाभाव निर्माण करना और राष्ट्र-कल्याण के साथ ही विश्व-कल्याण की भावना को चरितार्थ करना उनकी वैचारिक दृष्टि का प्रमुख लक्ष नजर आता है। प्रस्तुत शोधालेख में कालेलकर जी द्वारा रचित 'जीवन का काव्य' निबंध संग्रह में निहित वैचारिक दृष्टि पर प्रकाश डालने का प्रयास किया जा रहा है।

मुख्य अंश:-

प्रस्तुत संग्रह का पहला निबंध 'जीवित त्योहार' नाम से है। इसमें कालेलकर जी ने त्योहारों की अवश्यकता एवं अनावश्यकता को तथ्यात्मक रुप में परिभाषित करने का प्रयास किया है। वैसे त्योहार और संस्कृति, त्योहार और धर्म तथा त्योहार और अध्यात्म ये सब एक-दूसरे में समाहित नजर आते हैं। इनमें परस्पर भेद करके इन्हें अलग-अलग दिखाना कठिन कार्य है। त्योहारों के कारण संस्कृति की रक्षा होती है और संस्कृति के कारण त्योहारों का उदय होता है। धर्म का आचारण भी कई मायने में त्योहारों, उत्सवों या पर्वों पर निर्भर होता है। जैसे कि रामनवमी, विजयादशमी, दिवाली, महाशिवरात्रि, नवरात्रि, मकर संक्रांति, गुडी पडवा, मुहर्रम, बकरी ईद, बोधि-जयंती आदि उत्सवों, पर्वों एवं त्योहारों के माध्यम से धर्म की पहचान के अतिरिक्त आचरणगत दिशा-निर्देश भी मिल जाते हैं। विविध धर्मावलंबियों के बीच एकता, भाईचारा और सौहार्द भी निर्माण होता है। अध्यात्म और त्योहारों का जुडाव भी सदियों से है। इन्हें भिन्न-भिन्न स्थापित करने से इनके अस्तित्व में खलल पड जाती है। त्योहारों, उत्सवों एवं पर्वों पर देवी-देवताओं की पूजा-अर्चना करना, ध्यान लगाना, नामस्मरण करना आदि आध्यात्मवादी कार्यों का निर्वहण होता है। इसलिए त्योहार और अध्यात्म परस्पर भिन्न न होकर एक-दूसरे पर निर्भर नजर आते हैं। त्योहार हमारी संस्कृति के रक्षक होते हैं। इनसे मानव जीवन को आनंद के साथ ही उचित पथ पर जीवन ले जाने के लिए कई दिशानिर्देश भी मिलते हैं। इनसे जीवन को सकारात्मक ऊर्जा मिलती है। परंतु बहुत दिनों तक त्योहारों को मनाना और इनमें अनावश्यक धन खर्च करना किसी भी समाज एवं मनुष्य की उन्नति के लिए उचित नहीं होता। इसलिए कालेलकर जी ने त्योहारों को अनावश्यक बहुत दिनों तक मनाने और फिजूल खर्ची प्रवृत्ति को टालने के लिए कई त्योहारों एवं उत्सव-पर्वों की कालावधि को सीमित किया है। साथ जिन त्योहारों से मनुष्य की सकारात्मक ऊर्जा अधिक बरबाद होती है, ऐसे त्योहारों को समाज से निष्कासित करने पर बल दिया है। उनका कहना है कि "हररोज की आवश्यक और स्फूर्तिदायक प्रवृत्ति को शिथिल करना, ऐसे कपडे पहनना जो अपनी हैसियत से बाहर के हों, तरह-तरह के मिष्टान्न खाकर इंद्रियों को लालच की लत लगाना और ताश, शतरंज, चैसर आदि फिजूल के बैठे-खेलों में वक्त को बरबाद करने में एक-दूसरे को उत्तेजन देना-इतना ही अगर त्योहारों का अर्थ होता हो, तो उन्हें निकाल देना ही ठीक है।"[1] उक्त कथन में कालेलकर जी की वैचारिक दृष्टि त्योहारों को नकारने की न होकर त्योहारों के कारण मनुष्य में पैदा होने वाली शिथिलता, फिजूल खर्ची प्रवृत्ति और समय की अनावश्यक बरबादी को टालने की रही है। उनका कथन है कि "श्रीविष्णु की आज्ञा से प्रवर्तित इतिहासक्रम के कारण हिंदुस्तान में दुनिया के करीब-करीब सभी धर्म इकट्ठा हो गए हैं। हिंदमाता की अमृत दृष्टि के कारण ये सब धर्म एक ही कुटुंब के बालकों की तरह यहाँ रहेंगे। जिस कुटुंब धर्म का स्वीकार करके हरएक धर्म दूसरे धर्मों के त्योहारों को अपनी-अपनी मान्यता के अनुसार जीवन में स्थान दे यह उचित है। इसी तत्व को ध्यान में रखकर हमने अपनी योजना में कई त्योहार बढ़ा दिए हैं।"[2] यहाँ पर कालेलकर जी भारतीय समाज को एक रखने और यहाँ निवास करनेवाले सभी धर्मों के लोगों में परस्पर सौहार्द, भाईचारा, धार्मिक सहिष्णुता को वृद्धिगंत करने की भावना से अनेक त्योहारों को अपने वैचारिक, तार्किक एवं तथ्यात्मक परीक्षणों के द्वारा बढ़ाते हैं। उन्होंने भारत के विभिन्न धर्मों को जोड़ने के लिए प्रेमधर्म को सेतु की तरह स्वीकार किया है। इसमें उनकी वैचारिक दृष्टि धार्मिक एकता, प्रेम,

भाईचारा, अपनत्व एवं अखंडता को एकाकार करने वाली नजर आती है।

उनका 'उत्सव के उपवास' नामक निबंध जन्माष्टमी या रामनवमी पर भारतीय जन के द्वारा रखे जानेवाले उपवासों को वैज्ञानिकता के साथ स्पष्ट करता है। इस निबंध में कालेलकर जी की वैचारिकता विज्ञान की प्रामाणिकता को आध्यात्मिकता के साथ जोड़कर लोगों को उपवास रखकर अपना स्वास्थ्य ठीक रखने की नसीहत देती दिखाई देती है। उपवास क्यों करना चाहिए? इस संबंध में उनके विचार हैं कि-''उपवास को हमने दुःख या संकट का चिह्न नहीं बनाया है। बात सही है कि जब चित्त में ग्लानि हो, दुःख से दबे हुए हों, तो ऐसे अवसर पर आरोग्य के नियम के अनुसार न खाना ही उचित है। हृदय की स्वाभाविक प्रेरणा भी यही सुझाती है। आरोग्य के नियम की दृष्टि से देखा जाए, तो जिस वक्त दिल को बहुत खुशी हुई हो, उस वक्त भी हमें कुछ नहीं खाना चाहिए। मिष्टान्न भोजन या अतिआहार तो करना ही नहीं चाहिए। दुःख में जिस तरह पाचनशक्ति क्षीण हुई होती है, उसी तरह आनंद की उत्तेजना में और क्षोभ में ऐसी ही हालत होती है। इसीलिए किसी भी कारणवश चित्त का स्वास्थ्य नष्ट हो गया हो, तो उस समय अनशन या अल्पाहार ही उचित है।''[3] उक्त विचारों में आध्यात्मिकता और वैज्ञानिकता का सम्मिलित रुप देखने को मिलता है। दुःख और आनंद में हमारा चित्त स्थिर नहीं रहता है। हमारी पाचनशक्ति में भी परिवर्तन होता रहता है। ऐसे समय पर अति-आहार करना या अतिमिष्टान्न ग्रहण करना सेहत के लिए ठीक नहीं होता। विज्ञान भी यही कहता है कि पाचनशक्ति को ठीक रखने के लिए उपवास या अनशन करना जरुरी है। इसलिए कई पर्वों पर उपवास करना शरीर और मानस के लिए लाभदायक होता है।

'जयंती' नामक निबंध में कालेलकर जी ने समाज के द्वारा महापुरुषों की मनाई जानेवाली जयंतियों पर विचार करते हुए यह बताया है कि किसी महापुरुष की जयंती मनाने से हमें उनके विचार, संघर्ष, त्याग, बलिदान तथा समाज के प्रति उनकी समर्पणशीलता का परिचय मिलता है। इससे प्रेरणा लेकर अगर हम अपने जीवन में आने वाले संकटों का पौरुषत्व से सामना करके स्वावलंबी जीवन जीने की कोशिश करें, तो वही महापुरुषों के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होती है। महापुरुषों की जयंतियां मनाने का यही प्रयोजन होता है। जयंती क्यों मनाई जाती है ? इस पर चिंतन करते हुए उन्होंने कहा है कि ''ईश्वर की सृष्टि में असंख्य मनुष्य पैदा होते हैं। उन सबकी जयंती हम नहीं मनाते। जिनके जीवन-रहस्य का अपने हृदय में पुण्य-पावन उदय हुआ हो, उन्हीं की जयंती हम मनाते हैं।''[4] यहाँ पर हमें समझना होगा कि वीरपुरुष अथवा महापुरुष अपनी जान की बाजी लगाकर समाज की आजादी एवं न्याय के लिए लड़ते हैं। वे शत्रु के सामने लाचार होकर घुटने नहीं टेकते। वे अंतिम क्षणों तक शत्रु से लडते हैं, जब तक कि उन्हें उनका अभिलक्षित लक्ष्य प्राप्त नहीं होता। अन्याय के खिलाफ लड़ना और सामाजिक स्वतंत्रता, समता, बंधुता को कायम करना वीरपुरुषों की पहचान होती है। ऐसे वीरों एवं महापुरुषों की जयंतियां हम मनाते हैं। अतः इन महापुरुषों के जीवन से प्रेरणा ग्रहण कर और उनकी बताई हुई राह पर चलकर स्वावलंबी एवं स्वाभिमान से युक्त जीवन जीने की कोशिश सभी ने करनी चाहिए।

'ध्वजारोपण' निबंध में कालेलकर जी ने चैत महीने में मनाए जानेवाले नववर्षारंभ के दिन के महत्व पर अपने विचार प्रकट किए हैं। श्रीराम के जमाने में बालि के जुल्म से परेशान दक्षिण की भूमि की मुक्ति के आनंद में घर-घर में उत्सव मनाकर लोगों ने ध्वजाएं खड़ी की थी। इसी परंपरा निर्वहण आज भी महाराष्ट्र और दक्षिण भारत के कई राज्यों में नववर्ष आरंभ के रुप में होता है। इस वर्षारंभ को महाराष्ट्र में 'गुड़ी पाड़वा' कहा जाता है। गुड़ी पड़वा के दिन घर-आंगन को साफ-सुथरा किया जाता है और पानी से धोया जाता है। घर की दहलीज के सामने रंगोली निकाली जाती है। महाराष्ट्र के हर घर के छतों पर गुड़ी खड़ी की जाती है। इसमें एक लंबे बांस के ऊपरी नोक को नीम की छोटी टहनियाँ अथवा पत्तियाँ बाँधी जाती है। इन पर एक साडी को बांधकर हार डाला जाता है। इसके ऊपर एक कलश औंधा रखा जाता है। जब गुड़ी तैयार करके छतों को बांध दी जाती है, तो इसकी पूजा की जाती है। संपूर्ण महाराष्ट्र में इस उत्सव को बड़े हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। इस दिन घर के सदस्य उत्साह के साथ नवसंकल्प भी करते हैं। व्यापारी लोग पुराने साल के हिसाब-किताब को पूरा करके, नए सिरे से शुरु करते हैं। इस दिन के माहत्म्य और लोगों के द्वारा किए जाने वाले संकल्पों के बारे में कालेलकर जी बताते हैं कि '' इस वर्षारंभ को महाराष्ट्र में 'गुड़ी पाडवा' (गुडी त्र ध्वज, पाड़वा त्र पड़वा) कहते हैं। वर्ष के प्रारंभ का दिन नए संकल्प का दिन है। क्योंकि वर्षारंभ का दिन एक तरह का वार्षिक सुप्रभात है। सबेरे जिस तरह थकान दूर होकर नई स्फूर्ति आ जाती है, उसी तरह वर्षारंभ के दिन जीवन का नया पन्ना खोलना होता है। अब तक जो हुआ सो हुआ, आज से नया प्रारंभ- इस तरह अपने को समझाकर मनुष्य नया संकल्प करता है। नया संकल्प करने से पहले सिंहावलोकन करना भी मनुष्य का स्वभाव है। सिंहावलोकन यानी सिंह की तरह पीछे मुड़कर देखना। कहते हैं कि फलांग मारता हुआ सिंह बीच-बीच में रुककर निरीक्षण करता है कि मैं कहाँ तक आया हूँ, कितना रास्ता तय कर चुका हूँ। प्रगतिशील मनुष्य के लिए यह आदत काम की है।''[5] उक्त कथन से स्पष्ट है कि वर्षारंभ के दिन पिछले अनुभवों से सीख लेते हुए और पुराने संकल्पों का सिंहावलोकन करते हुए नए संकल्प तय करने चाहिए। गुड़ी पड़वा के दिन हींग, नमक और जीरा के साथ नीम की पत्तियां खाने का भी रिवाज प्रचलित है। यह भी इस दिन की खास विधि मानी जाती है, जो आरोग्य की दृष्टि से लाभकारी है। 'रामनवमी' में कालेलकर जी ने राम जन्म की कथा को आदिकवि वाल्मीकि के द्वारा बाताई कथा के माध्यम से व्यक्त किया है और यह बताया गया है कि इस दिन सभी लोगों को मनुष्य जाति के लिए आदर्श राजा कैसा होना चाहिए ? इसका जो उदाहरण श्रीरामचंद्र जी ने प्रस्थापित किया था, उसका रहस्य समझाना चाहिए और सभी में पवित्र भावों को भरने का प्रयास करना चाहिए। कालेलकर जी के इन विचारों में पौराणिकता और वैचारिकता का तथ्यात्मक एवं ऊर्जावान समिश्रण नजर आता है, जो मनुष्य जाति के कल्याण की भावना से पूरित है।

महावीर जयंती, निबंध में उन्होंने जैन धर्म के संस्थापक वर्धमान महावीर के जीवन एवं कार्यों का परिचय दिया है। भगवान ऋषभदेव से लेकर जैन धर्म के चैबीस तीर्थकार हो गए हैं। वर्धमान महावीर आखिरी तीर्थकार माने जाते हैं। इन्होंने ही जैन धर्म की स्थापना करके उसका प्रचार-प्रसार किया था। इन्होंने अंहिसा धर्म का उत्कर्ष करके मनुष्य के अतिरिक्त पृथ्वी पर पलने वाले अन्य जीव-जंतु तक की हिंसा न करने का अलख लोगों में जगाने का भी कार्य किया था। वर्धमान महावीर के इन कार्यों के साथ ही कालेलकर जी ने जैन शिल्पों, मंदिरों और उनके पंथों पर भी सूक्ष्म रुप से प्रकाश डाला है। उनका 'विश्वधर्म' निबंध फुटकर विचारों का संग्रह है। इसमें कालेलकर जी ने महावीर शब्द के अलग-अलग अर्थ, महावीर शब्द किन-किन महत्माओं के लिए प्रयोग किया जाता है और हिंदू धर्म की महानता आदि विषयों के

संदर्भ में तथ्यात्मक विचार व्यक्त किए हैं। हिंदू धर्म के बारे उनका विचार है कि हिंदूधर्म राष्ट्रीय धर्म है। इस धर्म के तत्व सार्वभौम और विश्वधर्म के हैं। हिंदू धर्म की आधारशीला ही "वसुधैव कुटुंबकम" की भावना पर टिकी है। इसमें समस्त मानव जाति का कल्याण एवं मानवता सन्निहित है।

'अक्षयतृतीया' निबंध में अक्षय तृतीया का महत्व बताते हुए कहा है कि कहा गया है कि अक्षय तृतीया कृत युग के प्रारंभ का दिन है। इस दिन सत्य और अहिंसा की मीमांसा की जानी चाहिए। किसानों का वर्ष इस दिन से शुरु हो जाता है। इसलिए इस दिन श्रमजीवन और पेड़-पौधों का महत्व सभी को बता देना चाहिए। 'बोधि जयंती' में भगवान बुद्ध के अष्टांग मार्गों की चर्चा करते हुए कालेलकर जी कहते हैं कि इस दिन भगवान बुद्ध के बताए हुए मार्गों पर चलकर हमें बोधि की प्राप्ति करनी चाहिए। यही बोधि जयंती का सच्चा उत्सव है। इसी तरह से हनुमान जंयती में हनुमान की प्रभुश्रीराम के प्रति सच्ची श्रद्धा, भक्ति एवं सेवाभाव को प्रतिपादित करते हुए कहा गया है कि इस दिन विद्यार्थियों को ब्रह्मचर्य का महत्व समझाना चाहिए। 'एशिया का धर्मसम्राट' में भगवान बुद्ध के जीवन का परिचय देते हुए उनके त्याग एवं ज्ञान, सत्य एवं अहिंसा के महत्व को उजाकर किया है। साथ ही बुद्ध के द्वारा सामन्य लोगों और भिक्षुओ के लिएबानाए गए नियमों का पालन करने की बात कही है तथा बुद्ध को एशिया के धर्मसम्राट की उपाधि से नवाजा गया है। 'गणपति उपासना' में वैदिक काल से चली आ रही गणपति उपासना के लोगों की वृत्ति एवं शक्ति के अनुसार हुए परिवर्तन को व्यक्त करते हुए बताया गया है कि "भौतिक ज्ञान और आध्यात्मिक ज्ञान परस्पर विरोधी नहीं, बल्कि पोषक हैं। एक ज्ञान दूसरे ज्ञान का विरोधी हो ही कैसे सकता है ? दोनों में से तो सच्ची धार्मिकता जाग्रत होनी चाहिए। दोनों की उपासना मानव-कल्याण की दृष्टि से ही करनी चाहिए और सच कहें तो यही ज्ञानदाता-विघ्नहर्ता गणपति की सच्ची उपासना है।"[6] कालेलकर जी की उक्त विचार दृष्टि में मनुष्य जीवन के उत्थान एवं कल्याण हेतु वैज्ञानिक ज्ञान के साथ-साथ आध्यात्मिक ज्ञान भी आवश्यक है। दोनों का सही उपयोग करने पर मनुष्य भौतिक प्रगति के साथ ही मानसिक शांति भी प्राप्त करता है। अतः समाज कल्याण की दृष्टि से ही दोनों का ज्ञान ग्रहण करना चाहिए।

'धर्म-रक्षक शिवाजी' में छत्रपति शिवाजी महाराज की वीरता, कार्यकुशलता, उदारता, धार्मिक सहिष्णुता, परस्त्री के प्रति आदरभाव रखने की महानता आदि गुणों को व्यक्त करते हुए छत्रपति शिवाजी महाराज को असली धर्म-रक्षक घोषित किया है। इतिहास पर दृष्टिपात किया जाए तो ज्ञात होता है कि छत्रपति शिवाजी महाराज ने मुस्लिम आक्रांताओं से पीड़ित प्रजा को एकसंघ बनाकर 'हिंदवी स्वराज्य' की स्थापना करके तत्कालीन जनता में स्वाभिमान के साथ सिर ऊँचाकर जीने की हिम्मत भर दी थी। शिवाजी महाराज मुस्लिम द्वेष्टा नहीं थे, अपितु उदार एवं सहिष्णु वृत्ति के राजा थे। उनके हृदय में जिस तरह हिंदू धर्म के प्रति आदरभाव निहित था। उसी तरह से मुस्लिम धर्म के प्रति भी था। वे केवल उन बादशाहों के विरोधी थे, जो कट्टरपंथी और अत्याचारी थे। शिवाजी महाराज की धार्मिक उदारता एवं सहिष्णुता के संबंध में कालेलकर जी लिखते हैं कि "विशेष रुप से ध्यान में रखने लायक बात यह है कि शिवाजी के मन में इस्लाम के प्रति, उसके औलियों या धर्मग्रंथों के प्रति तनिक भी तिरस्कार न था।"[7] उक्त कथन से स्पष्ट होता है कि शिवाजी महाराज के मन में दूसरे धर्मों के प्रति तिरस्कार एवं घृणा नहीं थी। बचपन से ही उनमें धार्मिक सहिष्णुता एवं उदारता निहित थी। इसलिए तो उन्होंने सभी धर्मों के लोगों को इकट्ठा करके मुस्लिम कट्टरपंथी बादशाहों को परास्त कर प्रजा का राज्य स्थापित किया था।

कालेलकर जी का अध्ययन एवं चिंतन केवल किसी एक धर्म पर केंद्रित नहीं था। बल्कि उन्होंने भारत में स्थित सभी धर्मों एवं उनके धार्मिक ग्रंथों का यथावश्यक अध्ययन किया था। इसीलिए उनके निबंधों में हिंदुओं के धार्मिक त्योहारों के अतिरिक्त बौद्ध, जैन, ईसाई, मुस्लिम आदि धर्मों के पवित्र त्योहारों पर विचार व्यक्त हुए हैं। मुसलमानों के द्वारा मनाए जाने वाले मुहर्रम त्योहार की महत्ता को प्रतिपादित करने वाला उनका 'महुर्रम' निबंध काफी उत्कृष्ट निबंध है। इसमें उन्होंने 'महुर्रम' मनाने के कारण और उसका महत्व प्रतिपादित किया है। साथ ही अन्य धर्मीय लोगों को मुहर्रम के दिन मुस्लिम मित्रों के साथ संवाद स्थापित करके भाईचारा बढ़ाने की भी बात कही है। इस संदर्भ में उनके विचार हैं कि "मुहर्रम' का त्योहार मुसलमान भाईयों के लिए श्रद्धा का त्योहार है। इस्लाम के बडे-से-बडे शहीदों की याद दिलाने की शक्ति इस त्योहार में है। हमारे मुसलमान भाई मुहर्रम के दिनों में एक पुरानी कहानी से धर्मनिष्ठा प्राप्त करते हैं; और उस हद तक भारतवर्ष की धर्म-निष्ठा में वृद्धि करते हैं। हिंदुस्तान धर्म-भूमि है। यहाँ की हरएक जाति जिस हद तक धर्मनिष्ठा की आदत डालेगी, उस हद तक इस धर्मभूमि की शक्ति अवश्य बढ़ेगी।"[8] उक्त विचारों में सत्यता के साथ ही विविध जाति-धर्मों के लोगों को एकजुट होने की प्रेरणा भी निहित है। इसी तरह से कालेलकर जी ने उक्त निबंध में धार्मिक सहिष्णुता एवं राष्ट्र-कल्याण से सन्निहित विचारों को व्यक्त किया है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि कालेलकर जी की विचार दृष्टि बहुआयामी, व्यापक एवं प्रेरणादाई रही है। उनकी वैचारिक दृष्टि का लक्ष राष्ट्र-कल्याण के साथ ही विश्वकल्याण साधने का रहा है। भारतीय जनता में आपसी प्रेम, भाईचारा, परस्पर आदरभाव और धार्मिक सहिष्णुता को बढ़ाकर भारत को एक सर्वसमावेशी एवं सार्वभौम राष्ट्र बनाना उनकी वैचारिक दृष्टि का अहम पहलू नजर आता है।

संदर्भ सूची:-

1) जीवन का काव्य - लेखक- काका कालेलकर, अनुवादक- श्रीपाद जोशी , पृ. 3 पुनर्मुद्रण- 2000, नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद।
2) वही, पृ. 5
3) वही, पृ. 7-8
4) वही, पृ..9-10
5) वही, पृ. 15
6) वही, पृ. 118
7) वही, पृ.188
8) वही, पृ. 194

****

'जिस लाहौर नइ देख्या ओ जम्याइ नइ'नाटक में अभिव्यक्त हिंदू-मुस्लिम एकता

-श्री दीपक वरक
शोधार्थी,
गोवा विश्वविद्यालय,
ताळगाँव, गोवा

-प्रो.वृषाली मांद्रेकर
विभागाध्यक्ष एवं शोध निर्देशक,
गोवा विश्वविद्यालय,
गोवा

सार :प्रस्तुत आलेख हिंदी के सुप्रसिद्ध नाटककार असग़र वजाहत का चर्चित नाटक 'जिस लाहौर नइ देख्या ओ जम्याइ नइ' पर केंद्रित है। भारत विभाजन पर आधारित इस नाटक में नाटककार ने हिंदू-मुस्लिम एकता के साथ-साथ दो संस्कृतियों के धार्मिक एवं सामाजिक सौहार्द को दिखाया है। इस नाटक के माध्यम से नाटककार ने मानवता का संदेश दिया है। मानवीय संबंध देश, धर्म, जाति, संप्रदाय आदि से बड़े होते हैं और मनुष्य चाहे किसी देश या धर्म का हो वह शांति से रहना चाहता है। नाटक धार्मिक सहिष्णुता पर बल देता है।

बीज शब्द- जम्याइ, राष्ट्रीय, सामाजिक सौहार्द, धार्मिक सौहार्द, धर्मनिरपेक्ष, संवेदनशील, शरणार्थी, बेसहारा, कस्टोडियन, मानव कल्याण, कुटुंबकम, विभाजन, त्रासदी, दाह-संस्कार, मानवीय संवेदना।

प्रस्तावना :-भारतीय एकता, संस्कार, संस्कृति एवं सभ्यता हमारी धरोहर है। एक समय था जब भारत एक ऐसा देश था जहाँ विभिन्न धर्म, क्षेत्र, संस्कृति, परंपरा, नस्ल, जाति, रंग और पंथ के लोग एक-साथ रहते थे लेकिन औपनिवेशक महाशक्ति ने बड़े आसानी से एक वतन के दो टुकड़े कर दो मुल्कों में बाँट दिया। भारत-पाकिस्तान एक ऐसी ही मानव निर्मित त्रासदी है। जिसने इतिहास के सबसे बड़े मानवविस्थापनों को जन्म दिया। साहित्य के माध्यम से अनेक लेखकों ने भारतीय जनमानस में तत्कालीन सत्ता से विरोध में आवाज़ उठाकर देश को अँग्रेज़ों के चंगुलों से निकाला और देश को आज़ाद किया।राष्ट्र के प्रति गहन तथा तीव्र अपनत्व और ममत्व की भावना से राष्ट्रीयता का जन्म हुआ है। राष्ट्रीयता एक सतत् गतिशील धारा और अंतर्मन की भावना है। राष्ट्रीयता शब्द बहुत व्यापक अर्थों में प्रयुक्त होता है। साहित्य में राष्ट्रीयता से तात्पर्य स्वदेश एवं विदेश में लिखी गई रचनाओं से है,जिसकी प्रेरणा इस देश की भूमि और परिवेश से ली गई हो तथा जिसमें समस्त राष्ट्र के एकीकरण और उन्नयन की संभावनाएँ निहित हो।असग़र वजाहत के नाटक राष्ट्रीय एकता का विवेचन करने वाले हैं। उनके नाटकों में धर्म,संप्रदाय, राजनीति, पत्रकारिता आदि का विवेचन राष्ट्र के संदर्भ में हुआ है। असग़र वजाहत एक प्रतिबद्ध नाटककार है जो राष्ट्रीय एकता में बाधक तत्त्वों को बेबाकी से सामने रखते हैं। वर्तमान समय की मुख्य विसंगति संप्रदायवाद के साथ-साथ राष्ट्रीयता को भी अपने नाटक 'जिस लाहौर नइ देख्या ओ जम्याइ नइ'में विवेचित करते हैं।यह नाटक भारत-पाकिस्तान के विभाजन के परिवेश से उत्पन्न सांप्रदायिक त्रासदी का यथार्थ रूप चित्रित करता है।

असग़र वजाहत का नाटक 'जिस लाहौर नइ देख्या ओ जम्याइ नइ'में जहाँ तक एक तरफ़ जातीयता दिखाई पड़ती है वहीं दूसरी तरफ़ धर्मनिरपेक्षता के दर्शन भी होते हैं। किसी भी देश में एक अकेली जातिया कौम का निवास नहीं है,अनेक जातियाँ विद्यमान है। ऐसे में असग़र वजाहत का यह नाटक जाति और धर्म की विशुद्धता का मौलिक चिंतन प्रस्तुत करता है। देश के बँटवारे पर आधारित इस नाटक में राष्ट्रीय जीवन की अभिव्यक्ति व्यापक स्तर पर हुई है।15 अगस्त 1947 को देश अँग्रेज़ोंकी ग़ुलामी से आज़ाद हुआ तो भारत-पाकिस्तान का निर्माण हुआ। इसमें लाखों लोगों का जीवन एक दर्दनाक घटना से ग़ुजरा। इतिहास में पहली बार लाखों लोग एक-दूसरे के ख़ुन के प्यासे हो गए,कई लोग शरणार्थी हो गए,कुछ लोगों ने अपने परिवार-वालों को खो दिया। इस दौरान जहाँअनेक लोगों ने अपने स्वार्थों को तिलांजलि देकर राष्ट्रहित और मानव जीवन के लिए काम किया, तो वही अन्यों ने अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए राष्ट्र और मानवजीवन को ताक पर रख दिया।उन्होंने भारत-पाकिस्तान में धर्म की कट्टरता या सांप्रदायिकता का बीज बोने में अहम भूमिका निभाई। राजनीतिक कुचक्रोंका धर्म शिकार हुआ। हिंदू-मुस्लिम धर्म के लोगों ने उस वक्त राष्ट्रहित का विश्लेषण करते हुए केवल धर्म का ही चिंतन किया। यह चिंतन नहीं केवल एक कट्टरवाद था जिसका परिणाम आज भी भारत भुगत रहा है। देश विभाजन के उपरांत जो दंगे-फ़साद हुए उसमें असंख्य लोगों का जीवन नष्ट हो गया। धर्म के अंधे लोगों ने अपने लोगों को मौत के घाट उतार दिया। असग़र वजाहत ने राष्ट्र को केंद्र में रखकर देश-विभाजन के बाद उत्पन्न शरणार्थी समस्या और धर्म की विवेचना इस नाटक मेंकी है।

असग़र वजाहत का उपर्युक्त नाटक सोलह दृश्यों में विभाजित है। नाटक में मुख्य धारा विस्थापन के दौरान शरणार्थी परिवार की व्यथा को उजागर करते हुए उसके मानवीय स्वरूप को अंकित किया गया है। इसकी कथावस्तु भारत-पाकिस्तान के दौरान लाहौर के एक मुहल्ले का विश्लेषण करती है।सिकंदरमिर्ज़ा लखनऊ छोड़कर अपनी पत्नी और बच्चों के साथ भागता हुआ लाहौर आ जाता है। वह अपना घर, परिवार, धन-दौलत, व्यापार सब कुछ लखनऊ छोड़ आता है। इस भागम भाग में हज़ारों लोग बेसहारा हुए जो कई महीनों तक बिना किसी सहयोग के शरणार्थी कैंपों में पड़े रहे। सिकंदरमिर्ज़ा को कस्टोडियन वालों ने लाहौर में रतन जौहरी की हवेली एलॉट कर दी। हवेली में रतन जौहरी की बूढ़ी माँ छिपकर रहती थी।वह पाकिस्तान को ही अपना वतन मानती थी तथा लाहौर छोड़कर कहीं नहीं जाना चाहती थी। वह लाहौर की धरती से बड़ा प्यार करती है। उसको यह विश्वास होता है कि एक दिन उसका बेटा रतन अवश्य ही लौट आएगा। वह इस बात को मानने से इनकार कर देती है कि उसका बेटा विभाजन के दौरान मारा गया है। वह अपनी हवेली को और लाहौर को किसी भी क़ीमत पर नहीं छोड़ना चाहती है। सिकंदरमिर्ज़ा इस बुढ़िया को समझाता है कि अब भारत पाकिस्तान बन चुका है और वह अपने देश भारत चली जाए। पर वह मना करती है। धीरे-धीरे रतन जौहरी की माँ धर्म परायण स्नेहमयी रूप धारण करती है और निस्वार्थ भाव से मिर्ज़ा और उसके परिवार की सेवा करती है। वह लाहौरके इस मुहल्ले के सभी मुसलमानों का सुख-दुख बाँटती है। वह धर्म और जातीयता को भूलकर सबकी सेवा करती है। वह मुसलमानों की माई बन जाती है। रतन जौहरी की माँ भेदभाव भुलाकर बड़े विश्वास के साथ मुसलमान परिवार के साथ दीवाली मनाती है। यहाँ हमे मुस्लिम धर्म और हिंदू-धर्म की एकता दृष्टिगोचर होती है। इस दीवाली के अवसर पर कई असामाजिक तत्त्व धर्म के नाम पर ठेकेदारी करते भी दिखाई देते हैं।येवे लोग हैं जो चाहते हैं कि माई पाकिस्तान से चली जाए। यहाँ आदमी का स्वार्थ झलकता है। धर्मनिरपेक्षता की जगह धर्म की कट्टरता के दर्शन होते हैं। ये धर्म के ठेकेदार एक ग़ैरबिरादरी या ग़ैर धर्म की नारी को स्वीकार नहीं कर पा रहे हैं।ये लोग माई की हिफ़ाज़त करने वाले सिकंदरमिर्ज़ा को भी धमकी देते हैं।ये वे लोग हैं जो धर्म के नाम पर रतन की माँ को हवेली से निकालकर ख़ुद कब्ज़ा करना चाहते हैं। मौलवी साहब को भी ये धर्म के ठेकेदार एक नारी के प्रति भड़काते हैं लेकिन सफल नहीं हो पाते।

पहले तो माई किसी भी क़ीमत पर अपनी हवेली छोड़कर लाहौर से जाने के लिए तैयार नहीं होती परंतु जब वह यह देखती है कि उसके कारण मिर्ज़ा के परिवार पर कोई बड़ी आपत्ति आ सकती है तो वह ख़ुद खुद-ब-ख़ुदहवेली छोड़कर भारत जाना चाहती है। वह आने वाली मुसीबत की आशंका से घबरा जाती है।मिर्ज़ा और उसके परिवार वालों के अलावा माई को चाहने वाले उसे लाहौर से जाने नहीं देते। माई लाहौर छोड़कर भारत तो नहीं आती परंतु मृत्यु को अंगीकार कर लेती है।माई की मृत्यु होने पर मिर्ज़ा,मौहल्ले के सच्चे धार्मिक मौलवी इकरामुद्दीन और अन्य मुसलमान भाई मिलकर हिंदू-धर्म के अनुसार माई का दाह-संस्कार करते हैं। धर्म के ठेकेदारों को यह बात नहीं सुहाती है। नाटक के अंत में धर्म और राष्ट्र की एकता का प्रतिपादन करनेवाले ईमानदार मौलवी साहब को पहलवान और उसके गुंडे मार डालते हैं। असग़र वजाहत का यह नाटक देश विभाजन की त्रासदी के साथ-साथ धर्म की एकता का प्रतिपादन तो करता ही है साथ ही राष्ट्रीय जीवन का भी विवेचन करता है। यह नाटक हिंदू-मुस्लिम एकता को संबल देने वाला, राष्ट्रहित की बात करने वाला और मानवीय संवेदना को जगाता है। नाटककार ने बड़ी कुशलता से सांप्रदायिक एकता,

धार्मिक संबंध,सांस्कृतिक प्रगाढ़ता और राष्ट्रीय हितों का विश्लेषण मानवीय संदर्भ में किया है।इस ओर डॉ.निम्मी का कहना है "घोर सांप्रदायिकता के उक्त दहशत भरे वातावरण में भी हिंदू औरत की हिफ़ाज़त करने वाले मुसलमानों तथा मरणोपरांत उसके दाह-संस्कार में शरीक होने को तत्पर सच्चे धार्मिक मौलवी और कतिपय मुसलमानों का चित्र खींचते वक़्त नाटककार का मकसद यक़ीन नही इनसानी रिश्ते के जज़्बाती ताने-बाने में प्रस्तुत मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा करता है। अंत:हिंदू-मुस्लिम एकता और भाईचारे को बल प्रदान करता है।"[1]नाटक के माध्यम से नाटककार ने धार्मिक एकता और सांप्रदायिक जीवन को व्यापक करने का संदेश दिया है। आज के समय में यही राष्ट्रवादी जीवन है कि हम धर्म, जाति, नस्ल को भुलाकर राष्ट्रहित और मानव कल्याण की बात करें।आज हमारे देश में अलग-अलग धर्म एवं संप्रदाय के लोग निवास करते हैं ऐसे में सामाजिक सौहार्द की भावना महत्त्वपूर्ण है। पहलवान तथा उसके दोस्त रतन जौहरी की माँ का इसलिए विरोध करते हैं क्योंकि वह हिंदू है। देश विभाजन के बाद लाहौर में रहना उसका कोई अधिकार नहीं है। उसको अपने त्योहार दीवाली को लेकर पहलवान जैसे लोग आपत्ति जताते हैं। पहलवान की इस नफ़रत की भावना को और असहिष्णुता का विरोध करते हुए मौलाना उन्हें समझाते हैं। मौलाना की सारी बातें सामाजिक सौहार्द की अभिव्यक्ति ही है-

"**पहलवान:**असी अपने मुसलमान भाइयांदा क़त्लेआम देख्या है।सडे दिलां चबदले की आग भड़क रही है।

मौलवी : पुत्तरज़ुल्मको ज़ुल्म से ख़त्म नहीं कर सकदे...नेकी,शराफ़त इमानदारी से ज़ुल्मख़त्म होंदा है....जानवर तक प्यार नाल पालतू बन जांदा है...तुसी इंसान ते ज़ुलम करके खुदा नू की मुंह मुँह दिखाओगे? इस्लाम जुल्म दे ख़िलाफ़ है...जो जुल्म करदे ने ओ मुसलमान नहीं है...समझे ... इरशाद है कि तुम ज़मीन वालों पर रहम करो,आसमान वाला तुम पर रहम करेगा।"[2]रतन जौहरी की माँ,मिर्ज़ा की इजाज़त से दीवाली मनाती है,पूजा करती है,दीपक जलाती है। जावेद तथा तन्नो उसकी मदद करते हैं।माई सबको मिठाइयाँ बाँटती है, दुआ देती है। यहाँ मिर्ज़ासिकंदर और उसका परिवार मिलकर माई के साथ दीवाली मनाते हैं। इस दीवाली के अवसर पर तन्नो अपनी माँ से बड़े ही मार्मिक सवाल करती है। यह सवाल राष्ट्रीय जीवन की अभिव्यक्ति के दर्शन करवाते हैं।यहाँ नाटककार असग़र वजाहतने प्रासंगिकता को उकेरा है-

"तन्नो : अम्माँ ये सब हुआ क्यों?

हमीदा बेगम : क्या बेटी?

तन्नो : यही हिंदोस्तान, पाकिस्तान?

हमीदा बेगम : बेटी, मुझे क्या मालूम.....

तन्नो : तो हम लोग पाकिस्तान क्यों आ गए।

हमीदा बेगम : मैं क्या जानूं बेटी?

तन्नो : अम्माँ,अगर हम लोग और माई एक ही घर में रह सकते हैं

तो हिन्दुस्थान में हिन्दु और मुसलमान क्यों नहीं रह सकते थे।[3]

इस दीवाली के दिन मिर्ज़ासिकंदर के घर माई से मुलाक़ात करने हमीद और नासिर आते हैं। माई दोनों को मिठाई खिलाती है, दुआ देती है और कहती है कि पाकिस्तान बनने के कारण उसने इस बार दीवाली बड़ी धूमधाम से नहीं मनाई है। यहाँ नासिर जो माई को जवाब देता है वह एक लेखक की राष्ट्रीय सोच को दर्शाती है। लेखक सांप्रदायिक सौहार्द के माध्यम से राष्ट्रीय जीवन की अभिव्यक्ति प्रदान करता है-

"नासिर : चाहे कितने ही'आस्तां' बन जाएं... वहां रहेंगे तो हमारे तुम्हारे जैसे इंसान ही न?... और माईजहाँ इंसान होंगे वहाँ रिश्ते होंगे...जज़्बात होंगे... सरसों के खेतों की तलाश में सरदर्गा दीवाने होंगे... क्यों हमीद भाई?।"[4]

माई के दीवाली मनाने को पहलवान ग़ैर इस्लामी काम मानता है। वह इसे मुसलमान के लिए अच्छा नहीं मानता है। वह मिर्ज़ा से इस बात की शिकायत करता है कि उसने माई को अपने घर में चिराग जलाने, पूजा-पाठ करने तथा दीवाली मनाने की इजाज़त क्यों दी। इस बात पर नासिर पहलवान को समझाता है। नासिर यहाँसांप्रदायिकसोहार्द की प्रेरणा देता है। नासिर कहता है-

"नासिर : भई आप माई के दीवाली मनाने को ग़ैर इस्लामी हुकूमत जो कह रहे हैं,वो अपने हिसाब से कहरहे हैं।वोहिंदूहै उन्हें पूरा हक़ है अपने मज़हब पर चलने का।"[5]

मौलाना इस नाटक में एक सांप्रदायिक सौहार्द की बात करने वाला व्यक्ति है। वह पहलवान को इबादत की आज़ादी की बात समझाता है। मौलाना राष्ट्रहित में होने वाले मज़हब की बात करता है। वह दूसरे मज़हब का भी सम्मान करने की सीख देता है-

"मौलाना : भई हदीस शरीफ़ है कि तुम दूसरों के ख़ुदा को बुरा न कहो, ताकि वह तुम्हारेख़ुदा को बुरा न कहें, तुम दूसरों के मज़हब को बुरा न कहो, ताकि वह तुम्हारे मज़हब को बुरा न कहें।"[6]

माई का जीवन राष्ट्रीय कल्याण के लिए समर्पित हो जाता है।मिर्ज़ा के परिवार को माई अपना लेती है।यहाँ माई के माध्यम से नाटककार ने राष्ट्रीय जीवन के अभिव्यक्ति दिखाईहै। वह मिर्ज़ा को अपना बेटा मानती है, बेगम को बहु,जावेद को पोता और तन्नो को पोती मानने लगती है।सिकंदर मिर्ज़ा का परिवार माई को परिवार की एक बुज़ुर्ग सदस्य केरूप में मानकर उनकी इज्ज़त करने लगता है।सारा मुहल्ला माई को बड़ा सम्मान देता है।यहाँमिर्ज़ा की भावना राष्ट्रीयसहिष्णुता को विस्तार देती है। पहलवान के द्वारा मिर्ज़ा को धमकाने के बाद भी मिर्ज़ा माई को घर से नहीं निकालता।माई को जब यह अंदाज़ा हो जाता है कि लोग मेरे कारण मिर्ज़ा को परेशान कर रहे हैं तो वह दिल्ली जाने को कहती हैं। परंतु नासिर उसको रोक लेता है।मिर्ज़ा को जब यह बात पता चलती है तो मानवीय भावना की अभिव्यक्ति बड़े ही मार्मिक शब्दों में करता है-

"सिकंदरमिर्ज़ा : अपना फ़र्ज़ है कि आप अपने बेटे, पोते, पोती के साथ रहें.... बस।

सिकंदरमिर्ज़ा : क़समख़ुदा की आप चली जातीं तो हम पर क्या बीतती पता है आपको... हम शर्म से ज़मीनमें गड़ जाते... हम किसी से आँखें मिलाने लायक़न रह जाते...अरे हद है....अब आप कहीं नहीं जाएगी।"[7]नाटककार ने एक हिंदूऔर एक मुसलमान परिवार का विश्लेषण जहाँ धार्मिक सौहार्द और सांप्रदायिकता के रूप में प्रदर्शित किया है वहीं वह राष्ट्रीय हितों की रक्षा करता हुआ भी दिखाया गया है।भारतीय संस्कृति में धार्मिक सौहार्द एवं धर्मनिरपेक्ष जीवन को महत्त्व दिया जाता है। अपने राष्ट्र के प्रति संवेदनशील होने के कारण किसी दूसरे धर्म के व्यक्ति का अंतिम संस्कार भी उसी धर्म के रिवाजों के अनुसार करना अपना परम कर्तव्य माना जाता है। माई की जब मृत्यु हो जाती है तो सारे मुहल्ले के लोग मिलकर हिंदू रीति-रिवाज से अंतिम संस्कार करने के लिए सामग्री एकत्र करते हैं। लाहौर मेंहिंदूस्मशान घाट नहीं बचने के कारण रावी नदी के तट पर अग्नि संस्कारकरते हैं। माई को "राम नाम सत है यही तुम्हारी गत है" कहकर कंधा भी दिया जाता है।मिर्ज़ा माई को अग्नि देता है।यहाँहिंदू-मुस्लिम एकता का प्रतिपादन किया है।इस समय मौलाना धार्मिक सहिष्णुता का विवेचन इस प्रकार करतेहैं-

"मौलाना : आज वो औरत मर चुकी है जिसके तुम सब एक एहसानात है, तुम सबको उसने अपना बच्चा समझा था,आज जबकि वो मौत के आग़ोशमें सो चुकी है,तुम उसे अपनी माँ मानने से इनकार कर दोगे...और अगर वो तुम्हारी माँ है तो उसका जो मज़हब था उसका ऐहतेराम करना तुम्हारा फ़र्ज़ है।

सिकंदरमिर्ज़ा : आप बजा फ़रमाते हैंमौलाना... हमें मरहूमा के मज़हबी उसूलों के मुताबिक़ ही उनका कफ़न दफ़न करना चाहिए।"[8]

असग़र वजाहत ने राष्ट्रीय जीवन का विवेचन धर्म को मानव कल्याण को केन्द्र में रखकर किया है।असग़र वजाहत जी मानवीय संवेदना और व्यंग्य के लेखक कहे जाते हैं।वे विश्व कुटुंबकम की भावना से लेखन करने वाले साहित्यकार है। अपने नाटकों के माध्यम से असग़र जी ने मानवीयता को जाग्रत करने का काम किया है। नाटक के शुरू में सिकंदर का परिवार रतन जौहरी की माँ को हवेली से बाहर निकालने की फ़िराक़ में रहता है, वह माई को ख़त्म भी करना चाहता है। परंतु हमीदा बेगम का मानवीय मन जागता है। वह मिर्ज़ा को अमानवीय कर्म करने से रोक देती है, हमीदा बेगम और सिकंदर मिर्ज़ा के संवादों से यह भाव परिलक्षित होता है-

"हमीदा बेगम : नहीं...नहीं आपको मेरी क़सम...ये न कीजिए। उसने हमारा बिगड़ा ही क्या है।

सिकंदरमिर्ज़ा : बेगम, एककांटा है जो निकल गया तो जिन्दगी भर के लिए आराम ही आराम है।

हमीदा बेगम : हाय मेरे अल्लाह, इतना बड़ा गुनाह... जब हम किसी को जिन्दगी दे नहीं सकते तो हमें छीनने का क्या हक़ है?।"[९]

मिर्ज़ा एक मानव जीवन की विशालता को प्रकट करने वाला पात्र है। यहाँ नाटककार इस बात की तरफ़भी संकेत करता है कि वही राष्ट्रप्रगति कर सकता है जिसमें लोग एक-दूसरे के कल्याण की बात करते हो। जो धर्म, जाति,संप्रदाय से ऊपर उठकर मानव कल्याण हेतु अग्रसर होते हैं।सिकंदर का परिवार माई को बड़ी इज्ज़त से अपने घर में रखता है।यहाँहिंदू-मुसलमान का कोई झगड़ा नहीं है। नाटककार ने इस बात को सिद्ध कर दिया है कि जब आदमी का मानवीय विवेक जाग्रतहोता है तो वह जीवन प्रदान करने वाला महामानव बन जाता है। पहलवान जब माई को हवेली से निकालने की बात पर अड़ जाता है तो मौलाना उसे मानवीय सौहार्द और धर्मनिरपेक्ष की की बातें समझता है-

"मौलवी : वान्ने अहज़मनउल मुशरीकन अस्त आदक फार्जिदा...हुक्मे ख़ुदाबंदी है कि अगर मुश्किल मुशरिकीन में से कोई तुमसे पनाह मांगे तो उसको पनाह दो।"[१०]

"मौलवी : लड़ना ही है तो अपने नफ़्स से लड़ो... वही सबसे बड़ा जिहाद सी.... ख़ुदगर्ज़ी,लालच, आरामो-असाइश से लड़ो.... बेसहारा से बूढ़ी औरत नाल लड़ना इस्लाम नहीं है।"[११]

"मौलाना : बेवा का दर्जा तो हमारे मज़हब में बहुत बुलंद है... हदीस है कि बेवा और गरीबके लिए दौड़-धूप करने वाला दिन भर रोज़ा और रात भर नमाज़ पढ़नेवाले के बराबर है।"[१२]

रतन जौहरी की माँअब मुहल्ले की माई बनकर सबकी सेवा करती है। वह मानव सेवा को अपना लेती है। सबमें केवल अपनी बहु-बेटे, पोते-पोतियों का दर्शन करती है। मानव सेवा और सहृदय के कारण सबकी चहेती बन जाती है।ऐसे में जब कोई उसे प्यार से बुलाता है तो वहगद् गदहो जाती है।तन्नो जब माई को दादी कहती है तो वह भावुक हो जाती है। उसे अपनी पोती राधा की याद आ जाती है। यहाँ मानवीय धर्म की व्याख्या राष्ट्रीय जीवन के संदर्भ में की गई है। रतन की माँ मानवीय धर्म का प्रतिपादन इस प्रकार करती है-

"तन्नो : दादी... दादी माँ... सुनिए ...दादी माँ....(ऊपर से आवाज़)

रतन की माँ : आई बेटी आई....तू जुग जुग जीवें (आते हुए) मैं जादवी तेरी आवाज सुनदी आं...मनूंलगदाहय कि मैं जिन्दा हां...।"[१३]

यहाँ रतन की माँ को एक राष्ट्रव्यापी, लोक कल्याणकारी नारी के रूप में चित्रित किया गया है। रतन की माँहमीदा बेगम को कहती है कि जब तक शरीर में प्राण है, तब तक वह दूसरों की सेवा करती रहेगी। अब इस दुनिया में सेवा भाव के अलावा बचा ही क्या है? निश्चित रूप से असग़र वजाहत ने रतन की माँ के माध्यम से राष्ट्रीय जीवन की अभिव्यक्ति की है।वह एक ऐसी नारी है जो यह नहीं देखती कि हिंदू की सेवा कर रही हूँ या मुसलमान की, मैं लाहौर में हूँ या लखनऊ में, मैं भारत में हूँ या पाकिस्तान में,वह जहाँ रह रही है, बस उसी को अपना राष्ट्र समझती हैं। वहीं के लोगों को अपने घर के बच्चे मानती है-

"हमीदा बेगम : (हँसकर) माई के साथ ही मैं घर से निकलती हूँ लेकिन माई जैसा ख़िदमत का जज़्बाकहाँ से लाऊं... यह तो सुबह से निकलती है तो शाम को ही लौटती है।

रतन की माँ : बेटी जद तक इस शरीर विच ताक़त है तब तक ही सब कुछ है, नहीं तो एक दिन त्वाडे लोकां दे बोझ बणना ही है।"[१४]

हमीदा बेगमसिकंदर मिर्ज़ा को माई की सेवा का विश्लेषण इन शब्दों में करती है-

"हमीदा बेगम : माई घर में रहती ही कहाँ है। तड़के रावी में नहाने चली जाती है। सुबह अलीक साहब के यहाँ बड़ियां डाल रह हैं, तो कभी नफ़ीसा को अस्पताल में ले जा रही हैं, तीसरे पहर बेगमआफ़ताब के लड़के की तीमारदारी कर रही हैं तो शाम को सकीना को अचार-डालना सिखा रही हैं..... रात में दस बजे लौटती हैं। हम लोगों सेमुलाक़ात हो तो कैसे हो...."[१५]

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि असग़र वजाहत ने 'जिस लाहौर नइ देख्या ओ जम्याइ नइ'नाटक में सिकंदरमिर्ज़ा, माई, मौलवी, नासिर और हमीदा बेगम ऐसे पात्र है जो सामाजिक सौहार्द, धार्मिक सौहार्द,के साथ-साथ राष्ट्रीय जीवन की अभिव्यक्ति को प्रकट करने वाले है। यह पात्र राष्ट्र हित की भावना के अंतर्गत धर्मनिरपेक्ष और सांप्रदायिक सौहार्द को प्रस्तुत करते हैं।लेखक यहाँ इस बात को स्पष्ट करते है कि व्यक्ति के केवल राष्ट्रहित में बलिदान देना या प्राण त्यागना ही राष्ट्रवादिता नहीं है बल्कि मानवीय जीवन को निस्वार्थ भावना से मानव कल्याण के लिए भी प्रस्तुत करना राष्ट्रीय अभिव्यक्ति है। इसके अलावा नाटककार ने राष्ट्रीय हितों की रक्षा करते हुए उस नाटक में धार्मिक सहिष्णुता, मानव धर्म, भाईचारा, निस्वार्थ भावना आदि का विवेचन भी बड़ा सटीक और स्पष्ट रूप में किया है।असग़र वजाहत जी का यह नाटक मंचीय है तथा देश-विदेश में इसका कई बार सफल मंचन भी हुआ है। इसकी प्रासंगिकता युगानुकूल हमेशा बनी रहेगी।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची-

1. असग़र वजाहतकी रचनाओं में सामाजिक सरोकार: डॉ.निम्मी.ए.ए,पृ.61, माया प्रकाशन, कानपुर, 2021

2. आठ नाटक,असग़र वजाहत-पृ.171, साहित्य उपक्रम, दिल्ली, जनवरी, 2016

3. वही,पृ.179

4. वही,पृ.180-181

5. वही,पृ.182

6. वही,पृ.184-185

7.वही,पृ.191

8.वही,पृ.197

9.वही,पृ.165

10.वही,पृ.171

11.वहीं,पृ.172

12.वही,पृ.185

13.वही,पृ.163

14.वही,पृ.178

15.वही,पृ.178

16.हर क़ैद से आज़ाद:सं.पल्लव, बनास जन, पृ.312-320,किताब घर प्रकाशन, दिल्ली, 2017

****

महिला रचनाकारों की बाल एकांकियों में अभिव्यक्त राष्ट्रीयता

-डॉ.शितल गायकवाड
हिंदी विभागाध्यक्ष,
भानूदासराव चव्हाण महाविद्यालय,लोहारा,
जिला उस्मानाबाद (महाराष्ट्र)

भारत देश को आजादी मिले हुए आज ७५ वर्ष पूरे हुए है याने की हम आज आजादी का अमृत महोत्सव मना रहे है। देश को स्वतंत्रता मिलने से पूर्व और स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत हिंदी के बहुत सारे रचनाकार अलग-अलग विधाओं में स्वतंत्रता संग्राम में शहीद हुए शहीदों तथा समाजसुधारकों को ध्यान में रखकर साहित्य लिखे हुए हैं। इनकी रचनाओं को पढ़ने के बाद तत्कालीन समय की स्थिति तथा देशप्रेम, राष्ट्रीयता की भावना हममें निश्चय ही उत्पन्न हो जाती है। प्रस्तुत आलेख में हिंदी महिला रचनाकारों के बाल एकांकियों में स्वतंत्रता संग्राम से संबंधित बालएकांकियों का विवेचन किया गया है। बच्चों के मन में बचपन से ही देशप्रेम एवं राष्ट्रीयता की भावना उत्पन्न हो और आजादी की ज्योत हर एक बच्चें में निरंतर जलती रहें इसी उद्देश्य से कुछ महिला रचनाकारों ने बाल एकांकियां लिखि है। इनमें श्रीमती रेखा जैन, बानो सरताज, सुधा शर्मा, उषा यादव आदि का नाम लिया जा सकता है।

महिला रचनाकारों में श्रीमती रेखा जैन यह महत्वपूर्ण बाल एकांकीकार है। अपने पति नैमिचंद्र जैन के साथ दिल्ली में बालरंगमंच से जूड़ी और 'दिल्ली चिल्ड्रेन्स लिटिल थियेटर' के लिए नाटकों का निर्देशन किया। सन् १९७६ में बालनाट्य शैली 'उमंग' की स्थापना की। श्रीमती रेखा जैन देश की एकमात्र महिला प्रयोगधर्मी नाटककार है, जो लगभग पिछले ५० वर्षों से बालनाटकों के सृजन व उनकी प्रस्तुतियों के लिए समर्पित है। राष्ट्रीयता की भावना से प्रेरित होकर 'स्वाधीनता संग्राम' इस बालएकांकी में सूत्रधार वर्तमान से अतीत में ले जाता है। वह पहले वर्तमान की पहचान आज की पीढ़ी से कराता है। इस नाटक में एक अलग तरह की आजादी का संघर्श है। अहिंसावादी व क्रांतिकारी दोनों तरह के देशभक्तों के त्याग का वर्णन है। इस नाटक में क्रांतिकारों के नारे और देशभक्ति के गीतों का समावेश देते हुए झंडे का गान गाया गया है -

''झंडा उँचा रहे हमारा, विजयी विश्व तिरंगा प्यारा।
वीरों को हर्शानेवाला, सदाशक्ति बरसानेवाला,
मातृभूमि पर तनमन वारा, झंडा ऊँचा रहे हमारा।''[१]

इस प्रकार प्रस्तुत नाटक बच्चों में देश के प्रति अपने उत्तरदायित्व के भाव को जिलाता है।

सुधा शर्मा की 'वीरों की कुर्बानी' में स्वतंत्रता सेनानियों के बलिदान का कथ्य प्रस्तुत किया गया है। एकांकी की शुरूआत इंद्र के दरबार से होती है। इस दरबार में देश की आजादी में सक्रीय रहे स्वतंत्रता सेनानी एकत्रित है। इसमें तिलका माँझी, खुदीराम बोस, गांधी जी, मंगल पांडे, नेहरू जी, कुँवरसिंह, भगतसिंह, चंद्रशेखर आजाद, हजरत महल, लक्ष्मीबाई आदि प्रत्येक सेनानी एक-दूसरे की वीरता को श्रेष्ठ माना है। बच्चे, युवा बूढ़े, स्त्रिया आदि ने जान की परवाह न करते हुए आजादी में अपना बलिदान दिया। गुलामी से देश को आजाद करने, व्यक्ति को अपना अधिकार, स्वतंत्रता देने के लिए सारे प्रयास किये गये है। इंद्र के दरबार में उपस्थित सभी स्वतंत्रता सेनानी धरती पर आकर मनाये जानेवाले स्वतंत्रता दिवस की धूमधाम देखना चाहते है। गाँधीजी कहते है - ''हम सब वहाँ जाकर उस समारोह को देखना चाहते है। हम देखना चाहते है कि हमारे सपनों का भारत स्वतंत्रता के इतने वर्षो बाद कितना विकसित और उन्नत हो गया है।''[२]वे देखते है लोगों को धरती पर धर्म के नाम पर आपस में लड़वाया जाता है। मजहब के खातिर दंगे करवाये जाते है। घर में भाई - भाई में बैर भाव पनप रहा है। नेता स्वार्थ के लिए जाति-धर्म के नाम पर दंगे करवा रहे हैं। हर जगह रिश्वत और घोटाले ही घोटाले हैं। राष्ट्रगान तथा तिरंगे का अपमान हो रहा है। भारत ने भौतिक विकास तो कर लिया किंतु नैतिक पतन हो रहा है। गांधी और अन्य सभी स्वतंत्रता सेनानी चिंतित है। गांधी कहते है -''कहीं ऐसा न हो की भारत फिर से गुलाम बन जाए और हमारा बलिदान व्यर्थ चला जाए।''[३] गांधी जी देखते है कि, आज भी कुछ बच्चों में देशसेवा करने की दृढ इच्छा है। यह देखकर गाँधीजी तथा अन्य स्वतंत्रता सेनानियों की चिंता दूर हो जाती है। इस प्रकार स्वतंत्रता सेनानियों का दिया हुआ बलिदान व्यर्थ न जाएगा यहीं बात प्रस्तुत एकांकी के माध्यम से स्पष्ट हो जाती है।

सुधा शर्माजी की ही दूसरी एकांकी 'भारत के लिए' में देश को गुलामी की जंजीरों से छुड़ाने के लिए बड़ों के साथ बच्चे भी स्वाधीनता संग्राम में सक्रीयता का वर्णन मिलता है। स्कूली छात्र-छात्राओं ने आजादी की लड़ाई में आगे बढ़कर अपने प्राण न्योछावर कर दिये। ये नन्हें - मून्ने अपने माता-पिता, भाई बहनों के प्यारे थे, आँखों के तारे

थे परंतु भारत माँ की रक्षा के लिए उन्होंने अपना बचपन, लाड-प्यार, खेल कुद सभी कुछ भूलाकर अंग्रेजों से लड़ने के लिए निकल पड़े। मातृभूमि को आजाद करने का प्रण किया। उसे पूरा करने के लिए प्राणों की बलि दे दी। इन शहीदों में भाामिल थे पटना के सात छात्र उमाकांत सिन्हा, रामानंद सिन्हा, सतीश प्रसाद झा, जगपति कुँवर, देवीप्रसाद चौधरी, राजेंद्र सिंह और रामगोविंद सिंह। इन बच्चों ने पटना के सचिवालय में ब्रिटिश झंडा हटाकर भारत का तिरंगा फहराने के लिये खुद के प्राण अर्पण किये थे। वे सभी बच्चे नौसे चौदह वर्ष तक ही थे। यह एकांकी पढ़कर निश्चिय ही आजकल के बच्चों को देशहित में कार्य करने का संदेश और प्रेरणा मिलती है।

सुधा शर्मा जी की ही 'आजादी की ओर ' एकांकी आजादी की कहानी कहते समय हम अक्सर कालापानी की कठोरतम सजा के बारे भूल जाते हैं। आज आजाद भारत में जन्में बच्चों को 'आजादी' शब्द का महत्व तथा इसे पाने के लिये सहे गये कष्टों को याद दिलाना आवश्यक है इसी दृष्टि से अंदमान स्थित पोर्टब्लेअर की सेल्यूलर जेल में आजादी के दिवानों को दिये गये कष्टों की कहानी पर आधारित यह एकांकी है। 'वतन के लिए' इस एकांकी में गुरूगोविंदसिंह जी के बेटों की तरह टिपू सुलतान के छोटे बच्चे की देशभक्ति से बच्चों को परिचित कराया गया है। तथा नयी पीढ़ी को देशभक्त बनने के लिए प्रेरित किया गया है।

उषा यादव ने 'अंशदान' एकांकी में बच्चों को शहीदों के असहाय परिवारजनों की सहायता करने का संदेश दिया है। इस बाल एकांकी में निधि नामक पात्र अपनी गोलक शहीदों के परिवारजनों के सहायतार्थ धन भेजना चाहती है। निधि के भाई नीलाभ द्वारा पैसे के बारे में पूछने पर माँ के द्वारा चुटिया खींचे जाने पर निधि बताती है कि, ''पीछले दो - तीन सालों में मिले मैडल को मैंने बेच दिया और उसी सेये पैसे इकठ्ठे किये है।''[४]वह इन पैसों को कारगिल युद्ध में शहीदों के परिवारजनों के सहायतार्थ भेजना चाहती है। इसपर निधि की माँ भी अपनी सोने की चुडियां शहीदों के सहायतार्थ दे देती है। यही जज्बा सारे देश के बच्चों में पैदा हो, इसी प्रयोजनार्थ अंशदान नामक नाटक का सृजन किया गया है।

उषा यादव के ही 'तस्वीर के रंग' एकांकी में बच्चों के खेलने के समय का सदुपयोग रचनात्मक कार्यों में तल्लीन रहकर करने की शिक्षा इसमें है। इसमें समीर एक ऐसे पात्र का संयोजन है जो भारत माता के चित्र को रंगों से सँवार रहा है। कुछ बच्चे आकर समीर को खेलने के लिए चलने को कहते है। समीर खेलने जाने से मनाकरने पर अन्य बच्चे समीर के साथ तस्वीर में रंग भरने लगते हैं। सब बच्चे एक साथ भारत माँ के गीत का समूह गान करते है। इस एकांकी में बच्चों में राष्ट्रीयता का संचार किया गया है। 'चौथी पीढ़ी' इस नाटक में दादी माँ की चिंता है की, उनके परिवार से चौथी पीढ़ी में देश सेवा कैसे हो जाएगी। मानसी माँ से बताती है कि, दादी माँ बाहर रो रही है। रोने का कारण पूँछने पर दादी बताती है कि, ''हमारे ससुर, पति व पुत्र तीन पीढ़ियों ने देश पर बलिदान दिया है। चौथी पीढ़ी में देशपर बलिदान करनेवाला कोई नहीं है, क्योंकि घर में अब कोई लड़का नही हैं।''[५] यह बात सुनकर मानसी सैनिक स्कूल में पढ़कर सेना डॉक्टर बनकर युद्ध में घायलों की सेवा करने की इच्छा व्यक्त करती है।

इस प्रकार उपर्युक्त सभी महिला रचनाकारों ने अपने बाल एकांकियों के माध्यम से बालकों को देश की रक्षा करना एवं राष्ट्रीयता का संदेश दिया है। भारत माँ के सच्चे सपूत बनने, देश की रक्षा के लिए भावी पीढ़ी के लिए उन्होंने सब तरह से बच्चों को तैयार करने, आवश्यकता पड़ने पर सहायता के लिए सदैव तत्पर रहनेवाले कथानक उन्होंने गढ़े है। ऐसी एकांकियां पढ़ने पर आज के बच्चों में निश्चय ही देशसेवा की भावना उत्पन्न होने में सहायता मिली ।

संदर्भ :

1) स्वाधीनता संग्राम -रेखा जैन, पृ. ३८.
2) वीरों की कुर्बानी - सुधा शर्मा, पृ. १११.
3) वहीं - पृ. ११६.
4) अंशदान - डॉ. उशा यादव, पृ. १५.
5) चौथी पीढ़ी - डॉ. उशा यादव, ृ. २५.

****

भारतीय साहित्य में संस्कृति एवं लोकजीवन की अभिव्यक्ति

-डॉ.नवनाथ गाडेकर
सहायक प्राध्यापक,हिंदी विभाग,
भारत महाविद्यालय,जेऊर (म.रेल)
तहसिल करमाळा, जिला-सोलापुर (महाराष्ट्र)413202

शोध सारांश: –.भारतीय संस्कृति का वास्तविक चित्रण लोकसाहित्य में उपलब्ध होता है। भारतीय संस्कृति में लोकगीत, लोकनाट्य, त्यौहार, उत्सव आदि को महत्तवपूर्ण स्थान है। इन सभी को भारतीय संस्कृति का संरक्षक माना जाता है, इनकी संख्या विपूल मात्रा में है। इसकी परंपरा सदियों से चलती आयी है। भारतीय लोकसाहित्य व्दारा भारतीय संस्कृति का ज्ञान होता है। लोकसाहित्य किसी भी समाज की संस्कृति का एक महत्वपूर्ण अंग होता है। इसके माध्यम से अपनी-अपनी जाति के संस्कार, रीति-रिवाज, रूढ़ी-परंपराएँ एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुंचाएँ जाते हैं। भारत में लोकगीतों की प्राचीन परंपरा रही है। हम ग्राम-देहातों में अक्सर देखतें है कि स्त्री-पुरुष किसी न किसी समारोह, बाजार-हाट, खेत-खलिहान या अन्य किसी स्थल पर कोई कार्य संपन्न करने के लिए मंत्रमुग्ध होकर गीत गाते हैं। इन गीतों में उत्साह भरा हुआ होता है, इन गीतों के माध्यम से ही भारतीय संस्कृति एवं लोकजीवन की सशक्त अभिव्यक्ति होती है।

बीज शब्दः-संस्कृति, लोकगीत, लोककला, लोकनाटय, लोक-संस्कृति, उत्सव, त्यौहार, व्रत एवं उपवास आदि।

भूमिकाः- भारतीय संस्कृति का वास्तविक चित्रण लोकसाहित्य में उपलब्ध होता है। भारतीय संस्कृति में लोकोत्सव, लोकपर्वों और त्यौहारों का अत्याधिक महत्व है। संस्कृति की संरक्षक लोककथाओं की संख्या असीम है। दादा-दादी, नाना-नानी के द्वारा देवी, देवताओं की पूजा, व्रत और उपवास, गणेश पूजा, दुर्गा पूजा, दीपावली, होली आदि अवसरों पर कथाएँ बच्चों ने सुनी हैं। उन्होंने सुना है कि लोककथाओं में पशु-पंछी मनुष्य की तरह ही बोलते हैं। वृक्ष, वनस्पतियों से संबंधित कहानियों को भी लोककथा में संम्मिलित किया जाता है। सुख-दुःख, हर्ष-उल्लास, संयोग-वियोग, द्वेश-ईर्श्या आदि का श्रमजीवी वर्ग से ही घनिश्ठ संबंध होता है। इसकी सशक्त अभिव्यक्ति लोकसाहित्य के माध्यम से होती है। लोकसाहित्य को विभिन्न विषयों में विभाजित किया जाता है।

डॉ. शाम परमार के अनुसार-

1. लोकगीत, लोककथाएँ, कहावते पहेलियाँ। 2. रीति-रिवाज, त्यौहार।
3. जादू-टोना, टोटके, भूत-प्रेत संबंधी विश्वास। 4. लोकनृत्य, लोकनाटय तथा आंशिक अभिव्यक्तियाँ। 5. बालक-बालिकाओं के विभिन्न खेल, ग्रामीण एवं आदिवासियों के खेल एवं गीत।'' भारतीय संस्कृति में मनोरजंन के साथ ही कथा, कहानियाँ, लोककथाएँ यह परंपरागत नैतिक शिक्षा का माध्यम भी है। राम-सीता, गंगा-नर्मदा, राधा-कृश्ण आदि को पौराणिक रूप देकर लोकसाहित्य का विशय बनाया गया है। लोकसाहित्य किसी न किसी रूप में वन, वनस्पति, पशु-पक्षी, सागर-पहाड, हवा-पानी ऐसे प्राकृतिक प्रतीकों से जुड़ा हुआ है। मिसाल के रूप में गोवा का लोकजीवन विभिन्न संस्कारों से जुड़ा है। वहाँ विवाह, गर्भधारण, जन्म, मुंडन, मृत्यु आदि अवसरों पर लोकगीत गाए जाते हैं। इसके अतिरिक्त उत्सवों, त्योहारों और समारोह में भी लोकगीत सुनाएँ जाते हैं। गोवा में फुगडी-गीतों को विशेष रूप से महत्व है। 'फुगडी' एक लोक-नृत्य है। जिसमें आठ से बारह महिलाएँ गोलाकार घुमती तथा तालियाँ बजाते हुए नृत्य करती हैं। ऐसे अवसर पर अलग-अलग गीत भी गाए जाते हैं। गोवा में फुगडी नृत्य खास तौर पर गणेश उत्सव में घर-घर में किए जाने की प्रथा है। कभी-कभी विठ्ठल का भी स्मरण किया जाता है। निम्नलिखित लोकगीत में विठ्ठल भगवान के प्रति सेवा भाव व्यक्त हुआ है -

''हाती घेई धपटी खांद्यावरी/हरी दाखव वाट,
मला पंढरेची पंढरे ग जाताना हातीत घेतली
सारण/झाड़ीन झाड़ीन अंगण सावळ्या विलाचो ।।[1]।।
हाती घेई दंडा, धपटी खांद्यावरी/पंढरे ग
जाताना वटीक मारलो खिळो
कपालपटी मिळो सावळ्या विलाचे ....''[2]

उपर्युक्त गीत में पंढरपुर के विल की यात्रा में जाने की इच्छा व्यक्त की जा रही है। वहाँ जाकर भगवान विल का आँगन साफकरना और उनकी धोती धोने की इच्छा व्यक्त की जा रही है। महाराष्ट्र में वाघ्या और मुरली खंडोबा को अपना भगवान मानते हैं। वे जो गीत गाते हैं वह लावणी के समान दिखाई देते हैं। उनका अंतर्बाह्य ढंग शाहिरी गीत का है। खंडोबा को लेकर गाये हुए गीत बहुसंख्य मात्रा में शाहिरी ढंग के ही हैं। खंडोबा और बाणाई की भेंट के प्रसंग का चित्रण निम्न गीत में इस प्रकार है -

''बाणूनं करूनिया ग थाट/शिरी ग दुधाने भरून माठ जी।।
जात होती बाजाराच्या वाटा/पडली देवाजी गाठ जी।।
पदर धरला बळकट/बाणू म्हणे सोड माझी वाट जी।।
बाणू झिडकारी महाराज/सोड पदर जाऊ दे घरी।।''[3]

उपर्युक्त गीत लावणी जैसा है, इसमें राधा का रास्ता रोकनेवाले कृश्ण के लिए गाये जाने वाले श्रृंगार गीत के वर्णन जैसी अभिव्यक्ति हुई है। लोक-देवता खंडोबा बानाई के प्रेम में मशगुल हो जाने पर म्हाळसा की उपेक्षा शुरू हो जाती है, वह अपना दुःख निम्न गीत के द्वारा व्यक्त करती है -''सेज केली महाली जी।/लाविल्या समया सात।
अरे हो, वाट पाहिली सा-या रात्री जी /देवा माझी त्रासली नेत्रं।
अरे हो, कोठे गेली होती स्वारी जी/कोणाच्या मंदिरी जी।
अरे सांगा मल्हारी जी।''[4]

इस प्रकार उपर्युक्त गीत में खंडोबा के प्रति अपने मन में म्हाळसा जो भाव रखती है, उसे व्यक्त करती है। इस प्रकार के लोकगीत महाराष्ट्र में विपुल मात्रा में दिखाई देते है। इन लोकगीतों के कारण महाराष्ट्र के संस्कृति की जानकारी अन्य भाषा-भाषियों को देखने मिलती है। त्रिपुरा की जनजातियों में भी समृध्द लोकगीतों की परंपरा को मिलते हैं। उनके लोकगीतों में आचार-विचार, पूजा-पाठ, व्रत-अनुश्ठान आदि के चित्रण प्राप्त होते हैं। त्रिपुरा की जनजातीय जीवन में गीत-संगीत का महत्वपूर्ण स्थान है। इनके दैनिक जीवन में लोकगीत विभिन्न रूपों में दिखाई देते हैं। जैसे - उनके कई लोकगीतों में अतिथि का सेवा-सत्कार, उत्साह, हताशा, प्रेम घृणा, आशा-निराशा आदि का चित्रण प्राप्त होता है, तो कई लोकगीतों में - प्राकृतिक आपदाएँ, भूकंप, बिजली, तूफान आदि से संबंधित घटनाएँ। प्रकृति, कृशि, विवाह, पूजा-पाठ, देवी-देवता आदि से संबंधित गीत त्रिपुरा में प्रचलित हैं। लोकगीत त्रिपुरा में रीति-रिवाज, मान्यताएँ और विश्वास की अभिव्यक्ति के सशक्त माध्यम हैं, उनका एक बालगीत निम्न प्रकार से है-

''मामा आइछों धामाइया, छाति घर नामाइया/
छातिर उपर गामछा, देख मामा तामसा।
छोट मामी रान्धे बाडे, बढ मामी खाय/
माईज्या मामी नाइचते नाइचते, बापेर बाड़ी जाय।
बापेर बाड़ीर तेल सिनदुर, मामी दिस फूल्न/
समन खोंपा बाइन्दा दिनू, हाजार राका मूल।।''[5]

असल में लोकसाहित्य आदिवासी साहित्य है। आदिवासी साहित्य में लोककथा, लोकगीत महत्वपूर्ण माने जाते हैं। या यूँ कहा जा सकता है कि ये चीजें उनके जीवन का अभिन्न हिस्सा हैं। इन उपादानों के माध्यम से आदिवासी समाज में उनके पूर्वजों, प्रथा-परंपराओं, संस्कृति, लोकजीवन, विश्वास और मान्यताएँ आदि की जानकारी नई पीढ़ी में संक्रमित होती है। आदिवासी लोकसाहित्य प्रथा-परंपराएँ, संस्कृति, मनोरंजन और उपदेश से भरा पडा है। इस दृष्टि से डॉ. शैलजा देवगाँवकर के साहित्य पर गौर किया जा सकता है उनका एक गीत इस प्रकार है -

''चांदनी रातों काकोडो/चांदनी रातों कुलर्डे लाला
भवाके में तो भवाडे/बेटा हो तो कुँवा खुदाये।
एकीजा टिकासो मारे ओके/चंदनी रातो काकोडा।
चंदनी रातो कुलर्डे लाला।''

उपर्युक्त गीत कोरकु जनजाति के लोग गाते हैं। अमावस के दिन वरूण राजा की आराधना करने के लिए यह गीत गाया जाता है। इसमें लड़के-लड़कियाँ, पुरूश-महिलाएँ सभी मिलकर नाचते और गाते हैं। उनकी धारणा यह है कि अगर इस दिन कुँआ खोदा जाता है तो अनाज की पैदावार अच्छी होती है। कुँआ अकेले खोदना नहीं चाहिए सभी ने मिलकर खोदना चाहिए। अतः एकता की भावना इस गीत के माध्यम से व्यक्त की गई है। बंजारा जनजाति के लोग पहले जंगलों में रहा करते थे। अब वे गाँव या शहर में भी आकर बसे हैं। इस जनजाति के लोग भारत के विविध प्रांतो में दिखाई देते हैं। इनकी संख्या महाराष्ट्र और कर्नाटक में भी काफीहै। इनकी बस्ती को 'तांडा' कहा जाता है। बंजारा स्त्रियों के गीत और नृत्य आदि अत्यंत कलात्मक होते हैं। इस जनजाति की रहन-सहन, खान-पान को लेकर विशेशताएँ दिखाई देती हैं। उनकी - जत्रा, पर्व, उत्सव, क्रीडाएँ और बयलाट (खेले जानेवाले विशिष्ट जनपदी नाटक) श्रोता और दर्शकों को मंत्रमुग्ध कर देते हैं। संपूर्ण देश में इस जनजाति की वेशभूशाओं में एकरूपता दिखाई देती है। इनके वस्त्रों में लाल रंग की प्रधानता दिखाई देती है। नीले, हरे और सफेद कपड़ो को जोड़कर इनकी महिलाएँ अपने वस्त्र बनाती हैं। वे लहंगे, ओढ़नी, चोली आदि वस्त्रों को स्वंय अपने हाथों से तैयार करती हैं। काँच के टुकडें, चांदी, कौड़ियाँ आदि का प्रयोग वे अपने वस्त्र बनाते समय करती हैं। इनका एक गीत है, जिसमें वे अपने जाति के संदर्भ में कहती हैं, वह गीत निम्न प्रकार से है -

''हम बणजारी गेणा गांराटी,हम् बणजारी गेणा गांराटी
हम् बनजारी आयो कुलारी,हम् बनजारी बामणि घरेरि
हम् बनारी राजा रामेरि,हम् बनजारी गेणा गांरटी''[6]

उपर्युक्त गीत में बंजारा स्त्रियों का वस्त्र, आभूशण के प्रति प्रेम और अभिमान दिखाई देता है। इसके साथ-साथ वे इस गीत में स्वंय को अत्यंत ऊँचे जाति की समझती हैं। हम ब्राह्मण जाति से संबंधित हैं, हम राजा-महाराजाओं के वंशज हैं आदि को भी वे व्यक्त करती हैं।छ्त्तीसगढ़ी लोकनाट्य की परंपरा अत्यंत समृध्द और प्राचीन है। छ्त्तीसगढ़ी लोकनाट्य द्वारा मनोरंजन का काम किया जाता है, इसे ग्रामीण उत्सव में ग्रामवासियों द्वारा स्वंय प्रस्तुत किया जाता है। इसके संदर्भ में डॉ. हरिणी रानी आगर और डॉ. मार्शल रेनी आगर का कहना है कि ''अभिनय करने के लिए किसी प्रकार के रंगमंच की विशेश तैयारी करनी नहीं पड़ती। कहीं भी खुले स्थान पर एक सभा-मंड़प निर्मित कर लिया जाता है। कंबल, दरी या चटाई बिछाकर दर्शक-गण उस पर बैठ जाते हैं। सभा के मध्य रंगभूमि बना ली जाती है।''[7] छत्तीसगढ़ी लोकनाट्य को प्रस्तुत करते समय विशेश तैयारी करनी नहीं पड़तीकेवल सभा मंडप बनाकर लोकनाटय के व्दारा लोगों का मनोरंजन किया जाता है। इसमें एक ही व्यक्ति पुरूश और स्त्रियों की भूमिका अदा करता है। ढोल और करताल की ध्वनि नाटक शुरू होने के पहले ही बजने लगती है। अर्थात् इसके द्वारा वातावरण तैयार करने का काम किया जाता है।

निष्कर्षः उपर्युक्त विवेचन के पश्चात स्पष्ट होता है कि भारतीय साहित्य में लोकसंस्कृति एवं लोकजीवन का चित्रण सशक्त रूप में अभिव्यक्त हुआ है। लोकसाहित्य सभ्यता की सीमाओं के बाहर का साहित्य है। यह परंपरा से पुरानी पीढ़ी के द्वारा नयी पीढ़ी को प्राप्त होता है। इसमें अपनी अपनी जाति, कुल और परंपरा का गौरव गान होता है। उसमें अपनी-अपनी जाति के त्यौहार, उत्सव, पर्व आदि का चित्रण दिखाई देता है। लोकसाहित्य में विभिन्न प्राकृतिक आपदाओं से बचने के लिए भी गीत गाऐ जाते हैं। इसके द्वारा अपने-अपने देवताओं को याद किया जाता है। चूँकि आदिवासी अपने प्रकृति को देवता मानते हैं। महाराष्ट्र के मराठी जन पंढरपुर के विल को और जेजुरी के खंडोबा को अपना ईश्वर मानते हैं। आदिवासी, बंजारा आदि द्वारा गाये गीतों में उनके जनपद के लोकजीवन और लोकसंस्कृति का स्वाभाविक चित्रण हुआ है। संस्कार गीत से लेकर लोक पर्व गीतों तक लोकजीवन और संस्कृति विविध अंगों का विवरण उनके गीतों में दिखाई देता है। सही मात्रा में संस्कृति के रक्षक यही लोकगीत हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1.डॉ. वृषाली मांद्रेकर, भारतीय साहित्य की मानवतावादी धाराएँ, विद्या प्रकाशन,
कानपुर, प्र. सं. 2015, पृ. 74
2.डॉ. वृषाली मांद्रेकर, भारतीय साहित्य की मानवतावादी धाराएँ, विद्या प्रकाशन,
कानपुर, प्र. सं. 2015, पृ. 77
3.डॉ. पुरूषोत्तम कालभूत लोकसाहित्यः स्वरूप आणि विवेचन, विजय प्रकाशन, नागपुर प्र.सं. 2007, पृ. 165
4.डॉ. पुरूषोत्तम कालभूत लोकसाहित्यः स्वरूप आणि विवेचन, विजय प्रकाशन, नागपुर प्र.सं. 2007, पृ. 166
5.सं. विभूति मिश्र, संमेलन पत्रिका (त्रैमासिक) हिंदी साहित्य संमेलन प्रयाग, इलाहाबाद, पृ. 199
6.कर्नाटक की लोककथाएँ, अनु. प्रो, परिमला आंबेकर, अमन प्रकाशन, कानपुर, प्र.सं. 2016, पृ. 19
7.डॉ. हरिणी रानी आगर, डॉ. मार्शल रेनी आगर, लोकसाहित्यः विविध आयाम, समता प्रकाशन, कानपुर, प्र.सं. 2015, पृ. 65.

****

'गौरी' कहानी में देशभक्ति

-डॉ.वसंत माळी
विभागाध्यक्ष,हिंदी विभाग,
श्री.आ.भा.महाविद्यालय, देवगांव रंगारी
तहसिल -कन्नड, जिला-औरंगाबाद (महाराष्ट्र)

भूमिकाः- 'गौरी' हिंदी की लोकप्रिय कहानी है। इस कहानी की लेखिका सुभद्राकुमारी चौहान है। प्रस्तुत कहानी के माध्यम से लेखिका ने भारत के साधारणी-सी लड़की के द्वारा भारतीय नारी के गौरवशाली चरित्र को उजागर किया है।प्रस्तुत कहानी की लेखिका सुभद्रा कुमारी चौहान देशभक्त रचनाकार है। इन्होंने स्वयं आज़ादी की लड़ाई में अपना योगदान दिया था। उनकी कहानियाँ देशभक्ति से परिपूर्ण है। समाज के लोगों में मन में देशभक्ति की भावना जागृत करना ही उनका मूल उदेश्य रहा है।

'गौरी' नामक कहानी में एक ऐसी युवती का चित्रण किया है जो अपने माता-पिता की विवशता का देखकर किसी धनवान युवक की पत्नी बनने की बजाय देशभक्त,त्यागी, सीताराम नामक के दो बच्चों की माँ बनना पसंद करती है।

बीज शब्द :-प्रस्तुत 'गौरी' कहानी के माध्यम से सुभद्रा कुमारी चौहान ने एक लड़की के अनोखी देशभक्ति का बड़ा ही मार्मिक वर्णन किया है। प्रस्तुत कहानी की नायिका गौरी का निर्भीक स्वभाव दृढ़ निश्चय तथा महान बलिदान भारतीय समाज व्यवस्था पर करारा व्यंग है।

सुभद्राकुमारी चौहान का व्यक्तित्व:

सुभद्राकुमारी चौहान हिंदी की श्रेष्ठ कवयित्री और लेखिका थी। सुभद्रा जी का जन्म सन १९०४ में इलाहाबाद के पास निहालपुर गॉव में एक सम्पन्न परिवार में हुआ। उनकी शिक्षा-दीक्षा इलाहाबाद में हुई। उनके पिता ठाकुर रामनाथ सिंह शिक्षा के प्रेमी थे। सुभद्रा जी को बचपन से ही काव्य-ग्रंथों से विशेष प्रेम, लगाव था। आयु के नव वर्श में ही उनकी पहली कविता प्रकाशित हुई थी। सन १९१३ में उनकी पहली कविता 'मर्यादा' नामक पत्रिका में प्रकाशित हुई। सुभद्रा जी का विवाह खंडवा के निवासी लक्ष्मणसिंह के साथ हुआ। विवाह के बाद वे जबलपुर में रही। पारिवारिक व्यस्तता के बाबजूद भी आप साहित्य और राजनीति में सक्रिय रही। विवाह के बाद सुभद्रा जी ने अपने पति के साथ सक्रिय होकर महात्मा गांधीजी के आंदोलन में हिस्सा लिया।

सुभद्रा कुमारी चौहान स्वतंत्रता आंदोलन में महात्मा गांधी जी के साथ भाग लेनेवाली प्रथम महिला थी। सुभद्रा जी की कविताएं राष्ट्रप्रेम से ओतप्रोत थी। उनकी कविताओं में ''वीरों का कैसा हो बसंत'', 'राखी की चुनौती और विदा' महत्वपूर्ण है। आपका प्रथम काव्यसंग्रह 'मुकुल' १९३० में प्रकाशित हुआ।'झॉसी की रानी' आपकी सबसे लोकप्रिय रचना है। इस काव्य ने उन्हें सफलता के शिखर पर पहुँचा दिया। यह काव्य आजादी के समय सेना में जोश भरनेका काम करता था। उनकी कविताएं देशभक्ति से ओतप्रोत है। इसके अलावा 'नीम','आराधना','उपेक्षा','कोयल' आपकी चर्चित रचना है।

सुभद्रा जी राष्ट्रीय चेतना की एक सजग कवयित्री रही है। आजादी की लड़ाई में अनेक बार आपको जेल भी जाना पडा। इन सब बातों की अनुभूतियों को आपने कहानी के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। उनकी चर्चित कहानियाँ है 'बिखरे मोती','उन्मादिनी','सीधे-साधे चित्र'।

'गौरी' कहानी में अनोखी देशक्ति:

प्रस्तुत 'गौरी' नामक कहानी में लेखिका ने एक युवती के अनोखी देशभक्ति का मन को स्पर्श करने वाला चित्रण किया है।

'गौरी' इस कहानी की नायिका है। वह राधाकृष्ण और कुन्ती की अकेली संतान है। उसके पिता उसका विवाह किसी उचित सज्जन से करना चाहते है। पर दहेज के कारण उचित वर मिलना संभव नहीं हो पाता। जिसके माता-पिता चिंतित है। अपने माता-पिता की ऐसी अवस्था देखकर वह भी व्याकुल हो जाती है। लेखिका ने इस कहानी में नारी के सहज, सरल, संकोची तथा लज्जीत स्वभाव का चित्रण किया है।

सिमोन द बुवा ने ठीक ही कहा है,''स्त्री जन्मती नहीं उसे बनाया जाता है।'',बचपन से ही उसे कहा जाता है जादा हँसना

नहीं, लजाना, संकोच करना। बचपन से दबायी गयी स्त्री बड़ी होने के बाद भी खुलकर बात नहीं कर सकती। खुलकर अपने विचार नहीं रख सकती। उसे घर में अधिक बोलने का अधिकार ही नहीं होता। हमेशा उसके भविष्य का फैसला माता-पिता भाई या घर के वृध्द ही करते है।[1]

'गौरी' को भी अपना जीवन साथी तय करने का अधिकार नही है। वह विवाह को अधिक महत्व नही देती। मगर अपने माता-पिता के समक्ष वह खामोश हो जाती है।

गौरी के लिए सीताराम नामक व्यक्ति का रिश्ता आता है। सीताराम जी एक देशभक्त है। उन्हें दो लड़के भी है। वे अपने दोनों बच्चों की देखभाल के लिए दूसरी शादी करना चाहते है। व स्पष्ट रूपसे गौरी के पिता से कहते कि, ''साहब! मैं लड़की देखने न आऊँगा।'' [2]

सीमाराम जी के जब गौरी को देखने के लिए आते है तब साथ में दोनो लड़के भी आते है। दोनों लड़के गौरी को देखकर प्रसन्न हो जाते है। तब एक छोटे बच्चें ने उसका ऑचल पकड़कर खींचते हुए पूछा ''क्या तुम अमारी मॉ हो ?''[3]

सीताराम जी व्यक्तित्व उनका देशप्रेम देखकर गौरी के मन में उनके प्रति आदर तथा स्नेह की भावना जागृत हो जाती है। उसके मन में देश के प्रति अनायास देशभक्ति जागृत होने लगी। लेकिन गौरी की मॉ यह रिश्ता मना करती है।

उसके बाद गौरी के पिता उसके लिए नायब तहसीलदार को चुनते है। लेकिन गौरी इस रिश्तें से खुश नही है। वह चाहकर भी अपने माता-पिता से खुलकर बात नही कर पाती।

कहानी के अंत में नायब तहसीलदार के पिता का देहान्त हो जाता है। इस मुत्यु के कारण विवाह साल भर को रोखा गया।इसी बीच सत्याग्रह आंदोलन की लहरे सारे देश में बड़ी तीव्र गति से फैलगयी। जिसमें एक दिन राजद्रोह के अपराध में सीताराम जी गिरप्तार हो गये। जिसके कारण उन्हें एक साल का सपरिश्रम कारावास हुआ।

इस समाचार को पढ़कर गौरी कुछ क्षण तक स्तब्ध-सी खडी रही। उसके बाद उसने अपना कर्तव्य निश्चित कर लिया। वह सीतारामजी के दोनों बच्चों की देखभाल करने के लिए कानपुर जाती है।

जब सीतारामजी सजा पूरी करके घर लौटे। तब अपने ऑगन में गौरी को देखकर चकित-से हो गए। गौरी ने झुककर उनकी पादधुलि माथे से लगा ली।

उद्देश्य :

लेखिका सुभद्राकुमारी जी की 'गौरी' कहानी एक आदर्श कहानी है। इस कहानी में देशभक्ती का अनोखा वर्णन है।

प्रस्तुत कहानी के माध्यम से लेखिकाने गौरी नामक एक साधारण-सी लड़की के अनोखी देशभक्ती का वर्णन किया है। इस कहानी के माध्यम से लेखिकाने भारतीय नारी की देशभक्ती, साहसी रूप को उजागर किया है।

गौरी की अनोखी देशभक्ती समाज के लिए एक आदर्श है। इस कहानी के द्वारा समाज में लोगों के मन में देश के प्रति निष्ठा, प्रेम, एकात्मता तथा राष्ट्रीयता की भावना जागृत हो।गौरी की देशभक्ति देखकर पाठक बहुत चकित तथा प्रसन्न हो जाते है।

निष्कर्ष :

प्रस्तुत 'गौरी' नामक कहानी में देशभक्ति का बड़ा अनोखा चित्रण मिलता है। एक सामान्य परिवार की लड़की अपने राष्ट्रहित के लिए कैसा त्याग करती है उसका बड़ा यथार्थ वर्णन मिलता है। 'गौरी' केवल एक लड़की नहीं है बल्कि वह अपने देश का प्रतिनिधित्व करनेवाली एक साहसी, निडर, देशप्रेम से ओतप्रोत वाली लीडर है।

संदर्भ :

1. हिंदी कहानी आदि से आज तक - डॉ. सुकुमार भंडारे - अमन प्रकाशन कानपूर, पृष्ठ 125
2. कथासंसार - संपा- डॉ. माधव सोनटक्के - वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली - पृष्ठ, 28
3. वही- पृष्ठ, 29

****

दिनकर के काव्य में राष्ट्रीय भावना का स्वर

डॉ. अन्सा ए
सहायक आचार्य, हिंदी विभाग,
सरकारी ब्रेण्णन कॉलेज, तलश्शेरी कण्णूर, केरल- ६७० १०६

राष्ट्रीय भावना प्राचीन काल से प्रवाहित होती हुई एक प्रमुख धारा है जिसके मूल में संस्कृति, भाषा एवं राजनीतिक विचारधारा है। राष्ट्रीयता का स्वरुप सदा एक सामान नहीं रहता। यह समयानुसार एवं परिस्थिति के अनुरूप परिवर्तित होता रहता है। धार्मिकता, राजनीति, सामाजिक सुरक्षा और आर्थिकता ही राष्ट्रीयता का प्राण है। भारत में राष्ट्रीयता का स्त्रोत वेदकालीन साहित्य से लेकर आधुनिक साहित्य तक निर्बाध गति से निरंतर प्रवाहित होता आ रहा है। इसकी गति कभी मंद तो कभी तीव्र दिखाई देती है।कालक्रम में वह अवश्य तब्दील होता रहा है, किन्तु उसका मूल स्वरुप कभी भी धूमिल न होने पाया है।डॉ. अवध नारायण त्रिपाठी के अनुसार-" राष्ट्रीयता का अर्थ किसी देश की भौगोलिक सीमा के भीतर निर्वासित जन समूह की राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक चेतना के समन्वित रूप से है। राष्ट्रीयता एक ऐसी भावना है, जो देश की जनता का संगठित रखती है, गुलामी के दिनों में स्वतंत्रता की चेतना फूंकती है, मुक्ति-संग्राम में मर-मिटने का आवाहन करती है तथा रचनाकारों को राष्ट्र, जाति और धर्म की रक्षा के लिए आन्दोलन जगाने और राष्ट्र पर समर्पण की भावना भरने वाली रचनाएँ लिखने का प्रोत्साहन भी देती है। "[१] भारत में राष्ट्रीय भावना के स्वर को मुखरित करने तथा अभिव्यक्ति प्रदान करने हेतु विभिन्न भारतीय भाषाओँ के कवियों ने अपने देश की विशाल परम्पराओं का व्यापक राष्ट्रीय दृष्टिकोण प्रस्तुत कर लोक मंगल की भावना से काव्य सृजन किया है। इनमें हिंदी भाषी कवि रामधारी सिंह दिनकर अग्रिम पंक्ति के अन्यतम हस्ताक्षर है। दिनकर ने युगांतरकारी बनकर अपने कवि कर्म से मातृभूमि के ऋण को अदा करने में संलग्न थे।उनके काव्य में राष्ट्रीय भावना का स्वर वैसा ही है जैसा कि राजनीति के क्षेत्र में क्रांतिकारियों का था। आपके काव्य में राष्ट्रीय भावना के अंतर्गत मातृभूमि के प्रति प्रेम चेतना, राष्ट्रीय एकात्मकता की चेतना, क्रांति की चेतना, राष्ट्र के लिए सर्वस्व त्याग व समर्पण की चेतना एवं सांस्कृतिक चेतना का व्यापक परिदृश्य दिखाई देता है।

मातृभूमि के प्रति प्रेम राष्ट्रीय काव्यधारा की एक प्रमुख प्रवृत्ति रही है।दिनकर की अधिकांश कविताएं इसका वहन करने वाली हैं। आपने 'हिमालय के प्रति' शीर्षक कविता में हिमालय को अपनी समाधि से जगाने और देश की विपन्नावस्था पर दृष्टिपात करने की विनम्र प्रार्थना किया है। कवि हिमालय को देश के अतीत गौरव की याद दिलाते हुए, तत्कालीन आवश्यकता के अनुरूप अर्जुन और भीम के होने की मंगल कामना करता है। कवि का संकेत हैं-

"रे रोक युधिष्ठिर को न यहाँ, जाने दो उनको स्वर्ग धीर,
पर, फिरा हमें गांडीव-गदा लौटा दे अर्जुन-भीम वीर|"[२]

दिनकर ने ब्रह्म से भी अधिक महत्व मातृभूमि के प्रति ममता व लगाव को दिया है। आपका कहना है कि जो अपनी देश या मातृभूमि से प्रेम व ममता रखते हैं वे ईश्वरीय साधना में ही सफल व सार्थक होते हैं-

" जिनको न तटी से प्यार उन्हें अम्बर में कब आधार मिला?
यह कठिन साधना-भूमि, बंधू मिट्टी को किए प्रणाम चलो।"[३]

आपकी 'किसका नमन करूँ मैं' शीर्षक कविता में राष्ट्र प्रेम और मानवीयता एक साथ दर्शनीय है। कविता के कुछ प्रकरण देखिए-

"जहाँ कहीं एकता अखंडित जहाँ प्रेम का स्वर है;
देश-देश में वहाँ खड़ा भारत जीवित भास्वर है|
निखिल विश्व को, जन्मभूमि-वदन को नमन करूँ।"[४]

आपकी मातृ-वंदना, बारदोली-वन्दना, विजय-गायन, आमुख, अरुणोदय, विजयी पटेल, वैशाली, विनय, आश्वासन, व्योम-कुंजों की परी अयि कल्पने शीर्षकीय कविताएँ भी मातृ-भूमि के प्रति प्रेम व लगाव जगाने वाली हैं।दिनकर परतंत्रता में जन्मे और पले हैं इसलिए कि उन्होंने राष्ट्रीय एकता की ज़रुरत को महत्वपूर्ण माना है। उनकी कविता में राष्ट्रीय एकता सम्बन्धी कई सन्दर्भ मिलते हैं।आपने भारत वर्ष की सांप्रदायिक समस्या के प्रति अपनी कविताओं में आक्रोश व्यक्त किया है।मुस्लिम-लीग के नेता मुहम्मद अली जिन्ना से कांग्रेस के अध्यक्ष ने समझौते के लिए जो बातें की थीं उनके असफल हो जाने पर कवि ने 'तकदीर का बंटवारा' नामक कविता लिखी थी।उस समय संगठित और असंगठित रूप में हिन्दू-मुसलमान एक-दूसरे के खून के प्यासे थे| पराधीनता की बेड़ियों से जकडी हुई, मानव-राशी की तकदीर का बँटवारा होते देख कवि का मन क्रोध और लज्जा से भर उठा। कवि का संकेत हैं-

"बेबसी में काँपकर रोया हृदय, शाप-सी आहें गरम आईं
मुझे!माफ करना, जन्म लेकर गोद में,हिन्द की मिट्टी शरम आई मुझे!"[५]

आपकी कविताओं में से विजय-गायन, बारदोली में, विजयी पटेल, कवि से, वीर, समर शेष है, प्रभाती, दिगम्बरि, असमय आह्वान, उमंग, लोहे के मर्द आदि राष्ट्रीय एकात्मकता की चेतना से ओतप्रोत है।

क्रांति एक परिवर्तन सापेक्ष प्रक्रिया है। जब राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक क्षेत्र में असंतुलन पैदा होता है तब सहज ही मनुष्य के मन में क्रांति या विद्रोह की भावना जन्म लेती है। दिनकर ने स्वतंत्रता पूर्व भारत की

दुरवस्था पर मन कलुषित होकर अपनी कविताओं के ज़रिए देशवासियों में क्रांति की चेतना जगाने का भरसक प्रयत्न की है।आपने क्रांति चेतना के अंतर्गत आर्थिक, सामाजिक व नारी उत्थान की भावना को उजागर की है। गरीबों का शोषण प्राचीन काल से होता आ रहा है।शोषक और शोषित का यह संघर्ष पूँजीवादी व्यवस्था का द्योतक है। आपकी 'हाहाकार' शीर्षक कविता इस तथ्य को द्योतित करती है। प्रस्तुत कविता के निम्नवर्गीय बालक दूध की एक-एक बूँद के लिए दिन-रात अपनी कब्रों में तड़पते रहते हैं तो दूसरे वर्ग ने अपने कुत्ते को दूधों से नहलाये जाते हैं। मंदिर में बैठे हुए तथाकथित देवता इस वैषम्य के सन्दर्भ में चुप्पी हैं और ये देव गण कटु व्यंग्य के पात्र भी बन गए हैं। इसे शब्दांकित करते हैं निम्न चरण-

"कब्र-कब्र में अबुध बालकों की भूखी हड्डी रोती है;
"दूध, दूध!" की कदम-कदम पर सारी रात सदा होती है।
वे भी यहीं, दूध से जो अपने श्वानों को नहलाते हैं!
ये बच्चे भी यहीं, कब्र में "दूध-दूध"! जो चिल्लात्ते हैं!
"दूध-दूध!" ओ वत्स! मंदिरों में बहरे पाषाण यहाँ हैं;
"दूध-दूध!" तारे, बोलो, इन बच्चों के भगवान कहाँ है।"[६]

समाज में कल और आज भी किसानों की जिंदगानी बदतर से बदतरीन होती हुई नज़र आने लगती है| कवि ने कृषकों की दीन-हीन एवं असहायता का करूण चित्र 'रेणुका' की 'कविता की पुकार' कविता में इस प्रकार खींचा है कि-

"शिशु मचलेंगे दूध देख, जननी उनको बहलायेगी,
मैं फाड़ूँगा हृदय, लाज से आँख नहीं रो पायेगी।
इतने पर भी धन-पतियों की उन पर होगी मार,
तब मैं बरसूँगी बन बेबस के आँसू सुकुमार।"[७]

आपने कलिंग विजय, पुकार, आग की भीख, विपथगा, तंगी, नीम के पत्ते, भीख, दिल्ली, नील कुसुम शीर्षकीय कविताओं में जनता की आर्थिक विपन्नता व अभावग्रस्तताकी दर्द भरी तस्वीर उकेरी गयी है।

दिनकर अपने समय के सचेत, जागरूक व युगधर्मी कवि है। आपने स्वतंत्रता पूर्व और बाद के भारतीय समाज में जो कुछ खामियाँ, अत्याचार,अनीतियाँ व ऊँच-नीच का भाव व्याप्त थीं उन सब का डटकर विरोध किया है। कवि दीन-दलित श्रमिकों तथा कृषकों का पक्षधर है और वे इनका उद्धार करना चाहता है| पूँजीपतियों के प्रति उनके मन में गहन क्षोभ है| वे कह उठते हैं-

"पिलाने को कहाँ से रक्त लायें दानव को?
नहीं क्या स्वत्व है प्रतिशोध का हम मानवों को?
ज़रा तू बोल तो, सारी धरा हम फूँक देंगे;
पड़ा जो पंथ में गिरी, कर उसे दो टूक देंगे|"[८]

आपका 'कुरुक्षेत्र' काव्य का सृजन द्वितीय विश्वयुद्ध की समस्या को लेकर हुआ है जो युद्ध जैसी वैश्विक समस्या, उसके कारण एवंसमाधान का परिचय कराता है। चीनी आक्रमण ने भारत के मस्तक को विश्व में झुका दिया है, इस प्रश्न को लेकर 'परशुराम की प्रतीक्षा' जैसे अमर कृति की सर्जना हुई है। इनमें सामाजिक वैषम्य, आर्थिक शोषण एवं राजनीतिक दाव पेंच सब कहीं सुनाई पड़ती हैं।

कवि ने नारी का योगदान प्रत्येक क्षेत्र में उचित माना है| आपका कहना है कि उनमें पुराने ज़माने से ही पुरुष के कंधे से कन्धा मिलाकर चलने की ताकत है। आपने भारतीय नारी की अप्रतिम छवि का बखान करते हुए लिखा है-

"जब उठती हुंकार युद्ध ज्वाला है
चंडिका काना के मुंडमाला देती है
रथ के चक्के में भुजा डाल देती है।"[९]

मातृभूमि के लिए अपना सर्वस्व समर्पण करने के लिए प्रेरित दिनकर की अत्यंत प्रभावी कविता है 'असमय आह्वान'।ओज गुण से भरी हुई यह कविता देश भक्तों या वीर युवकों को उत्प्रेरित करने में अत्यधिक सफल हुई है। कवितांश हैं-

"फेंकता हूँ, लो, तोड़-मरोड़ अरी निष्ठुरे! बीन के तार;
उठा चाँदी का उज्जवल शंख फूँकता हूँ भैरव-हूँकार
नहीं जीते-जी सकता देख विश्व में झुका तुम्हारा भाल;
वेदना-मधु का भी कर पान आज उगलूँगा गरल कराल।"[१०]

प्रस्तुत कविता भारत के वीर जवानों को भैरव-हूँकार फूंककर शत्रुओं को तोड़-मरोड़ने का आह्वान देती है।

दिनकर की 'हूँकार' की कविताओं में क्रांति की चेतना पूरे निखर के साथ व्यक्त हुई हैं। संकलन की जनसत्ता, वीर, शहीद, त्यागमूर्ति, अब, शहीद अशफाक के प्रति, धधक होली के, विधवा, शहीदों के नाम पर, जवानियाँ, मूक बलिदान, तपस्या, सिपाही, स्वर्ग दहन, भीख, ध्वजा वन्दना और वीर वन्दना जैसी कविताएं तत्कालीन स्थिति में वीर युवकों के मन में त्याग, बलिदान एवं आत्म समर्पण की अमर भावना उत्पन्न करने में बहुत ही सक्षम निकले हैं। संस्कृति किसी भी देश और जाति की शाश्वत संपत्ति होती है। सच्चा राष्ट्र-प्रेमी कवि अपनी देश की सभ्यता, संस्कृति, उसके उज्जवल अतीत व स्वर्णिम इतिहास से प्रेरणा पाकर इसे अपनी रचनाओं में पिरोकर उसे प्राणवान व जीवंत बना देते हैं। राष्ट्र कवि दिनकर भी इसे अछूता न रहा। उनके मन में भारतीय संस्कृति व सभ्यता के प्रति

अटूट आस्था, अगाध प्रेम व श्रद्धा भाव है।उनकी 'हिमालय के प्रति' शीर्षक कविता में सांस्कृतिक चेतना के दर्शन सर्वत्र विद्यमान है।कवि गत संस्कृति का स्मरण कर अतीत और वर्तमान के असंतुलन की ओर संकेत करते हुए देशवासियों में राष्ट्र भक्ति जगाना चाहते हैं।कवि हिमालय से अपनी समाधि त्यागने की प्रार्थना करता है-

"मेरे नगपति! मेरे विशाल! साकार, दिव्य, गौरव विराट,
पौरुष के पुंजीभूत ज्वाल! मेरी जननी के हिम किरी
मेरे भारत के दिव्य भाल! मेरे नगपति! मेरे विशाल!
तू मौन त्याग, कर सिंहनाद, रे तपी! आज तप का न काल।
नव-युग-शंख ध्वनि जगा रही, तू जाग, जाग, मेरे विशाल।"[११]

बोधिसत्व, मिथिला, पाटली पुत्र की गंगा से, कस्मै देवाय, महात्मा गांधी, आलोक धन्वा, बापू, वसंत के नाम पर जैसी कविताओं में कवि ने भारत के अतीतकालीन नगरों, शासकों, धर्माचार्यों, शहीदों एवं शूर वीरों के स्मरण द्वारा राष्ट्रीय भावना को उद्दीप्त किया है।आपकी कविताओं में रश्मिरथी के कर्ण , कुरुक्षेत्र के भीष्म और परशुराम की प्रतीक्षा के परशुराम क्रमश: मानवीय मूल्यों के संरक्षक, क्रन्तिकारी चेतना के वाहक एवं अमर, अमानुषिक व तेजस्वी व्यक्तित्व के उदात्त प्रतीक बनकर हमारे सम्मुख उपस्थित है।

निष्कर्षत: भारतीय काव्य के परिप्रेक्ष्य में दिनकर राष्ट्रीय भावना के अप्रतिम कवि हैं। इनकी राष्ट्रीय भावना के विश्लेषण करने के उपरान्त इस तथ्य पर पहुँचते हैं कि दिनकर के काव्य में परिलक्षित होने वाली राष्ट्रीयता की प्रेरणा उनके पूर्ववर्ती कवि भारतेंदु, मैथिली शरण गुप्त आदि से ग्रहण की है।फर्क केवल इतना ही है कि दिनकर के काव्य में यह राष्ट्रीय भावना सर्वाधिक प्रखर रूप में दिखाई देती है। मैथिली शरण गुप्त के पश्चात राष्ट्र की भावनाओं को वाणी देने वाला सर्वाधिक शक्तिशाली कवि रामधारी सिंह दिनकर ही है।वे युग स्रष्टा बनकर अपने कवि कर्म से अपनी मातृभूमि के ऋण को समर्पित करने में सदैव तल्लीन व व्यग्र रहे थे। इनकी कृतियों में भारतीय जनता को स्वतंत्रता के लिए मर-मिटने की भावना को वाणी मिली है, बलिदान की चेतना को नवीन चेतना मिली है। अपनी देश के लिए शहीद होने वाले देश भक्तों के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करना ही इनके काव्य का मुख्य प्रयोजन है। देश के सुप्त वीरों को जगाने के साथ-साथ पराधीनता एवं शोषण से मुक्ति दिलाने के लिए ही आपने क्रांति गीतों की सर्जना की है। उनकी राष्ट्रीय चेतना भारतीय सभ्यता, संस्कृति व इतिहास के सन्दर्भों से समन्वित और अतीत शान व गौरव से निस्सृत होकर वर्तमान राष्ट्रीयता की समस्यों का कोई न कोई हल ढूँढ निकालने में तत्पर रही है। आपकी राष्ट्रीय भावना का स्वर राष्ट्रीयता का पाश तोड़कर महामानवता का संस्पर्श करती है| इस तरह राष्ट्र कवि दिनकर की राष्ट्रीय भावना में केवल भारत ही नहीं अपितु समस्त विश्व का कल्याण समाया हुआ है। वस्तुतः नि:संकोच कहा जा सकता है कि राष्ट्रीय भावना के स्वर पर जितना वैविध्य और सशक्त निर्वाह दिनकर के काव्य में मिलता है उतना अन्यत्र दुर्लभ है।

सन्दर्भ संकेत :

1. *संपा. प्रतापचंद जैसवाल- राष्ट्र कवि दिनकर और उनकी काव्य साधना, पृ. सं. ४१*
2. *संपा. नन्दकिशोर नवल, तरुण कुमार- दिनकर रचनावली, रेणुका, हिमालय के प्रति , दिनकर , पृ. सं. ८२*
3. *वही, द्वन्द्वीत, दिनकर, पृ. सं. ६६*
4. *वही, नील कुसुम, किसको नमन करूँ मैं, दिनकर, पृ. सं. २९३*
5. *वही, हुँकार, तकदीर का बँटवारा, दिनकर, पृ. सं. ११०*
6. *वही, हुँकार, हाहाकार, दिनकर, पृ. सं. १०९-११०*
7. *वही, रेणुका, कविता की पुकार, दिनकर, पृ. सं. ८५*
8. *वही, हुँकार, दिगम्बरि!, दिनकर, पृ. सं. १२१*
9. *वही, परशुराम की प्रतीक्षा, दिनकर , पृ. सं. १९*
10. *वही,हुँकार, असमय आह्वान, दिनकर, पृ. सं. १२८*
11. *वही, रेणुका, हिमालय के प्रति, दिनकर, पृ. सं. ८०-८३*

****

भारत विभाजन की त्रासदी एवं दलित विमर्श

-सुकांत सुमन
शोधार्थी,
अम्बेडकर विश्वविद्यालय,दिल्ली

भारत विभाजन, भारतीय उप-महाद्वीप की एक भयानक त्रासदी थी जिसने सभी धर्म, जाति, वर्ग आदि के लोगों को कई स्तरों पर प्रभावित किया है। इस भीषण घटना के इतने आयाम हैं कि इतने साल बीत जाने के बाद भी इनके प्रभावों का समूचित अध्ययन नहीं हो पाया है। यूँ तो विभाजन संबंधी अध्ययन में मुख्यतः सांप्रदायिक हिंसा, विस्थापन, यौन हिंसा की घटनाएँ हैं, परंतु इन सबके बीच और भी चीजें हैं जिन पर इतिहास में पर्याप्त चर्चा नहीं हुई है या यूँ भी कह सकते हैं कि उसे काफी समय तक अनदेखा किया जाता रहा है। इतिहास में भारत विभाजन को अक्सर 'हिंदू-मुस्लिम' अथवा 'मुस्लिम- सिख' संघर्ष के रूप में देखा गया है। इस घटना पर जो भी अध्ययन हुए हैं उनमें यह दिखाया गया है कि कैसे विभाजन से जुड़ी राजनीति और उस दौरान हुई हिंसा और पलायन की घटनाओं ने भारत और पाकिस्तान में रह रहे हिंदूओं, मुस्लिमों और सिखों के जन-जीवन को प्रभावित किया है। परंतु इस तरह के अध्ययनों ने उन धार्मिक और राजनीतिक समूहों के अनुभवों को जाने-अनजाने नजरअंदाज भी किया है जो 'हिंदू-मुस्लिम बाइनरी' में अच्छी तरह से फिट नहीं होते हैं। उदाहरण के लिए, जब हम भारत विभाजन को 'हिंदू-मुस्लिम संघर्ष' के रूप में पढ़ते हैं तो हम 'हिंदू' का अर्थ पूरे हिंदू समाज से लेते हैं जो वास्तव में कई जातियों-उपजातियों में बँटी हुई है। इतिहास और बहुत हद तक साहित्य में भी, जब इन संघर्षों और उनके अनुभवों को पढ़ते हैं, तो यही मानते हैं कि ये अनुभव पूरे हिंदू समाज के हैं और इस भयानक त्रासदी को 'हिंदू समाज' ने झेला है। परंतु बाद के कई इतिहासकारों और विभाजन को प्रत्यक्ष रूप से देखने और झेलने वाले लोगों के साक्षात्कारों में भी यह देखा गया कि ये अनुभव और पीड़ाएँ दरअसल सवर्ण हिंदू समाज के ज्यादा हैं, वहीं इस तरह की सांप्रदायिक हिंसा में भी सवर्ण हिंदू समाज की ही भागीदारी ज्यादा रही है। चूँकि हमारे देश की सामाजिक व्यवस्था ऐसी है जिसमें हमेशा से सवर्ण जातियों का दबदबा रहा है अतः उनके संघर्षों और अनुभवों को ही पूरे हिंदू समाज का प्रतिनिधित्व मिलता रहा है।

हिंदू धर्म के अंतर्गत रहकर भी दलित समाज पर विभाजन का अलग प्रभाव कैसे पड़ा था, इसका अध्ययन किया जाना बेहद जरूरी है। उदाहरण के लिए उर्वशी बुटालिया द्वारा लिए गए एक साक्षात्कार में जब एक दलित लड़की से विभाजन के दौरान का अनुभव पूछा गया तो उनके जवाब वास्तव में चौंकाने वाले थे- "किसी ने तुम्हें नुकसान पहुँचाने की कोशिश नहीं की, हमने पूछा। लेकिन वह बोली- "हमारे माँ-बाप बड़े चिंतित थे, वे हमें रोकने की कोशिश करते रहे, कहते रहे कि हम मारी जाएँगी, लोग हमें मुसलमान बनाने के लिए उठा ले जाएंगे। लेकिन हमने सोचा, हमें कौन ले जाने आ रहा है, कौन हमें मारने जा रहा है? हम खुद को हरिजन कहते हैं। हिंदू, ईसाई कोई हमें नहीं ले जा सकता।"इसी प्रकार हिंद-पाक विभाजन के दौरान एक अन्य दलित महिला माया की कहानी भी इस बात को रेखांकित करती है कि उस समय दलित अपनी अस्मिता को 'हिंदू' पहचान से अलग करके देख रहे थे- ''सरहदें जब कुछ दिनों के लिए खोली गई थी, तो अपनी मुस्लिम सहेली की चिंता में माया की माँ उसे खोजने पाकिस्तान गई थी। वहाँ पहुँच कर वह अपनी सभी मुस्लिम मित्रों से मिली जो माया के अनुसार, उसे देखकर काफी खुश थीं। वे क्यों न खुश होतीं, "लड़ाई तो हिंदुओं और मुस्लिमों के बीच थी, हम मुस्लिमों से नहीं लड़े थे। उसका हमसे कोई लेना-देना नहीं था।.... वहाँ हमें कोई खतरा नहीं था, क्योंकि हम हरिजन हैं। पाकिस्तान बना था या हिंदुस्तान बना था, इससे हमें कोई फर्क नहीं पड़ा।" इस प्रकार की घटनाएं यह केवल व्यक्तिगत स्तर के अनुभव भर नहीं थे। मार्च १९४७ में रावलपिंडी दंगों के कुछ ही दिन बाद अहल इंडिया शेड्युल्ड कास्ट फेडरेशन के उस समय के महासचिव पी.ए.राजभोज ने उस इलाके का दौरा किया तो उन्होंने कहा- "हर जगह मुझे अपने दौरे में यह जानकर खुशी हुई कि अनुसूचित जाति के लोगों पर दंगों का कोई असर नहीं हुआ। अगर किसी जगह किसी व्यक्ति को कोई नुकसान हुआ तो इसलिए कि उसे भूल से हिन्दू वर्ण समझ लिया गया था। अन्यथा जब भी किसी ने दंगाईयों को बताया कि वह न तो हिंदू है न मुसलमान तो उसे बिना छुए छोड़ दिया गया।"

वास्तव में दलितों की आवाज और उनकी समस्याएं जो विभाजन के दौरान कई मायनों में सवर्ण जातियों से अलग थीं उन पर अलग से ध्यान नहीं दिया गया। आजादी और विभाजन से पूर्व ही भारतीय राजनीति और सामाजिक व्यवस्था में दलितों को अपनी पहचान और हक के लिए जो संघर्ष करना पड़ा वही संघर्ष उन्हें ऐतिहासिक दस्तावेजों में अपनी उपस्थिति दर्ज कराने के लिए भी करना पड़ा है। भारत विभाजन की घटना में जाति की अनुपस्थिति को ज्ञानेन्द्र पाण्डेय, रविंदर कौर, रामनारायण रावत और शेखर बंदोपाध्याय ने अपने इतिहास-लेखन में रेखांकित किया है। इन इतिहासकारों ने अपने अध्ययन में यह दिखाया है कि कैसे विभाजन के पूरे नैरेशन में जाति का मुद्दा गायब है, इसमें ऊँची जाति के लोगों के विचारों को तो दिखाया गया है, परंतु दलितों द्वारा महसूस किए गए विस्थापन के अनुभवों को उसमें जगह नहीं मिली है। उर्वशी बुटालिया विभाजन संबंधी इतिहास लेखन में दलितों के अनुभवों को पर्याप्त स्थान नहीं दिए जाने पर लिखती हैं- "बँटवारे की हिंसा में हरिजन, कुछ हद तक अदृश्य रह गए थे। बँटवारे के इतिहास में मुसलमानों, हिंदुओं और सिखों की अत्यधिक उपस्थिति ने यह सुनिश्चित करने का काम किया था कि बँटवारे को देखने वाले लोग किसी अन्य 'पहचान' को न देखें।"इसी क्रम में इतिहासकार शेखर बंद्योपाध्याय लिखते हैं- "सत्ता के हस्तांतरण का मुख्य जोर जाति की राजनीति को अप्रासंगिक करके उसे सामाजिक और धार्मिक क्षेत्र में धकेलने की एक प्रक्रिया में थी। उनके विचार में, इस प्रक्रिया ने दलितों और बाकि अल्पसंख्यकों को बहुत प्रभावित किया जो राजनीतिक रूप से उनके धर्म द्वारा परिभाषित नहीं थे।"

भारत विभाजन विशुद्ध रूप से एक राजनैतिक घटना थी जिसका सामाजिक प्रभाव भी काफी गहरा रहा है। इस संदर्भ में अगर हम विभाजन-पूर्व दलितों की राजनैतिक और सामाजिक पृष्ठभूमि पर नजर डालें तो विभाजन की घटना में जाति की अनुपस्थिति के संदर्भ को समझा जा सकता है। सन् १९३१ में लंदन में दूसरा गोलमेज सम्मेलन आयोजित हुआ जिसमें 'कम्युनल अवार्ड' की घोषणा की गई।इसके तहत बाबासाहेब द्वारा उठाई गयी राजनीतिक प्रतिनिधित्व की माँग को मानते हुए दलित वर्ग को दो वोटों का अधिकार दिया गया। परंतु गांधी जी इस तरह की व्यवस्था को हिंदू समाज की एकता के लिए खतरा मानकर इसके विरोध में आमरन अनशन पर बैठ गए।अंततः २४ सितम्बर १९३२ को पूणे में गाँधी जी और डॉ. आम्बेडकर के बीच समझौता हुआ, जिसे आज 'पूना पैक्ट' के नाम से जाना जाता है। इसके अनुसार, डॉ. आम्बेडकर को कम्युनल अवार्ड में मिले पृथक निर्वाचन के अधिकार को छोड़ना पड़ा तथा संयुक्त निर्वाचन पद्धति को स्वीकार करना पड़ा। इस तरह एक ओर जहाँ जिन्ना और मुस्लिम लीग के अन्य नेता हिंदूओं की तुलना में भिन्न सभ्यता, संस्कृति और इतिहास का हवाला देकर

मुसलमानों के लिए एक अलग राष्ट्र की मांग कर रहे थे, वहीं दूसरी ओर डह. अंबेडकर और दलित समाज को पूना पैक्ट के रूप में हिंदू समाज में रहने की एक बड़ी 'कीमत' चुकानी पड़ रही थी। यहां एक और बात उल्लेखनीय है कि पूना पैक्ट का असर सिर्फ दलित समाज तक ही सीमित नहीं रहा बल्कि इसके कारण मुस्लिम लीग द्वारा नए राष्ट्र की मांग को भी बल मिला। प्रो. मो. अयूब इस बात को रेखांकित करते हुए लिखते हैं कि कम्यूनल अवार्ड पर गांधी जी की प्रतिक्रिया से मुस्लिम नेतृत्व में यह संदेश गया कि हिंदू-मुस्लिम एकता को मजबूत करने अथवा अंबेडकर की मांग को स्वीकार कर दलितों के साथ न्याय करने के बजाय महात्मा गांधी और कांग्रेस अखंड हिंदू राष्ट्र के निर्माण के ज्यादा इच्छुक हैं। इसने उनके बीच असुरक्षा की भावना और भी ज्यादा गहरी हो गई और अंततः ब्रिटिश भारत का विभाजन हुआ और एक मुस्लिम-बहुल राष्ट्र की स्थापना हुई।

यह भी एक विचित्र विडंबना थी कि हिंदू समाज के अंतर्गत आने वाले दलित समुदाय बंगाल में सामाजिक, आर्थिक स्तर पर मुस्लिम समुदाय को अपने ज्यादा करीब पा रहे थे। यही कारण था कि वे शुरुआत में कांग्रेस के बजाय मुस्लिम लीग के साथ राजनैतिक गठबंधन के ज्यादा इच्छुक थे। क्योंकि जैसे-जैसे बँटवारे का समय पास आता जा रहा था, कांग्रेस और मुस्लिम लीग दोनों ही दल दलितों को अपने पक्ष में लाने का प्रयास करने लग गए थे। वे जानते थे कि उनके आने से अपनी खुद की संख्या बढ़ाई जा सकती है। इसी क्रम में "६ मार्च १९४७ को अंतरिम सरकार में लह मेंबर जे.एन. मंडल ने यू.पी. शेड्युल्ड कास्ट फेडरेशन कान्फ्रेंस में कहा था कि उन्हें गांधी में बिल्कुल भरोसा नहीं है, क्योंकि गांधी केवल इतना ही चाहते हैं कि अनुसूचित जातियों के लिए मंदिर खोल दिए जाएं। मैंने लीग से हाथ मिला लिए हैं, क्योंकि अनुसूचित जातियां और मुस्लिम लीग दोनो ही गरीब और पिछड़े हुए हैं। वे कम से कम बंगाल में ज्यादातर मजदूर और खेतिहर किसान ही हैं, और उन्हें काफी राहत की जरूरत है। इसलिए ऐसा कोई कानून नहीं बनाया जाएगा, जिससे मुसलमानों को तो लाभ हो और अनुसूचित जातियों को कोई फायदा न हो।इससे पूर्व १९४५ में नामसुद्र नेता जोगेंद्र नाथ मंडल ने डॉ. बी.आर. अंबेडकर की बंगाल प्रांतीय शाखा की शुरुआत की थी- अम्बेडकर अनुसूचित जाति महासंघ। उनका भी मानना था कि पूर्वी बंगाल में दलित और मुस्लिम किसानों के समान हित हैं, इसलिए, दलित-मुस्लिम राजनीतिक गठबंधन दलितों के हित में है। इन्हीं परिस्थितियों के बीच नवंबर १९४६ में अखिल भारतीय अछूतिस्तान आंदोलन की भी शुरुआत हो गई थी। इसके संस्थापक, ब्याहलाल ने उसी महीने एक बयान जारी किया- "यह कहना न्यायोचित है कि भारत अछूत जनता का स्थान था और यह उन्हें जरूर दे दिया जाना चाहिए। अछूतिस्तान नाम अछूत शब्द से निकला है, जिसका भारत में शाब्दिक अर्थ है- अपवित्र नहीं। लेकिन यह हिंदुस्तान, पाकिस्तान और इंग्लिस्तान के मिश्रण से अपवित्र बना दिया गया था। यह जिन्ना की मूर्खता है जो वह केवल पाकिस्तान की मांग करता है और अछूतिस्तान को याद नहीं रखता है। अछूतिस्तान की समस्या हिंदुस्तान पाकिस्तान और इंग्लिस्तान की समस्याओं से पहले है। बाद के तीनों तानों ने, अपनी ताकत मजबूत करके और बंदूकों तथा लड़ाई के हथियारों का इस्तेमाल करके, पहले वाले तान के लोगों को कुचलने की एक से एक कोशिशें की हैं...।"

डॉ. अंबेडकर भी भारत विभाजन के वर्तमान महडल से सहमत नहीं थे। उनका मानना था कि केवल हिंदुओं, मुसलमानों और सिखों को राजनीतिक मान्यता देने से विभाजन एक राष्ट्रीय या अंतर्राष्ट्रीय समस्या होने के बजाय एक क्षेत्रीय मुद्दा भर रह जाएगा। डॉ. अंबेडकर को डर था कि औपनिवेशिक संरक्षण और मुसलमानों के राजनीतिक समर्थन के बिना, दलित हमेशा एक पीड़ित समुदाय ही बने रह जाएंगे क्योंकि उन्हें हमेशा के लिए एक 'हिंदू राज' में रहना होगा। इसलिए बहम्बे क्रहनिकल को दिए एक साक्षात्कार में उन्होंने कहा कि 'अंग्रेजों को भारत छोड़ देने के बाद कांग्रेस दलितों के साथ कैसा व्यवहार करेगी इसका 'ब्लू प्रिंट' उन्हें देना होगा।'

भारत-विभाजन के दौरान पंजाब के साथ-साथ बंगाल की सीमा का भी विभाजन हुआ था। बंगाल में विभाजन एक जटिल राजनैतिक घटना थी। बंगाल में दलित खेतिहर किसान विभाजन की घटना से सीधे तौर पर जुड़े हुए थे और उससे गहरे स्तर पर प्रभावित थे। १९५० की शुरुआत में पूर्वी बंगाल से पश्चिम बंगाल की ओर उनके निर्वासन का जो सिलसिला शुरु हुआ जो आज तक जारी है। आजादी के पश्चात बंगाल में बड़े स्तर पर शरणार्थी के रूप में दलित किसानों की उपस्थिति ने बंगाल की राजनैतिक संरचना को काफी बदल दिया।हालांकि मंडल और फेडरेशन जैसे नेताओं ने उस वक्त पलायन कर रहे दलित-हिंदूओं को रुकने की सलाह दी, क्योंकि उन्हें जिन्ना द्वारा आश्वासन दिया गया था कि उन्हें पाकिस्तान में एक उचित स्थान मिलेगा, जहां 'हर आदमी समान होगा'। लेकिन जैसे-जैसे स्थिति बदलती गई, वहां रह रहे नामसुद्र समुदाय (जो दलित हिंदू की श्रेणी में आते थे), को जल्द ही यह एहसास हो गया कि पाकिस्तान में इस्लामी राष्ट्रवाद की बढ़ती ताकत उन्हें सिर्फ एक 'हिंदू-अल्पसंख्यक' के रूप में देखती है।हालांकि डॉ. अंबेडकर की नजर में विभाजन के दौरान पाकिस्तान में रह रहे दलित-हिंदूओं को रोकने के पीछे का कारण पाकिस्तानी राजनेताओं की जहाँ-तहाँ बसे हुए थे। बीसवीं शताब्दी की शुरुआत में बंगाल में दलित राजनीतिक आंदोलन की शुरुआत हुई तो इसका आधार यही दो मुख्य समुदाय अर्थात् नामसुद्र और राजबंसी थे तथा इन आंदोलनों में अधिकांश नेता भी इन्हीं दो समुदायों से निकल कर आए। शेखर बंदोपाध्याय लिखते हैं-ष्इन सफल सामाजिक आंदोलनों के पीछे एक प्रमुख कारक इन दोनों समुदायों का भौगोलिक स्तर पर आपसी जुड़ाव था, और विभाजन के परिणामस्वरूप दोनों ने इस स्थानीय ताकत के लाभ को गंवा दिया। हालांकि, विभाजन से पहले अर्थात् ब्रिटिश राज के अंतिम दिनों में भी उनके आंदोलनों ने एकरूपता खो दी थी और कई जटिल ऐतिहासिक प्रक्रियाओं के परिणामस्वरूप वे अलग-अलग दिशाओं में जाने लगे थे। वे सभी जिले जिसमें नामसुद्र रहते थे, वे पूर्वी पाकिस्तान में चले गए। राजबंसियों की स्थिति तो और भी जटिल थी, क्योंकि उनका जातीय क्षेत्र नई अंतरराष्ट्रीय राजनीतिक सीमा से विभाजित हो गया था।[8]

भारत आए नामसुद्र शरणार्थियों को उन हिंदू समूहों के साथ भी संघर्ष करना पड़ा जो स्थानीय होने के कारण काफी मजबूत स्थिति में थे। नामसुद्र शरणार्थियों और वहां बसे स्थानीय ग्वालाओं के बीच संघर्ष की कई घटनाएं देखी गईं। वे नहीं चाहते थे कि शरणार्थियों के आने से स्थानीय स्तर पर, शक्ति का संतुलन किसी भी प्रकार से बिगड़े। और फिर, जब उच्च जाति के हिंदू शरणार्थी, जो मुस्लिमों के साथ अपनी संपत्तियों की अदला-बदली कर इन जमीनों पर कब्जा करने के लिए आए, उन्हें नामसुद्र किसानों के हिंसक प्रतिरोध का सामना करना पड़ा, जिन्होंने पहले से ही उन जमीनों पर अवैध रूप से कब्जा कर उन पर खेती का काम शुरू कर दिया था। दूसरे शब्दों में कहें तो नाडिया के सीमावर्ती इलाकों में होने वाले इस हिंसक झगड़े को आसानी से इतिहास में हिंदू-मुस्लिम सांप्रदायिक बाइनरी में नहीं रखा जा सकता है।जाति इसमें एक बहुत बड़ी भूमिका निभा रही थी। जैसा कि हमने पहले भी उल्लेख किया है कि पुनर्वास के मामले में दलित शरणार्थियों का एक अलग ही अनुभव था। जब मुख्य रूप से उच्च जाति के हिंदू भद्रलोक शरणार्थियों का पहला समूह पश्चिम बंगाल आया, तो उनके पास अपने स्वयं के संसाधन और अपने परिजनों का सहारा था। उनमें से कई परिवार कलकत्ता और उसके आसपास बने अनधिकृत कहलोनियों में बस गए, और शुरुआती झिझक के बाद सरकार ने भी उन्हें वैधता दे दी। लेकिन जब १९५० के बाद सियालदड स्टेशन पर हजारों की तादाद में दलित किसान

शरणार्थी ट्रेन से पहुँचे, तो उन्हें पहले २४-परगना, नाडिया, बर्दवान, मिदनापुर या कूचबिहार जैसे विभिन्न जिलों में शरणार्थी शिविरों में भेजा गया। हालांकि आधिकारियों ने कभी इस बात की पुष्टि नहीं की परंतु शरणार्थी शिविरों में जगह आवंटित करने में, जाति और पहचान की एक बड़ी भूमिका रही। सियालदड स्टेशन पर उनकी 'पहचान' कर उन्हें एक पंजीकरण कार्ड दिया गया और फिर ट्रेन से उन्हें शरणार्थी शिविरों में भेजा गया। उन शरणार्थियों का वास्तविक व्यवसाय या योग्यता चाहे जो भी रहा हो, परंतु हमेशा के लिए पंजीकरण डेस्क पर उनकी पहचान नामसुद्र किसान के रूप में उनके कार्ड पर अंकित कर दिया गया था।

दलित शरणार्थियों के लिए सरकार द्वारा शुरू की गई दंडकारण्य योजना के खिलाफ बड़े पैमाने पर विरोध प्रदर्शन हुए, साथ ही मुआवजे को समाप्त करने तथा शरणार्थी शिविरों को बंद करने का भी विरोध किया गया। इस आंदोलन के परिणामस्वरूप ३०,००० शरणार्थियों की गिरफ्तारी हुई। उनमें से अधिकांशतः शिविरों में रहने वाले शरणार्थी थे और उनमें से लगभग ७० प्रतिशत लोग नामसुद्र जाति के थे। जाति की भूमिका एक बार फिर यहां देखी जा सकती है, क्योंकि कलकत्ता के अवैध कालोनियों में रहने वाले सवर्ण हिंदू शरणार्थियों ने उनका साथ देने से मना कर दिया।पूर्वी पाकिस्तान में हिंदू अल्पसंख्यकों के साथ हो रहे लगातार दमन के खिलाफ अपना विरोध प्रदर्शित करते हुए ८ अक्टूबर सन् १९५० ई. को, जोगेंद्र नाथ मंडल ने पाकिस्तानी केंद्रीय कैबिनेट में अपने मंत्री पद से इस्तीफा दे दिया और उसके बाद वे पश्चिम बंगाल चले आए थे।यहां उन्होंने दलित शरणार्थी के खिलाफ होने वाले भेद-भाव को मुखरता से उठाया। उन्होंने अपने भाषण में पश्चिम बंगाल के शरणार्थियों के पुनर्वास में जाति प्राथमिकता में अल्पसंख्यकों को सुरक्षा देना नहीं था बल्कि इससे उनसे अपने सामाजिक हित जुड़े हुए थे। १९५२ में पंजाब के एक चुनावी दौरे में अम्बेडकर ने स्पष्ट शब्दों में कहा था-"बँटवारे के तुरंत बाद, पाकिस्तान सरकार ने अनुसूचित जातियों को पाकिस्तान छोड़कर भारत चले जाने से रोकने के लिए आदेश जारी कर दिए थे। पाकिस्तान को हिंदुओं के जाने की इतनी चिंता नहीं थी, लेकिन अगर अछुत पाकिस्तान छोड़कर चले गए तो झाड़ूवालों, मेहतरों, भंगियों और तिरस्कृत जातियों द्वारा किए जाने वाले गंदे काम कौन करेगा? मैंने पंडित नेहरू से तुरंत एक्शन लेने और उनके पलायन पर लगी रोक को हटवाने की कोशिश का अनुरोध किया था। लेकिन उन्होंने कुछ भी नहीं किया। कांग्रेसी हरिजनों में से भी किसी ने पाकिस्तान में अपनी बिरादरीवालों के इस उत्पीड़न पर ऊँगली नहीं उठाई।"

विभाजन के दौरान जिस प्रकार पंजाब क्षेत्र में एक बड़ी आबादी का भीषण स्तर पर सामूहिक पलायन हुआ उस तरह से बंगाल क्षेत्र में नहीं हुआ। वहाँ शरणार्थियों का विस्थापन कई चरणों में हुआ। शरणार्थियों की पहली खेप में मुख्य रूप से धनाढ्य वर्ग के लोग शामिल थे, उसमें भी ज्यादातर उच्च जाति के हिंदू भद्रजन और नौकरी-पेशे वाले शिक्षित मध्यम वर्ग के लोग शामिल थे। साथ ही कई मध्यम वर्गीय नामसुद्र भी शामिल थे, जो अपनी संपत्तियों को बेचने या स्थानीय लोगों के साथ संपत्ती की अदला-बदली करने में सक्षम थे। इस स्तर पर बहुत कम नामसुद्र किसान थे जिन्होंने बंगाल में पलायन किया। वे पलायन के लिए किसी तरह से तैयार भी नहीं थे, क्योंकि निर्वासन के लिए जिन आवश्यक संसाधनों की जरूरत होती है, वे उनके पास नहीं थे। एक रिपोर्ट के अनुसार, फरवरी १९४९ तक १,८७०,५३५ हिंदू शरणार्थी पूर्व से पश्चिम बंगाल की ओर पलायन कर चुके थे। लेकिन उस वक्त तक अनुसूचित जाति के किसानों ने वहां से पलायन नहीं किया, बावजूद कि वे भी वहां काफी असुरक्षित महसूस कर रहे थे।

परंतु सन् १९५० के जनवरी-फरवरी तक स्थिति काफी बदल गई और बड़ी संख्या में नामसुद्र किसानों ने अंततः पाकिस्तान छोड़ने का फैसला कर लिया। एक रिपोर्ट के अनुसार, सन् १९५० के शुरुआती महीनों में हर रोज लगभग १०,००० लोग शरणार्थी बन गांव के रास्ते आ रहे थे और गायघाट, बदुरिया, हावड़ा और अन्य स्थानों में बसते जा रहे थे। १९५१ की शुरुआत में, खुलना में हुए दंगे के बाद, लगभग १.५ मिलियन शरणार्थी पश्चिम बंगाल में आए थे जिनमें से अधिकांश अनुसूचित जाति के किसान थे।आधिकारिक आंकड़ों के अनुसार, लगभग २.१ मिलियन शरणार्थी १९५० और १९५६ के बीच पश्चिम बंगाल में आए थे। इसके बाद कुछ वर्षों के लिए शरणार्थियों का पलायन रूका रहा परंतु १९६४ में हजरतबल दंगे के बाद, तकरीबन ४१९,००० लोग पूर्वी पाकिस्तान से पश्चिम बंगाल जाने को मजबूर हो गए।

पूर्वी बंगाल में दलित-मुस्लिम संबंधों के टूटने के पीछे एक बड़ा कारण संभवतः अपर्याप्त संसाधनों के लिए उनके बीच हो रही प्रतिस्पर्धा भी थी। और इसके समानांतर, ऐसी अफवाहें चल रही थीं कि अगर वे एक बार सीमा पार करने में कामयाब हो जाते हैं तो भारत सरकार उन्हें एक आकर्षक पुनर्वास पैकेज देने की तैयारी में है। लेकिन उन्होंने अपनी जमीन और घर छोड़ने का फैसला इस आर्थिक प्रलोभन के कारण नहीं किया था, बल्कि उस समय तक उनके भीतर असुरक्षा की एक व्यापक भावना फैल गई थी कि अब वे वहाँ सुरक्षित नहीं हैं।हालांकि दलितों की समस्या यहीं पर खत्म नहीं हुई। शरणार्थी के रूप में जब वे भारत आए तो उनके सामने अपनी जीविका का संकट और भी बढ़ गया। क्योंकि पाकिस्तान से आने वाले दलित मुख्यतः भूमि-मजदूर थे। बनाए गए प्रशासनिक नियमों के अनुसार भूमि का मुआवजा मुख्यतः उन्हीं लोगों के लिए उपलब्ध था जो खेतिहरों के रूप में परिभाषित हो सकते थे अर्थात् जिनके पास अपनी जमीन थी। और दलित जमीन के मालिक नहीं थे, बल्कि वे जमीन को जोतने वाले थे, इसलिए मुआवजे की जमीन पाने के लिए कोई वैध दावा नहीं कर सके। इस संबंध में हरिजन विभाग की प्रमुख रामेश्वरी ने नेहरू को ३ मई १९४८ को एक पत्र लिखा जिमसें इस कमी को दूर करने के संभावित उपायों की चर्चा की गई-"करीब २,५०,००० हरिजन, यानि हरिजन शरणार्थियों के ५०,००० परिवार पश्चिम पंजाब से पलायन करके यहाँ आये हैं और अब पूर्वी पंजाब के कैम्पों में सड़ रहे हैं। वे इन कैम्पों में तंगहाली और बेकारी का जीवन जी रहे हैं और अपने आहार के लिए सरकार द्वारा की जानेवाली मुफ्त लेकिन अपर्याप्त राशन सप्लाई पर निर्भर हैं। ये हरिजन तमाम जिंदगी खेतिहर यानि जमीन जोतने वाले रहे हैं। उन्हें उनकी सारी जिंदगी के पेशे से हटाकर दूसरे कामों में लगाना अनुचित होगा। इसलिए उन्हें भूमि पर ही बसाना होगा। ये शरणार्थी मांग करते हैं कि आजाद भारत में उन्हें अब दास न समझा जाए।"इस प्रकार भेद-भाव केवल पाकिस्तान के हाथों ही नहीं हुआ था, बल्कि भारतीय शरणार्थी कैंपों में भी अनुसूचित जातियों को आश्रय पाने की आज्ञा नहीं मिल रही थी। डह. अम्बेडकर की तब नेहरू से यह शिकायत थी कि अब तक भारत सरकार की सारी चिंता और सावधानी मुसलमानों की समस्या पर रही है। अनुसूचित जाति की समस्या या तो अस्तित्व में ही नहीं मानी गई या इतनी छोटी और मामूली समझी गई जिस पर विशेष ध्यान देना जरूरी नहीं था।

भारत विभाजन ने बंगाल में दलितों की राजनीतिक शक्ति को भी प्रभावित किया था। विभाजन से पूर्व बंगाल में, नामसुद्र और राजबंसी समुदाय भौगोलिक रूप से काफी नजदीक थे जिसका फायदा उन्हें सामाजिक आंदोलनों में महत्वपूर्ण स्थानीय ताकत के रूप में मिलता था। परंतु विभाजन के फलस्वरूप अपने स्थान से निर्वासित किए जाने के पश्चात लगातार विस्थापन ने नामसुद्र आंदोलन को काफी कमजोर कर दिया। राजबंसी समुदाय मुख्य रूप से उत्तरी बंगाल के जिले जैसे रंगपुर, दिनाजपुर, जलपाईगुड़ी और कूच बिहार की रियासत में रहते थे। वहीं पूर्वी बंगाल के नामसुद्र समुदाय मुख्य रूप से बाकरगंज, फरीदपुर, जेसोर और खुलना जिलों में रहते थे, साथ ही पूर्वी और मध्य बंगाल के अन्य जिलों में भी के प्रश्न को उठाया। इस पर एक पुलिस रिपोर्ट में लिखा गया कि श्री जोगनाथ मंडल, खुले तौर पर शिविरों में वर्ग और जाति के आधार पर घृणा

का प्रसार कर रहे हैं ...। २३ और २४ फरवरी १९५८ को बोलपुर और उत्तरपल्लीपारा में जो बैठक हुई वहां भी उन्होंने स्पष्ट रूप से उच्च जाति के हिंदू कर्मचारियों और लोगों पर शरणार्थी परिवारों को पश्चिम बंगाल के बाहर, मध्य प्रदेश भेजने का आरोप लगाया। इतना ही नहीं उन्होंने सरकार पर पश्चिम बंगाल को एक जातिवादी हिंदू राज्य बनाने का भी आरोप लगाया। अनुसूचित जाति के शरणार्थियों के साथ मिलकर एक अलग संगठन बनाने पर भाकपा के अनिल सिंह ने जोगनाथ मंडल की निंदा की और उनसे यूसीआरसी के साथ-साथ सभी शरणार्थियों के लिए एकजुट लड़ाई लड़ने की अपील की। सीपीआई ने तो उनकी और भी कठोर आलोचना की। उन्होंने मंडल पर सवर्ण जाति के हिंदूओं और अनुसूचित जातियों के शरणार्थियों को बांटने और इस तरह शरणार्थी आंदोलन को कमजोर करने का आरोप भी लगाया।

जोगनाथ मंडल को उनके द्वारा कांग्रेस सरकार का दलाल (एजेंट) तक कहा गया। लेकिन इन हमलों के बावजूद, जोगनाथ मंडल लगातार सवाल उठाते रहे जो जाति के संदर्भ में सवर्ण नेताओं को असहज कर देने के लिए काफी थे। मसलन मंडल ने शिविर प्रशासक पर यह सवाल उठाया कि 'दिसंबर १९५९ में कूपर कैंप में शरणार्थियों के बीच से कुछ बस कंडक्टरों की भर्ती की गई। उनमें से कितने अनुसूचित जाति के लोगों को लिया गया?' इसका उन्हें कोई उत्तर नहीं मिला, लेकिन उस प्रश्न को पूछने के लिए उन्हें फिर से वामपंथी नेताओं की तीखी आलोचना सुनने को मिली। इस प्रकार, शरणार्थी आंदोलन की बहस में एकता के नाम पर जाति के प्रश्न को जानबूझकर और बड़े ही चालाकी से दबाने का प्रयास किया गया। हालांकि ऐसा भी देखा गया कि जाति के सवाल पर शरणार्थी अक्सर असमंजस की स्थिती में आ जाते थे। क्योंकि जातिगत स्तर पर असमानता होते हुए भी कहीं न कहीं उनके दुख-दर्द साझा थे। विस्थापन, बिछोह, हिंसा, बलात्कार जैसे त्रासदीपूर्ण स्थितियों को झेलने के बाद सभी शरणार्थी समान रूप से बरोजगारी, भूखमरी और आवास जैसी मूलभूत समस्याओं का सामना कर रहे थे। अतः आंदोलन की सफलता के लिए शरणार्थियों में एकता का होना जरूरी था। कूपर का एक शरणार्थी कार्यकर्ता 'शरणार्थी पहचान' के समर्थन में लिखता है-''नामसुद्र या अन्य निचली जाति के लोगों ने इस आंदोलन में अपनी मांगों को पूरा करने के लिए निम्न जाति के समुदाय के सदस्य के रूप में नहीं, बल्कि एक शरणार्थी के रूप में हिस्सा लिया था।बागजोला कैंप के पूर्व निवासियों के साथ एक सामूहिक बैठक में, प्रतिभागियों ने जोर देकर कहा कि उनके आंदोलन में जाति कोई मायने नहीं रखती है। वे सभी शरणार्थियों के लिए एकजुट मोर्चे के रूप में लड़ रहे थे। इस अवधि के शरणार्थी प्रदर्शनों में अक्सर इस्तेमाल किया जाने वाला नारा "अमरा कारा? बोस्तुहारा (हम कौन हैं? शरणार्थी)इस संदर्भ में एक महत्वपूर्ण कथन है जहाँ जातिगत अस्मिता पर शरणार्थी पहचान भारी पड़ती दिखाई देती है।

इस प्रकार हम यह देख सकते हैं कि जिस वक्त मुसलमान अपनी अलग पहचान के आधार पर अलग राष्ट्र की मांग कर रहे थे उस वक्त दलित अपनी अलग पहचान के लिए ही संघर्ष कर रहे थे। कहा जा सकता है कि जैसे सामाजिक-राजनैतिक व्यवस्था में दलित समाज हाशिए पर रहा है, उसी प्रकार इन सामाजिक ऐतिहासिक प्रक्रियाओं के दस्तावेजीकरण में भी उन्हें हाशिए पर ही रखा गया है, जिसे हम विभाजन की घटना के परिप्रेक्ष्य में भी आसानी से देख सकते हैं।

संदर्भ सूची

१.बुटालिया, उर्वशी, खामोशी के उस पार, पृ 259

२.वही, पृ २६६-२७०

३.वही, पृ २६०

4.Jesús Francisco Cháirez-Garza, School of History, University of Leeds- 'Bound hand and foot and handed over to the caste Hindus': Ambedkar, untouchability and the politics of Partition, p.-4, https://eprints.whiterose.ac.uk/123470

5.Ayoob, Mohammed, The turning point in 1932: on Dalit representation, The Hindu article, https://www.thehindu.com/opinion/op-ed/the-turning-point-in1932/article 23752117..ece

6.वही, https://www.thehindu.com/opinion/op-ed/the-turning-point-in1932/article 23752117..ece

7.बुटालिया, उर्वशी, खामोशी के उस पार, पृ २७६

8Jesús Francisco Cháirez-Garza, School of History, University of Leeds- 'Bound hand and foot and handed over to the caste Hindus': Ambedkar, untouchability and the politics of Partition,p.-12, https:// eprints. whiterose.ac.uk/123470/

9.बुटालिया, उर्वशी, खामोशी के उस पार, पृ २७४

10.Jesús Francisco Cháirez-Garza, School of History, University of Leeds- 'Bound hand and foot and handed over to the caste Hindus': Ambedkar, untouchability and the politics of Partition, p.-10, https://eprints.whiterose.ac.uk/123470/

11.वही, पृ. २६

12.Bandyopadhyay, Sekhar & Chaudhury, Anasua Basu Ray, In Search of Space The Scheduled Caste Movement in West Bengal after Partition,p.- 2, http:// www. mcrg. ac.in/PP59.pdf

13.वही, पृ २ ,http://www.mcrg.ac.in/PP59.pdf

14.बुटालिया, उर्वशी, खामोशी के उस पार, पृ २७८-२७९

15.वही, पृ. ३२

16.वही, पृ्ण २१

17.Bandyopadhyay, Sekhar & Chaudhury, Anasua Basu Ray, In Search of Space The Scheduled Caste Movement in West Bengal after Partition, p.-2, http://www. mcrg. ac.in/PP59.pdf

18.बुटालिया, उर्वशी, खामोशी के उस पार, पृ २६३

19.वही, पृ्ण २७९

20.Bandyopadhyay, Sekhar & Chaudhury, Anasua Basu Ray, In Search of Space The Scheduled Caste Movement in West Bengal after Partition, p.-2, http://www.mcrg.ac.in/PP59.pdf

21.वही, पृ. १७

22.वही, पृ. १८

23.वही, पृ. १०

24.वही, पृ ३२

25.वही, पृ ४२

****

आज़ादी पूर्व भारतीय नारी की दशा और दिशा

(नारी हृदय तथा अन्यकहानियों के विशेष संदर्भ में)

-डॉ.जयश्री.ओ.
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,
यूनिवर्सिटी कॉलेज,तिरूवनंतपुरम,
केरल.9539204383

सारांश- सृष्टि का आधार है नारी। उसे अर्धांगिनी की पदवी भी दी गयी है।मानव-जीवन परंपरा को अक्षुण्ण बनाये रखने में नर-नारी का सहयोग आवश्यक ही नहीं अनिवार्य है। एक के अभाव की पूर्ति दूसरे न कर सके। लेकिन भारतीय परंपरा में नारी विषयक दृष्टिकोण नितांत वैरुद्धपूर्ण था। आदिम युग के स्वच्छंद वातावरण, वैदिक युग के उच्चासन तथा मध्ययुगीन परतंत्रता के बाद आधुनिक युग की बौद्धिकता ने नारी के उत्थान-पतन की विविध स्थितियों का इतिहास बनाया है।आज की नारी किसी की मोहताज़ नहीं। वह घर की चार दीवारी से बाहर निकलकर देश के बहुआयामी विकास में अपनी भूमिका निभा रही है। राजनैतिक, आर्थिक,सांस्कृतिक, वैज्ञानिक, शैक्षिक सभी क्षेत्रों में वर्तमान नारी ने अपना पदचिह्न लगाया। लेकिन स्मरणीय बात यह है कि इसके पहले भारतीय नारी वर्षों से ऐसे व्यूह में जकड़ी जा चुकी थी, जिसे तोड़ना उसके सामर्थ्य के बाहर की बात थी। बंधन की इन लोह श्रृंखलाओं को तोडने केलिए उन्हें प्रेरित एवं प्रोत्साहित करने में तत्कालीन साहित्यकारों ने जो भूमिका निभाई है वह अनुपम है। इस दृष्टि से सुभद्राकुमारी चौहान का महत्व अनिर्वचनीय है।

मुख्य शब्द: क्रातिकारी दौर-विलक्षणताएँ-तटस्थता-जीवन की सफलताएँ असफलताएँ

सामाजिक विसंगतियाँ-

प्रस्तावनाः श्रीमती सुभद्राकुमारी चौहान जी स्त्री सरोकारों से जुडी हुई कहानियाँ लिखने वाली आज़ादी से पहले की पहली लेखिका हैं। वे मूलतः कवयित्री हैं।लेकिन उन्होंने मान लिया कि समाज की अनीतियों से उत्पन्न पीड़ा की अभिव्यक्ति का सश्क्त माध्यम गद्य ही है। इसके लिए आपने कहानी विधा को श्रेष्ठ मान लिया। आपकी कहानियाँ देश-प्रेम के साथ-साथ समाज को, अपने व्यक्तित्व को प्रतिष्ठित करने केलिए संधर्षरत भारतीय नारी की पीडा से मुखरित हैं। इस दृष्टि से 'नारी हृदय तथा अन्य कहानियाँ' नामक कहानी संग्रह खरा उतरता हे। आज हमारा पूरा भारतीय समाज नारी को सश्क्त बनाने में जिस क्रातिकारी दौर से गुज़र रहा है, उसे चौहानजी पहले ही सशक्त साबित कर चुकी थी। वे अपनी रचनाओं में नारी चरित्र को कर्म,शक्ति और साहस के क्षेत्र में पुरुष के समकक्ष प्रस्तुत करती हैं।आपकी कहानियों में तत्कालीन सामाजिक परिस्थितियों की सच्चाई का यथातथ्य वर्णन मिलता है, वहाँ कहीं भी काल्पनिकता की कोई गुंजाईश नहीं। अतः आपकी रचनाओं में सफलता की नई दिशा के साथ असफलताएँ भी नज़र आती है।उनकी रचनाओं में नारी के विभिन्न रूप जैसे मां, पत्नी, प्रेमिका, बहन, मित्र, देशप्रेमी, विधवा, वेश्या ऐसे अनेक रुप देख सकते हैं। यथाः

आदर्श भारतीय नारी: भारत विलक्षणताओं का देश है। अतः भारतीय नारी भी सर्वदा आदर्शप्रिय रही और हमेशा आदर्श का संरक्षण करती रहती है। घर हो या बाहर सब कहीं वह माँ हो या पत्नी हो, बहन हो या बेटी हो सर्वदा आदर्श बनी रहती है। चौहान जी की कहानियों में ममतामयी माता, स्नेहमयी पत्नी, प्रेममयी बहन जैसी नारी के अनेक आदर्श रूप देखने को मिलते हैं।वह नितांत स्वच्छंद अथवा अराजक संस्कारों से परे रहती है। वह गृहलक्ष्मी बनकर अपने परिवार तथा समाज का कल्याण चाहती है। कैलाशी नानी, गौरी, सावित्री जैसे पात्रों के ज़रिए लेखिका आदर्श नारी के विविध रूप हमारे समुख पेश करती हैं। आदर्श नारी कभी भी प्रलोभनों के चंगुल में नहीं फंस जाती है। गरीबी की तटस्थता में भी कैलाशी नानी अधर्म के पैसे स्वीकार नहीं करती। व्यक्ति वैराग्य से वंशीभूत होकर ज़मींनदार दो बच्चियों को हड़प लेकर माथे पर सिंदूर भर देना चाहते हैं। इसकी सहायता केलिए उन्होंने कैलाशी नानी को पचास चाँदी के रुपये का वादा किया और दस रुपये उसके पल्ले में ज़बरदस्त बाँध दिया। नानी ने यह समाचार गुप्त रूप से बच्चों कीं माँ को देने के साथ उन्हें वहाँ से बचने की मदद भी किया।यही नहीं उसने कहा कि माँ के जाते ही वे इन रुपयों को ज़मींनदार के आगे फेंक देंगी- 'वही कैलाशी नानी आज कमर में दस कलदार बाँधे थीं। कल ज़रा-सी बात केलिए चालीस रुपये और मिलनेवाले हैं। पर कैलाशी नानी अधर्म का पैसा नहीं लेना चाहतीं, नहीं लेंगी ३१ इसी प्रकार वैधव्य में अपने को आश्रय लिये भाभी को धोखा देने में कल्याणी तैयार नहीं है। इसलिए ही वह अपने देवर के प्यार को स्नेहपूर्व से ठुकरा देती है और कहती है-''मैं मालती जीजी के सौभाग्य पर कुठाराघात न कर सकूँगी। उन्होंने मुझे कुसमय में आश्रय दिया। जो कुछ बन सकेगा, भला करूँगी। उनकी बुराई मुझसे न हो सकेगी। उनके भले केलिए मुझे अपना बलिदान भी करना पड़े तो सहर्ष कर दूँगी।मगर उसकी जिंदगी में काँटा बनकर न रहूँगी।'[२]

विधवाः भारतीय समाज में नारी की स्थिति तो शोचनीय है।वह सदा पुरुष जाति का गुलाम है न कि प्रेरणादायक जीवनसंगिनी।समाज में वैधव्य नारी जीवन की कदाचित सबसे गम्भीर समस्या है। वही स्त्री जो पति के जीवन होने पर गृहस्वामिनी थी, समाज में समादृत थी, पति की मृत्यू के बाद उसे दासी से भी निम्न तथा हेय पद की अधिकारी माना जाता है।विधवा समाज के लिए एक बोझ, परिवार केलिए अनावश्यक दायित्व और खुद में पीडा की एक गठरी होती है। युवावस्था में विधवा हो जाना किसी महिला केलिए घोर विनाशकारी होता है। विवाह के ही दिन विधवा बन जाए तो उसका जीवन कितना विडंबनापूर्ण बन जाएगा, हम सोच सकते हैं। शुभ कार्यों से बहिष्कृत, श्रृगांरिक प्रसादनों से रहित, आभूषणों से विहीन विधवा पति-घातिनी, पापिन, डायन आदि विशेषणों से प्रताडित तथा अपमानित की जाती है।चौहानजी अपनी कहानी 'कल्याणी' में ऐसी विधवा के दयनीय जीवन का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत करती हैं- 'दो दिन पहले कल्याणी के सौभाग्य पर बहुतों की ईष्या हुई थी। आज घर-घर में उसके सौभाग्य की चर्चा थी। उसका मुँह देखना तो दूर, सौभाग्यवति स्त्रियाँ उसकी छाया से भी डरती थीं।वे सोचतीं, यह स्त्री इतनी अभागी है कि इसके परवार में तो कोई था ही नहीं, विवाह का कंगन भी न छूट पाया था और वैधव्य मुँह बाए निगल जाने को खड़ा हो गया। यह अपने सत्यनाशी पैरों से जिस घर जाएगी,उसी घर में कोई दिया जलानेवाला न रह जाए।' [३]

वेश्या: नारी-जीवन की विभिन्न विभीषिकाओं में से सवीपरि है वेश्यावृत्ति । उसके पतन का निकृष्टतम रूप है वेश्यावृत्ति। सामाजिक विशमताओं के कुचक्र में पड़कर ही नारी वेश्या बन जाती है न कि स्वेच्छा से। अवैध संतान के प्रति समाज की दृष्टि अत्यंत हेय रही है चाहे वह कितना भी श्रेष्ठ हो। उन्हें जीवन भर अपने माथे पर लगे गये इस कलंक लेकर जीना पड़ता है। 'वेश्या की लड़की' कहानी में चौहानजी ने समाज की इस दृष्टिकोण पर विचार विमर्श किया है।छाया की माँ नगर के मन्दिर की प्रसिद्ध नर्तकी है। छाया की सहपाठी प्रमोद छाया को अवैध कन्या जानते हुए भी उसकी रूप-सौंदर्य पर आकृष्ट होकर अपना जीवन साथी बना लेता है। बचपन से ही कुलीन घर की लड़कियों के साथ मिलते-जुलते रहने के कारण छाया भी सदा एक कुल-वधु का जीवन बिताने की प्रबल इच्छा लेकर जीती है।यौवन-जनित उन्माद और

लालसाएँ चिरस्थायी नहीं होतीं।लगातार छः महीने तक के साथ रहकर अब प्रमोद की आँखों में भी छाया के प्रेम और सौंदर्य का वह महत्व न रह गया था जो पहिले था। प्रमोद अपने अहित यों व्यक्त किया-तुम अपने परिवार की चाल क्यों छोड़ सकोगी, गली-गली घूमोगी नहीं तो काम कैसे चलेगा? तुम तो मालूम होता है, वही करोगी जो तुम्हारी माँ आज तक कर रही है। छाया की साधना केवल यही थी कि सदा एक कुल-वधु बनकर अपने पति के चरणों में थोड़ा सा स्थान बना रहना। लेकिन इस साधना केलिए उसे सब प्रकार के अत्याचारों एवं अपमानों को सहना पड़ता है। उसका क़सूर केवल यह था कि एक वेश्या की कोख में पैदा हुआ।

सामाजिक विसंगतियाँ भोगती नारी: सामान्य तौर पर हमारा समाज नारी को साधन मानता है। जन्म से लेकर मृत्यू तक अपने सारे कर्तव्य पूरी तरह से निभानेवाली नारी का मूल समस्या यह है कि समाज में एक स्वतंत्र व्यक्ति या साध्य का दर्जा उसे नहीं मिल पाता। लड़के को वंश का चिराग मानते थे जबकि लड़की पराये घर की सेविका। इसलिए ही उन्हें अनेक सामाजिक विसंगतियों को भोगना पड़ता है। यथा-

दहेज का शिकार: हमारे समाज में दहेज प्रथा ऐसा एक सामाजिक अभिशाप है जो महिलाओं के साथ होनेवाले अपराधों चाहे वे मानसिक हो या शारीरिक को बढ़ावा देता है। इस व्यवस्था ने समाज के सभी वर्गों को अपनी चपेट में ले लिया है।अतः निर्धन अभिभावकों केलिए अपनी बेटी की शादी एक समस्या बन जाती है।चौहानजी अपनी कहानियों में ऐसे अभिशाप ग्रस्त नारी-जीवन की दयनीय स्थिति का यथातथ्य वर्णन करती है। आपकी गौरी, आहुति जैसी कहानियाँ इसका जीवंत उदाहरण हैं-''योग्य पात्र का मूल्य चुकाने लायक उनके पास यथेष्ट संपत्ति न थी। यही कारण था कि गौरी का यह उन्नीसवीं साल चल रहा था। फिरभी वे कन्या के साथ पीले न कर सके ''[५] इसमें निर्धन पिता के मानसिक संघर्ष ही व्यक्त है। कन्याओं की स्थिति भी इससे कम नहीं है- ''जब विवाह केलिए उसे ज़रा भी चिंता नहीं, तब माता-पिता इतने परेशान क्यों रहते हैं-गौरी यही न समझ पाती थी। कभी-कभी वह सोचती, क्या मैं माता-पिता को इतनी भारी हो गयी हूँ रात-दिन सिवा विवाह के उन्हें और कुछ सूझता नहीं। आत्मग्लानि और क्षोभ से गौरी का रोम-रोम व्यथित हो उठता। उसे ऐसा लगता कि धरती फटे और वह समा जाए, किंतु ऐसा कभी न हुआ ''६ यह केवल एक गौरी की चिंता नहीं बल्कि आर्थिक अभाव से पीड़ित सभी भारतीय गौरियों की आत्मसंघर्ष ही है।

अनमेल विवाह: अनमेल विवाह हमारे समाज में मौजूद विकृतियों में प्रमुख है। यह विसंगति दहेज प्रथा से उत्पन्न एक गंभीर समस्या है जो सभ्य समाज का कलंक हे।दहेज दानव के कराल मुख को भर पाने में जो पिता सक्षम नहीं होता उसकी पुत्री चाहे कितनी भी योग्य, रूपवति क्यों न हो उसके अनुरूप जीवनसाथी पाने की सपना अधूरा ही रह जाता है। यही नहीं फूल जैसी निष्कलंक कन्याओं को अधेड़ उम्रवाले पुरुषों की कामवासना का साधन बनना पड़ता है।चौहानजी की बहुत सी कहानियों में अनमेल विवाह तथा उससे उत्पन्न समस्याओं का यथार्थ वर्णन देखने को मिलते हैं।जैसे-श्कुन्तला के असाधारण रूप और यौवन ने राधेश्याम जी की ढलती अवस्था ने उन्हें आवश्यकता से अधिक असाधारण बना दिया था।.वह राधेश्याम को किस प्रकार रोक सकती थी? वह तो उनकी विवीहिता ठहरी।सात भँवरे फिर लेने के बाद घनश्याम को उसके शरीर पर पूरी मोनहपली-सी मिल चुकी थी न! ''[७]

बालविवाहः भारतीय समाज में प्रचलित अन्य एक कुप्रथा थी बालविवाह। बचपन के भोलेपन के साथ गुडिया से खोलने की आयु में पारिवारिक उत्तरदायित्वों एवं मर्यादाओं को कंधे में लेनेवाली कन्याओं का जीवन कितना कष्टदायक हो जाता है। इसका सच्चा चित्रण चौहानजी की रचनाओं में प्राप्त है। अपनी शादी की खबर पाकर सोना अपनी माँ से पूछती है कि श्माँ, विवाह कैसा होता हे ? और क्यों होता है?श्ससुर पहुँचती सोना की हालत का वर्णन लेखिका यों करती है-''स्वच्छंद हवा में विचरनेवाली बुलबुल की जो दशा पिंजरे में बंद होने के बाद होती है, वही दशा सोना की थी।चार-छै दिन में उसके गुलाबी गाल पीले पड़ जाए, आँखें भारी रहने लगीं।.....सोना ने खेलना, खाना और तितली की तरह उड़ना ही सीखा था। गृहस्थी की गाड़ी में उसे भी कभी जुतना पडेगा उसने कभी सोचा ही न था।''[८]

दाम्पत्य जीवन के द्वन्द्वः भारत तो वैसा देश है जहाँ नारी की पत्नी रूप सीता और सावित्री के साथ तोल कर देता है।पत्नी गृहिणी मानी जाती है। 'घर के दीप' की विभूती से विभूषित है। लेकिन उसका संसार पति और परिवार की देखरेख तक सीमित था। उससे बढ़कर उसका कोई अस्तित्व नहीं है।घर की खिड़की का पर्दा हटाकर बाहर देखना या बाहर की स्वच्छंद हवा लेना भी उसकेलिए वंचित है।यदि अनजाने नारी ऐसा करें तो उसके चारित्र्य को भ्रष्ट देते हैं। तत्कालीन समाज में इसप्रकार समाज, संस्कृति, एवं तथाकथित मर्यादा के मकड़जाल में स्त्री अपने आपको असहाय, असुरक्षित एवं जड़हीन महसूस कर रही है। ऐसी नारी का यथार्थ चित्रण लेखिका ने यों किया है - 'बहू को ज़रा संभालकर रखा करो। न साल, न छै महीने, अभी से खडी होकर झांकती है। यह लच्छन कुलीन घर की बहू-बेटियों को शोभा नहीं देते। बिस्यू की अम्मा! तुम्हारी इतनी उमर हो गयी,सआजतक क सिी ने परछाई तक न देखी और तुम्हारी ही बहू के ये लच्छन ! कलयुग इसी को कहते हैं। भारतीय परम्परित समाज में दाम्पत्य की अवधारणा में केवल दो केलिए स्थान है।तीसरे का आगमन चाहे वह भाई माननेवाले व्यकित हो या गुरू माननेवाले कोई भी हो, पारिवारिक संबंधों में तनाव उत्पन्न करता है।संदेह और अविश्वास के बीज बोया जाता है और पति-पत्नी के मध्य अलगाव उपेक्षा एवं विरक्ति के अदृश्य दीवार बनकर आते हैं जिसमें पति-पत्नी दोनों अपने-आप में बंदी होकर आत्मनिर्वासन की स्थिति में आ जाते हैं।चौहानजी ने पति-पत्नी के बीच होनेवाले ऐसे अलगाव तथा उससे पीडित नारी का यथार्थ वर्णन अपनी कहानी 'पवित्र ईर्ष्या' नामक कहानी में यों चित्रित किया है कि हे ईश्वर तू साक्षी है। यदि मैं अपने पथ से ज़रा भी विचलित होऊँ, तो मुझे कड़ी से कड़ी सज़ा देना।पतिव्रत धर्म, स्त्री धर्म तो यही है न कि पति का उचित-अनुचि आज्ञाओं का चुपचाप पालन किया जाए। वह मैं कर रही हूँ विधाता । पर इतने पर भी यदि मेरी दुर्बल आत्मा अपने किसी आत्मीय केलिए पुकार उठे तो मुझे अपराधिनी न प्रमाणित करना। इसीप्रकार लेखिका ने तत्कालीन समाज में प्रचलित नैतिकता का दोहरा मानदण्ड़ का असली रूप हमारे सामने प्रस्तुत किया। जिन कार्यों केलिए पुरुषों की कोई आलोचना नहीं होता, उन्हीं कारणों से नारी पतिता व कुलटा समझी जाती थी। नारी और पुरुष की इस सामाजिक स्थिति के वैषम्य तथा उसके परिणामस्वरूप उत्पन्न विसंगतियों का यथार्थ चित्रण चौहानजी की रचनाओं में हम देख सकते हैं। पारिवारिक त्रासदियों, स्त्री-पुरुष के रिश्तों के संकटों और यातनाओं के प्रति उनमें जो मानवीय सरोकार है वह अनुपम है।

आधार ग्रंथ : नारी हृदय तथा अन्य कहानियाँ-सुभद्रा कुमारी चौहान-संपादन-राजेन्द्र उपाध्याय-आर्य प्रकाशन मंडल,गांधीनगर, दिल्ली-२००८

संदर्भ सूचि :

१.नारी हृदय तथा अन्य कहानियाँ - कैलाशी नारी- पृष्ठ संख्याः४५
२.नारी हृदय तथा अन्य कहानियाँ -कल्याणी- पृष्ठ संख्याः३३
३ वही- पृ.सं- ३६
४.नारी हृदय तथा अन्य कहानियाँ -वेश्या की लड़की- पृ,संख्याः७४
५.नारी हृदय तथा अन्य कहानियाँ -गौरी. पृ.संख्याः२५
६.नारी हृदय तथा अन्य कहानियाँ -गौरी-पृ.संख्याः२४
७.नारी हृदय तथा अन्य कहानियाँ -आहुति-पृ.संख्याः१५२
८.नारी हृदय तथा अन्य कहानियाँ -ग्रामीणा-पृ.संख्याः५१
९.नारी हृदय तथा अन्य कहानियाँ -ग्रामीणा-पृ.संख्याः५०
१०.नारी हृदय तथा अन्य कहानियाँ -पवित्र ईर्ष्या पृ.संख्याः६४
११.नारी हृदय तथा अन्य कहानियाँ - पृ.संख्याः१४

****

आचार्य विनोबा भावे के शैक्षिक विचारों की वर्तमान में प्रासंगिकता

-प्रो. मनीषा वर्मा
अधिष्ठाता (शिक्षा संकाय),
उच्च अध्ययन शिक्षा संस्थान (मानित विश्वविद्यालय),गां.वि.मं. सरदारशहर

सारांश- आधुनिक भारतीय शिक्षा प्रणाली ने मूल रूप से अनुशासन एवं नैतिकता की जड़ो पर प्रहार किया है। इस समस्या से केवल भारत ही नही वरन् पूरा विश्व त्रस्त नजर आता है। यह चुनौति अखिल मानव जाति के पतन एवं विध्वंस का कारण बनती जा रही है। प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली एवं भारत के ऋशि मुनियों एवं शिक्षा मनीशियों ने जिस प्रकार की शिक्षा प्रणाली को अपनाया था आज हमें उसकी आवश्यकता प्रतीत हो रही है। देश के शिक्षा मनीशियों में आचार्य विनोबा भावे का नाम हमारे समक्ष आता है जिन्होने आश्रम शिक्षा प्रणाली एवं प्राचीन शिक्षा व्यवस्था का समर्थन किया है। आचार्य विनोबा भावे की शिक्षा में भौतिकता के साथ-साथ आध्यात्मिक शक्ति भी व्यक्ति को मिलती है जिससे समाज और देश को पूर्ण विकसित होने का मार्ग प्राप्त होता है। ज्ञान के आधार पर विनोबा जी ने कहा है - "जो ज्ञान प्राप्त करो, उसे प्राप्त पर आचरण करों।' महापुरूषों का जीवन उस संगीत के समान है जिसके समाप्त होने पर उनकी धुन गूजंती रहती है। मृत्यु उन्हे इस संसार से छीन लेती है, समय का आवरण उन्हें हमसे ओझल कर देता है और उनके साथ-साथ वे भूतकाल में तिरोहित हो जाते है। उनके विचार, उनके कार्य जो उनके और राष्ट्र के जीवन का अभिन्न अंग बनकर समस्त मानवता को प्रभावित कर सकती है।

प्रस्तावना: हमारा वर्तमान युग एक ऐसी अवस्था से गुजर रहा है जहां सामाजिक एवं राजनीतिक परिस्थितियों बड़ी तेजी से बदल रही है। कई मान्यताएं बड़ी तेजी के साथ टूट रही है तथा कई मान्यताओं का पुनर्निर्माण हो रहा है। ऐसी परिस्थितियों में आचार्य विनोबा भावे के शैक्षिक विचार वर्तमान की इन संक्रमणकालीन परिस्थितयों से लड़ने में पूरी तरह अपना योगदान देते है। विनोबा जी ने अपने समय की स्थिति को उभारने के लिए अपने लेखो के माध्यम से समाज की गतिविधयों की चर्चा को उभारने का भरसक प्रयत्न किया है। अपने लेखों के माध्यम से जनता में फैली हुयी बुराईयो को प्रत्यक्ष रूप से स्पष्ट कराया है। आचार्य विनोबा भावे एक ऐसे युगद्रष्टा हुये है जिन्होने वर्तमान शिक्षा व्यवस्था के दोशों का उपाय आज के लगभग 80 वर्ष पूर्व ढूढं लिया था। भारत की आजादी की लड़ाई में अहिसांत्मक रूप से इनका बड़ा योगदान रहा। इनका मानवाधिकार की रक्षा और अहिसां के साथ-साथ राष्ट्र निर्माण के लिए भूदान आन्दोलन में सहभागिता रही।

व्यक्तित्व एवं कृतित्व - 20वीं सदी के इस महान संत का जन्म 11 सितम्बर 1895 ई. को महाराष्ट्र के कुलाबा जिले में एक छोटे से गांव गगोद में हुआ। प्रगतिवादी विचारधारा के साथ परिवार का पूरा वातावरण पूजा पाठ भजन कीर्तन मय था। विनोबा जी के चार छोटे भाई व एक बहन थी, वे सभी दादा शम्भुराव के पास गांव के पैतृक धर पर रहते थे यहि कारण था कि उनक दादा का प्रभाव उनके जीवन पर बहुत पड़ा था। धर्म, ज्ञान की शिक्षा और उस समय के भारत में एक बहुत बुरी परम्परा चल रही थी जात-पात। छोटी जात के लोगो से बड़ी जाति के लोग घृणा भेदभाव करते थे। ब्राह्मण लोग हरिजनो को मंदिरो मे प्रवेश की अनुमति नहीं देते थे किन्तु बालक आचार्य विनोबा के दादा शम्भुराव उस समय भी विशेष त्योहारों पर अपने मंदिर के द्वार हरिजनों के लिए खोल देते और लोगों को कहते थे कि भगवान के घर में कोई छोटा बड़ा नहीं, हर इंसान जो भगवान पर विश्वास रखता है, उसे पूजा करने का अधिकार है। शम्भुराव तो त्योहारों के अवसर पर अपने मुसलमान गायक भाईयों को मंदिर में बुलाकर उनके मुंह से भी भजन भी सुनते। शिव मंदिर का प्रबन्ध कई पीढ़ियों से भावे परिवार के हाथों में चला आ रहा था किन्तु यह परिवर्तन केवल इसी समय देखने को मिला। घृणा की जो दीवार युगों-युगों से बढ़ती चली आ रही थी उसे विनोबा परिवार के शम्भुराव ने गिरा दिया था। इस कार्य की घोर आलोचना भी हुयी किन्तु धुन के पक्के शम्भुराव ने यह निर्णय ही कर लिया था कि वे एक दिन मानवता के बीच में खड़ी हुयी इन नफरत की दीवारों को गिरा कर ही छोंडेंगे। भगवान किसी विशेष धर्म के लिए नहीं बल्कि पूरी मानवता के कल्याण के लिए शिक्षा देते है। यहि प्रभाव था बालक विनोबा भावे पर जिनका व्यक्तित्व मानवता, प्रेम, दया, स्नेह से सराबोर था। आचार्य जी के पूरे जीवन पर उनकी मां की आदर्श चरित्र की छाप नजर आती है। वो कहा करते थे - " माँ ने मुझे बहुत शक्ति दी है। उसे मेरी शक्ति में असीम विश्वास है'

विनोबा जी की प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुयी। पढ़ाई में मेधावी होने के साथ इनको गणित, संस्कृत व फेरचं विषय को पढ़ा। पुस्तक पढ़ने का शौक होने के कारण स्वामी रामदास की पुस्तक 'दास बोध' मेरोपन्त की 'केकावली', बालगंगाधर तिलक का 'गीता रहस्य' का अध्ययन किया। देशभक्त कैदियों पर अत्यधिक अत्याचार को देखते हुए विनोबा भावे उनकी मांग को पूरा करवाने के लिए उनके साथ भूख हड़ताल में शामिल हुये। धुलिया जेल के इतिहास में विनोबा जी के गीता प्रवचन सदा ही सुनहरे अक्षरों में लिखे जाएंगे। इस गीता प्रवचन पुस्तक का न केवल देशी भाषाओं में बल्कि विदेशी भाषाओं में भी प्रकाशित हुयी व लोकप्रिय हुयी।

आचार्य विनोबा जी भारत की प्राचीन शाश्वत विरासत मुग्ध थे। प्राचीन हिन्दु ग्रन्थों, वेदो उपनिषदों, पुराणों आदि में निहित सत्य को आधुनिकता की कसौटी पर कस कर उन्होंने यह सिद्ध किया कि प्राचीन अध्यात्म में शाश्वत सत्य निहित है और वे वर्तमान जीवन के सन्दर्भ मे उतने ही खरे है जितने की प्राचीन जीवन के सन्दर्भ में।

विनोबा जी ने गीता के सम्बन्ध में कहा कि गीता के साथ मेरा सम्बन्ध तर्क से परे सम्भव है। मेरा शरीर माँ के दूध से पुष्ट हुआ है लेकिन उससे भी अधिक मेरे हदय का और मेरी बुद्धि का पोषण गीता के दूध से हुआ है। गीता मेरे लिए प्राण तत्व के समान है। इनकी दृष्टि में सेक्यूलर में धर्मों का समन्वय है। सार स्वीकार करे, असार छोड़ो। विविध धर्म ग्रन्थों से चुनकर उनका सार तत्व लिया जाय, तो हर एक धर्म ग्रन्थ को आज के युग के अनुरूप नूतन स्वरूप प्राप्त हो और दूसरे धर्मों के मानने वालो के लिए भी यह सुलभ हो जाये। समाज सेवा मनुष्य के लिए साधना स्वरूप बननी चाहिए। सामुदायिक सेवा भी सामूहिक साधना को स्वरूप की होनी चाहिए। विनोबा जी ने समाज के सामने यह एक ध्येय रखा कि व्यक्तिगत समाधि नहीं, सामूहिक समाधि लगनी चाहिए। आचार्य जी के जीवन में ईश्वर के बाद दूसरा स्थान गणित का था। गतिमय मस्तिष्क से हिसाब लगाते हुए भूमिहीनों को भूमिदान व ग्रामदान हुआ। भू-दानी बाबा के नाम से प्रसिद्ध होने पर सालो साल होने पर भी लोग नहीं भुलते। गांधी जी को अपना मार्गदर्शक मानने वाले विनाबा जी ने अपने जीवन में सत्य, अहिंसा, ओर त्याग को अत्यधिक महत्व

दिया, साथ ही समाज में जन-जागृति लाने के लिए कई महत्वपूर्ण और सफल प्रयास किए।

आचार्य विनोबा भावे पहले ऐसे व्यक्ति थें जिन्हें वर्ष 1958 में अन्तर्राष्ट्रीय "रेमन मैक्ससे' सम्मान प्राप्त हुआ था। उन्हें यह सम्मान सामुदायिक नेतृत्व के क्षेत्र में प्राप्त हुआ था। मरणोपरान्त वर्ष 1983 में विनोबा भावे को भारत के सर्वोच्च नागरिक सम्मान 'भारत रत्न'से नवाजा गया।

आचार्य विनोबा भावे के शैक्षिक विचार – आचार्य विनोबा भावे ने आंतरिक एंव बाह्य शिक्षा के रूप में शिक्षा के दो स्वरूपों का वर्णन किया है। इनकी दृष्टि में सीखना एक प्राकृतिक किया है जो जीवन पर्यन्त चलती रहती है। वर्तमान समय में जो किताबी ज्ञान ठूसं-ठूसं कर दिया जा रहा है, उसका विरोध करते हुए आचार्य जी स्वाभाविक शिक्षा जो बालक स्वतः सीखता है, उस पर बल दिया है। इनका कहना है कि शिक्षा इतनी सहज एवं स्वाभाविक होनी चाहिए कि न तो विद्यार्थी को यह ज्ञान हो कि उसे शिक्षा मिल रही है और न शिक्षक यह समझे कि वह शिक्षा दे रहा है।

विनोबा जी के सम्पूर्ण दर्शन में गीता का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। ये आत्म शक्ति को पहचानने पर जोर देते हे, आत्मशक्ति का भान होने पर ही मनुष्य पर किसी की सत्ता नहीं चलती अपितु पूर्ण स्वतन्त्रता आती है। कर्मयोग की शिक्षा पर बल दिया गया है । उनके अनुसार 'कर्मयिःनिःश्रेयसम्' अर्थात् कर्म से मोक्ष की प्राप्ति संभव है। शारीरिक श्रम को अत्यधिक महत्व देते हुए इस ओर अधिक संवदेनशील होने की हिमायत करते थे। सुखी जीवन के लिए सत्व गुण, रजोगुण और तमोंगुण का साम्य आवश्यक मानते थे। आचार्य विनोबा का दर्शन कर्म साधना प्रयोग, अध्यात्म, गीता दर्शन, आदि पर आधारित है।

आचार्य विनोबा भावे के अनुसार शिक्षा का अर्थ –आचार्य जी शिक्षा को व्यापक अर्थ में स्वीकार करते है। उन्होंने जीवन की समस्याओं से सघंर्ष और कर्तव्यों का निर्वाह करते हुए अनुभव और कर्म पर आधारित सहज ज्ञान प्राप्ति की शक्ति को ही शिक्षा माना है। इनके अनुसार साक्षरता न तो शिक्षा का लक्ष्य है और न ही प्रारम्भ। वह तो एक साधना है जिसके द्वारा स्त्री पुरूष को शिक्षित किया जाता है। वर्तमान में विद्यार्थी को इस प्रकार की शिक्षा दी जानी चाहिए जिससे उसमें मानवता व सामाजिक संस्कारों के साथ वह कुछ पैदा करके स्वावलम्बी बन सके। बालक को शिक्षा के माध्यम से केवल बौद्धिक व मानसिक विकास का लक्ष्य नहीं होना चाहिए बल्कि उसमे सुनागरिकता, सामाजिकता, सहकारिता के आधार पर जनतांत्रिक समाज की स्थापना में सक्रिय भागीदारी निभाने के गुण भी विकसित किये जाने चाहिए। शिक्षा सुयोग्य नागरिकों का निर्माण करने वाली हो। हस्तकौशल अथवा अद्योग केन्द्रित शिक्षा ही मानव के लिए उपयोगी व हितकारी सिद्ध होती है। शिक्षा में सर्वधर्म समभाव का समावेश होना चाहिए ताकि मानव में सभी धर्मो के प्रति निष्ठा एवं जीवन जीने की शिक्षा विकसित हो सके।

आचार्य विनोबा भावे के अनुसार शिक्षा के उद्देश्य – आचार्य विनोबा भावे की दृष्टि में शिक्षा मानव जीवन से जुड़ा हुआ पहलू है, जीवन से अलग कर देने पर शिक्षा का कोई अस्तित्व नहीं रह जाता। इनके अनुसार सम्पूर्ण शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति को आत्मसंयमी, विनयी, आत्मनिर्भर, समाज सेवी और कर्तव्य निष्ठ नागरिक बनाना है। नई तालीम जिसका समर्थन विनोबा करते है उन्हें विविध जीवन दर्शन की संज्ञा दी जाती है, इसका कारण यह है कि इस शिक्षा में मानव जीवन के तीनो पक्षो- सामाजिक, आर्थिक और आध्यात्मिक को न केवल समुचित स्थान दिया गया है वरन् उनमें समन्वय स्थापित किया गया है। मानव जीवन का लक्ष्य सत्य दर्शन है। इसके लिए सत्य व सहज ज्ञान आवश्यक है। शिक्षा ऐसी हो जो बालक की स्मृति, प्रज्ञा, मेधा, तर्क आदि शक्तियों का विकास करें। शिक्षा जीवन को अधिकाधिक प्रकृति के निकट लाने वाली हो।

आचार्य विनोबा भावे के अनुसार शिक्षण पद्धति –

आचार्य जी के मतानुसार वर्तमान समय में दी जानी वाली शिक्षा न तो शिक्षा है और न ही उसे देने की वर्तमान पद्धति वास्तविक पद्धति है। जो अन्दर है, वह सहज भाव से प्रकट हो वही शिक्षण है। विनोबा जी प्रचलित शिक्षा पद्धतियों के पक्ष में नहीं थे, वह किसी पद्धति विशेष में बधंकर शिक्षा नहीं देना चाहते थे। उनके अनुसार - केवल पद्धति, परिशेष पद्धति, समुच्चय पद्धति, संयोजन पद्धति सिद्धात अच्छी होते हुए भी उपयुक्त नहीं है।

आचार्य विनोबा भावे ने शिक्षण के लिए समवाय विधि को शिक्षा में उपयुक्त माना। उसमें कोई एक जीवन व्यापी और विविध अंग युक्त मूलोधोग शिक्षण के माध्यम के तौर पर लिया जाता है। यह अद्योग शिक्षण का एक सिर्फ साधन नही बल्कि उसका एक अविभाज्य अगं होता है। यह उद्योग द्वारा बालकों का सर्वांगीण विकास, जीवनोपयोगी, ज्ञान तथा आजीविका का एक समर्थ साधन प्राप्त कराया जाता है। इस प्रकार उद्योग मूलक समवाय पद्धति सारी शिक्षण पद्धतियों से भिन्न और अब तक के अनुभवों के निष्कर्ष रूप में अन्तिम परिणति है।

आचार्य विनोबा भावे के अनुसार पाठ्यक्रम –आचार्य विनोबा भावे का मानना था कि पाठ्यक्रम मूल्य केन्द्रित होना चाहिए, जिसमें मूल्यों की शिक्षा पर अधिक बल दिया जाता है। बेसिक शिक्षा का पाठ्यक्रम ही विनोबा जी को मान्य था। बेसिक एजुकेशन के सम्बन्ध में वे कहते है कि नई तालीम एक पद्धति नहीं बल्कि जीवन विचार है। नये मूल्यों के द्वारा नई तालीम लागू की जा सकती है और नये समाज का निर्माण किया जा सकता है। विनोबा जी के मत में पाठ्यक्रम में **निम्न विषयों का समावेश किया जाना आवश्यक है-** प्राचीन धर्म ग्रन्थों के साथ-साथ आधुनिक ज्ञान विज्ञान से सम्बन्धित विषय अध्यात्म एवं विज्ञान के लिए आधुनिकतम साहित्य बाल्यावस्था में पाठ्यक्रम में मातृमुखेन शिक्षणमय एवं मातृहस्तेन भोजनय को शामिल किया जाए। पाठ्यक्रम में हिन्दी के साथ-साथ संस्कृत को आवश्यक स्थान दिया जाना चाहिए, साथ ही छात्र प्रगतिशील व्यक्तित्व एवं सम्पन्न व्यक्तियों से अवगत हो सके, इसके लिए अनिवार्य तौर पर इतिहास शिक्षण दिया जाना चाहिए।

आचार्य विनोबा भावे के स्त्री शिक्षा पर विचार –विनोबा जी का कथन है कि स्त्री और पुरूष दोनों की आत्मा समान संस्कारवान होती है। स्त्रियों को अध्यात्मज्ञान सर्वप्रथम दिया जाना चाहिए। स्त्री शिक्षण में सत्यनिष्ठा और तपस्या ही सख्त जरूरत की वकालत करते है ताकि स्त्री में मौजूदा समाज के विरूद्ध बगावत करने की हिम्मत आ सकें। इनका मानना है कि स्त्रियों को वह समस्त क्षेत्र हाथ में लेने चाहिए जो सांस्कृतिक माने जाते है । साहित्य, तालीम, धर्म के आयोजन आदि में स्त्रियों को बराबर स्थान मिलना चाहिए। स्त्रियों को आत्मनिर्भर बनाने के लिए पाठ्यक्रम में ऐसे विषयों को सम्मिलित किया जाना चाहिए जिनका उपयोग आवश्यकता पड़ने पर अपने परिवार के भरण पोषण के लिए कर सके। विनोबा मातृ हस्तेन भोजन एवं मातृमुखेन शिक्षण को हिन्दुस्तान की प्रगति के लिए आवश्यक मानते है।

आचार्य विनोबा भावे के छात्र अनुशासन के सम्बन्ध में विचार –छात्र अनुशासन के सम्बन्ध में कहते हुए आचार्य विनोबा भावे जी ने एक सूत्र में ही सम्पूर्ण

उतर दे दिया है शिष्यापराधे गुरोर्दण्डः। यदि शिष्य कोई अपराध करता है तो शिक्षक को उसे माफ कर देना चाहिए। अगर तालीम ठीक नही है तो छात्रों को शिक्षा प्राप्त ही नहीं हो सकती लेकिन वर्तमान समय में तो सम्पूर्ण शिक्षा ही उद्देश्यविहीन प्रतीत होता है। सीखकर क्या करना है? उनको यह मालूम ही नहीं है।

आचार्य विनोबा भावे के शिक्षक छात्र सम्बन्ध पर विचार –आचार्य विनोबा भावे शिक्षकों को शिक्षा देने एवं नेतृत्व करने का भार सौपना चाहते है। समाज में परिवर्तन व क्रान्ति लाने का कार्य शिक्षकों की ही है। शिक्षकों में प्रेम, वातावरण, निरन्तर अध्ययनशील, राजनीति से दूरी जैसे गुण हमेशा मौजूद रहना आवश्यक है। इनका मानना है कि शिक्षक की भूमिका माली की तरह होनी चाहिए जिसे यह मालूम रहता है कि पौधे को कब कितना पानी खाद देना है। शिक्षक भी उसी कुशलता के साथ अपने विद्यार्थी को समझकर उसके व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास सुनिश्चित करता है। उसमें बीज को रोपण करते हुए उसके उतरोतर विस्तार करने में सफल होता है। विनोबा जी के अनुसार शिष्य वह है जो मुक्त मन से अध्ययनशील रहे। 'बोधयन्तःपरस्परम्' गुरू शिष्य में गुरू बोध देता है और शिष्य ग्रहण करता है। शिष्य को यह महसूस होना चाहिए कि उनकी उन्नति और विकास के अतिरिक्त शिक्षक को कुछ नहीं चाहिए। इस प्रकार विश्वास व श्रद्धा शिक्षक के प्रति आवश्यक बताया गया है।

आचार्य विनोबा भावे के शैक्षिक विचारों की वर्तमान में प्रासंगिकता –आचार्य विनोबा भावे के शिक्षा सम्बन्धी विचार केवल सैद्धान्तिक दृष्टिकोण पर आधारित न होकर व्यावहारिक पक्ष लिए हुए है। देश के समक्ष शिक्षा जगत में जो विभिन्न समस्याएं मुह उठाये खड़ी है उनका हल एक सीमा तक आचार्य विनोबा भावे के शैक्षिक विचारों में सम्भव है। वर्तमान में मात्र पढ़ना या लिखने मात्र को साक्षर मान लिया जाता है। शिक्षा को मात्र किताबी जानकारी तक सीमित कर दिया गया है। इस सन्दर्भ में आचार्य विनोबा भावे छात्र के सम्पूर्ण व्यक्तित्व विकास पर बल देते थे। इनका मत है कि केवल किताबी ज्ञान होना आवश्यक न होकर अपितु व्यावहारिक ज्ञान भी आवश्यक है। वर्तमान में देश में स्वच्छ भारत मिशन जैसे कार्यक्रम राष्ट्रव्यापी आंदोलन का रूप ले चुका है। विनोबा जी ने लगातार 20 वर्षो तक सार्वजनिक स्थानो पर मलमूत्र का त्याग न करने की अलख जगाई। स्वस्थ मन व स्वच्छ तन के लिए स्वच्छता का होना आवश्यक है जो वर्तमान में अत्यधिक प्रासंगिक है। आचार्य विनोबा भावे बालक की शारीरिक, मानसिक , आत्मिक और आर्थिक शक्तियों का सर्वोन्मुखी विकास संतुलित तथा सामजंस्य पूर्ण तरीके से करने पर बल देते थे जो कि वर्तमान समय की नितान्त आवश्यक है। शिक्षा से तात्पर्य डिग्री या नौकरी प्राप्त करने मात्र से कदापि नही है । आचार्य जी के इन विचारों की पुष्टि राष्ट्रीय शिक्षा आयोग (1952-53) द्वारा प्रस्तुत प्रतिवेदन से भी होती हे। आचार्य विनोबा भावे का विचार था कि सच्ची शिक्षा वही है जिसमें हम अपनी आत्मा के द्वारा ईश्वर के सत्य को पहचान सके। यदि यह जान लिया जाए तो कई सारी समस्याएं स्वतः ही दूर हो जायेगी। वर्तमान शिक्षा की एक गम्भीर समस्या विद्यार्थियों के शरीर और मस्तिष्क पर बढ़ता किताबों का बोझ है इस बढ़ते बोझ को कम करने में विनोबा जी के विचार अत्यन्त उपयोगी व प्रासंगिक कहे जा सकते हे। इन्होंने शिक्षा के साधन के रूप में किताबों को कम महत्व दिया है। इस सन्दर्भ में प्रो. यशपाल की अध्यक्षता में गठित समिति ने 1993 में अपनी संस्तुति में उक्त तथ्य को स्वीकार किया है एवं वस्ते के बोझ को कम करने की वकालत की है। विनोबा जी शिक्षा को व्यापक अर्थ में स्वीकार करते हुए जीवन की समस्याओं से संघर्ष व कर्तव्यों का निर्वाह कर अनुभव तथा कर्म पर आधारित सहज ज्ञान प्राप्ति की शक्ति के विकास को शिक्षा मानते थे।

आचार्य विनाबा विद्यार्थियों की अनुशासनबद्ध स्वतन्त्रता के पक्षधर थे। स्वच्छन्दता के नहीं तथा उन्होने अनुशासनहीनता के लिए किसी भी प्रकार के दण्ड देने का विरोध नहीं किया। आज के सन्दर्भ में इनके विचारो को समझने व उनका पालन करने की आवश्यकता है। कि छात्रों से शिक्षको को अनुषासन का पालन बलपूर्वक नहीं अपितु समझाकर करवाना चाहिए।

विनोबा जी का स्पष्ट मत था कि राजनीति का शिक्षण संस्थाओं, शिक्षकों एवं छात्रों से दूर रखना आवश्यक है क्योंकि इससे शिक्षण संस्थाओं में खराब, माहौल एवं असंतोष के भाव को बढ़ोतरी मिलती है।

वर्तमान परिस्थितियों में देश, समाज, परिवार, व्यक्ति और काल को आचार्य, विनोबा भावे के शैक्षिक विचारों की विशेष आवश्यकता है। एक प्रगतिशील समाज और राष्ट्र के लिए उनके द्वारा प्रदत उद्बोधन मार्गदर्शन का कार्य कर सकते है। उनके शैक्षिक विचार न केवल व्यक्ति का वर्तमान सुखद बना सकते है वरन् उसकी आत्मोन्नति कर उसे ईश्वरीय ज्ञान भी करा सकते है। समाज में व्याप्त सामाजिक विषमता, आर्थिक राजनैतिक, धार्मिक तथा भाषायी विषमताओं से निपटने में उनके शैक्षिक विचार अहम स्थान रखते है।

सन्दर्भ ग्रथ सूची-

1.मिरा भट्ट (2015) 'विनोबा के जीवन प्रसंग' वाराणसीः सर्व सेवा संघ, प्रकाशन राजधाट।

2.पचौरी, गिरिश (2015) 'भारतीय शिक्षा शास्त्री' मेरठः आर लाल बुक डिपो।

3.भावे, विनोबा (2014) 'स्थित प्रज्ञ दर्शन' अनुवादक हरिभाऊ उपाध्याय, वाराणसीः सर्व सेवासंध, प्रकाशन।

4.वैरागी, नीना (2015), 'हद्य जोड़ने वाला' वाराणसी, सर्व सेवासंध, प्रकाशन वाराणसी।

5.देसाई, महादेव (2008) 'विनाबा के विचार', सस्ता साहित्य, मण्डल प्रकाशन।

6.वर्मा, वैधनाथ प्रसाद (1972) - विश्व के महान शिक्षा शास्त्री, विहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी सम्मेलन भवन पटना- 3 प्रथम संस्करण।

7.https://hi.m.wikipedia.org

8.https://www.irjmsh.com>

****

आधुनिक भारत के निर्माताः डॉ.बाबासाहब अम्बेडकर

-डॉ.मनोहर भंडारे
हिंदी विभाग, श्री. हावगीस्वामी महाविद्यालय,उदगीर।
भ्रमण ध्वनि : 08888001651

संसार में तीन प्रकार के विचार होते हैं। एक, जो तत्कालीन समय में प्रासंगिक होते हैं किंतु भविष्य में नहीं। दो, तत्कालीन में अप्रासंगिक किंतु भविष्य में प्रासंगिक और तीसरा, जो तत्कालीन समय और भविष्य में भी प्रासंगिक होता है। तीसरे प्रकार में बाबासाहब अम्बेडकर आते हैं क्योंकि वे किसी प्रश्न का ऐतिहासिक, तुलनात्मक, वैज्ञानिक और विश्लेशणात्मक दृष्टि से अध्ययन करते थे। वे प्रखर बुद्धिवादी थे जिसका परिचय उनके समग्र लेखन से आता है। उन्होंने चार्वाक, बुद्ध और महात्मा फुले के भौतिक चिंतन पद्धति को सामान्य मनुष्य के जीवन का हिस्सा बनाया। इस बौद्धिक चिंतन का परिचय 'ॲनिहिलेशन ऑफ कास्ट' और 'कास्ट इन इंडिया' शोध निबंध से आता है। लोकतांत्रिक राश्ट्र के लिए जातिव्यवस्था सबसे बड़ी रूकावट है जिस जातिव्यवस्था को बाबासाहब ने भोगा भी था। भारत में शायद ही किसी ने जातिव्यवस्था पर इतना गहरा और मौलिक चिंतन किया होगा।

सन् ९ मई, १९१६को कोलंबिया विश्वविद्यालय मे ंमानववंशशास्त्र के अंतर्गत बाबासाहब ने 'कास्ट इन इंडिया' शोध आलेख प्रस्तुत किया था जिस पर गंभीर चर्चा हुई थी। उस विश्वविद्यालय में बाबासाहब ने अनेक विषयों का अध्ययन किया था। वह अध्ययन कितनी गहराई से किया होगा, उसका परिचय सन् २००४ की एक घटना से आता है। २००४ में कोलंबिया विश्वविद्यालय को २५० वर्ष पूर्ण होने के उपलक्ष्य में उन्होंने १०० विद्वान छात्रों की सूची बनायी जिसमें अनेक नोबल पुरस्कार प्राप्त लोग थे। उस सूची में प्रथम क्रमांक पर बाबासाहब का नामोल्लेख था। क्यों? १९३६ में जाति-पाँति तोड़क मंडल लाहौर की अध्यक्षता के लिए बाबासाहब को आमंत्रित किया था। कार्यक्रम के पूर्व बाबासाहब ने अपना भाषण इस मंडल को भेज दिया था। भाषण में जातिव्यवस्था पर प्रखर प्रहार किए थे। हिंदू धर्मग्रंथों की चिकित्सा की थी। उस मंडल का पत्र आया उसमें लिखा था कि आप उस भाषण से वेद तथा धर्म ग्रंथों की जो आलोचना की है हटा दीजिए। तब बाबासाहब ने कहा था सम्मेलन का अध्यक्ष होना मेरी दृष्टि से कोई बड़ी बात नहीं है। अध्यक्षपद के जिए मैं अपने विचारों से कभी समझौता नहीं कर सकता। मैं तो अपने भाषण से अल्पविराम भी कम नहीं कर सकता। किसी पद से अधिक मैं अपने विचारों का सम्मान करता हूँ। मेरे लिए उससे बड़ी कोई बात नहीं। सम्मेलन का अध्यक्षपद उन्होंने त्याग दिया। बाबासाहब ने वह भाषण अपने खर्च से प्रकाशित किया। वह भाषण यानी 'अनहिलेशन ऑफ कास्ट' ग्रंथ है। बाबासाहब के लेखन का सबसे मौलिक ग्रंथ यही कहना होगा।

महात्मा गांधी जातिव्यवस्था की ओर सहानुभूति, दयाभाव की दृष्टि से देखते थे किंतु बाबासाहब ने उसे ऐतिहासिक, तार्किक दृष्टि से विश्लेषण कर उसकी सत्यता को सामने लाया। महात्मा गांधी अस्पृश्यता को पाप समझते थे तो बाबासाहब अस्पृश्यता को कानूनन अपराध। महात्मा गांधी जातिव्यवस्था और वर्णव्यवस्थाअर्थात् दोनों को अलग समझते हैं किंतु बाबासाहब का कहना था कि जातिव्यवस्था और वर्णव्यवस्था दोनों भिन्न नहीं है, जिसकी जड़े धर्मग्रंथ में हैं। वैसे जाति एक मनोविकार है। वह एक मनोवृत्ति है। उसका आधार कोई वैज्ञानिक नहीं है। चार्वाक ने भी जाति का तार्किक विश्लेषण करते हुए यह प्रश्न उपस्थित किया था कि यदि किसी नदी के रेत से एक घोड़ा, हाथी, गाय, कुत्ता जाता है और उसी रेत से एक चमार और ब्राह्मण जाति का व्यक्ति जाएगा। जैसे गाय और हाथी के पाँव के चिह्न भिन्न-भिन्न हैं क्योंकि दोनों प्राणियों की जातियाँ भिन्न-भिन्न हैं। किंतु उसी भाँति चमार और ब्राह्मण के पाँव की निशानी यदि भिन्न नहीं तो उसका अर्थ दोनों की जाति एक है। यह प्रकृतिगत सत्य है। लेकिन अपने स्वार्थ के लिए जातिव्यवस्था निर्माण की है। वह प्रकृतिगत नहीं है। बाबासाहब ने जिसे इमलों का घर कहा है,जिस घर को सीढ़ियाँ ही नहीं हैं। किसी का किसी से संपर्क नहीं है अर्थात जाति, धर्म और ईश्वर मनुष्य निर्मित है। जातिभेद करनेवाला पुरानी पीढ़ी के परिवेश का अनुकरण करता है। इसलिए वह उतना दोशी नहीं है। असली शत्रु तो 'मनृस्मृति' जैसे धर्मग्रंथ हैं।

'मनुस्मृति' जैसे धर्मग्रंथों ने मनुष्य-मनुष्य में भेद किया है। वर्णव्यवस्था निर्माण की। जातिव्यवस्था फैलाई। अस्पृश्यता ने तो मनुष्य के छाँव को भी नकार दिया था। इसीलिए बाबासाहब ने 25 जुलाई, 1927 को महाड में सार्वजनिक रुप से 'मनुस्मृति' ग्रंथ को जलाया। सामाजिक परिवर्तन की दृष्टि से यह एक ऐतिहासिक घटना थी। महात्मा फुले और बाबासाहब ने धर्मग्रंथों की चिकित्सा की। उसके पाखंड को समाज के सामने लाया। उसे सुरंग लगाया। वैसे सामान्य मनुष्य अनुकरण प्रिय होता है। वह विचारों का, तथ्यों का विश्लेषण कर सत्यता की खोज नहीं करता। अनुकरण में श्रद्धा बहुत महत्वपूर्ण होती है। सामान्य मनुष्य के सामने पीढ़ी-दर-पीढ़ी जो रखा जाता है वही वह स्वीकारता है। लेकिन पढ़े-लिखे वर्ग का दायित्व है कि सत्य से परिचित कराए। पाखंडता, धूर्तता से अवगत कराए।

गांधीजी ने कहा था जातिव्यवस्था सहभोजन से समाप्त होगी, लेकिन बाबासाहब ने तत्कालीन जातिव्यवस्था का गंभीर अध्ययन कर निष्कर्ष रूप में कहा कि अंतर्जातीय विवाह से ही जातिव्यवस्था समाप्त होगी क्योंकि अंतर्जातीय विवाह से अलग-अलग लोगों में रक्तसंबंध आते हैं, जिससे जातिव्यवस्था कमजोर हो जाएगी। जातिव्यवस्था गुफा है तो विवाह उसका ताला है। जाति के अंतर्गत विवाह के कारण सतीप्रथा आरंभ हुई थी। पति मरने पर वह स्त्री पर पुरुष से संबंध रखेगी या दूसरे जाति के व्यक्ति से शादी करेगी। इससे भला वह सतीप्रथा स्वीकारे। बालविवाह के पीछे भी जातिव्यवस्था थी। सयानी होने से पहले ही यदि उसकी शादी अपने ही जाति में हुई तो उसे अन्य व्यक्ति से प्रणय भाव निर्माण नहीं होगा और लैंगिक शुचिता भी बनी रहेगी। वह शुद्धवंश की वाहक बने। विधवा विवाह के साथ ऐसा ही दुर्व्यवहार होता था। महात्मा फुले ने तो ऐसी स्त्रियों के लिए रहने की भी व्यवस्था की थी। इसलिए बाबासाहब ने जातिव्यवस्था उन्मूलन के लिए अंतर्जातीय विवाह आवश्यक माना।

उन्होंने जातिव्यवस्था के उन्मूलन के लिए धर्मचिकित्सा को दूसरा विकल्प माना। इसलिए धर्म चिकित्सा हो। धर्म की पाखंडता से लोग परिचित हो। उस वास्तविकता से लोग अवगत होंगे तो लोग परिवर्तन भी करेंगे। अवैदिक परंपरा के सभी लोगों ने धर्म चिकित्सा की है, जैसे-महात्मा फुले की 'गुलामगिरी'। बाबासाहब को लगता था बौद्ध धम्म सागर है जिसमें नदियों की भाँति अनेक जातियाँ मिलेगी तो जाति का कोई अलग अस्तित्व नहीं रहेगा। दुनिया के सारे धर्मग्रंथ ईश्वर पर केंद्रित हैं, किंतु बौद्ध धम्म मनुष्य केंद्रित है। वह वैज्ञानिक है। वह भौतिक जीवन को ही अनिवार्य मानता है। बाबासाहब ने हिंदू समाज में रहते हुए जातिव्यवस्था पर खूब प्रहार किया लेकिन जब उन्हें एहसास हुआ कि धर्मांतर करना चाहिए तब उन्होंने 13 अक्तूबर, 1935 को येवला के सभा में कहा कि 'मैं हिंदू धर्म में जन्मा पर हिंदू धर्म में नहीं मरूँगा।' बाबासाहब ने जातिव्यवस्था के विनाश के लिए सन् 1956 को बौद्ध धम्म स्वीकारा। उनके विचार से जातिव्यवस्था रूपी दानव का विनाश किए बिना राजकीय, आर्थिक और सामाजिक समता स्थापित नहीं होगी।

बाबासाहब को लगता है कि श्रम विभाजन होना सभ्य समाज का ही लक्षण है। लेकिन यहाँ श्रम विभाजन न होकर श्रमिकों का विभाजन हुआ। वह विभाजन कला, कौशल्य, श्रम के अनुसार होना चाहिए, किंतु सवर्ण पिता की संपत्ति बिना श्रम के बेटे को मिलती है लेकिन साधन संपत्ति से वंचित दलित बेटे को बाप का ही गुलामीनुमा शूद्र काम करना अनिवार्य था। अस्पृश्यता से वंचित दलित मनुष्य को समाज के मुख्य प्रवाह में लाने हेतु संविधान में आरक्षण का प्रावधान किया गया। इसके पूर्व राजर्शि शाहू महाराज ने आरक्षण का अमल अपने राज्य में किया था। दूसरी बात सन 1950 से ब्रिटिश सैन्य में महार जाति की भर्ती की थी। उनके हाथ में झाडू की जगह बंदूक आयी थी। उनके भीतर प्रतिष्ठा निर्माण हो रही थी। वे अपने बच्चों को पढ़ा रहे थे। यह सारे तत्कालीन संदर्भ बाबासाहब के सामने थे। बाबासाहब को ज्ञात था कि केवल आर्थिक स्तर पर परिवर्तन होने से सामाजिक समता स्थापित नहीं होगी। इसलिए सामाजिक स्तर पर बदलाव होना चाहिए। समता और सामाजिक न्याय मिलने हेतु आरक्षण का प्रावधान हुआ था।

बाबासाहब को लगता था कि केवल समता और स्वातंत्र्य से काम नहीं चलेगा सभी में बंधुत्व का भाव निर्माण हो। तभी समाज में समताधिष्ठित, ज्ञानाधिष्ठित विशमतारहीत समाज निर्माण होगा,जिसके बिना लोकतांत्रिक राष्ट्र निर्माण नहीं होगा। बाबासाहब ने अपने संसद के भाषण में कहा था कि हम भारत को राजनीतिक लोकतंत्र तो दे रहे हैं,किंतु सामाजिक और आर्थिक समता निर्माण न होगी तो यह लोकतंत्र नहीं बचेगा। क्योंकि बाबासाहब जातिव्यवस्था से निर्मित विषमता से परिचित थे। चर्चिल ने भी कहा था कि भारत में जातिव्यवस्था है, विषमता है, यहाँ अनेक धर्म और अनेक पंथ हैं। इन लोगों में इतनी विभिन्नता है तो भारत राष्ट्र के रूप में कभी एक नहीं होगा और उनका लोकतंत्र अधिक दिन नहीं रहेगा। भारत टुकड़ों में बट जाएगा। बाबासाहब ने इस संदर्भ में कहा था कि दुनिया की कोई ताकत हमारे लोकतंत्र को समाप्त नहीं कर सकती है। बहुसांस्कृतिकता ही लोकतंत्र के लिए उपयोगी है,जो भारत में है। हम संविधान के द्वारा समता स्थापित करेंगे। सभी को एक ओट और एक मूल्य रहेगा। संविधान के सामने कोई बड़ा या छोटा नहीं होगा। वे राष्ट्र की कमियों और खूबियों दोनों से परिचित थे। इग्लैंड तथा अमरिका में रहते हुए उन्होंने कई राष्ट्रों के इतिहास का अध्ययन किया था। वो लोकतंत्र, साम्यवाद और तानाशाही तीनों प्रकार की सत्ता से परिचित हुए थे।

बाबासाहब ने संसद में अपने पहले भाषण में कहा था हम यहाँ अलग-अलग गुट में आए हैं, मैं भी उसी प्रकार का हूँ, लेकिन हमें यदि राष्ट्र के बारे में सोचना है तो हमें गुट की राजनीति को छोड़कर समग्र भारत के बारे में सोचना होगा। हमें अभी अपनी संकीर्ण मानसिकता से बाहर आना होगा। बाबासाहब के इस भाषण से सभी प्रभावित हुए थे। इस भाषण का प्रभाव महात्मा गांधी पर भी हुआ था। दिसम्बर 1946 को वर्धा के आश्रम में ब्रिटिश लेडी लेस्टरबाई महात्मा गांधी से मिलने गई थी। उन्होंने गांधी से कहा था कि आप बाबासाहब को नजरअंदाज न करें। संविधान लेखन में उनके विद्वत्ता का लाभ हितकारी होगा। लेस्टरबाई ने कहा कि मैं बम्बई में अपने सहेली की ओर जा रही हूँ। वहाँ बाबासाहब से भी मिलूंगी। तब गांधीजी ने तत्क्षण अधिक न बोलते हुए इतना ही कहा कि आप बाबासाहब की मानसिकता को समझो। बाबासाहब और लेस्टरबाई की चर्चा हुई। बाबासाहब कॉग्रेस के अनुभवों से नाराज थे। लेकिन लेस्टरबाई ने कहा कि आप उसे भूल जाओ। आप संविधान समिति के भीतर रहकर ही अधिक बदलाव कर सकते हो। उन्होंने इस सकारात्मक चर्चा से महात्मा गांधी को अवगत कराया था।

वल्लभभाई पटेल और राजेंद्र प्रसाद का बाबासाहब से पत्रव्यवहार हुआ। बाबासाहब बंगाल प्रांत के जिस जगह से चुनकर आए थे वह भाग पाकिस्तान में चला गया था। फिर जयकर जी ने इस्तीफा दिया तब बाबासाहब कॉंग्रेस के सहयोग से चुनकर आये और संविधान समिति के अध्यक्ष बने। महात्मा गांधी के इस सकारात्मक परिवर्तन से बाबासाहब भी आचंभित हुए थे। पूना करार और संसद का पहला भाषण अर्थात् इन दो घटनाओं से महात्मा गांधी के भीतर बहुत बड़ा परिवर्तन आया था।पूना करार के बाद महात्मा गांधी उसी शादी में जाते थे, जो अंतर्जातीय हो। वे अपने मित्र महादेव देसाई के बेटे के शादी में नहीं गये थे, क्योंकि वह शादी उन्हीं की जाति में थी। बाबासाहब दूसरी शादी के समय पत्रिका लेकर प्यारेलाल के पास गये थे। वे महात्मा गांधी के सबसे नजदीक थे। उस बातचीत में बाबासाहब ने कहा था कि यदि महात्मा गांधी जीवित होते तो उनको मेरी शादी के लिए आने में विशेष आनंद मिलता क्योंकि यह शादी अन्तर्जातीय है। उस समय प्यारेलाल से वार्तालाप करते हुए बाबासाहब की आँखों में आँसू आये थे।

हाँ, यह भी सही है कि महात्मा गांधी और बाबासाहब अर्थात दोनों की भूमिकाएँ अलग थी। दोनों की परवरिश भिन्न थी। दोनों की सोच भिन्न थी। दोनों की वृत्तियाँ भिन्न थी। गांधी जी का पूर्वार्ध वर्णव्यवस्था से प्रभावित था। उनमें उत्तरार्द्ध में बहुत बड़ा बदलाव हुआ था। बाबासाहब के कारण महात्मा गांधी की भूमिका और अधिक लोकतांत्रिक बनी थी। गांधीजी जब तक कहते रहे कि ईश्वर ही सत्य है तब तक कोई प्रश्न उपस्थित नहीं हुआ, लेकिन जब सत्य ही ईश्वर कहने लगे तब ब्राह्मण्य मानसिकता की दीवार हिलने लगी जिसका परिणाम महात्मा गांधी की हत्या। इसलिए मुझे लगता है कि जब गांधीजी को समझना है तो बाबासाहब को समग्र रूप से पढ़ना चाहिए यही बात बाबासाहब को समझते समय महात्मा गांधी को समग्र रूप से समझना चाहिए। हम दोनों को समग्र रूप में न समझकर कुछ संदर्भों को ही उद्धृत करेंगे तो दुराग्रही वृत्ति निर्माण होगी।

बाबासाहब ने जैसे सवर्ण जातिव्यवस्था पर प्रहार किया है उसी प्रकार का कड़ा प्रहार दलितों की जातियों और उपजातियों पर भी किया है क्योंकि दलित जातियों में भी श्रेष्ठ-कनिष्ठता भाव है। इन जातियोंमें भी एक-दूसरे के प्रति द्वेश है। हजारीप्रसाद द्विवेदी ने कहा था कि भारत की हर व्यक्ति अपने से एक निचली जाति को इसलिए ढूँढ लेता है कि मैं उसकी तुलना में स्वयं को श्रेश्ठ साबित करुँ। लेकिन वे सभी भूल जाते थे कि हम सभी सवर्ण की नजर से दलित हैं। इसलिए बाबासाहब ने सभी दलित जातियों को अपनी जातियाँ भूलकर संगठित होने के लिए कहा था। इसलिए तो अहमदपुर की सभा में अण्णा भाऊ साठे ने कहा था कि हमारा नेता बाबासाहब हैं। ''सौ दिन बकरी होकर जीने से अच्छा है कि एक दिन शेर होकर जिये'' यह 'फकीरा' का वाक्य भी बाबासाहब के विचारों से प्रभावित है। इतना आदर बाबासाहब के प्रति अण्णा भाऊ साठे के मन में था। बाबासाहेब ने भी एक सभा में कहा था कि मेरी पार्टी महारेतर पार्टी होनी चाहिए। किसी एक जाति विशेष से जुड़ी न हो। बाबासाहब और अण्णाभाऊ अर्थात् दोनों का लक्ष्य एक था। लेकिन हमने उन्हें समझ लेने में भूल की है। हमने उन्हें व्यक्तिपूजक बनाया। बाबासाहब स्वयं व्यक्तिपूजक के विरोधी थे। इस बारे में वे जार्ज वॉशिग्टन का उद्धरण देते थे क्योंकि जार्ज वॉशिग्टन का कहना था कि मैं दूसरी बार अमरिका का राष्ट्राध्यक्ष नहीं बनना चाहता हूँ क्योंकि लोकतंत्र में दूसरों को भी अवसर मिलना चाहिए। नहीं तो वह व्यक्तिपूजा होगी। व्यक्तिपूजा लोकतंत्र के लिए सबसे बड़ा खतरा होता है क्योंकि व्यक्तिपूजा तानाशाही की ओर झुकती है। इसी तानाशाही मानसिकता से हाल ही में रशिया और चीन के प्रमुखों ने अपना संविधान ही बदलकर हमेशा के लिए सत्ता में बने रहने के लिए संशोधन कर लिया है अर्थात्इसलिए बाबासाहब ने व्यक्तिपूजा पर कड़ा प्रहार किया था।

बाबासाहब ने स्त्री के बारे में भी गंभीर चिंतन किया है। उनका कहना था कि स्त्री की प्रगति कितनी हुई है और उनका समाज में क्या स्थान है?इसके अनुसार राष्ट्र की प्रगति को नापना चाहिए। भारत के पुरुष-प्रधान समाज में स्त्री के प्रति कोई विशेष अहमियत या आदरभाव नहीं है, जिसका नतिजा बाबासाहब के शब्दों में कहे तो दलितों में भी कोई दलित है तो वह स्त्री। स्त्री ने ही मनुश्य की घूमन्तू वृत्ति को स्थायी रूप दिया क्योंकि कृषि की खोज स्त्री की खोज है,इसी वजह से मनुष्य एक जगह स्थिर होकर रहने लगा,किंतु कृषि उत्पादन के सारे साधनों पर पुरुषों ने कब्जा जमा लिया तबसे स्त्री की जिंदगी गुलाम बनी है। दुनिया के सारे धर्म ग्रंथ पुरुषों ने लिखे हैं और आचरण के लिए स्त्री पर थोप दिए हैं। बाबासाहब तथा सिमोन द बोव्हुआर दोनों का भी यही कहना है स्त्री का सबसे अधिक शोषण धर्म ने किया। महात्मा फुले की भाँति बाबासाहब भी स्त्री को स्वतंत्र व्यक्ति के रूप में स्थापित करना चाहते थे। अमेरिका के संसद में स्त्रियों को वोट का अधिकार मिलने हेतु जॉनस्टुअर्ट मिल ने सवाल उठाया था कि वहाँ अधिकतर लोगों का कहना था यदि पति का वोट का अधिकार है तो पत्नी के लिए अलग अधिकार क्यों चाहिए? क्योंकि यदि पत्नी पति के कहे उसे ही वोटे करेंगी तो अलग वोट की क्या आवश्यकता है? लेकिन वहाँ स्त्रियों ने संघर्ष कर वोट अधिकार प्राप्त किया। उसी भाँति यहाँ भी कहा जाने लगा कि स्त्री के अलग वोट की क्या आवश्यकता है ? तब बाबासाहब ने कहा था कि स्त्री स्वतंत्र है और उसका स्वतंत्र अस्तित्व है। भारतीय स्त्री को आजादी के साथ वोट का अधिकार प्राप्त हुआ। उसे अमरिका के स्त्री जैसा वोट के लिए संघर्ष करना नहीं पडा।

स्त्रियों के अधिकार के लिए बाबासाहब ने हिंदू कोड बिल लाया। अधिकतर सांसदों ने इस बिल का विरोध किया, जिसे पास नहीं होने दिया। उन्होंने स्त्रियों को अधिकार देना जैसे दखलांदाजी लग रहा था। इस बिल को लेकर अनेक बार विवाद हुआ। बिल पास नहीं हुआ तो बाबासाहब ने इस्तीफा दिया। स्त्री प्रश्न के लिए इस्तीफा देनेवाले बाबासाहब भारत के पहले सांसद है। हिंदू कोड बिल में तीन बातें सबसे महत्वपूर्ण थी-१. तलाक का अधिकार २. पिता के संपत्ति में समानाधिकार और ३. अंतरजातीय विवाह के लिए कानूनन अधिकार। धार्मिक दृश्टि से विवाह एक संस्कार होगा, किंतु संविधान की दृश्टि से वह एक करार है।

सन् 1927 में बाबासाहब अम्बेडकर मजदूर मंत्री बने थे। तब वे कोयला खदान देखने गये। उस खदान से दो स्त्रियाँ ऊपर आकर खड़ी हुई थी। एक अधिक उम्र की थी और दूसरी साडे सात माह की गर्भवती। बाबासाहब ने पहली स्त्री को प्रश्न किया कि 'क्या आपको पुरुष की जितनी मजदूरी मिलती है' तब स्त्री ने कहा 'ऐसा थोड़ा ही

होता है हम स्त्रियों को पुरुश जैसी तनखा कैसे मिलेगी?'बाबासाहब ने दूसरा प्रश्न गर्भवती स्त्री से किया'क्या आपको इस अवस्था में छुट्टी नहीं मिलती है?' उस स्त्री ने कहा 'छुट्टी ली तो क्या खाएँगे?'

उस समय बाबासाहब ने कहा कि मुझे खदान में उतरना है तब अधिकारियों ने कहा कि खदान चारसौ फिट गहरी है। बाबासाहब खदान में गये तो उन्हें महसूस हो रहा था कि यहाँ ऑक्सिजन कम मिल रहा है। उन्होंने गर्भवती स्त्री को लेकर अधिकारियों पर गुस्सा किया था। पसीने से लथपथ गर्भवती स्त्री को देखकर बाबासाहब अस्वस्थ हुए थे। फिर बाबासाहब ने स्त्रियों के लिए मैटर्निटी बेनिफिट बिल और प्रसुति के दौरान वैद्यकीय छुट्टी का आग्रह किया। उन्हीं के प्रयत्नों से मैटर्निटी बेनिफिट ॲक्ट अस्तित्व में आया। वैद्यकीय छुट्टी भी मंजूर हुई। उसी वैद्यकीय छुट्टी के ॲक्ट में 2017 में संशोधन कर बारह सप्ताह की छुट्टी की जगह छब्बीस सप्ताह की छुट्टी में परिवर्तित किया गया। संविधान के आर्टिकल ३६ (ड) के अंतर्गत 'Equal pay for equal work irrespective of sex'की क्रांतिकारी कल्पना भी बाबासाहब की थी।

बाबासाहब केवल दलितों के नेता और संविधान निर्माता तक सीमित नहीं थे बल्कि उन्होंने किसान, स्त्री, आदिवासी, पर्यावरण, अर्थनीति, अंतर्राष्ट्रीय राजनीति आदि विषयों पर गंभीर और मौलिक चिंतन किया था। दलितेतर के बाबासाहब बहुत बड़े हैं जिन्हें हमें समझना होगा। बम्बई के विधिमंडल पर किसानों का पहला मोर्चा १० जनवरी, १६३८ को गया था जिसका नेतृत्व बाबासाहब ने किया था। उस आंदोलन में २५००० लोग थे और अधिकतर सवर्ण थे। महाराष्ट्र के कोंकण प्रांत में खोती प्रथा थी अर्थात् ब्रिटिश के साथ खोत लोगों को भी टैक्स देना पड़ता था। खोत बिचलौयी थे।

बाबासाहब ने कणकवली, दापोली, अरवली, तिलोरी, चिपलूण, देवरूख, महाड आदि जगह खोती प्रथा के विरोध में सभाएँ ली थी इसमें सवर्ण लोगों का खूब प्रतिसाद मिला था। उन सभाओं में बाबासाहब ने कहा था कि खोती प्रथा किसी भी हालात में बंद होनी चाहिए। उसके लिए मैं जेल में भी जाने के लिए तैयार हूँ। इन सभाओं में उन्होंने यह भी कहा था कि आप सभी किसान संगठित हो जाओ, सभी का दुःख समान है। आप अपनी जात को भूल जाओ और प्रश्न से भीड़ो। खोत आपको लालच भी दिखाएँगे। आप जाति को भूलकर संगठित होकर अपने प्रश्न पर ध्यान केंद्रित करें। और सभी किसान संगठीत होकर खोती प्रथा के विरोध में खड़े रहे। किसान संगठन के प्रमुख शरद जोशी ने भी कहा था कि हमारा आंदोलन असफल होने के अनेक कारण हैं किंतु उनमें जाति सबसे प्रधान कारण है। बाबासाहब ने १६३८ में चिपलूण की सभा में कहा था कि किसान का बेटा ही इस देश का पंतप्रधान होना चाहिए। अधिकतर अधिकारी किसान वर्ग से हो जिससे वे किसान का दुःख समझेंगे। महात्मा फुले का यही मत था। लेकिन दुःख की बात यह है कि महाराश्ट्र पर अधिकतर सत्ता किसान वर्ग से आये हुए नेताओं की हैं किंतु किसानों की सबसे ज्यादा आत्महत्याएँ इसी राज्य में हुई है। हमने प्रश्न से अधिक जाति को महत्व दिया। हम महात्मा फुले और अम्बेडकर की भूमिका को भूल गये हैं। जयंती के दिन ही उनकी याद आती है। भारत के सभी राज्यों की सवर्ण जातियाँ आरक्षण क्यों माँग रही हैं जिस भविष्यवाणी का उल्लेख आपको बाबासाहब ने संसद में दिये भाषण में मिलेगा। यदि आर्थिक विषमता निर्माण होगी तो लोकतंत्र के लिए सबसे बड़ा खतरा होने के प्रति उन्होंने सचेत भी किया था। प्रत्येक राज्य की सत्ता में वहाँ की बहुसंख्यक सवर्ण जाति है उन्होंने चुनाव में जीत कर आने के लिए जाति का केवल इस्तेमाल किया है। उनके जीवन का आर्थिक स्तर सुधारने हेतु कोई बुनियादी कार्य नहीं किया है।

बाबासाहब ने अपने'स्मॉल होल्डिंग इन इंडिया एंड देयर रेमिडिज' नामक शोध आलेख में कृषि के बारे में गंभीर और मौलिक चिंतन किया है, जो शोध आलेख १६१८ में 'जर्नल ऑफ द इंडियन इकॉनॉमिक्स' में प्रकाशित हुआ है। उस आलेख में कहा था आकार की दृश्टि दुनिया में सबसे बड़ा कृशिक्षेत्र भारत में है किंतु उत्पादन में सबसे पिछड़ा है। उत्पादन बढ़ाने के लिए हमने नये बीज उत्पादन की खोज करनी चाहिए, कृषि उपयोगी आधुनिक यंत्र हो, खेती के लिए जल और बिजली मिले। साथ ही उन्होंने कहा था कि भारत की दृश्टि से खेती शाश्वत उद्योग है। उसकी ओर उद्योग की दृष्टि से देखे। साथ ही खेती का उत्पादन कम और उस पर निर्भर रहनेवाले लोगों की संख्या अधिक है। इसलिए खेती पर निर्भर संख्या कम करने हेतु शहरों में उद्योग निर्माण हो और वे उद्योग कृषिपूरक हो। खेती पर निर्भर संख्या कम नहीं होगी तो आर्थिक विषमता बढ़ेगी। आज यही आर्थिक विषमता का परिणाम यानी सवर्णों के आरक्षण की माँग है। यहाँ हमें बाबासाहब के दूरदृष्टि का परिचय होता है। जिस राष्ट्र की राजनीति चुनाव तक सीमित रहती है वह राष्ट्र समृद्ध कैसा होगा और अधिक लोकतांत्रिक कैसा होगा। खेती टुकड़े-टुकड़े में रहेगी तो खर्च अधिक, परेशानी अधिक और उत्पादन कम मिलेगा। उन्होंने सामूहिक खेती अधिक लाभदायक होने की बात कही थी। बाबासाहब जब जलसिंचन मंत्री थे तब उनके कार्यकाल के केवल चार वर्श में पंद्रह बाँध बनाये थे। उसमें से भाकरा-नानगल और दामोदर घाटी योजना है। भाकरा नानगल का पूरा प्लान बाबासाहब का ही था। उसके उद्घाटन पर पंडित जवाहरलाल नेहरू ने कहा था कि यही हमारे आधुनिक मंदिर होंगे। ऐसे मंदिरों से ही भारतीय किसानों का उद्धार होगा।

दामोदर नदी झारखंड, बिहार और पश्चिम बंगाल अर्थात् तीन राज्यों से बहती है। प्रत्येक वर्ष में दामोदर नदी के बाढ़ से तीनों राज्यों के किसानों का बड़ी मात्रा में नुकसान होता था। जल को रोकने के अनेक प्रयत्न किये किंतु सभी असफल रहें। जो बाढ़ का जल चुनौतीपूर्ण था। बाबासाहब ने उस नदी तथा उप नदी पर छोटे-बड़े बाँध से दामोदर घाटीपरियोजना का कार्य पूर्ण कर उस बाढ़ के प्रश्न को ही हल नहीं किया बल्कि बाबासाहब ने उस जल से बिजली बनाने का भी प्रावधान किया था। आज भी हम बिजली में पूर्णतः आत्मनिर्भर नहीं है। किन्तु वर्तमान समय में यदि किसी राश्ट्र के पास अधिक जल है तो वह है चीन। चीन केवल दक्षिण चीन का ही जल उत्तर में नहीं ले गया बल्कि चीन ने दुनिया के सबसे बड़े दस बाँध बनाए। उस जल से बिजली के बहुत बड़े प्लाँट खड़े किये जा रहे हैं। इतना ही नहीं, थोड़े ही दिनों में हमें ब्रह्मपुत्रा से जल मिलना भी बंद हो जाएगा। उतना बड़ा बाँध ब्रह्मपुत्रा नदी पर चायना ने बनाया। लेकिन हम बाबासाहब के सपने को भूल गए। बाबासाहब ने कहा था कि भारत में सभी जगह समान बारिश नहीं होती है और नदियों का जल समुन्दर में जाता है इससे अच्छा नदी जोड़ परियोजना पूर्ण करें। उनका यह सपना सपना ही रह गया। बाबासाहब का कहना था कि जैसे रेलमार्ग भारतभर है वैसा जलमार्ग भी हो। जैसे रेल पर राज्य के साथ केंद्र का अधिकार होता है उसी भाँति नदियों पर भी हो। वह भी रेल की भाँति जलमार्ग बने।इससे बाबासाहब के दूरदृष्टि का परिचय होता है जिसे हमें समझना चाहिए।

अतः डॉ.बाबासाहब अम्बेडकर ने जातिव्यवस्था का तार्किक, मौलिक और ऐतिहासिक चिंतन किया है, जिसमें उनका प्रखर बौद्धिक चिंतन है। साथ ही बाबासाहब केवल दलितों के नेता और संविधान निर्माता तक सीमित नहीं है बल्कि उन्होंने किसान, स्त्री, आदिवासी, जलसिंचन, पर्यावरण, अर्थनीति, अंतर्राष्ट्रीय राजनीति आदि विषयों का गंभीर और मौलिक चिंतन किया है, जो उनके बहुआयामी व्यक्तित्व का परिचायक है। उन्होंने अत्यंत व्यापक और यथार्थ दृष्टि से भारत का सपना देखा। इसलिए बाबासाहब अम्बेडकर आधुनिक भारत के निर्माता हैं।

संदर्भः

1. Dr.B.R.Amedbkar-'Annihilation of Caste' (Speech prepared)-(1936)
2. Dr.B.R.Amedbkar-'Castes in India' (Indian Antiquary Vol.XLXI)- (May 1917)
3. Dr.B.R.Amedbkar-'Small Holdings in Indian and Their Remedies'-(1918)
4. प्रल्हाद लुलेकर-अनंत पैलूंचा सामाजिक योद्धा-दलितेतरांसाठी डॉ .बाबासाहेब आंबेडकर (२०११)
5. रावसाहेब कसबे-'गांधीः पराभूत राजकारणी आणि विजयी महात्मा' (२०२०)

बदलता ग्रामीण सामाजिक-आर्थिक परिदृश्य एवं महात्मा गाँधी के आर्थिक विचारों की प्रासंगिकता वर्तमान के सन्दर्भ में

-डॉ. जीतेन्द्र कुमार डेहरिया
सहायक प्राध्यापक,
डिपार्टमेंट ऑफ रीजनल प्लानिंग एन्ड इकॉनोमिक ग्रोथ,
बरकतउल्लाह युनिवर्सिटी,भोपाल

सारांश: प्रस्तुत शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य महात्मा गाँधी के आर्थिक विचारों की वर्तमान के सन्दर्भ में प्रासंगिकता को जानना एवंबदलती हुई सामाजिक ,आर्थिक, जनांकीय, तकनीकीय एवं संस्थागत परिस्थितियों की वजह से आ रही कृषि और उद्योग संबंधी चुनौतियों के लिए समाधान ढूँढना। इस सम्बन्ध में कुछ प्रश्नों के माध्यम से उपरोक्त उद्देश्य को पूरा करने काप्रयासकिया गया है। जैसे,किस प्रकार गांधी जी के आर्थिकविचार आज की बदलती हुई उपरोक्त परिस्थितियों में भी उपयोगी हैं यदि नहीं तो क्यों ? तो वे कौन से कारण हैं जिनके वजह से उनके विचारों की प्रासंगिकता समय के साथ कमहुई है। इन प्रश्नों का उत्तर जानने का प्रयास उपलब्ध साहित्यों एवं द्वितीयक आंकड़ों के माध्यम से इस शोध पत्र में किया गया है। महात्मा गाँधी का जन्म उस समय हुआ था जब देश की कृषि अर्थव्यवस्था अत्यधिक कठिन दौर से गुजर रही थी।जिसका मुख्य कारण अंग्रेजों की दमनकारी, शोषणकारी आर्थिक नीतियों को कठोरता से लागू करना।जिसमें जमींदारी और रैयतवाड़ी प्रथा मुख्य थीं। इनकी वजह से पूरी कृषि अर्थव्यवस्था चरमरा चुकी थी। देश के कृषकों को न जमीन पर स्वामित्व था और न ही उनके द्वारा पैदा की गयी फसलों पर । वे आर्थिक रूप से असहाय हुआ करते थे, उनके समय पर कर न चुकाने पर प्रताड़ितकिये जाते थे, कई कमजोर कृषकों से वेगार करवाया जाता था।गावों में पनप रहे घरेलू एवं कुटीर उद्योंगो को भी अंग्रजों ने नहीं छोड़ा।इन सबका महात्मा गाँधी के जीवन एवं विचारों पर गहरा प्रभाव पड़ा। उन्होंने अंग्रेजों से छुटकारा पाने के लिए अनेक आन्दोलन शुरु किये ताकि ग्रामीण कृषि अर्थव्यवस्था को पुनः सामान्य स्थिति में लाया जा सके इसके लिए उन्होंने ने न केवल अपने विचार दिए बल्कि उनको अमल पर लाने के लिए अनके प्रयास भी किये।लेकिन बदलती सामाजिक-आर्थिक, जनांकीय, संस्थागत एवं तकनीकीय परिस्थितियों की वजह से ग्रामीण अर्थव्यवस्था को वर्तमान में कई चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है जिसकी वजह से महात्मा गाँधी के आर्थिक विचारों की प्रासंगिकता काफी प्रभावित हुई है जिसे वर्तमान की परिस्थितियों के आधार पर अपनाने की जरुरत है।

मुख्य शब्द: महात्मा गाँधी, आर्थिक विचार, कृषि, उद्योग, ग्रामीण अर्थव्यवस्था एवं रोजगार- प्रस्तावना: भारत देश की अधिकतर ग्रामीण जनसंख्या कृषि एवं कृषि संबंधी अनेक छोटे-मोटे जातिगत एवं गैर जातिगत उद्योग धंधों पर निर्भर रही है इसीलिए इसे कृषि प्रधान देश भी कहा जाता रहा है लेकिन धीरे-धीरे इस व्यवसाय में बहुत परिवर्तन हुए हैं, चाहे आजादी के पहले की बात हो या फिर आजादी के बाद की। आजादी के बाद जहाँ उच्च कृषि उत्पादन पर अधिक जोर दिया गया है जिसके फलस्वरूप कृषि उत्पादन तो बढ़ा है लेकिन इसके साथ-साथ कृषि तकनीकी भी बदली है, परम्परागत कृषि यंत्रों का उपयोग बहुत सीमित हो गया है। इसके साथ ही साथ कृषक अधिक उत्पादन और अधिक लाभ देने वाली फसलों पर केन्द्रित हो गये है।इसका परिणाम ये हुआ की बहुत सी फसलों का उत्पादन ही समाप्त हो गया। इन फसलों की बुआई, कटाई एवं गहाई के लिए आधुनिक कृषि यंत्रों का उपयोग होने लगा है जिसकी वजह से रोजगार के अवसर बहुत ही सीमित हो गए हैं। एवं जनसंख्या में वृद्धि की वजह से कृषि में छोटी-छोटीजोतों की संख्या में तीव्र गति से वृद्धि हुई है।इसी प्रकार यदि हम घरेलू उद्योगोंकी बात करें तो इनकी संख्या भी बड़े-बड़े आधुनिक उद्योगों के विकसित एवं स्थापित होने की वजह से घटी है एवं जाति आधारित उद्योग धंधे भी कई सामाजिक, आर्थिक एवं संस्थागत सहयोग की कमी की वजह से सीमित हो गये है जिनमें रोजागर पाने वालों की संख्या बहुत ही नगण्य हो गयी है (कुमार:२०१७)।

उपरोक्त परिवर्तन गाँधी जी द्वारा दिए गए कृषि, उद्योग एवं रोजगार संबंधी विचारों एवं गांव के स्वावलंबी या आर्थिक निर्भरता पर प्रश्न चिन्ह खड़ा करता है जिसे गहराई से समझने की जरुरत है।

गांधी जी के आर्थिक विचारों पर साहित्यों का अध्ययन: गाँधी जी के आर्थिक विचार के सम्बन्ध में (जोहनि: २००९) कहते हैं की गांधी जी के आर्थिक विचार काफी अलग हैं क्योंकि उनकी जीवन शैली सादगीभरीथी। गाँधी जी कहते हैं की मनुष्य को अपनी मेहनत और शारीरिक श्रम से ही रोटी और कपड़े की व्यवस्था करनी चाहिए जिसके लिये कृषि है। चोरी, भ्रष्टाचार या अन्य गलत तरीके से प्राप्त की गयी आय/धन के विरोधी थे क्योंकि वे मानवीय मूल्यों के पक्के थे। वे कहते हैं की जरुरत से ज्यादा कमाया धन को समुदाय की भलाई या किसी ट्रस्ट पर खर्च करना चाहिए। रोजगार प्राप्ति के लिए वे छोटे-छोटे कताई, बुनाई एवं बढ़ई से सम्बंधित उद्योगों के विकास के पक्षधर थे जिससे की गांवों में ही लोगों को रोजगार मिल सकेवे ग्रामीण उद्योगों को बढ़ावा देना चाहते थे ग्रामीण बाजारों का भी विस्तार करना चाहते थे खादी उद्योग के लिए भी उन्होंने खास पहल की थी। इसी प्रकार (मुखर्जी २००९:३८) ने अपने लेख में बताया है की गाँधी जी कहते हैं की कोई भी अर्थव्यवस्था आर्थिक रूपसे तब तक आत्मनिर्भर नहीं बन सकती जबतक की उसका पूर्ण रूपसे उद्योगीकरण न हुआ होऔर विशेष रूपसे घरेलू उद्योगों का। इसी वजह से प्रथम प्रधानमंत्री श्री पंडित जवाहरलाल नेहरु ने उद्योगीकरण को बढ़ावा दिया था लेकिन दुर्भाग्यवश घरेलू उद्योग आधुनिक उद्योगों के विकास की वजह से ख़त्म हो गए। इसी सन्दर्भ में (मधुमती:२०११) ने पाया की गाँधी जी कहते हैं की देश की प्रगति उसके अधिकांश ग्रामीण गांवों के विकास, ग्रामीण अर्थव्यवस्था, उद्योग और ग्रामीण कौशल के विकास में निहित है। एवं ग्रामीण विकास के माध्यम से ही ग्राम स्वराज्य की स्थापना की जा सकती है। जिसमें ट्रस्टीशिप, स्वदेशी, पूर्ण रोजगार, रोटी श्रम, आत्मनिर्भरता, विकेंद्रीकरण, समानता एवं नई तालीम जैसे तत्व निहित हों।उनके अनुसार जहाँ तक संभव हो, गाँव में हर गतिविधि को-ऑपरेटिव आधार पर आयोजित की जाना चाहिए। यहां तक कि कृषि के क्षेत्र में, गांधीजी ने सहकारी खेती की सिफारिश की जो श्रम, पूंजी, औजारों को बचाएगी और सभी वयस्क ग्रामीणों को रोजगार प्रदान करेगी और उत्पादन भी बढ़ाएगी। उन्होंने कहा, "हमें भूमि के विखंडन को रोकने का प्रयास करना चाहिए और लोगों को सहकारी खेती के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। गाँव को अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए खाद्य-फसलों और कपास का उत्पादन करना चाहिए। कुछ भूमि मवेशियों के लिए और वयस्कों और बच्चों के लिए खेल के मैदान के लिए भी रखी जानी चाहिए। यदि कुछ भूमि अभी भी उपलब्ध है, तो इसका उपयोग तम्बाखू, अफीम इत्यादि उपयोगी नकदी फसलों को उगाने के लिए किया जाना चाहिए, जिससे गाँव को उन चीजों का आदान-प्रदान करने में सक्षम बनाया जा सके, जो उत्पादन नहीं करते हैं। पूर्ण रोजगार प्रदान करने के उद्देश्य से आर्थिक योजना बनाई जानी चाहिए। गाँव के सभी वयस्कों के लिए। प्रत्येक व्यक्ति को रोजगार की गारंटी दी जानी चाहिए ताकि वह अपनी बुनियादी जरूरतों को गांव में ही पूरा कर सके ताकि वह शहरों की ओर पलायन करने के लिए मजबूर न हो। पूर्ण रोजगार को समानता के साथ जोड़ा जाना चाहिए। शारीरिक श्रम, आत्मनिर्भर गांव की गांधीवादी अवधारणा में एक केंद्रीय स्थान रखता है। इस संबंध में वह रुस-परिजनों और टॉल्स्टॉय से अत्यधिक प्रभावित थे। गांधी जी के अनुसार, प्रत्येक व्यक्ति को अपनी रोटी कमाने के लिए शारीरिक श्रम करना चाहिए। नैतिक अनुशासन और मन के विकास के लिए शारीरिक श्रम आवश्यक है। बौद्धिक श्रम केवल एक संतुष्टि के लिए है और किसी को इसके लिए भुगतान की मांग नहीं करनी चाहिए। गांधीजी ने आधुनिक मशीनों आधारित

औद्योगिकीकरण के सम्बन्ध में कहा की इनसे कुछ ही मदद मिलेगी और इससे आर्थिक शक्ति का केन्द्रीकरण होगा। औद्योगीकरण से गाँवों का निष्क्रिय या सक्रिय शोषण होता है। यह प्रतिस्पर्धा को प्रोत्साहित करता है। बड़े पैमाने पर उत्पादन के लिए विपणन की आवश्यकता होती है। विपणन का मतलब है एक शोषणकारी तंत्र के माध्यम से लाभ-प्राप्ति। इसके अलावा, औद्योगिकीकरण जनशक्ति की जगह लेता है और इसलिए यह बेरोजगारी को जोड़ता है। भारत जैसे देश में, जहां गांवों में लाखों मजदूरों को साल में छह महीने भी काम नहीं मिलता है, औद्योगीकरण से न केवल बेरोजगारी बढ़ेगी बल्कि मजदूरों को शहरी इलाकों में पलायन करने पर मजबूर होना पड़ेगा। यह गांवों को बर्बाद कर देगा। ऐसी तबाही से बचने के लिए गांव और कुटीर उद्योगों को पुनर्जीवित किया जाना चाहिए। वे ग्रामीणों की जरूरतों को पूरा करने के लिए रोजगार प्रदान करते हैं और गांव की आत्मनिर्भरता को आसान बनाते हैं। यदि दो उद्देश्य पूरे होते हैं तो गांधीवादी मशीन के खिलाफ नहीं हैं: आत्मनिर्भरता और पूर्ण रोजगार। गांधी के अनुसार, ग्रामिणों को आधुनिक मशीनों और उपकरणों का उपयोग करने में कोई आपत्ति नहीं होगी जो वे कर सकते हैं और उपयोग करने के लिए खर्च कर सकते हैं। केवल उनका उपयोग दूसरों के शोषण के साधन के रूप में नहीं किया जाना चाहिए। (आईशी2001:३१०) कहते हैं की गांधी से उपजी विचारों की श्रंखला ने पूरे विश्व में सैकड़ों-हज़ारों जमीनी विकासात्मक गतिविधियों के लिए सैद्धांतिक आधार प्रदान किया है। वे मूल रूप से बड़े पैमाने पर औद्योगीकरण, केंद्रीकृत विकास, वैश्विक मुक्त व्यापार और संयुक्त राष्ट्र से स्पेक्ट्रम के विपरीत छोर पर जा रहे हैं? विनियमित बाजार तंत्र, "आर्थिक आदमी" के व्यवहार मॉडल पर आधारित है। यही कारण है कि ये वैकल्पिक विकास सिद्धांत हैं, जो कि अहस्तक्षेप इकोनॉमिक्स या मार्क्सवाद से उपजी किसी भी तरह से अलग हैं। इसी प्रकार (ब्राउन १९६९:३२७) का अध्ययन में, गाँधी जी के विचार के अनुसार ग्रामीण अर्थव्यवस्था। पूरी तरह से शोषण से बचाता है, और शोषण हिंसा का सार है। आपको अहिंसक होने से पहले ग्रामीण-दिमाग होना चाहिए और ग्रामीण-दिमाग होने के लिए आपको कताई में विश्वास रखना होगा।

बदलता ग्रामीणआर्थिक परिदृश्य एवं गाँधी जी के विचारों की प्रासंगिकता: साहित्यों के अध्ययन से पता चलता है की गांधीजी के विचार पूर्णरूप से गांवों को छोटे-छोटे घरेलू उद्योगों को स्थापित कर ग्रामीण अर्थव्यवस्था को आत्मनिर्भर बनाने का था वे शोषण पर आधारित उद्योगीकरण एवं पूंजीवाद के विरोधी थे। लेकिन उनके विचार उस समय की सामाजिक-आर्थिक, जनसांख्यिकीय एवं तकनीकीय परिस्थितियों के अनुसार काफी हद तक प्रासंगिक थे। लेकिन बदलती उपरोक्त परिस्थितियों ने पूरी ग्रामीण अर्थव्यवस्था का स्वरुप ही बदल दिया है। आज पूरा देश वैश्वीकरण का शिकार हो गया है। हर चीज का बजारीकरण हो गया है। बड़े-बड़े उद्योग स्थापित हो गये है, रोजमर्रा की विभिन्न आधुनिक वस्तुओं का उत्पादन और उनकी पहुँच गाँव-गाँव एवं घर-घर तक हो गयी है। जिसकी वजह से हस्तशिल्प और छोटे-छोटे घरेलू उद्योगों का विनाश बड़ी तेजी से हुआ है। शहर और गांवों का फासला सड़कों के जरिये कम हुआ है और साथ ही छोटे-छोटे कस्बों का शहरीकरण तेजी से हुआ है। लोगों की आर्थिक निर्भरता शहरों पर तेजी से बढ़ी है इसी की वजह से शहरी जनसँख्या में बृद्धि हुई है। और ग्रामीण जनसँख्या में भी पूर्व के दशकों में काफी तेजी से वृद्धि हुई है जिसकी वजह से कृषि जोतों का तेजी से विखंडन हुआ है परिणामस्वरूप सीमान्त एवं लघु कृषकों की संख्या में तेजी से वृद्धि होकर ८५ प्रतिशत तक पहुँच गयी है। इसी के साथ-साथ कृषि मजदूरों, गैर कृषि मजदूरों एवं भूमिहीनों की संख्या में भीकाफी तेजी से वृद्धि हुई है। हरित क्रांति के बाद कृषि में तेजी से तकनीकीय परिवर्तन हुआ है जिसकी वजह से बहु फसलों के स्थान पर एक फसलीय, खाद्य फसलों के स्थान पर व्यापारिक फसलों, गोबर खाद के स्थान पर रासायनिक खाद, लकड़ी के हल बक्खर के स्थान पर ट्रेक्टर एवं अन्य लोहे के बने औजारों को बढ़ावा मिला है। इन सबकी वजह से हमारी कृषि का पूरा स्वरुप परम्परागत के स्थान पर आधुनिक हो गया है जो वर्तमान के लिए तो कुछ हद तक ठीक है लेकिन भविष्य के लिए प्रश्न चिन्ह बन गया है। क्योंकी परम्परागत फसले ख़त्म हो चुकी हैं, परम्परागत लकड़ी के बने औजार एवं बैलों का चलन ख़त्म हो चुका है, गोबर खाद का भी इस्तेमाल समाप्त हो गया है। अब कृषि सिर्फ अत्यधिक लागत पर निर्भर हो गयी है जिसने एक बड़े ग्रामीण तबके को बेरोजगार कर शहरों की और रोजगार की तलाश में धकेल दिया है जो गाँधी जी के विचारों के ठीक विपरीत है। जिसे सामान्य स्थिति में लाना मुश्किल ही नही एक चुनौती भी है। इसके लिए सरकार कई प्रकार की कृषि एवं रोजगार आधारित योजनाओं के माध्यम से कृषि को फायदे का व्यवसाय बनाने की कोशिश कर रही है लेकिन कृषि लागत निरंतर बढ़ती ही जा रही है एवं रोजगार के अवसर भी कृषि में ख़त्म होते जा रहे हैं (कुमार: २०१७)। परिणाम स्वरूप कृषि संकट की भयावह स्थिति पैदा हो गयी है जिसका निदान पाना अतिशीघ्र हो गया है।

निष्कर्ष: उपर्युक्त विशलेषण से हम यह निष्कर्ष पर पहुँचते हैं की हमारी ग्रामीण अर्थव्यवस्था में स्वतंत्रता के बाद से अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं चाहे वो सामजिक हो, आर्थिक हो, जनसँख्या संबंधी हो, संस्थागत हो या फिर तकनीकीय हो,जिसका प्रभाव रोजगार, उत्पादन, श्रम, पलायन, एवं उद्योगों पर स्पष्ट रूपसे दिखाई देता हैजो गाँधी जी के द्वारा किये गये प्रयासों एवं दिए गए विचारों एवं सुझावों से ठीक विपरीत हैं। तेजी से होते बदलाओं की वजह से पूरी ग्रामीण परिवेश एवं अर्थव्यवस्था की तस्वीर ही बदल गयी है जिसे गहराई से समझने की जरुरत है।

सुझाव:

१. बदलती हुई ग्रामीण अर्थव्यवस्था के अनुसार कृषि एवं औद्योगिक नीतियों का निर्माण किया जाना चाहिए ताकि भविष्य में आने वाले बदलाओं के बावजूद भी अधिक उपयोगी एवं प्रभावशाली हो सके।

२. गांधीजी द्वारा किए गए प्रयासों एवं दिए गए सुझावों के आधार पर नीतियों का निर्माण किया जाना चाहिए ताकि ग्रामीण अर्थव्यवस्था को आर्थिक रूप से अधिक आत्मनिर्भर बनाया जा सके।

३. आर्थिक नीतियां रोजगार उन्मुख एवं गांवों पर आधारित होना चाहिए ताकि गांवों के लघु एवं सीमान्त किसानों, भूमिहीनों, कृषि मजदूरों एवं गैर कृषि मजदूरों को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाया जा सके।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:

1)Xaxa, Johani and B.K. Mahakul (2009):'Contemporary Relevance of Gandhism'*The IndianJournal of Political Science'* Vol. LXX, No. 1, Jan-Mar.

2)Mukherjee, Rudrangshu (2009):'Gandhi's Swaraj' *Economic and Political Weekly*, December 12, 2009, Vol XLIV No 50, p.38.

3)Madhumathi, M. (2011); 'The Gandhian Approach to Rural Development' *IJCRT* Vol 1, Issue 2 April.

4)Ishii, Kazuya (2001); 'The Socioeconomic Thoughts of Mahatma Gandhi: As an Origin of Alternative Development'*Review of Social Economy*, Vol No. 3, September.

5)Brown, Judith (1969); *Modern Asian Studies*, Cambridge University Press, Vol III, Part 4 October.

6)Kumar, Jeetendra (2017): *Labour and Accumulation in Rural Madhya Pradesh: A Case Study of Dikhatpura Village in Morena District*, PhD Thesis Submitted at School of Economics, University of Hyderabad.

****

राष्ट्रभाषा हिन्दी के विकास में गाँधी जी का योगदान

-डॉ. धर्मराज पवार
सहायक प्रोफेसर (इतिहास विभाग),
उच्च अध्ययन शिक्षा संस्थान (मानित विश्वविद्यालय),
सरदारशहर, राजस्थान।

सारांशः–राष्ट्र की एकता के लिए एक सार्वजनिक भाषा की आवश्यकता होती है।भाषा किसी भी राष्ट्र के सांस्कृतिक उत्थान का महत्वपूर्ण मानदंड है।भाषा के माध्यम से ही लोगों की सृजनशीलता अभिव्यक्त होती है।कुछ अपवादों को छोड़कर कोई भी राष्ट्र विदेशी भाषा से जीवन चर्या नहीं चला सकता।ब्रिटिश काल में अंग्रेजी भाषा में शिक्षा एवं प्रशासनिक कार्य चलाए जाने के कारण देश के समक्ष राष्ट्रभाषा का प्रश्न दुविधा पूर्ण बन गया था। क्योंकि राजकीय भाषा होने के साथ–साथ यह भारत के बद्धिजीवी वर्ग के मध्य विचार आदान–प्रदान का माध्यम बन गया थी।हिन्दी से उनका तात्पर्य 'हिंदुस्तानी' से था जो हिन्दी–उर्दू की मिश्रित भाषा थी।हिन्दी को राष्ट्रभाषा का पद दिलाये जाने के संबंधमें गांधीजी की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है।धीजी का यह भी मानना था कि जो हिंदुस्तानी माता–पिता अपने बच्चों को अंग्रेजी में बोलने और सोचने की बचपन से ही शिक्षा देते हैं, वे एक प्रकार से अपने देश के साथ धोखा कर रहे हैं, वे लोग ऐसा करके अपने बच्चों को आध्यात्मिक एवं सामाजिक विरासत से वंचित कर उन्हें देश सेवा के लिए असमर्थ एवं अनुपयुक्त बनाते हैं। इसी कारण गांधीजी ने अपने बच्चों के साथ हमेशा गुजराती में ही वार्तालाप करना उचित समझा।गांधीजी का विचार था कि विदेशी भाषा द्वारा शिक्षा प्राप्त करने से दिमाग पर असह्यबोझ पड़ता है। यह बोझ हमारे बच्चे उठा तो सकते हैं, लेकिन उसकी कीमत उन्हें चुकानी पड़ती है। वह दूसरा बोझ उठाने लायक नहीं रह जाते है। इससे हमारे अधिकांश स्नातक निकम्मे, कमजोर, निरुत्साही तथा नकलची बन जाते हैं।

शब्द कुजीः–हिन्दीभाषा, गांधीजी, राष्ट्रभाषा,विदेशी भाषा, अंग्रेजी भाशा,उर्दू, नागरी, लिपि, प्रान्तीय भाषा आदि।

प्रस्तावनाः–सभ्य समाज में रस्पर संपर्क का मुख्य अथवा प्रायः या एक मात्र साधन भाषा ही है। राष्ट्र की एकता के लिए एक सार्वजनिक भाषा की आवश्यकता होती है। यदि लोग आपस में बातचीत नहीं कर पाएंगे तो उनके बीच भावनात्मक संबंध कैसे स्थापित होगा। भाषा किसी भी राष्ट्र के सांस्कृतिक उत्थान का महत्वपूर्ण मानदंड है।भाषा के माध्यम से ही लोगों की सृजनशीलता अभिव्यक्त होती है। किसी वर्ग का साहित्य संगीत मिथक लोक कथाएं और इसके अनेक उपलब्धियां भाषा के द्वारा ही संसार के सामने आती है यही कारण है कि भाषा भावनाओं के साथ जुड़ जाती है। वात्सायन के अनुसार भाषा और राष्ट्र की अनन्यता का चोली दामन का रिश्ता है। उन्होंने लिखा है कुछ अपवादों को छोड़कर कोई भी राष्ट्र विदेशी भाषा से जीवन चर्या नहीं चला सकता। मिल्टन का कहना है कि हर राष्ट्र को विदेशी भाषा की अपेक्षा अपनी भाषा को ही तरजीह देनी चाहिए, चाहे यह भाषा और विकसित ही क्यों न हो, क्योंकि विदेशी भाषा का प्रयोग दासता का द्योतक होता है। उनका कहना था– इस बात को मामूली नहीं समझना चाहिए कि कोई राष्ट्र कौन सी भाषा का इस्तेमाल करता है यह सब इतना महत्व नहीं रखता कि इस राष्ट्र के लोग इस भाषा को कितनी विशुद्धता एवं निपुणता के साथ बोलते हैं।आदिकाल से देश के लोगों को एक सूत्र में बांधने के लिए एक भाषा की आवश्यकता रही है। प्रत्येक देश की सर्वाधिक समृद्ध भाषा को राष्ट्रभाषा का गौरवपूर्ण पद प्रदान किया जाता है। उसे राष्ट्र की एकता का प्रतीक माना जाता है।।[1]ब्रिटिश काल में अंग्रेजी भाषा में शिक्षा एवं प्रशासनिक कार्य चलाए जाने के कारण देश के समक्ष राष्ट्रभाषा का प्रश्न दुविधा पूर्ण बन गया था। क्योंकि राजकीय भाषा होने के साथ–साथ यह भारत के बद्धिजीवी वर्ग के मध्य विचार आदान–प्रदान का माध्यम बन गया थी। राष्ट्रीय भावना की जागृति के साथ–साथ राष्ट्रभाषा की माँग भी उठने लगी। काँग्रेस इस जागृति को संगठित रूप देने लगी और देश के सब राष्ट्रवादी देशभक्त इस झंडे के नीचे आकर देश हित की चिन्ता करने लगे। अंग्रेजी राज्य के विरोध के साथ अंग्रेजी भाषा का विरोध भी बढ़ता गया।हिन्दी राष्ट्रभाषा सम्मेलन आयोजित किए जाने लगे।हिन्दी नाना भाशा–भाषियों के बीच संयोग सूत्र बन गई।हिन्दी के माध्यम से ही जनता में राष्ट्रीय स्वाधीनता की आकांक्षा फैली। सर्वतोमुखी प्रतिभा के धनी गांधीजी की उपलब्धियाँ राजनीति एवं समाज सुधार के क्षेत्र में इतनी ज्यादा महत्वपूर्ण रही कि शिक्षा तथा विशेषकर राष्ट्रभाषा हिन्दी विकास के संबंधमें उनके योगदान को पर्याप्त महत्व नहीं दिया गया।[2]हिन्दी से उनका तात्पर्य 'हिंदुस्तानी' से था जो हिन्दी–उर्दू की मिश्रित भाषा थी।हिन्दी को राष्ट्रभाषा का पद दिलाये जाने केसंबंधमें गांधीजी की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है।सन् 1909 में लिखी अपनी पुस्तक हिंद स्वराज्य में लिखते हैं कि–''हर एक पढ़े–लिखे हिंदुस्तानी को अपनी भाषा का हिंदू को संस्कृत का, मुसलमान को अरबी का, पारसी को पर्शियन का और सबको हिन्दी का ज्ञान होना चाहिए। कुछ हिंदुओं को अरबी और कुछ मुसलमानों और पारसियों को संस्कृत सीखनी चाहिए। उत्तर और पश्चिम में रहने वाले हिंदुस्तानी को तमिल भी सीखनी चाहिए। सारे हिंदुस्तान के लिए तो हिन्दी ही होनी चाहिए। उसे उर्दू या नागरी लिपि में लिखने की छूट रहनी चाहिए। हिंदू मुसलमानों के विचारों को ठीक रखने के लिए बहुतेरे हिंदुस्तानियों को दोनों लिपियाँ जानना जरूरी है। ऐसा होने पर हम अपने आपस के व्यवहार से अंग्रेजी को निकाल बाहर कर सकेंगे।'' भारत आने के बाद उन्होंने जिन आंदोलनों का नेतृत्व किया उनमें हिन्दी आंदोलन प्रमुख ही नहीं बल्कि शीर्ष पर था। गांधीजी ने हिन्दीभाषा को भारतीय स्वतंत्रता की वाणी की संज्ञा दी। दक्षिण अफ्रीका के एक समाचार पत्र में उन्होंने कहा था ''यह भाषा उत्तर भारत के सभी लोग बोलते हैं, इसकी माता संस्कृत है, और फारसी होने के कारण यह हिंदू और मुसलमान दोनों को

अनुकूल पड़ सकती है। इसके सिवा फकीर और सन्यासी भी यही भाषा बोलते हैं, अतः इसका प्रसार सभी जगह होता है। इस भाषा का फैलाव बहुत है, यह भाषा अपने आप में बहुत मीठी नम्र और ओजस्वी है। हर एक पाठशाला में स्वभाषा के अतिरिक्त इस भाषा का शिक्षण दिया जाना चाहिए।''[3] गांधीजी का यह भी मानना था कि जो हिंदुस्तानी माता–पिता अपने बच्चों को अंग्रेजी में बोलने और सोचने की बचपन से ही शिक्षा देते हैं, वे एक प्रकार से अपने देश के साथ धोखा कर रहे हैं, वे लोग ऐसा करके अपने बच्चों को आध्यात्मिक एवं सामाजिक विरासत से वंचित कर उन्हें देश सेवा के लिए असमर्थ एवं अनुपयुक्त बनाते हैं। इसी कारण गांधीजीने अपने बच्चों के साथ हमेशा गुजराती में ही वार्तालाप करना उचित समझा।[4] दक्षिण अफ्रीका से भारत लौटने पर गांधीजीने पाया कि हिन्दीके विरोध में अंग्रेजी सरकार कॉंग्रेस के अधिकांश नेता तथा अंग्रेजी राज चलाने वाली नौकरशाही खड़ी थी। गांधीजी ने इन तीनों से मोर्चा लिया गांधीजी ने दक्षिण के चार प्रान्तों आंध्र, तमिलनाडु, केरल और कर्नाटक को हिन्दी के अनुकूल बनाया। बाद में बाकी के प्रान्त आसाम, बंगाल, उड़ीसा, महाराष्ट्र, गुजरात और सिन्ध में हिन्दी का प्रचार चलाकर यहाँ के लोगों को हिन्दी के अनुकूल बनाया। उन्होंने अनेक प्रभावशाली नेताओं को हिन्दी के पक्ष में किया जो आसान काम नहीं था।[5]

गांधीजी का विचार था कि विदेशी भाषा द्वारा शिक्षा प्राप्त करने से दिमाग पर असह्यबोझ पड़ता है। यह बोझ हमारे बच्चे उठा तो सकते हैं, लेकिन उसकी कीमत उन्हें चुकानी पड़ती है। वह दूसरा बोझ उठाने लायक नहीं रह जाते है। इससे हमारे अधिकांश स्नातक निकम्मे, कमजोर, निरुत्साही तथा नकलची बन जाते हैं। उनमें वीरता, निर्भयता और अन्य गुण बहुत क्षीण हो जाते हैं। इससे हम नई योजनाएँ नहीं बना सकते, और यदि बनाते हैं तो, उन्हें पूरा नहीं कर पाते। कुछ लोग जिन में उपयुक्त गुण दिखाई देते हैं वे अकाल ही काल के गाल में चले जाते हैं। हम वैज्ञानिक जगदीश चन्द्र बसु और प्रफुल्ल चन्द्र राय जैसे देशभक्त को देखकर मोहान्ध हो जाते हैं। मुझे विश्वास है कि हमने 5 वर्ष तक मातृभाषा द्वारा शिक्षा पाई होती तो इसमें इतने बसु और राय होते कि उन्हें देखकर हमें अचम्भा होता। यदि हम यह विचार एक तरफ रख दे कि जापान का उत्साह जिस ओर जा रहा है, वह ठीक है या नहीं, तो हमें जापान का साहस आश्चर्यजनक मालूम होगा। उन्होंने मातृभाषा द्वारा जनजागृति की है। इसलिए उनके हर कार्य में नयापन दिखाई देता है, वे शिक्षकों के भी शिक्षक बन गए हैं।

हिन्दी भाषा के पक्षपाती होते हुए भी गांधीजी अंग्रेजी साहित्य का भी आदर करते थे। वे उसे विश्व के श्रेष्ठ ज्ञान एवं दर्शन से परिपूर्ण मानते थे किन्तु वह उसके अध्ययन को केवल छात्रों के लिए उपयोगी मानते थे। जो साहित्यिक प्रतिभा के धनी थ। वे ऐसे छात्रों द्वारा अंग्रेजी साहित्य के समृद्ध ज्ञान को हिन्दी एवं प्रान्तीय भाषाओं में अनुवादित करना चाहते थे। ताकि भारतीयों को भी उस श्रेष्ठ ज्ञान का लाभ प्राप्त हो सके। अर्न्तराष्ट्रीय वाणिज्य के लिए भी वे अंग्रेजी की महत्ता विश्व भाषा के रूप में स्वीकार करते थे।[6]गांधीजीका विचार था कि किसी बालक का सर्वांगीण विकास उसकी मातृभाषा द्वारा शिक्षा दिए जाने पर ही संभव हो सकता है। दूसरी भाषा द्वारा शिक्षा प्रदान किए जाने पर उसकी क्षमता उभर नहीं पाती।[7] गांधीजी ने अपनी आत्मकथा में अंग्रेजी माध्यम द्वारा अध्ययन में होने वाली परेशानियों का वर्णन करते हुए लिखा है ''कक्षा चौथी से जब उनकी शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी हो गया, तो उन्हें काफी कठिनाई का अनुभव होने लगा।''[8] गांधीजी का मानना था कि माँ के दूध के साथ जो संस्कार और मीठे शब्द मिलते हैं, उनके और पाठशाला के मध्य जो मेल होना चाहिए, वह विदेशी भाषा के माध्यम से शिक्षा देने से टूट जाता है। इस सम्बन्ध को तोड़ने वालों का हेतु भले ही पवित्र क्यों न हो फिर भी वे जनता के दुश्मन हैं। हम ऐसी शिक्षा के वशीभूत होकर मातृद्रोह करते हैं।इसके अतिरिक्त विदेशी भाषा द्वारा शिक्षा देने से शिक्षित तथा सामान्य जनता के बीच की दूरी बढ़ जाती है। यही स्थिति अधिक समय तक कायम रही तो एक दिन लार्ड कर्जन का आरोप सही हो जाएगा कि शिक्षित वर्ग जनसाधारण का प्रतिनिधि नहीं है।[9]1908 ईस्वी में गांधीजी ने पहली बार अपने इस मत की औपचारिक अभिव्यक्ति कि ''भारत की जनता को अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा देना उन्हें अंग्रेजी अधीनता में लाना था।'' मेकॉले द्वारा डाली गई भारतीय शिक्षा की नींव ने भारतीयों को पराधीन बना दिया। मैं यह नहीं कहता हूँ कि उनका इरादा यही था परंतु परिणाम यही रहा।[10] उनका विचार था कि ''हिन्दी ही हिंदुस्तान के शिक्षित समुदाय की भाषा हो सकती है, यह बात निर्विवाद सत्य है। यह कैसे हो केवल इसी पर विचार करना है।[11]हिन्दी शिक्षित वर्गों के बीच का माध्यम ही नहीं बल्कि जनसाधारण के हृदय तक पहुंचने का द्वार बन सकती है।इस दिशा में देश की कोई भाषा इसकी समानता नहीं कर सकती, और अंग्रेजी तो कदापि नहीं कर सकती।''[12] उनका मानना था कि ''अंग्रेजी भाषा के माध्यम से शिक्षा में कम से कम 16 वर्ष लगते हैं, यदि इन्हीं विषयों की शिक्षा मातृभाषा के माध्यम से दे दी जाए तो ज्यादा से ज्यादा 10 वर्ष लगेंगे यह राय बहुत से अनुभवी शिक्षकों ने प्रकट की है। हजारों विद्यार्थियों के 6–6 वर्ष बचपन का अर्थ यह होता है कि कई हजार वर्ष जनता को मिल गए।'' किंतु अगर हम गहराई से इस विषय पर सोचे तो पता चलेगा कि अंग्रेजी राष्ट्रीय भाषा नहीं बन सकती ना बननी चाहिए।''सन् 1917 में भड़ौच में हुई दूसरी ''गुजरात शिक्षा परिशद'' में अपने सभापति पद से दिए गए भाशण में राश्ट्र की भाशा–समस्या पर गांधीजीं ने अपने तर्क पूर्ण विचार निम्न शब्दों में व्यक्त किए थे ''कुछ विद्वान मानते हैं कि अंग्रेजी राष्ट्रीय भाषा बन चुकी है।''इसी भाशण में गांधीजी ने राष्ट्रीय भाषा के रूप में मान्यता प्राप्त करने के लिए एक भाषा में निम्नलिखित गुणों का होना आवश्यक बताया था –

वह भाषा राज कर्मचारियों के लिए सरल हो।
उस भाषा के द्वारा भारतवर्ष के परस्पर धार्मिक,
आर्थिक और राजनीतिक व्यवहार निभ सके।
उस भाषा को देश के अधिकांश निवासी बोलते हो।
वह भाषा राष्ट्र के लिए सरल हो।
उस भाषाका विचार करते समय किसी क्षणिक या
अल्पस्थायी स्थिति पर जोर नही देना चाहिए।[13]

उनका यह मानना था कि उपर्युक्त लक्षणों से युक्त हिन्दी भाषा की

समानता करने वाली भारत में अन्य कोई भाषा नहीं है अंग्रेजी भाषा उपर्युक्त मापदंडों में से एक को भी पूर्ण नहीं कर पाती है।[14] जबकि हिन्दी एक अत्यंत सरल भाषा है दक्षिण भारत की 4 भाषाओं सहित हिंदुस्तान के हिंदू, जो भाषाएँ बोलते हैं, उन सब में संस्कृत के बहुत से शब्द है। अतः इन सभी भाषाओं में बहुत समानता है। हमारा इतिहास कहता है कि पुराने जमाने में उत्तर दक्षिण के बीच का व्यवहार संस्कृत द्वारा चलता था।[15] गांधीजी हिन्दीत्तर वासियों को अपना उदाहरण देकर समझाते थे हिन्दी बोलने में होने वाली गलतियों से डरना नहीं चाहिए भूलें करते–करते भूलों को सुधारने का अभ्यास हो जाएगा।[16]

अखिल भारतीय भाषा सम्मेलन लखनऊ में उन्होंने कहा कि ''राष्ट्रभाषा के प्रचार के लिए हमें भगीरथ प्रयत्न करना होगा। सरकार को हमें अंग्रेजी के बजाय हिन्दी भाषा में प्रार्थना पत्र लिखकर भेजना चाहिए। हमें अपनी भाषा में बोलना और लिखना चाहिए जिनको गरज होगी वह हमारी बात सुनेंगे।''[17] राष्ट्रभाषा के लिए गांधीजी 'हिन्दी' या 'उर्दू' शब्द की अपेक्षा 'हिन्दुस्तानी' शब्द का प्रयोग ज्यादा उचित समझते थे। उनकी धारणा थी कि हिन्दी–उर्दू मिश्रित हिन्दुस्तानी जो दोनों के बीच की भाषा है, उसे भारत की राष्ट्रभाषा बनाई जानी चाहिए। देवनागरी में लिखी जाने पर हिन्दी तथा फारसी लिपि में लिखी जाने पर वह उर्दू कही जाती है।[18] हिंदुस्तानी जो दोनों हिन्दी–उर्दू के बीच की भाषा है उसे आम भाषा,हिन्द की भाषा मान ली जाए।[19] वे चाहते थे कि हर भारतीय अरबी लिपि को भी सीखें तथा हिन्दीऔर उर्दू दोनों का प्रचार हिंदू–मुस्लिम एकता के प्रचार में किया जाए। मुगल काल में भी हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा रही है और मुगल सम्राटों ने अरबी या फारसी को उसके स्थान पर थोपने की कोशिश नहीं की। उनका मानना था कि हिंदुस्तानी भाषा राष्ट्रभाषा बन चुकी है हमने सदियों पहले उसका राष्ट्रभाषा के रूप में प्रयोग किया है। गांधीजी संपूर्ण भारत के लिए एक लिपि देवनागरी अपनाए जाने के पक्षधर थे। उनका विचार था कि ''राष्ट्रीय भाषा ऐसे शब्दों एवं मुहावरों से पूर्ण होनी चाहिए जिससे अधिकांश जनता समझ सके।[20] अर्थात हिन्दी भाषा जटिल नहीं बने।'' इस प्रकार स्पष्ट है कि गांधीजी ने बार–बार मिली जुली भाषा हिंदुस्तानी का ही समर्थन किया। उन्होंने कई बार हिन्दी को परिभाषित करने का प्रयत्न किया उनके अनुसार ''हिन्दी उस भाषा का नाम है जिसे हिंदू और मुसलमान कुदरती तौर पर बगैर प्रयत्न के बोलते हैं 'हिंदुस्तानी' और 'उर्दू' में कोई फर्क नहीं है।[21] वे राष्ट्रभाषा का प्रयोग नहीं करना राष्ट्रभाषा का अपमान समझते थे। उन्होंने कहा था कि ''देश सेवा करने के लिए उत्सुक सब है, परंतु राष्ट्र सेवा तब तक संभव नहीं है, जब तक कोई राष्ट्रभाषा ना हो।''[22]राष्ट्रभाषा के संबंध में गांधी जी के विचारों को अच्छी तरह समझने के लिए यह आवश्यक है कि हिन्दी की जो परिभाषा उन्होंने दी है उसे हृदयंगम कर लिया जाए। एक नहीं अनेक स्थानों पर उन्होंने हिन्दी संबंधी अपनी परिभाषा को दोहराया है। गांधीजी की यह परिभाषा अपना एक ऐतिहासिक महत्व रखती है। गांधीजी का कहना है–''हिन्दी भाषा मैं उसे कहता हूँ जिसे उत्तर में हिंदू और मुसलमान बोलते हैं और जो देवनागरी अथवा उर्दू लिपि में लिखी जाती है।1918 काहिन्दी साहित्य सम्मेलनइंदौर में आयोजितकिया गया था। इस सम्मेलन के अध्यक्षीय भाषण में इसी उपरोक्त परिभाषा को दोहराते हुए उसे निम्नलिखित शब्दों में अधिक स्पष्ट किया था–''मैं जिसे हिन्दी भाषा मानता हूँ वह न तो एकदम संस्कृतमयी है और न एकदम फारसी शब्दों से लदीं हुई है। देहाती बोली में जो माधुर्य मैं देखता हूँ वह न लखनऊ के मुसलमान भाइयों की बोली में न प्रयाग के पंडितों की बोली में पाया जाता है। भाषा वही श्रेष्ठ है जिसको जनसमूह सहज में समझ ले।''[23] गांधीजी के दो मूलभूत सिद्धांत है–कताई और हिन्दी सीखना उन्होंने कहा था कि ''अगर मुझे अकेले छोड़ दिया जाए तो आप मुझे अपनी शक्ति भर सूत कातने और दत्तचित्त होकर हिंदुस्तानी की पुस्तकों को पढ़ते हुए की पाएँगे।'' वह तानाशाही के विरोधी थे, पर हिन्दी को राष्ट्रभाषा का दर्जा दिलाए जाने के लिए तानाशाह बनने को भी तैयार थे, अगर मेरे हाथों में तानाशाही सत्ता हो तो मैं आज ही विदेशी माध्यम के जरिए दी जानेवाली हमारे लड़के और लड़कियों की शिक्षा बंद करवा दूँ तथा सारे शिक्षकों एवं प्रोफेसरों से यह माध्यम तुरंत बदलवा दूँ या उन्हें बर्खास्त करा दूँ।[24] उनके अनुसार''हिन्दी ही भारत की राष्ट्रभाषा हो सकती है, क्योंकि राष्ट्रभाषा पद पर आसीन होने के लिए यह आवश्यक है कि सर्वसाधारण उस भाषा को आसानी से समझ तथा सीख सकें और यह गुण सिर्फ हिन्दी में ही है।''[25] वह राष्ट्रभाषा को स्वराज्य प्राप्ति का सशक्त माध्यम मानते थे। उन्होंने कहा था ''मेरे विचार में स्वराज्य प्राप्ति की गति में तीव्रता लाने के लिए स्वदेशी, हिंदू–मुस्लिम एकता तथा राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी का प्रचार आवश्यक है।''[26]

हिन्दी को राष्ट्रभाषा का गौरव प्रदान करने के लिए उन्होंने बार–बार हिन्दीत्तर प्रदेश की जनता से इसे पढ़ने तथा बोलने का आग्रह ही नहीं किया बल्कि हर सभा एवं सम्मेलनों में इसके विकास के लिए प्रस्ताव भी पारित करवाए गांधीजी के आवाहन पर मुंबई, कोलकाता के समृद्ध मारवाड़ीयों ने काफी धन राशि मद्रास प्रेसिडेंसी में हिन्दी प्रचार के लिए भेंट की।[27]गांधीजीने हिन्दी के प्रसार के लिए गुजराती समाचार पत्र नवजीवन का प्रकाशन अगस्त 1921 से हिन्दी में करना प्रारंभ किया। वे स्वयं इस के संपादक थे। गुजरात के लोगों को हिन्दी संस्करण ज्यादा से ज्यादा पढ़ने के लिए वह हमेशा प्रेरित करते थे।[28] 1924 ईस्वी में बेलगाँव में हुए काँग्रेस अधिवेशन के अध्यक्ष पद पर से बोलते हुए उन्होंने कहा कि ''यह कितने दुःख की बात है कि हम स्वराज्य की बात भी अंग्रेजी में करते हैं।''[29] इसी सम्मेलन में उन्होंने यह प्रस्ताव रखा कि ''निश्चित अवधि के अंतर्गत प्रांतीय कार्यालयों, विधानमंडलों एवं अदालतों की भाषा उस प्रांत की भाषा होनी चाहिए। प्रिवीं कौन्सिल तथा अंतिम अपील की अदालत की भाषा हिंदुस्तानी होनी चाहिए। जबकि लिपि देवनागरी या फारसी हो। अंतरराष्ट्रीय कूटनीति की भाषा अंग्रेजी होनी चाहिए।हिन्दी को वह अर्न्तप्रांतीय प्रयोग के लिए उपयुक्त समझते थे, भले ही वह टूटी–फूटी क्यों ना हो। किंतु इसके साथ–साथ यह भी स्पष्ट करना चाहते थे कि हिन्दी प्रादेशिक भाषाओं का स्थान न ले तथा उसकी अपनी एक मर्यादा हो। इस संबंधमें उनके विचार इस प्रकार थे ''यह बात सभी को स्पष्ट रूप

से समझ लेनी चाहिए कि हिन्दी को प्रादेशिक भाषाओं का स्थान कतई नहीं लेना है उसे अर्न्तप्रांतीय विचार का माध्यम बनना है और सभी अखिल भारतीय संगठनों की अधिकृत भाषा का स्थान लेना है। एक अन्य स्थान पर भी उन्होंने स्पष्ट किया था कि ''मुझे कहने में जरा भी शक नहीं है कि हिंदुस्तानी सारे हिंदुस्तानियों के अर्न्तप्रांतीय व्यवहार के लिए सबसे अच्छी भाषा होगी।[30]

उन्होंने हिन्दी को राष्ट्रभाषा का गौरव प्रदान कराने के जो प्रयत्न किए उसमें भाषोत्तेजक संघ की स्थापना महत्वपूर्ण स्थान रखती थी। इसका उद्देश्य ''प्रत्येक पाठशाला में हिन्दी उपयोग बढ़ाना, पारिभाषिक शब्दों पर शोध, विदेशी भाषा का उपयोग राजनीति आदि में नहीं हो इस बात का ध्यान रखना जहाँ हिन्दी शिक्षक की आवश्यकता हो वहाँ सहायता देना बिना कोई शुल्क लिए हिन्दी शिक्षक स्वयं–सेवक तैयार करना था।[31] गांधीजी के प्रयत्नस्वरूप मद्रास में दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की स्थापना हुई।हिन्दी साहित्य सम्मेलन के मद्रास अधिवेशन के एक प्रस्ताव द्वारा काँग्रेस की महासभा तथा कार्यकारिणी समिति ने हिन्दी में समस्त कार्यवाही प्रस्ताव पारित किया। इस अवसर पर गांधीजी का अभिभाषण उल्लेखनीय है।''अंग्रेजों ने यदि अंग्रेजी के स्थान पर प्रांतीय भाषाओं या हिन्दी को महत्वपूर्ण स्थान दिया होता तो आज प्रांतीय भाषाएँ आश्चर्यजनक रूप से समृद्ध होती। मैं भाषा पर इतना जोर इसलिए देता हूँ कि राष्ट्रीय एकता प्राप्ति का यह सबसे महत्वपूर्ण साधन है और जिसका दृढ़ इसका आधार होगा, उतनी ही प्रशस्त हमारी एकता होगी। इससे पहले भी वह 18 मार्च 1920 को श्री वी. एस. श्रीनिवासशास्त्री को लिख चुके थे कि हिन्दी और उर्दू के मिश्रण से निकली हुई हिंदुस्तानी को पारस्परिक संपर्क के लिए राष्ट्रभाषा के रूप में निकट भविष्य में स्वीकार कर लिया जाए।भावी सदस्य इंपीरियल कौन्सिल में इस तरह काम करने को वचनबद्ध होगे, जिससे वहां हिंदुस्तानी का प्रयोग। प्रारंभ हो सके।उनका सुझाव था कि हिन्दी पुस्तकों की भाषा सरल सुगम और ग्राह्य हो। जो लेखक या व्याख्याता चुन–चुन कर संस्कृत अरबी और फारसी के कठिन व जटिल शब्दों का प्रयोग करता है। वह देश का अहित करता है। हमारी राष्ट्रभाषा में वे सभी प्रकार के शब्द आने चाहिए जो जनता में प्रचलित हो गए हैं। जिस भाषा को हम राष्ट्रभाषा बनाना चाहते हैं। उसका साहित्य स्वच्छ तेजस्वी तथा उच्चगामी होना चाहिए।[32]हिन्दी को राष्ट्रभाषा का दर्जा दिलाने के लिए सभी हिन्दीत्तर प्रांत के निवासियों को हिन्दी सीखने और बोलने की सलाह देते थे। इस प्रकार गांधीजी ने आजीवन हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में मान दिलाने का प्रयत्न किया उनके प्रयत्न शुरू 1947 में जब भारत स्वतंत्र हुआ तब संविधान में हिन्दी को संघ की राजभाषा और देवनागरी को राजनीति स्वीकृत की गई।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1.गुप्ता, दीनदयाल, प्रोसिडिंग अंड ट्रान्सलेशन ऑफ द ऑल इंडिया ओरिएंटल कॉन्फरन्स सेशन दिल्ली, दिसंबर, 1957, भाग 1, दिल्ली 1959, पृ 227।

2.पटेल, एस. एस. एजुकेशन फिलोसोफी ऑफ महात्मा गांधी, नवजीवन प्रकाशन हाउस, अहमदाबाद, 1955, प्रस्तावना, पृ. 04।

3. इंडियन ओपिनियन फिनिक्स, 1906।
4. गांधी, एम.के. सत्य के प्रयोग, नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद, 1937, पृ. 171।
5. काका, कालेलकर, गांधी हिंद दर्शन, नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद, पृ. 300।
6. महात्मा गांधी, का अध्यक्षीय भाषण द्वितीय गुजरात भरूच प्रांतीय शिक्षा सम्मेलन, 20 अक्टूबर, 1971।
7. नोटेशन जी ए टीचर्स एंड राइटिंग्स ऑफ महात्मा गांधी 202 1918 पृ 426 28।
8. गांधी, एम.के, सत्य के प्रयोग, पृ. 14–15।
9. महात्मा गांधी, हिंद स्वराज, नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद, 1949, पृ. 76।
10. वही, पृ. 71–77।
11. प्रताप, 28–5–1917।
12. वही, दिनांक 3–7– 1917।
13. नतेसन, जी. ए. स्पीचेस एंड राइटिंग्स ऑफ महात्मा गांधी, 20–2–1918, पृ. 426–28।
14. उपर्युक्त, 4–2–1916, पृ. 318–20।
15. उपर्युक्त, 20–10–1917, पृ. 395–99।
16. उपर्युक्त
17. गुजराती नवजीवन, 1–6–1924।
18. महात्मा गांधी, भरूच प्रांतीय–शिक्षा सम्मेलन, 20–10–1917।
19. हरिजन सेवक, 15–03–1942।
20. नतेसन, 20–04–1935, पृ. 429–30।
21. उपर्युक्त, 20–10–1917।
22. अमृत बाजार पत्रिका, जनवरी, 1918।
23. यंग इंडिया, 2–2–1921।
24. यंग इंडिया, 1–9–1921, हिंदी नवजीवन, 2–9–192।
25. द कलेक्टिव वर्क ऑफ महात्मा गांधी, भाग 17, पृ. 481।
26. अग्रवाल मारवाड़ी सम्मेलन, मुंबई, 1920।
27. हिंदी नवजीवन, 17–8–1924।
28. गांधी अध्यक्षीय उद्बोधन बेलगाम कांग्रेस रिपोर्ट ऑफ द् 39 इंडियन नेशनल कांग्रेस दिसंबर 26, 1924, पृ13–14।
29. वही, द कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी, भाग 25 पृ 481।
30. संपूर्ण गांधी वांग्मय, खंड 17, नवजीवन ट्रस्ट अहमदाबाद, 1960, पृ. 1009,
31. द कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी, भाग 17 पृ 97–98।
32. एजुकेशन फिलोसोफी ऑफ महात्मा गांधी, पृष्ठ 223।
33. हिंदी नवजीवन, 13–3–1930।

****

ऐतिहासिक विचार और स्वतंत्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री

मोनी
इतिहास विभाग,
सामाजिक शास्त्र विभाग,
विश्वविद्यालय,दिल्ली 11007

सार- *समय के साथ-साथ इतिहास लगातार बनता जाता है इसीलिए इस लेख को लिखने का उद्देश्य भी इतिहास को परिभाषित करते हुये स्वतंत्र भारतीय समाज का स्वपन देखने वाले देश के प्रथम प्रधानमंत्री स्वर्गीय पंडित जवाहरलाल नेहरु जिन्हें व्यापक रूप से आधुनिक भारत का रचियता भी माना जाता के द्वारा दिये गए आजाद भारत के लक्ष्य को दर्शाना है।*

बीज शब्द –इतिहास, मानव जीवन,अतीत,स्वतंत्रता, देश,प्रधानमंत्री, लक्ष्य।

प्रस्तावना- मनुष्य एक चिंतनशील प्राणी है। उसका प्रत्येक कार्य विचारपूर्ण होता है। उसके हृदय में हमेशा उत्कंठा विधमान रही है। इसी उत्कंठा तथा जागृति के फलस्वरूप उसका ध्यान अतीत की जानकारी एवं अध्ययन की ओर उन्मुख हुआ है। भविष्य वर्तमान में और वर्तमान भूतकाल में परिवर्तित होता रहा है तथा भविष्य वर्तमान से व वर्तमान भूतकाल से जुड़ा रहता है। इतिहास मानव द्वारा विकसित समाज की छवि को उजागर करते हुये समय के साथ परिवर्तित होता रहता है। इस प्रक्रिया का मानव जीवन से घनिष्ठ संबंध है।भारतीय इतिहास भी इसी प्रक्रिया का भाग रहा है जिसमे प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल या समकालीन समय तक बहुत से परिवर्तन हुए है। औपनिवेशिक शासन काल से शुरू हुआ भारतीय आधुनिक काल आज भी लगातार परिवर्तित हो रहा है। आज भारत को औपनिवेशिक शासन से स्वतंत्र हुए 75 वर्ष हो चुके है। और इन 75 वर्षो में भारत में 15प्रधानमंत्री हुये है। लेकिन प्रथम प्रधानमंत्री जिन्होंने देश की बागडोर ऐसे समय में सभाली जब भारतीय समाज और अर्थव्यवस्था पूर्णत चरमराई हुई थी।प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरु न सिर्फ देश को गुलामी से आजाद करने के आंदोलनों में सक्रिय रूप से शामिल रहे बल्कि आजादी के बाद भी देश को विकास के मार्ग पर अग्रसर किया, तथा आजादी के पूर्व जो लक्ष्य उन्होंने रखा उसे पूरा करने का प्रयास भी किया।

उद्देश्य- इतिहास एक ऐसा विषय है जिसे सीमाओं में नहीं बांधा जा सकता। इतिहास हर विषय से संबंधित है। प्राचीनकाल से आज तक इस पृथ्वी पर जो कुछ भी हुआ है वह इतिहास ही है। हर वस्तु का अपना इतिहास होता है। एक विद्वान का मानना है कि इतिहासकार के प्रयास का लक्ष्य अतीत तथा वर्तमान के मध्य एक ऐसे सेतु का निर्माण करना है जिसके माध्यम से वह समसामयिक समाज को अतीत का अवलोकन कराकर अतीत के उद्धरणों द्वारा वर्तमान को प्रशिक्षित करे तथा भविष्य का मार्गदर्शन कर सकें।[1]जब स्मृति अथवा अतीत को वैज्ञानिक अध्ययन के सहारे क्रमबद्ध किया जाता है तब इतिहास का जन्म होता है।अर्थात् इतिहास वह है जो अतीत का अवलोकन करते हुये वर्तमान को शिक्षा देता है तथा भविष्य के लिये पथ प्रशस्त करता है। कुछ विद्वानों का मानना है कि इतिहास अतीत की महत्वपूर्ण घटनाओं का अभिलेख है, परन्तु यदि देखा जाए तो इतिहास सम्पूर्ण अतीत का आलेख है। समाज का हर पहलू इतिहास का अंग है। इस धरती पर इतिहास का सम्बन्ध मानवीय अस्तित्व के शुरू होने से ही है। मनुष्य ने इस धरती पर कहां तथा कब पैर रखा वहीं से मनुष्य का इतिहास प्रारम्भ होता है।

History (हिस्ट्री) शब्द की उत्पत्ति यूनानी शब्द हिस्टोरिया (Historia) से मानी जाती है जिसका अर्थ होता है जानना अथवा ज्ञान होना। तथा हिस्ट्री शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग भी यूनान निवासी हेरोडोटस ने किया था इसीलिए हेरोडोटस को ही इतिहास का जनक माना जाता है। इस समय में इतिहासकार उसे कहते थे जो वाद-विवाद का निर्णय करता था, तथा जिसे विषय की पूर्णतया जानकारी अथवा अच्छी तरह समझ होती थी।[2]इतिहास शब्द का शाब्दिक अर्थ है अतीत में घटित घटनाओं को दर्शाना। कहा जाता है कि इतिहास वर्तमान का नहीं बल्कि अतीत का होता है। किसी भी स्वतंत्र देश के प्रत्येक नागरिक के लिए इतिहास की जानकारी आवश्यक है; विशेषकर नई पीढ़ी के लिए, जो देश का नव निर्माण करती है।[3]तथा किसी भी समाज को सुचारू रूप से संचालित करने के लिए उस देश के इतिहास के बारे में लोगों को जानकारी अवश्य होनी चाहिए। इतिहास लगातार लोगों को अतीत में घटित घटनाओं को परिवर्तित करने के लिए प्रेरित करता है। साथ ही इतिहास को किसी सीमा में नहीं बांधा जा सकता। इसके अलावा अतीत को जब वैज्ञानिक अध्ययन के सहारे क्रमबद्ध करते है तो इतिहास का आविर्भाव होता है।

रेनियर ने कहा है कि इतिहास एक कहानी है। जी. एम. ट्रेवेलियन के अनुसार भी इतिहास एक कथा है। हेमरी पेरिने ने इतिहास को समाज में रहने वाले मनुष्यों के कार्यो एवं उपलब्धियों की कहानी बताया है।[4]प्रख्यात विद्वान जॉन जैकब एंडरसन के अनुसार "इतिहास राष्ट्र के उत्थान और पतन का, मनुष्य जाति के बीच में घटीहुई घटनाओं तथा अन्य महान परिवर्तनों का लेख है जिसने मनुष्य के उत्थान में उसके राजनीतिक एवं सामाजिक अवस्था को प्रभावित किया है"[5]एडवर्ड हेलेट कार के अनुसार "इतिहास अतीत और वर्तमान के बीच एक अंतहीन संवाद है"[6]डब्ल्यू. सी. सेलर के अनुसार "इतिहास वह नहीं है जो आप सोचते है। यह वह है जो आप स्मरण रखते है"[7]ओकशाट के कथन अनुसार "सच यह है कि इतिहास में अतीत वर्तमान के साथ बदलता है।"[8]इन विद्वानों की परिभाषाओं का मूल सार यही है कि इतिहास एक ऐसा शास्त्र है जिसमें हम विश्व के विभिन्न देशों के उदय और विनाश के कारणों का अध्ययन करते है। इस शास्त्र में ऐसी घटनाओं का उल्लेख किया जाता है जिन्हें हम स्मरण रखते है।

वास्तव में, कहा जाये तो मानव की स्मृति में अतीत की जो घटनाएं विधमान रहती है वही इतिहास होता है।व्यक्ति जब इतिहास का अध्ययन करता है तो भले ही वह वर्तमान में रहता है लेकिन उसके अतीत का आलोक भी साकार हो उठता है। व्यक्ति उस समय अतीत और वर्तमान दोनों को साथ लेकर जीता है। तथा जब इतिहास का वाचन करता है तो वर्तमान में रहकर अतीत से संवाद करता है।इस संसार में जितने भी देश है, सभी का अपना-अपना इतिहास है। ठीक उसी प्रकार भारत का भी अपना इतिहास है। और इतिहास के इसी महत्व को समझते हुये ही पंडित जवहारलाल नेहरु ने भी इतिहास के महापुरुषों नामक पुस्तक की रचना की। क्योंकि उनका मानना था कि किसी भी देश का विकास करने के लिये पहले उसके अतीत को जान लेना आवश्यक है। और आज के वर्तमान समय में जहां एक तरफ हम औपनिवेशिक शासन से स्वतंत्र हुए स्वतंत्रता के 75वर्षो का उत्सव मना रहे है। वही उन लक्ष्यों को भी पाने का प्रयास कर रहें है जिनके बारे में हमारे देश के प्रथम प्रधानमंत्री ने अब से 75 वर्ष पूर्व पाने के लिए देश की भावी पीढ़ी को प्रेरित किया था जिसे उन्होंने स्वतंत्रता के दिन ट्रिस्ट विद डेस्टिनी (नियति से वादा) नामक अपने प्रसिद्ध भाषण में कहा था।पंडित जवाहरलाल नेहरु ने १४ अगस्त की आधी रात के समय स्वतंत्र हुये भारतीय लोगों के मध्य वायसराय लॉज जो मौजूदा राष्ट्रपति भवन है से हिंदी में ऐतिहासिक भाषण दिया जो आज भी 20 वीं सदीं के महानतम भाषणों में से एक है। जिसमें उन्होंने बीते हुए इतिहास को याद किया और भविष्य के लक्ष्य को निर्धारित किया।

जिसके कुछ शब्द इस प्रकार है- *"कई सालों पहले, हमने नियति से एक वादा किया था, और अब समय आ गया है कि हम अपना वादा निभायें, पूरी तरह न सही पर बहुत हद तक तो निभायें।आधी रात के समय, जब दुनिया सो रही होगी, भारत जीवन और स्वतंत्रता के लिए जाग जाएगा। ऐसा क्षण आता है, मगर इतिहास में विरले ही आता है, जब हम पुराने से बाहर निकल नए युग में कदम रखते है, जब एक युग समाप्त हो जाता है, जब एक देश की लम्बे समय से दबी हुई आत्मा मुक्त होती है। यह संयोग ही है कि इस पवित्र अवसर पर हम भारत और उसके लोगों की सेवा करने के लिए तथा सबसे*

बढ़कर मानवता की सेवा करने के लिए समर्पित होने की प्रतिज्ञा कर रहे है। ....आज हम दुर्भाग्य के एक युग को समाप्त कर रहे है और भारत पुन: स्वयं को खोज पा रहा है। आज हम जिस उपलब्धि का उत्सव मना रहें है; वो केवल एक कदम है, नए अवसरों के खुलने का। इससे भी बड़ी विजय और उपलब्धियां हमारी प्रतीक्षा कर रही हैं। भारत की सेवा का अर्थ है लाखों-करोड़ों पीड़ितों की सेवा करना।

इसका अर्थ है निर्धनता, अज्ञानता, और अवसर की असमानता मिटाना। हमारी पीढ़ी के सबसे महान व्यक्ति की यही इच्छा है कि हर आँख से आंसू मिटे। संभवत: ये हमारे लिए संभव न हो पर जब तक लोगों कि आँखों में आंसू है, तब तक हमारा कार्य समाप्त नहीं होगा। आज एक बार फिर वर्षो के संघर्ष के बाद, भारत जागृत और स्वतंत्र है।भविष्य हमें बुला रहा है। हमें कहाँ जाना चाहिए और हमें क्या करना चाहिए, जिससे हम आम आदमी, किसानों और श्रमिकों के लिए स्वतंत्रता और अवसर ला सकें, हम निर्धनता मिटा, एक समृद्ध, लोकतांत्रिक और प्रगतिशील देश बना सकें। हम ऐसी सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक संस्थाओं को बना सकें जो प्रत्येक स्त्री-पुरुष के लिए जीवन की परिपूर्णता और न्याय सुनिश्चित कर सकें? कोई भी देश तब तक महान नहीं बन सकता जब तक उसके लोगों की सोच या कर्म संकीर्ण है।[9]

आजादी और बंटवारे के बाद का उनका ये भाषण आज भी प्रासंगिक है उन्होंने अपने भाषण के द्वारा भारत के लोगों में नई, मुक्त सुबह की उम्मीद जगाई और देश को भोगोलिक और आंतरिक रूप से सांप्रदायिक आधार पर विभाजित करने के बावजूद भी साहस को प्रेरित किया। और कहा " ये ऐसा समय होगा जो इतिहास में बहुत कम देखने को मिलता है। पुराने से नए की ओर जाना, एक युग का अंत हो जाना, अब सालों से शोषित देश की आत्मा अपनी बात कह सकती है" यह संयोग ही है कि हम पूरे समर्पण के साथ भारत और उसकी जनता की सेवा के लिए प्रतिज्ञा ले रहे है। इतिहास की शुरुआत के साथ ही भारत ने अपनी खोज शुरू की और न जाने कितनी सदियां इसकी भव्य सफलताओं और असफलताओं से भरी हुई है।भविष्य में आराम नहीं करने के लिये कहते हुए उन्होंने कहा "भारत की सेवा का मतलब है करोड़ों पीड़ितों की सेवा करना"। इसका अर्थ है अज्ञानता और गरीबी को मिटाना, बीमारियों और अवसर की असमानता को खत्म करना। हमारी पीढ़ी के सबसे महान व्यक्ति की भी इच्छा यही रही है कि हर आंख से आंसू मिट जाएं। शायद यह हमारे लिए पूरी तरह से संभव न हो पर जब तक लोगों कि आँखों में आंसू हैं और वो पीड़ित हैं तब तक हमारा काम ख़त्म नहीं होगा और इसलिए हमें मेहनत करनी होगी जिससे हम अपने सपनों को साकार कर सकें। ये सपने भारत के लिए है, साथ ही पूरे विश्व के लिए भी है। आज कोई खुद को बिलकुल अलग नहीं सोच सकता क्योंकि सभी राष्ट्र और लोग एक-दूसरे से बड़ी निकटता से जुड़े हुए है। जिस तरह शांति को विभाजित नहीं किया जा सकता, उसी तरह स्वतंत्रता को भी विभाजित नहीं किया जा सकता। इस दुनिया को छोटे-छोटे हिस्सों में नहीं बांटा जा सकता है। हमें ऐसे आजाद महान भारत का निर्माण करना है जहां उसके सारे बच्चे रह सकें।

निष्कर्ष- यदि इतिहास ही न हो तो हम ये कभी नहीं जन पायेगे कि हमारे पूर्व में किसी तरह की घटनाये घटित हुई है, इसीलिए इतिहास का अपना ही महत्व है।अतं हम कह सकते है कि इतिहास का मानव जीवन में बहुत महत्वपूर्ण योगदान है। साथ ही ऐसे महापुरुषों का भी जो इतिहास में विरले ही हुये है जैसे पंडित जवहारलाल नेहरु। उन्होंने आज़ादी की पूर्व संध्या पर जो भी कहा वो आज भी सराहनीय है।भारतीय स्वतंत्रता और इतिहास के संदर्भ में उन्होंने कहा हमारा अतीत हमसे जुड़ा हुआ है और हम अक्सर जो वचन लेते रहे है उसे निभाने से पहले बहुत कुछ करना है लेकिन निर्णायक बिंदु अतीत हो चुका है, और हमारे लिए एक नया इतिहास शुरू हो चुका है, एक ऐसा इतिहास जिसे हम बनाएंगे और जिसके बारे में और लोग लिखेंगे। हम कह सकते है कि वे समकालीन भारतीय राष्ट्र-राज्य: एक धर्मनिरपेक्ष, समाजवादी, सार्वभोम और लोकतांत्रिक गणराज्य के निर्माता रहे।

संदर्भ सूची

1. https://www.thoughtco.com/what-is-history-collection-of-definitions-171282 accessed on 29th October 2021.
2. Dr. Manu Sharma & Dr. Santosh Kumar,ऐतिहासिक विचार एवं इतिहास लेखन, Laxmi Publication (P) LTD. Pp.1-4.
3. पंडित जवाहरलाल नेहरु, इतिहास के महापुरुष, सस्ता साहित्य मण्डल-प्रकाशन-1962 accessed on 7th November 2021.
4. https://www.abplive.com/news/india/special-series-on-independence-day-15-august-all-prime-minister-speech-till-now-jawahar-lal-nehru-address-1952894 accessed in September 2021.
5. https://www.amarujala.com/india-news/midnight-on-august-14-1947-jawaharlal-nehru-first-speech-tryst-with-destiny?pageId=1 accessed on 15th November 2021.
7. Carr E. H., what is History, published by penguin classic, 2018.
8. Sreedharan E., A textbook of Historiography 500 BC to AD 2000, publication by Orient Black Swan, 2004.
9. सरकार सुमित, आधुनिक भारत 1885-1947, Macmillan publishers India Ltd, 1989.

****

-सार्जेंट अभिमन्यु पाण्डेय 'मन्नू'
गायत्री दीप, आदर्श पथ,
फाजिल नगर, कुशीनगर, (उप्र)
9452359568

अपना-अपना युद्ध

सामना हर स्थिति का स्वयं ही करना होता है
अपना-अपना युद्ध सभी को लड़ना होता है

जीवन यह मानव का एक मैदान-ए-जंग है
कभी को मिलता साथ कभी ना कोई संग है
अपना-अपना बल- पौरुष दिख लाना होता है
अपना-अपना युद्ध सभी को लड़ना होता है

जन्म से लेकर अन्त तलक जीवन एक सफ़र है
चाहे-अनचाहे भी इस पर चलना मगर है
निर्धारित कार्यों को समयसे करना होता है
अपना-अपना युद्ध सभी को लड़ना होता है

जीवन अपना सभी शान्ति से जीना चाहें
पूरी सब इच्छाएं अपनी कर नाचा हें
किसी को हंसना और किसी को रोना होता है
अपना-अपना युद्ध सभी को लड़ना होता है

मन्नू इसके गूढ़राज को जो भी समझा है
सुख- शान्ति से जिया और वह सब कुछ पाया है
बरना इस अनमोल रतन को खोना होता है
अपना-अपना युद्ध सभी को लड़ना होता है

सामना हर स्थिति का स्वयं ही करना होता है
अपना-अपना युद्ध सभी को लड़ना होता है

बढता प्रदूषण

मानव द्वारा प्रकृति संग जब छेड़छाड़ कुछ बढ़ जाती है
कभी-कभी तब प्रकृति भी अपना रौद्र रूप दिखला जाती है
सूखा कभी तो कभी बाढ़ के रूप में बिपदा आ जाती है
संचित सपने मानवता के संग बहाकर ले जाती है

अपनी सुविधा लिए मान वने ऊंचे-ऊंचे पहाड़ भी काटे
निर्मल बहती नदी धार को बांध बनाकर रास्ते पाटे
बादल फटने पहाड़ दरकने तक की नौबत आ जाती है
संचित सपने मानवता के संग बहाकर ले जाती है

फैक्ट्री और घरों का दूषित जल जब शुद्ध नदी में गिरता
नदी के बहते निर्मल जल को गंदा और प्रदूषित करता
वही प्रदूषित धारा जल की रोग बीमारी ले आती है
संचित सपने मानवता के संग बहाकर ले जाती है

वृक्ष धरा के हैं भूषण जब नर स्वारथ में लगे काटने
प्राण वायु की जगह प्रदूषित वायु जीवों में लगे बांटने
खोता पर्यावरण संतुलन महामारी तक आ जाती है
संचित सपने मानवता के संग बहाकर ले जाती है

मन्नू मानव को यदि अपने जीवन को है सुरक्षित रखना
नदी पहाड़ जंगल धरती को सबसे पहले संरक्षित करना
प्रदूषण मुक्त प्रकृति जीवन में खुशहाली लेकर आती है

मानव द्वारा प्रकृति संग जब छेड़छाड़ कुछ बढ़ जाती है
कभी-कभी तब प्रकृति भी अपना रौद्र रूप दिखला जाती है
सूखा कभी तो कभी बाढ़ के रूप में बिपदा आ जाती है
संचित सपने मानवता के संग बहाकर ले जाती है

सफलता की कुंजी

सूरज के आ जाने से ही दूर सभी तम हो जाता है
साझा करने से मन का सब बोझा भी कम हो जाता है

नहीं दिखाई देता कुछ भी अंधिया राज बछा जाता है
नहीं सूझतीं सच्चीरा हें अहंकार जब आ जाता है

एक किरण काफी होती अंधियारा दूर भगाने में
होती कारगर सही सोच जीवन को सफल बनाने में

जैसे खेत खाली रहने से उसमें खर-पतवार हैं उगते
खाली मन मस्तिष्क में वैसे नितनित कु विचार उपजते

डाल छूट जाने पर बन्दर असहाय सा हो जाता है
समय चूक जाने पर नर भी निरुपाय सा हो जाता है

सूरज चंदा नियत समय पर उगते डूबते और चमकते
समय अनुसार कार्य करने वाले जीवन में आगे बढ़ते

काम क्रोध मद लोभ मोह सब *मन्नू* मन के दुश्मन हैं
मिले सफलता उनको जिनका निर्मल तन और मन है।

वरना समय बीत जाएगा

तुम्हें हैं दिवस मिले गिन- गिनके फिर तू आस करे किन-किन के
अपनी गति थोड़ी सी बढ़ाले इस जीवन की मंजिल पाले
बरना समय बीत जाएगा फिर बहुत पछताएगा

बचपन को खेल बिताया भरी जवानी व्यर्थ गंवाया
जब पास बुढ़ापा आया तब सोच-सोच पछताया
अब भी समय राह अपनाले इस जीवन की मंजिल पाले
बरना समय बीत जाएगा फिर बहुत पछताएगा

हरदम फिक्र किया अन-धन की केवल सोचा अपने तन की
हरबात की अपने मन की तनिक ना भजन किया भगवन की
अब भी हरी के गुण गाले इस जीवन की मंजिल पाले
वरना समय बीत जाएगा फिर बहुत पछताएगा

सगे सम्बंधी सुत औदारा अन्त में कोई भी नहीं तुम्हारा
यहीं रह जाता अन-धन सारा जाना पड़ता छोड़ संसारा
अब भी राम नाम अपना ले इस जीवन की मंजिल पाले
वरना समय बीत जाएगा फिर बहुत पछताएगा

गर्भ में था तुम को सब ज्ञान किया था वादा संग भगवान
करेगा निश दिन हरिका ध्यान जगत में आ भूला नादान
मन्नू मन अपना बना ले इस जीवन की मंजिल पाले
वरना समय बीत जाएगा फिर बहुत पछताएगा

अपनी गति थोड़ी सी बढ़ाले इस जीवन की मंजिल पाले
वरना समय बीत जाएगा फिर बहुत पछताएगा।

अन्तर्मन का द्वंद्व-युद्ध

अन्त र्मन का द्वंद्व-युद्ध नहीं लड़ सकते हथियारों से
सुविचारों को लड़ना पड़ता है कुत्सित कुविचारों से

दो-दो भिन्न विच धाराएं युगों-युगों से रहीं धरा पर
हिंसा-उन्मुख एक, दूसरी करुणा-दया के संग धरा पर
सदियों से जग रहा प्रताड़ित हिंसक अत्याचारों से
सुविचारों को लड़ना पड़ता है कुत्सित कुविचारों से

भले लोग तो भले बुरे भी कहां स्वयं को बुरा मानते?
जैसी करनी वैसी भरनी होती है सब लोग जानते
ऊँचा दर्जा संस्कारों का वर्णित है व्यभिचारों से
सुविचारों को लड़ना पड़ता है कुत्सि तकु विचारों से

अपने सुख के लिए दूसरों को दुःख देना कहां उचित है?
परोपकार को त्याग स्वयं के स्वार्थ में जीना कहां उचित है?
उचित और अनुचित की शिक्षा मिलती है परिवारों से
सुविचारों को लड़ना पड़ता है कुत्सि तकु विचारों से

कुविचारों को *मन्नू* मन में अपने कभी आने भी ना दें
सुविचारों के साथ जिएं जीवन को नर कब नानेना दें
जान बुद्धि में होती वृद्धि मन में संचित संस्कारों से

अन्तर्मन का द्वंद्व-युद्ध नहीं लड़ सकते हथियारों से
सुविचारों को लड़ना पड़ता है कुत्सि तकु विचारों से

सार्जेंट अभिमन्यु पाण्डेय *मन्नू*

समीर उपाध्याय
पता-मनहर पार्क 96a
चोटिला 363520
जिला सुरेंद्रनगर, गुजरात
मो.-92657 17398

मुझे कुछ करके जाना है

मुझे अपने अस्तित्व को सार्थक करना है।
हस्ती भले ही हो पल दो पल की
किंतु सुमन बनकर अपनी महक फैलाकर एक दिन सूख जाना है।
मुझे कुछ करके जाना है।

मुझे अपने अस्तित्व को सार्थक करना है।
हस्ती भले ही हो पल दो पल की
किंतु विटप बनकर अपनी घनी शीतल छांव देखकर कट जाना है।
मुझे कुछ करके जाना है।

मुझे अपने अस्तित्व को सार्थक करना है।
हस्ती भले ही हो पल दो पल की
किंतु विहग बनकर अपना कर्णप्रिय कलरव सुनाकर उड़ जना है।
मुझे कुछ करके जाना है।

मुझे अपने अस्तित्व को सार्थक करना है।
हस्ती भले ही हो पल दो पल की
किंतु मानव बनकर मानवता की महक फैलाकर पंचमहाभूत में मिल जाना है।
मुझे कुछ करके जाना है।

लाल देवेन्द्र कुमार श्रीवास्तव
ग्राम-कैतहा, पोस्ट-भवानीपुर
जिला-बस्ती 272124 (उत्तर प्रदेश)
मोबाइल 7355309428

मनुष्य और प्रकृति...

आज मनुष्य स्वकेंद्रित हो गया है
समाज और राष्ट्र हित गौड़ हो गया है
स्वलाभ, स्वहित, स्वप्रचार वसुधैव कुटुंबकम की जगह
ढाई परिवार या एकल परिवार का प्रचलन
संयुक्त परिवार तो महानगरों और बड़े शहरों में
केवल कागज में कहीं भले दिख जाते हैं
वास्तविकता में नजर न आते हैं
मनुष्य की तरह सूरज, चाँद और पेड़ पौधे भी
स्वलाभ की परिभाषा गढ़ने लगें नदी, धरा और प्रकृति भी अपने
फायदा-नुकसान का गुणा गणित करने लगें
तो सृष्टि में शायद हाहाकार मच जाएगा
प्रदूषण और विनाश का अनुपात बढ़ जाएगा
नित नई महामारियाँ अपने वजूद का एहसास कराएंगी
भूमंडल का सबका रहन-सहन और समीकरण
गुत्थम गुत्था हो जाएगा शैलाब आना प्रारंभ हो जाएगा
चारों ओर चीख पुकार और रुदन होगा
सच में मनुष्य जैसा कोई स्वार्थी नहीं है
हम अपने लाभ के लिए अपना जमीर बेच दे रहे हैं
लाभ-हानि का सिद्धांत अपने अनुसार तय कर रहे हैं
प्रकृति के संसाधनों का हम बखूबी उपयोग कर रहे हैं
वहीं प्रकृति बिन स्वार्थ के हमें उपहार दे रही है...

★★★★★★★★★★★★★★★★★★★

ताकि प्रेम महकता रहे...

शायद प्रेम पर जितनी कविताएँ लिखी जाती हैं या लिखी जा चुकी होंगी
उतनी सौवांश भी अन्य कविताएँ न लिखी जाती हैं, न ही लिखी गई होंगी
सच में प्रेम से बहुमूल्य कुछ नहीं है
प्रेम के अनमोल रंग में डूबी दुनिया सारी है
सदियों से प्रेम व नफरत में द्वंद जारी है
जिस दिन प्रेम खत्म हो जाएगा उस दिन सृष्टि का अंत नजर आएगा
प्रेम अनंत है, अनादि है, प्रेम अमर है
नफरत को प्रेम में बदलने की असीम शक्ति है
प्रेम में मीरा की श्रीकृष्ण के लिए दिखती भक्ति है
कोयल के सुमधुर गान है प्रेम प्रेमिका का प्रेमी को आह्वान है प्रेम
कृष्ण के मुरली की तान है प्रेम बड़े बुगुर्ग माता पिता का सम्मान है प्रेम
हिंदू, मुस्लिम, सिख, ईसाई का हिंदुस्तान है प्रेम
बालकों के चेहरे पर मुस्कान है प्रेम
भारत के पवित्र भू के कण-कण में विद्यमान है प्रेम

चटकीला होता है प्रेम का रंग प्रेम से खत्म हो जाती है जंग
सरिता का जल करता कल-कल प्रेम के रंग में बहता अविरल
सच में प्रेम का रंग सुकोमल पावस एवं निर्मल
जब प्रेम का रंग लहराता है धरा पर सर्वत्र हरा भरा दिखता है
सदियों से नफरत, प्रेम पर रहा है भारी...

सृष्टि में प्रेम लहरता रहे, खूब महकता रहे
इसीलिए प्रेम की सुंदर कविताओं को
लिखने का हमारा क्रम रहेगा जारी
इस धरा पर प्रेम के इंद्रधनुषी रंग
बिखराने की हम सबकी जिम्मेदारी
ईर्ष्या, कटुता, विषता, नफरत आदि को
खत्म करने को हम सब करें तैयारी
सर्वत्र प्रेम अंकुरित होता रहे
हमारे दिलों में फैल जाए
प्रेम के खुशबू की भीनी-भीनी खुमारी...

★★★★★★★★★★★★★★

दिन में सपने देखने वाले...

प्रायः लोग रात में सपने देखते हैं सुबह होते-होते उसे भूल जाते हैं
फिर उसी रोजमर्रा की जिंदगी में खुशी-खुशी रम जाते हैं...

कुछ लोग अलग किस्म के इंसान होते हैं
वो रात को नहीं दिन में ही सपने देखते हैं
उनकी दिनचर्या में वो सपने तैरते रहते हैं
वो जीवन में श्रेष्ठ और उत्कृष्ट कार्य
करने के लिए सपने देखते हैं वो अपने उस कार्य में मिसाल
कायम करना चाहते हैं सफल बनना चाहते हैं...

ऐसे सपने देखने वाले होते हैं विरल
उनमें जुनून और दृढ़ इच्छाशक्ति भरी होती है
वो अपनी उर्जा, दिमाग और लगाते हैं पूरा बल
रात में उन्हें जल्द नींद नहीं आती उन्हें बस! दिखती है कामयाबी
जिसके लिए करते हैं वो घोर परिश्रम परिस्थितियां कैसी भी विषम...

वो अपने लक्ष्य को निर्धारित कर उस पर अपने को करते हैं पूर्ण समर्पण
वो अपने लक्ष्य से डिगते नहीं चाहे तूफान आए या मूसलाधार वर्षण...

सफलता पाने के लिए अवरोध आते हैं बस! सफलता पाने के लिए वो
बड़ी दूरियों को नाप जाते हैं साहस से लक्ष्य पर जुट जाते हैं
और फिर वो पल भी आते हैं जब उनके जयकारे लोग लगाते हैं
अपने लक्ष्य पर पहुँच कर दिखाते हैं अपना नाम इतिहास में दर्ज कराते हैं...

★★★★★★★★★★★★★★

जिंदगी का वर्तमान यथार्थ...

मैं बचपन से लोगों पर झट से विश्वास कर लेता हूँ
भरसक कार्य लोगों के बिना सोचे समझे कर देता हूँ
दूसरों की भलाई के लिए बहुत अधिक
परिणाम की चिंता नहीं करता हूँ
पता नहीं क्यों इससे बहुत खुशी महसूसता हूँ
सच! जिंदगी के खूब मजे लेता हूँ
इसे आप जिंदादिली कह सकते हैं...

हाँ, इतना अवश्य है दूजों पर विश्वास की
वजह से कभी नुकसान भी सहता हूँ
कभी कभी जानबूझकर कर चुप रहता हूँ
जानता हूँ कि अगला मुझे बेवकूफ समझ रहा है
या मुझे बेवकूफ बना रहा है

पर ज्यों ज्यों उम्र बीतती जा रही है
जिंदगी का अर्थ थोड़ा-थोड़ा समझ में आ रहा है
न जाने क्यूँ लोग थोड़े से लाभ के लिए
रिश्तों को बेंच दे रहे हैं अपने लाभ के लिए दोस्त बनाते हैं
काम खत्म होते ही दूध में पड़ी मक्खी की तरह निकाल कर फेंक देंते हैं...
सच में आज रिश्ते अपना अर्थ खोते जा रहे हैं
फायदे के लिए रिश्तों को सूली पर चढ़ा दे रहे हैं
केवल येन केन प्रकारेण आगे बढ़ना चाह रहे हैं
दिखावाटीपन की संस्कृति हमारे जीवन की
मासूमियत, मौलिकता और सरलता को धीरे-धीरे डसती जा रही है
हम आधुनिकता का चश्मा लगाए चेहरे पर बहुरूपिया बन हँसी ला रहे हैं
लोगों के बहुरूपिया चेहरे पर हँसी देख
जिंदगी का फलसफा समझ में आ रहा है...
अनुभव की सीढ़ियों पर चढ़कर उम्र बीत रही है
जिंदगी का वर्तमान यथार्थ समझ में आता जा रहा है
फिर भी मुझे अपने को बदलना नहीं है
थोड़े से फायदे के लिए रिश्तों को खोना नहीं है
रिश्तों को पूरी शिद्दत से निभाना है इन्हीं रिश्तों से प्यार पाना है
और इन्हीं रिश्तों से प्यार जताना है... इन्हीं रिश्तों से प्यार निभाना है...

★★★★★★★★★★★★

प्यार पाने के लिए होती है कविता...

कभी क्रांति के गीत लिखती है कविता
कभी देश और समाज के दिशा बोध की नई रीति होती है कविता
आडंबर और कुरीतियों पर जीत होती है कविता
दर्द और वेदना में संगीत होती है कविता
प्रेमी के लिए दिल के दास्तान सुनाने के लिए
प्यारी सी मीत होती है कविता...

पीड़ा और चिंतन से उपजती है कविता
रात रात भर जाग कर लिखी जाती है कविता
अक्षर अक्षर शब्द शब्द में पिरोई जाती है कविता
तपते दिवस में ठंडी सी बयार होती है कविता
जीवन को सभ्यता व संस्कार देती है कविता...

युगों युगों का सार्थक वृतांत होती है कविता
एक थके हारे पथिक के लिए क्लांत होती है कविता
व्यथित मन को शांति का एहसास कराती कविता...

निराशा में आशा का संचार कराती है कविता
हमें ग़मों का इज़हार कराती है कविता
प्रेमी का प्रेमिका को पुकार है कविता
माँ का अपने बच्चे को गोदी में दुलार है कविता
सैनिकों का देश के प्राण न्यौछावर है कविता
पिता को उसका परिवार है कविता
जीवन में कुछ दिन के आनंद का त्योहार है कविता
ख़ुशियों के लिए आसार है कविता
सच है जीवन में प्यार पाने को स्वीकार है कविता...

★★★★★★★★★★★★

माँ और माँ का प्यार...

'माँ' इस सृष्टि का सबसे पवित्र और प्यारा शब्द है
माँ का प्यार सबसे निर्मल और विमल होता है
माँ और माँ के प्यार पर लिखी रचनाएँ
सबके मन को खूब भाती हैं।
सच में इन दोनों पर सबसे अधिक
कविताएँ कहानियाँ आदि लिखी जाती हैं...

माँ ही इस अनोखे सृष्टि में हमें ले आती है
पुचकारती है, दुलराती है, प्यार और लाड़ जताती है
जब हम अबोध होते हैं
जब हम भूखे होते हैं
रात-रात जग कर माँ दूध पिलाती है
गीले बिस्तर में सो जाती है
पर हमें सूखे में सुलाती है
जरा सा ज्वर होने पर आँखों में आँसू लाती है
मंदिर मस्जिद मजार पर दुआएं मांगती है
सच में माँ हर रिश्तों में सबसे अलग ही होती है...

माँ हमेशा अपने बच्चों का भला ही चाहती है
बचपन में अच्छी शिक्षा और संस्कार सिखाती है
एक माँ अपने बच्चों को सुखी और संपन्न बनाती है
कितने भी बच्चे बड़े हो जाए, वह चिंतित रहती है
अपना भी निवाला देकर खुद भूखी सो जाती है
कर्ज लेकर बच्चों को पढ़ाती लिखाती है
वही माँ बूढ़ी हो जाने पर दुत्कारी जाती है
कुछ कपूतों द्वारा जन्म देने वाली माँ
वृद्धाश्रम पहुँचाई जाती है
सच में माँ दुःख सहकर सुखदायी होती है
माँ का प्यार स्वार्थ भावना से मुक्त होता है
माँ का प्यार पावस, निश्छल, ममता और
करूणा युक्त होता है
इसीलिए जब बच्चा रोता है
माँ का दिल द्रवित हो उठता है
माँ अपने बच्चों के लिए दुनिया से टकराती है
सच में माँ का रिश्ता और माँ का प्यार
इस सृष्टि में सबसे सच्चा होता है...

★★★★★★★★★★★★

मेरी रचनाएँ...

क्या लिखूँ?..कैसे लिखूँ... किस पर लिखूँ
उन क्लिष्ट या कठिन शब्दों को कहाँ से लाऊँ
सुना है बड़े पत्र-पत्रिका वाले
साधारण रचनाओं को प्रकाशित करने से
झट से कर देते हैं इंकार मैं तो हूँ एक साधारण रचनाकार
नहीं कर सकता मैं संपादक से तकरार बस!
रचना को स्थान देने के लिए
कर सकता हूँ मनुहार फिर कोई उपाय सुझाइए
कि मैं भी अपनी आम रचनाओं को
किसी प्रतिष्ठित पत्रिका में प्रकाशित कराऊँ
मैं भी एक प्रसिद्ध साहित्यकार हो जाऊँ...

सुना है कि साहित्य के भी कई जगह मठ हैं
उनके लब्ध प्रतिष्ठित होते मठाधीश
उनसे जब मिलता है आशीष
तभी प्रतिष्ठित साहित्यकार में शुमार हो पाऊँ...

मैं तो एक साधारण रचनाकार
मेरी रचनाओं में होते हैं गाँव के किसान
खेतों की जुताई, फसलों की मड़ाई
धान के बेहन की बैठवाई, गेहूँ की बुवाई
खेतों में पानी की चलवाई
मेरी कविताओं में होते हैं, खेत खलिहान
बच्चों की कैसे हो अच्छी पढ़ाई लिखाई
जब न हैं कोई विशेष कमाई
कैसे हो बूढ़े अम्मा बाबूजी की दवाई
कैसे पढ़े लिखे बेरोजगार युवकों को मिले नौकरी
उनके अच्छे हो इम्तिहान कैसे उनके चेहरे पर आए मुस्कान...

सुना है कि कितना भी बड़ा हो
साहित्यकार अपनी रचनाओं से करता हो चमत्कार
उनके साहित्य से भले ही मिले संस्कृति व संस्कार पर ऐसे रचनाकार को
को कभी न मिलता है
कोई बड़ा प्रतिष्ठित पुरस्कार यदि नहीं है

कोई बड़ा उसका पैरोकार...

सुना है कि जिन रचनाओं में कठिन शब्द न हों
जीन रचनाओं के एक एक वाक्य का अर्थ
हाथ में बिना शब्द कोष लिए अर्थ समझ में न आए
जिनकी प्रशंसा बड़े नामचीन द्वारा न की जाए
वो कैसी भी हो रचनाएँ अच्छी पत्रिकाओं में जगह न पाएँ
पर ऐसे शब्दों को कहाँ से खोजा जाएँ...
मैं तो आम जन की पीड़ा, उनके दुःख दर्द
अपनी रचनाओं में लिख कर होता हूँ खूब प्रसन्न
जो आम पाठकों द्वारा पढ़ी जाती है
उन पर आम लोगों द्वारा प्रतिक्रियाएँ आती हैं
तो इसी में खुश हैं मेरा तन मन मेरी रचनाओं से यदि
समाज में होता है कुछ परिवर्तन भले ही मेरी साधारण रचनाएँ
बड़ी पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित न हो पाएँ
आम पाठकों का मेरी रचनाओं पर मिलता है प्यार
वही है मेरे लिए सबसे बड़ा प्रतिष्ठित पुरस्कार...

★★★★★★★★★★★★★★★★★★★

अम्मा की सफेद संदूक...

जब भी उस सफेद संदूक को देखता हूँ
हमें बचपन और अम्मा की याद आने लगती है
अम्मा को उस सफेद संदूक से बहुत लगाव था
उसके लिए माँ के हृदय में बहुत ही सुंदर भाव था
कहीं भी अम्मा बाहर कुछ दिनों के लिए जाती थी
उस में ताला लगा कर सुरक्षित मान कर छोड़ जाती थी
यद्यपि ताले की चाभी बाबू जी के पास रख जाती थी
वापस आने पर बच्चों से प्यार जताने के बाद
अपने उस संदूक को देख कर संतोष पाती थी
तब जाकर किसी से बतियाती थी
वास्तव में उस सफेद संदूक से
उन्हें सचमुच बहुत प्यार था
उस संदूक में भी उनका संसार था
अम्मा अपनी साड़ियाँ और अपने सामान
बाबू जी के, हम भाइयों और बहन के कपड़े
तह कर करीने से रखती थी
संदूक में मेहमानों नाते रिश्तेदारों के लिए
बिस्किट नमकीन और कुछ जरूरी
खाने पीने के सामान रखे रहते थे
तब गाँवों में बमुश्किल दुकानें होती थी
शहर तक आने जाने के साधन उपलब्ध न रहते थे
बरसात के दिनों में तो दो माह घनघोर पानी बरसता था
जल्दी समान कहाँ मिलता था
इसीलिए अम्मा संभाल कर सामानों को बचाकर
संदूक में सुरक्षित बहुत दिनों तक रखती थी
हम में से कोई उस संदूक को न खोलता था
कोई भी उस संदूक से कोई भी सामान न टटोलता था
कुछ वर्ष पहले अम्मा हम लोगों को छोड़ कर चली गई
बाबू जी का भी स्वर्गवास हो गया
आज कल जब भी उस सफेद संदूक को देखता हूँ
अम्मा के यादों को मन में टटोलता हूँ
न जाने कितनी यादें, न जाने कितनी बातें
बरबस सामने चलचित्र की तरह चलने लगते हैं
आँखों से आँसू अपने आप बहने लगते हैं
आज शहर के बड़े मकान में कई आलमारियाँ है
आज तक इन आलमारियों से उतना संबंध न हो सका
जितना उस अम्मा की सफेद संदूक से हमें लगाव है
उसी अम्मा के सफेद संदूक के भीतरी हिस्से से
अम्मा की अनगिनत यादों से कितना जुड़ाव है...

★★★★★★★★★★★★★★★★★★

संभावनाओं का विस्तृत होता है आकाश...

संभावनाओं का विस्तृत होता है आकाश
इसी संभावना के विस्तृत आकाश में
हमें सफलता की होती है तलाश
सफलता का स्वाद चखने के लिए
हम लगा देते हैं, अपनी शक्ति, शौर्य और मस्तिष्क
अपनी प्रतिभा का करते हैं आकलन
संभावनाओं का सुरम्य होता है गगन
हम अपने कर्तव्य पथ पर रहते हैं मगन...
एक किसान खेत में रोपता है बीज
उसे संभावना होती है लहलहाते फसल की
शिक्षक अपनी शिक्षा से शिष्यों के अच्छे भविष्य
की संभावना रहती है
वो चाहता है कि बच्चे शिक्षा ग्रहण कर
अच्छे पद पर आसीन हो जाए
अच्छे इंसान और एक सुयोग्य नागरिक बन जाए...
संभावनाओं में सदैव छुपी होती है जीत
एक मरीज जिसे लाइलाज बीमारी हो जाती है
सैद्धांतिक रूप से उसे पता होता है कि
उसकी मृत्य निश्चित है
पर उसे भी संभावना स्वस्थ होने की रहती है...
हमारी इच्छाशक्ति यदि दृढ़ हो
मन में बस! जीतने का संकल्प ठान लें
पूरी की पूरी संभावना रहती है
कि हम हार के करीब होते हुए भी
जीत को अपनी मुट्ठी में कर लें...
हम संभावनाओं में खोजते हैं बेहतर कल
हम परेशानियों और समस्याओं से घिरे रहते हैं
चारों पहर रहता है मन विकल
संभावना रहती है, कि हम समस्याओं से निपट लेंगे
हम प्रयास करके संकटों से उबर कर, संभल जाते हैं
फिर खुश रहने लगते हैं हर

★★★★★★★★★★★★★★★★★★

कहानी

नेति-नेति

-हरिप्रकाश राठी
सी -136, प्रथम विस्तार कमला,
नेहरू नगर, जोधपुर, राजस्थान
मो.9414132489

उज्जैन नगर में शिप्रा नदी के तट पर बैठे चार भूत आपस में बतिया रहे थे। गहन अंधेरी रात्रि का एक प्रहर बीत चुका था। कोई एक बजा होगा। दिसम्बर मासांत की कड़कड़ाती सर्दी में हवाओं की सांय-सांय के अतिरिक्त वहां कुछ भी सुनायी नहीं देता था। कंपकंपाती ठण्ड में मानो पाषाण भी जम गए थे। महाकाल की शयन-प्रार्थना कब की हुई किंतु नदी में पड़ने वाले द्वितीया के चन्द्र की परछाई अब भी उनकी अगोचर उपस्थिति का आभास दे रही थी। समूचे तट को एक भयानक निस्तब्धता ने कैद कर लिया था।

निर्जन सन्नाटों में पसरे स्थान भूतों के प्रिय प्रश्रय स्थान होते हैं। इन चारों भूतों की मुक्ति में अब मात्र कुछ प्रहर शेष थे। धर्मदण्ड के अनुसार आज भोर की प्रथम किरण के साथ चारों इस कठोर योनि से मुक्त होकर पुनः मनुष्य जन्म लेने के दुर्लभ संयोग को प्राप्त करने वाले थे। वर्षों भटकते-भटकते, निर्जन स्थानों, कूप-बावड़ियों, वीरान जंगलों एवं श्मशान इत्यादि में रहते-रहते वे थक गए थे। सुबह होने में अभी तीन प्रहर शेष थे अतः सभी वहां बैठे एक दूसरे को अपनी कथा सुना रहे थे। इनमें सबसे बुजर्ग एवं वरिष्ठ भूत का नाम श्वेतकेतु एवं बाकी तीनों के वयक्रम में नाम गोकर्ण, कैलाशनाथ एवं भैरवसिंह थे। सर्वप्रथम श्वेतकेतु ने अपनी दीर्घ भूत यात्रा की कथा अन्य भूतगणों को बताई। जगत की आंखों से अदृश्य लेकिन अपने जाति भाइयों को देखने-सुनने में सक्षम अन्य भूत उसे ध्यान से सुनने लगे। कथा प्रारंभ करने के पूर्व श्वेतकेतु ने एक लंबी आह भरी एवं इस आह के साथ ही वह उस युग में खो गया जब उसका भूत योनि में प्रादुर्भाव हुआ था।

' मैं सतयुग का भूत हूँ। मुझे भटकते दिन, महीने, वर्ष एवं दशक नहीं, शताब्दियां बीत गई हैं। अपने जीवनकाल में मैं अयोध्या नगरी में रहता था। उस समय हमारे राजा हरिश्चन्द्र थे। ओह! वह राजा साक्षात् सत्य का अवतार थे। उनकी भार्या तारामती अत्यंत धर्मपरायणा एवं रूपवती स्त्री थी। देवताओं के छल एवं परीक्षा लेने के कारण उस राजा ने मरणांतक कष्ट भोगे। नगर श्रेष्ठियों के यहां उसने एवं उसकी भार्या ने गुलामों-सा कार्य किया। वर्षों दोनों पति-पत्नी अलग भी रहे। हरिश्चन्द्र ने तो श्मसान के डोम तक का कार्य किया एवं अपने पुत्र का शव लेकर आई पत्नी तक से मालिक धर्म निबाहते हुए कर मांगा। अहो! दुर्भाग्य! ऐसे राजा के राज्य में होते हुए भी मैं सदैव तामसी व्यसनों से ग्रस्त रहा। सुरापान एवं वेश्यागमन मेरी जीवनचर्या के अंग थे। मेरी पत्नी नित्य की प्रताड़ना एवं मेरे दुर्व्यवहार से अत्यंत दुःखी थी एवं मजदूरी करके हमारे चार बच्चों का जीवन-यापन करती थी। पराई स्त्रियों के मोह में बंधा मैंने परिवार की सुध तक नहीं ली। एक रात दूसरे प्रहर बीतने पर घर लौटा। मैं नशे में धुत था। उस दिन मेरी पत्नी ने क्रोधवश दरवाजा नहीं खोला। उसका यह दुस्साहस देख मैंने लात मारकर दरवाजा तोड़ा एवं भीतर आया। मेरे इस कृत्य को देख वह सहम गई। उन दिनों मेरे दो पुत्र ज्वर से पीड़ित थे एवं उनकी सेवा-शुश्रूषा करते वह अभागिन थक गई थी। घर में घुसकर मैंने अपनी पत्नी को दरवाजा नहीं खोलने के लिए न सिर्फ लताड़ा, बुरी तरह पीटा भी। गृहस्थी के भार एवं मेरी मार से विकल उस अबला ने तब फुफकार कर कहा, इससे अच्छा तो यही होगा कि आप मेरा और बच्चों का वध कर दो। तुम जैसे पति की जीवित भार्या होने से तो मैं मरी अच्छी। मैं नशे में उन्मत्त था। उसकी बातों एवं साहस से मेरे अहंकार की अग्नि भड़क उठी। मैं आग बबूला हो उठा एवं देखते ही देखते मैंने उसकी तथा चारों बच्चों की हत्या कर दी। बाद में नशा उतरा तो मुझे मेरे किए का पछतावा हुआ, लेकिन इससे मेरा परिवार वापस आने वाला नहीं था। सुबह राज्य के सिपाहियों ने पकड़कर मुझे सूली पर लटका दिया। एक निरपराध पत्नी एवं अबोध बच्चों का हत्यारा होने के कारण मैं सहस्राब्दियों से भटक रहा हूँ। धर्मदण्ड के अनुसार ऐसे जघन्य अपराधों के लिए सहस्रों वर्ष भटकने के पश्चात् ही भूतयोनि से मुक्ति संभव है। अलसुबह भोर की प्रथम किरण के साथ इस योनि से मुक्त होकर मैं पुनः मानव योनि में जन्म लूंगा। इस जन्म में वही स्त्री पुनः जन्म लेकर सेठ बनेगी एवं मेरे चारों बच्चे इस सेठ के पुत्र होंगे। लेकिन मेरी दशा इनसे सर्वथा भिन्न होगी। अत्यंत निर्धन परिवार में जन्म लेने एवं अनपढ़ होने के कारण मुझे ताउम्र इनकी मजदूरी करनी होगी। उनके अधीन होने के कारण वे मुझे भांति-भांति से प्रताड़ित करेंगे। नियति की डोरी से बंधा, विवश बैल की तरह मैं ताउम्र इनके निर्देशों की परिधि में घूमता रहूंगा। ओह! मनुष्य के कर्म चिरकाल तक उसका पीछा करते हैं। काश! मैं अपने कर्तव्य को समझता तो मेरी यह दुर्दशा न होती। स्त्री की हाय सात जन्मों तक पीछा करती है। पाप का घड़ा अवश्य फूटता है। सहस्राब्दियों से भटकते-भटकते थक गया हूं। यह जघन्य कृत्य चिरकाल तक आत्मा का नासूर बनकर मुझे जलाता रहा है।' कहते-कहते श्वेतकेतु की आंखों से आंसुओं की अविच्छिन्न धारा बह गई।

इस कथा को सुनने के पश्चात् गोकर्ण अपनी कथा कह रहा था। कथा कहने के पूर्व एक विचित्र विषाद उसके चेहरे पर फैल गया। भृकुटियों एवं ललाट पर पश्चाताप एवं गांभीर्य के चिह्न उभर आए। 'मित्रो! मैं त्रेतायुग का भूत हूँ। श्वेतकेतु की तरह मैं भी अयोध्या में ही निवास करता था। राजा राम मेरे ही जीवनकाल में आए थे। मुझे दशरथनंदन के दर्शन का सौभाग्य अनेक बार मिला। पिता के दो वरदानों को कृतार्थ करने, देवी सीता एवं अनुज लक्ष्मण के साथ जब वे वनगमन पर निकले तो सारी अयोध्या उन्हें विदाई देने उमड़ पड़ी। उस जनसमूह में मैं भी था। लोग उन्हें छोड़ना ही नहीं चाहते थे। उनका दर्प, मुख लावण्य एवं मुस्कुराहट अनंत कामदेवों की शोभा के समान थी। बड़ी-बड़ी आंखें कमल के फूल जैसी लगती थी। उनके रूप-माधुर्य का निर्निमेष नयनों से पान करने पर भी नेत्र तृप्त नहीं होते थे। लोग उन्हें एकटक देखते रहते। प्रभु नदी तट पर यदि हमें सोता हुआ छोड़कर न जाते तो शायद हम उनके साथ ही चलते रहते। रावण को मारने के पश्चात जब वे पुष्पक विमान पर देवी जानकी, सौमित्र एवं अन्य साथियों के साथ अयोध्या लौटे तो सभी नगरवासियों ने घी के दीपक जलाए। दुर्भाग्य! उस काल में भी अपनी मूढ़ता से गिरा मैं ऐसा पाप कर बैठा जिसका फल आज तक भोग रहा हूँ। उन दिनों मेरे घर मेरा एक परम मित्र रेवतीरमणआया करता था। हम दोनों में गहन मित्रता थी। वह निष्कपट, सहृदय मित्र सदैव मेरा तथा मेरे परिवार का शुभाकांक्षी था। वह नगर का मान्य श्रेष्ठी एवं मैं अत्यंत निर्धन था। ऐसा होते हुए भी मेरे अहंकार को हत किए बिना वह बखूबी मित्रता निबाहता था। उसकी पत्नी अनुराधा अत्यंत रूपवती एवं पतिप्रिया थी। उसके दो छोटे पुत्र भी थे। एक बार व्यावसायिक कार्य हेतु उसे वर्षभर के लिए देशाटन पर जाना पड़ा। जाते समय अपना कारोबार, परिवार की देखरेख तथा सहस्रों स्वर्णमुद्राएं वह मेरी देखरेख में छोड़ गया। मुझसे अधिक उसका विश्वासपात्र था भी कौन ? उसके जाने के पश्चात् उस अथाह संपदा एवं कारोबार को देख मेरे मन में लोभ उमड़ आया। मैंने चातुर्य से धीरे-धीरे उसका सारा धन हड़प लिया। वह लौटकर आया तो उसे तथा उसके परिवार को मैं छल से एक घने जंगल में लेकर गया। वहां सब की हत्या कर मैंने उन्हें वहीं गाड़ दिया। नगर में आकर मैंने यह अफवाह फैला दी कि वह अपने परिवार को लेकर अन्यत्र चला गया है। लेकिन तब रामराज्य था। असत्य के बीज बरगद बनकर अपनी विशाल लताओं से पापियों का गला घोंट देते थे। इस घटना के महज एक माह बाद मैं एक दुर्घटना में मारा गया। मेरी मृत्यु के पश्चात् मेरा पाप भी उजागर हो गया। मेरा परिवार नगरवासियों एवं राजकर्मियों के कोप के कारण दर-दर का भिखारी बन

गया। मित्रो! लोभ एवं विश्वासघात ऐसे पाप हैं जो जीते जी हमारी आत्मा का हनन तो करते ही हैं, मरणोपरांत भी जीव को सुख से नहीं बैठने देते। लोभ एवं लिप्सा ने मेरा सब कुछ लील लिया। धर्मदण्ड ने मुझे अनंतकाल तक भटकने की सजा सुनाई। इतनी दीर्घावधि तक इस दण्ड को भोग कर आज मेरा प्रायश्चित पूरा हुआ है। सुबह इस योनि से मुक्त होकर मैं पुनः मनुष्ययोनि में जन्म लूंगा जहां रेवतीरमण मेरी पत्नी बनकर एवं उसकी पत्नी तथा दोनों पुत्र मेरी संतति बनेंगे। अपने कड़े पुरुषार्थ से धनार्जन कर मैं उनका लालन-पालन करूंगा लेकिन अंत में वे सभी विश्वासघात कर मुझे मार डालेंगे। स्वर्ग से वे आत्माएं शीघ्र ही अवतरित होकर मेरे पश्चात् क्रमशः जन्म लेंगी।'

कथा कहते-कहते गोकर्ण का मुख सूख गया, हृदय कांपने लगा एवं नेत्रों से आंसू छलक आए। अब कैलाशनाथ अपनी कथा कह रहा था। 'मित्रो! मुझे मरे मात्र कुछ दशक हुए हैं। भारत विभाजन के समय मैं लुधियाना शहर में निवास करता था। उस समय हिन्दू-मुस्लिम दंगों से दोनों मुल्कों में जन-धन की भीषण तबाही हुई थी। मेरे शहर में हिन्दु धर्मावलंबियों को भड़काकर मैंने एक मुस्लिम परिवार के मुखिया, उसकी पत्नी एवं तीन बच्चों का कत्ल करवा दिया। हम इतने बेरहम हो गए कि हमने महिलाओं एवं बच्चों तक को नहीं छोड़ा। कुछ समय पश्चात् मुसलमानों ने भी मेरा तथा मेरे परिवार का कत्ल कर दिया। मैंने जीते जी तो अपनी करनी भोगी ही, धर्मदण्ड के अनुसार भोर होने के पश्चात् मुझे एक मुस्लिम परिवार में जन्म लेना है, जहां मेरे द्वारा कत्ल करवाए सभी व्यक्ति मेरे परिवारजन बनेंगे। ताउम्र कठोर श्रम कर मैं उनकी परवरिश करूंगा। इतना होते हुए भी वे अंततः मुझे भांति-भांति के दुःख देंगे। पूर्वजन्म का प्रतिशोध उनकी आंखों पर पट्टियां बांध देगा। मैं उन्हें फूटी आंखों नहीं सुहाऊंगा। धर्मदण्ड ने दण्ड देते समय मुझे यही कहा – संसार के सभी लोग एक ही नूर से पैदा हुए हैं। कौन कहां पैदा होता है, यह महज इत्तफाक है। पृथ्वी पर इंसानियत से बड़ा कोई धर्म नहीं। जो व्यक्ति फिरकापरस्ती में अंधा होकर साम्प्रदायिक विद्वेष फैलाता है उसे मेरे कठोर दण्ड का भाजक बनना पड़ता है। मूर्ख! मानव जन्म लेकर क्या तू इतना भी नहीं समझ पाया कि विभिन्न धर्म तो उन असंख्य नदियों की तरह हैं जो अंततः एक समुद्ररूपी परमात्मा में मिल जाती है। हे उद्दण्ड! सागर का फिर क्या कोई धर्म रह जाता है ? मित्रो! मैं इतने समय कूपों, कंदराओं में भटकता रहा। अब भोर होने के पश्चात् पुनः मानव योनि में जन्म लेकर अपने पूर्व पापों का विमोचन करूंगा।'

अपनी कथा कहते-कहते कैलाशनाथ बिलख पड़ा।

अब भैरवसिंह की बारी थी। अपनी कथा कहने के पूर्व वह एक विचित्रलोक में खो गया। उसकी ललाट पर त्रिवली खिंच गई। 'मित्रो! मुझे मरे मात्र तीस वर्ष हुए हैं। तीस वर्ष पूर्व मैं आर्यावर्त की वर्तमान राजधानी दिल्ली शहर के सार्वजनिक निर्माण विभाग में मुख्य अभियन्ता पद पर कार्यरत था। मेरे घर में सातों सुख थे। सुलक्षणा पत्नी थी, योग्य बच्चे थे एवं पुरखों द्वारा छोड़ी अकूत संपत्ति भी थी। सब कुछ होते हुए भी मैं सदैव धन को दो दूनी चार करने में लगा रहता। बीवी-बच्चों की तो मुझे सुध ही कहां थी। मैं धन को मानव सुख का प्रथम एवं अंतिम सोपान समझता था। जैसे उल्लू को अंधकार से सहज स्नेह होता है, धन का लोभ मेरी सांसों में बसा था। इसी हवश में मेरे विभाग में कार्य कर रहे ठेकेदारों से मैंने बेशुमार रिश्वत बटोरी। निर्माण कार्य की गुणवत्ता पर मैं कभी ध्यान नहीं देता। मेरे अधीनस्थ कर्मचारियों में मात्र वे कर्मचारी मुझे प्रिय थे जो रिश्वत बटोर कर मुझे हिस्सा पहुंचाते। ईमानदार अधिकारी मुझे फूटी आंख न सुहाते, उन्हें मैं तरह-तरह के दण्ड देता। कभी उनकी वार्षिक रिपोर्ट खराब कर देता तो कभी उनकी तैनाती दूरस्थ जगहों पर कर उन्हें एवं उनके परिवार को प्रताड़ित करता। अपने पद-मद में मैं इस तरह खोया कि मेरे और मेरे परिवार दोनों के सर अहंकार चढ़ बैठा। रिश्वत मिलते ही मैं नियमों-आदर्शों की धज्जियां उड़ा देता। धन के वशीभूत आला अफसर मेरी चुटकियों पर नाचते। मेरे व्यवहार में सौजन्य का अणुमात्र शेष न रहा। राज्य की धारा ऊपर से नीचे की ओर बहती है। उच्चाधिकारियों की सरपरस्ती ने मुझे बेखौफ बना दिया। एक दिन मैं अपने परिवार के साथ एक ठेकेदार द्वारा भेंट की गई नयी कार में बैठकर भ्रमण के लिए निकला। हम थोड़ी दूर ही चले थे कि यकायक एक पुल के तड़तड़ाकर टूटने की आवाज आई। यह पुल कुछ समय पूर्व मेरे विभाग द्वारा ही बनवाया गया था। पलक झपकते वह पुल हमारी कार पर गिरा एवं मुझे एवं मेरे परिवार को लील गया। किसी ने ठीक ही कहा है रिश्वत से पलने वाला परिवार भी वही दुःख भोगता है जो रिश्वत लेने वाला भोगता है। धर्मदण्ड के अनुसार मुझे दस वर्ष तक नीम के पेड़ में एक कीड़ा बनकर रहना पड़ा जहां दूसरे शक्तिशाली कीड़े मुझे वैसे ही चाटते रहते थे जैसे मैं अपने जीवनकाल में जनता के धन एवं व्यवस्थाओं को चाटता रहा। उस जन्म से मुक्त होने के पश्चात् पुनः बीस वर्षों से घने जंगलों, सुनसान स्थानों में भटक रहा हूँ। सुबह मुक्त होने के पश्चात् मुझे एक ऐसे समाजसेवी का जन्म लेना है जो जीवनपर्यंत रिश्वत के खिलाफ बिगुल बजाएगा। मेरे पापों का आचमन तभी संभव है। ओह! विवेक सम्मत मनुष्य का जन्म लेकर एवं पढ़ा लिखा होकर भी मैं यह नहीं समझ पाया कि दुष्कर्म एवं गलत राहों से आने वाला धन एक दिन स्वयं दुराचारी के गले का फंदा बनता है। मेरा दुश्चिंतन मेरे अनर्थ एवं पतन का कारण बन गया। इन्हीं आंखों से मैंने अपने दुर्भाग्य की रक्तक्रीड़ा देखी। मृत्यु की हिंसक बाघिन सामने खड़ी गुर्रा रही थी लेकिन मैं कुछ भी नहीं देख पाया। ओह, मैं कैसे प्रमाद वन में विचर रहा था? मेरा लोभ-पाश ही मेरा मृत्यु-पाश बन गया। मैंने स्वयं अपना ही मर्सिया पढ़ लिया। हाय! धन की बजाय इतनी लौ ईश्वर से लगाता तो मेरा तथा परिवार दोनों का कल्याण हो जाता।'

कथा कहते-कहते भैरवसिंह की सिसकियां बंध गई। संयत हुआ तो उसने श्वेतकेतु से पूछा, 'बुजुर्गवर! आप तो चिर-यात्रा से यहां पहुंचे हैं। क्या मनुष्य को उसके द्वारा किये हर पाप का सिला मिलता है?'

'अवश्य! लोकहितार्थ कार्यों को छोड़कर मनुष्य का हर पाप, हर दुष्कर्म कर्मबंधन बनकर मनुष्य के भाग्य से चिपक जाता है। उसके विमोचन किये बिना जीव को गति कहां! जीवन के खेत में मनुष्य जैसा बोता है वैसा ही काटता है। मनुष्य का भाग्य उसके शुभकर्मों की पूंजी ही है। शुभभावना, शुभ संकल्प एवं निस्वार्थ कर्म ही हमारी शांति के स्रोत हैं। स्वर्ग-नरक ऊपर अंतरिक्ष में नहीं हैं। हमारे सत्कर्म हमारे स्वर्ग का सृजन करते हैं एवं दुष्कर्म जीते जी एवं मरणोपरान्त भी हमें दुःखों के अग्निकुण्ड में जलाते हैं। इन कर्मबंधनों से मुक्त होने में जीव को अनेक जन्म तक लेने पड़ते हैं। इस अनादि, अनंत कालचक्र की माला धर्म-मणियों से ही गूंथी गई है।' कहते-कहते श्वेतकेतु की आखों में उतर आया गांभीर्य उसके चिर अनुभव को बयां करने लगा था।

इसी बीच गोकर्ण ने पूछा, 'बुजर्गवर! मेरे भी एक प्रश्न का समाधान करें। आपका जन्म सतयुग में हुआ। उस जन्म में राजा हरिश्चन्द्र को आततायियों ने इतना कष्ट दिया। स्वयं आप द्वारा इतने पाप हुए। मैंने तो सुना है सतयुग में सर्वत्र सत्य एवं सत्कर्मों का प्रसार था।'

'तुम्हारा प्रश्न अत्यंत गूढ़ है पुत्र! वस्तुतः यह युग विभाजन मात्र काल विभाजन है। अच्छे-बुरे मनुष्य हर युग में रहे हैं। सतयुग में भी मेरे जैसे पापी थे। त्रेता में राम थे तो रावण भी था, द्वापर में कृष्ण थे तो कंस भी था। कलियुग में भी अच्छे लोगों की कमी नहीं है। सत्, रज एवं तम प्रधान मनुष्य हर युग में समान मात्रा में रहे हैं। यह युग विभाजन तो वस्तुतः मनुष्य के आत्म उन्नयन की सीढ़ियां है। जब मनुष्य तम से सत् की यात्रा करता है, दुष्कर्मों से सत्कर्मों में प्रवृत्त होता है, अंधेरे से उजाले की ओर बढ़ता है तो वह कलियुग से सतयुग की यात्रा करता है। ये युग काल के हिस्सों पर नहीं, हमारे भीतर घटित होते हैं। इस यात्रा की पूर्णाहुति मोक्ष है।' श्वेतकेतु के उत्तर के पश्चात् सभी भूत आसमान के पूर्वी छोर की ओर तकने लगे थे।

महाकाल की मंगला आरती के साथ ही पूर्वांचल पर लालिमा फैलने लगी। भोर की प्रथम किरण के फूटते ही चारों जीव अनंत के उस महान रहस्य में विलीन हो गए जिसकी थाह नहींमिल पाने के कारण तपस्वी एवं ब्रह्मर्षिजन इस संसार को 'नेति-नेति' कहकर चले गए हैं।

****

नालायक

-डॉ. रंजना जायसवाल
लाल बाग कॉलोनी, छोटी बसही,
मिर्जापुर, उत्तर प्रदेश, पिन कोड 231001

पै-पै...!"

"इधर ला ...दवाई का नाम भी ठीक से नहीं पढ़ सकता है।"

रस्तोगी जी ने विजय को झिड़क कर बोला, आज दस दिन हो गए थे रस्तोगी जी को अस्पताल में भर्ती हुए। एक तो उम्र ऊपर से ये बीमारी...उर्मिला और विजय दोनो जी-जान से रस्तोगी जी की सेवा में लगे थे।रस्तोगी जी के लिए नाश्ता-खाना लेकर वही जाती थी। रस्तोगी जी की पत्नी तारा घुटने के दर्द की वजह से ज्यादा चल-फिर नहीं पाती थी।रस्तोगी जी की चार संतानें थी...गीता,अजय,संजय और विजय।विजय सबसे छोटा था..माँ तारा का लाडला पर न जाने क्यों वो जीवन भर रस्तोगी जी की आँख की किरकिरी ही बना रहा।रस्तोगी जी के तीन बच्चे बहुत होनहार थे पर विजय...पढ़ने-लिखने में उसका कभी मन नहीं लगा।रस्तोगी जी ने घर के आगे वाले कमरे में जनरल मर्चेंट की दुकान खुलवा दी थी।इकलौती बेटी गीता पढ़-लिखकर अपने ससुराल चली गई और अजय इंजीनियरिंग की पढ़ाई करके नार्वे बस गया,वही साथ नौकरी करने वाली क्रिस्टियना से शादी भी कर ली।

अजय हर दूसरे साल रस्तोगी जी मिलने आता पर बहू... कहीं न कहीं तारा भी नहीं चाहती थी कि वो घर आये...एक बार उर्मिला ने ही किस्ट्रियना कि फोटो सोशल नेटवर्क पर दिखाई थी। बिते भर की पेंट पहने वो अजय के गले में झूल रही थी।विजय की बीबी उस दिन कितना हंसी थी।रस्तोगी जी ने आज तक बिना पल्लू के उसे नहीं देखा था,वो खुद तो कुछ नहीं कहते पर तारा जी माध्यम से बात कान तक पहुँच जाती।

"अपनी अम्मा को देखो आज तक सर से पल्लू नहीं गिरता पर इनका है कि ठहरता नहीं, भले घर की बहू-बेटियों को ये शोभा नहीं देता।"

रस्तोगी जी भी न जाने किस भले घर की बात करते थे,अब तो सबकी बहुयें कुर्ते पर जीन्स चढ़ाये इधर से उधर फिरती रहती है।संजय की बहू तो फिर भी गनीमत थी,साड़ी तो नहीं पहनती थी पर सलवार कमीज के ऊपर वो मरा एक फ़ीट का गमछा जरूर डाल लेती। रस्तोगी जी स्टोल को गमछा ही तो कहते थे। संजय ने एम. बी.ए. करने के बाद बंगलोर में मल्टीनेशनल कम्पनी में नौकरी कर ली थी,अच्छा कमा लेता था।बंगलोर में एक फ्लैट भी खरीद लिया था,

"पापा! यहाँ किराया बहुत है,बहुत खलता है..."

रस्तोगी जी समझ गए थे उनके घोसलें के पक्षी एक-एक कर उड़ रहे हैं पर वो मन को समझा लेते।ठीक ही तो कह रहा है संजय...फालतू में किराया देने का क्या फायदा अपना घर तो अपना ही होता है... हरदम मकान मालिक के साथ चिक-चिक।पहले वाला मकान मालिक कितना दुष्ट था,मेहमान नहीं आ सकते,पार्टी नहीं कर सकते पर जो भी हो बच्चे रस्तोगी जी का बहुत ध्यान रखते थे। हर महीने कुछ न कुछ उपहार आता ही रहता था, अभी पिछले महीने ही तो बड़े वाले ने वो महंगा वाला मोबाइल भेजा था और छोटे वाले ने बड़ा वाला टी वी...बेचारे कितना आना चाहते थे रस्तोगी जी मिलने पर खैर..

"पापा!पैसे की चिंता मत करिए अच्छी से अच्छी जगह इलाज कराइये ।भैया ने विजय के एकाउंट में पैसे डाल दिये हैं ,आज मैंने भी आपके एकाउंट में पैसे डाले है।आप चिंता न करिये।"

"चिंता किस बात की जिसके दो-दो होनहार बेटे हो।"

रस्तोगी जी ने कितने गर्व से कहा था। ईश्वर की बहुत कृपा रही,रस्तोगी जी ठीक हो गए थे।आज अस्पताल से उन्हें छुट्टी मिल रही थी।नर्स अभी-अभी कहकर गई थी,डॉक्टर साहब राउंड पर निकले हैं उनके चेकअप करने के बाद ही उन्हें छुट्टी मिलेगी। विजय रस्तोगी जी के कपड़े बदल ही रहा था कि डॉक्टर साहब आ गये।

"...और रस्तोगी तबीयत कैसी है अब?

"भगवान की कृपा है ,अब पहले से काफी अच्छा महसूस कर रहा हूँ।"

डॉक्टर साहब ने रस्तोगी जी की कलाई हाथ मे पकड़ी और नब्ज टटोलने लगे।उन्होंने विजय की तरफ़ देखकर पूछा

ये$$$$...आपका बेटा है क्या...?

"जी..."

" जब से आप यहाँ आये तब से दिन-रात इसी को देख रहा हूँ।क्या करते हो तुम...?'

विजय जब तक कुछ जवाब देता रस्तोगी जी तपाक से बोल उठे,

"कुछ खास नहीं बचपन से थोड़ा मोटा दिमाग कर रहा,पढ़ने -लिखने में कभी मन नहीं लगा। मेरे और बच्चे सब बहुत लायक है।एक विदेश में कमा रहा और एक बंगलोर में... बस एक यही नालायक निकला।"

विजय चुपचाप सुनता रहा और डॉक्टर साहब नालायक की परिभाषा समझने की कोशिश करते रहे...

****

सफर से हमसफ़र

-अंकुर सिंह
हरदासीपुर, चंदवक,
जौनपुर, उत्तर प्रदेश- 222129
मोबाइल नंबर - 8367782654.

ये सीट मेरी है, विजयवाड़ा स्टेशन पर इतना सुनते अमित ने पीछे मुड़कर देखा तो एक हमउम्र की लड़की एक हाथ में स्मार्ट फोन और दूसरे हाथ में बैग पकड़े खड़ी थी। जी मेरा सीट ऊपर वाला है ये शायद आपका है अमित ने कहा। ठीक है, अब आप अपना सामान हटा लीजिए और बैठने दीजिए मुझे मेरी सीट पर। इतना सुनते अपना समान हटाते हुए अमित कहने लगा, मेरा नाम अमित है और मुझे बनारस तक जाना है, आप कहा तक जाएंगी? उधर से कोई प्रतिक्रिया आते ना देख अमित चुप हो गया। थोड़ी देर बाद अपना बैग सीट के नीचे रखकर मोबाइल को चार्ज में लगाते हुई वह लड़की बोली मेरा नाम सुमन है और मैं कॉलेज की छुट्टियों में मम्मी के यहां पटना जा रही हूं। अच्छा तो आप बिहार से है और यहां विजयवाड़ा में पढ़ाई करती है, अमित को इतने पर रोकते हुए सुमन ने कहा मैं बिहार से हूं लेकिन केरला में एमटेक की पढ़ाई करती हूं और विजयवाड़ा में अपने दोस्त के शादी में आई थी। अब छुट्टियों में घर जा रही हूं, आप क्या करते हो अमित, सुमन ने पूछा। आपके तरह मैं भी इंजीनियर हूं और मां की तबियत सही नहीं है इसलिए गांव जा रहा हूं मां से मिलने। क्या हुआ आपकी मां को सुमन के पूछने पर अमित ने बताया कि मां की तबियत अकसर खराब रहती है और इस समय थोड़ा ज्यादा खराब हो गई है इसलिए गांव जा रहा हूं। इतने में टिकट -टिकट कहते हुए टीटी की आवाज सुनाई पड़ती है, अमित ने अपना टिकट टीटी को दिखाकर सुमन से कहा कि मेरी सीट ऊपर वाली है और थोड़ी देर में डिनर करके मैं अपनी सीट पर चला जाऊंगा। कोई बात नहीं मैं भी डिनर के बाद सोऊंगी तब तक बैठ सकते है आप। थोड़ी देर बाद अपनी टिफिन खोलते हुए अमित ने कहा आप भी लीजिए। नहीं आप खाइए, मैं टिफिन साथ लाई हूं सुमन से इतना सुनते अमित ने कहा चलिए फिर साथ में डिनर करते हैं। डिनर के बाद सुमन ने अमित से कहा आपका खाना तो काफी अच्छा था, आपने खुद बनाया था? नहीं-नहीं ऑफिस से पैक कराया था मैने अमित ने जवाब दिया। चलो अच्छा है आप हिंदी बोल लेते हो। शायद पूरे बोगी में हम दो ही हिंदी भाषी हैं। आपकी सीट पास में नहीं होती तो मैं बोर हो जाती। इतना सुनते अमित ने कहा अरे ऐसे कैसे ? आप बोर न हो तभी तो भगवान ने मुझे यहां भेजा हैं, इतने पर दोनो जोर से हंस पड़े।

पूरें सफर में दोनो एक दूसरे के पसंद-नापसंद, परिवार, पढ़ाई इत्यादि को लेकर ऐसे बात कर रहें थे जैसे उनकी ये पहली मुलाकात नहीं बल्कि बरसों पुरानी जान पहचान हो। अगले सुबह भोर में अमित का स्टेशन आ गया, उसने सुमन की तरफ देखा वह सो रहीं थी, उसकी नीद खराब न हो इसलिए अमित ने उसे जगाना जरूरी नहीं समझा और सीट के नीचें से अपना बैग निकालने लगा। इसी बीच सुमन घबरा कर उठी और नीद में कौन हो, कौन हो कहने लगी। अरे सुमन, मैं अमित मेरा स्टेशन आ गया और मैं अपना बैग निकाल रहा था। क्या बनारस आ गया, अमित? मुझसे बिना मिले जा रहें थे तुम, जगाना भी जरूरी नहीं समझा ? अरे सुमन ! मैंने सोचा तुम्हें क्यों परेशान करूं इतना सुनते ही सुमन बोल पड़ी बिना मिले जाते तो मैं क्या परेशान नहीं होती ? सुमन के इन शब्दों से अमित को वही अहसास हुआ जो उसके दिल में हो रहा था। फिर उसने सुमन से कहा - सुमन, चाहता तो मैं भी नहीं था की बनारस स्टेशन इतनी जल्दी आए पर अब मेरी मंजिल आ गई और हमारा सफर यहीं खत्म हुआ। कैसा सफर अमित, हमारी तो ट्रेन की सफर खत्म हुई है दोस्ती की नहीं सुमन ने जवाब दिया। इतने में ट्रेन ने बनारस छोड़ने का हॉर्न बजा दिया और अमित सुमन को बाय कहते हुए अपना बैग निकाल कर चल पड़ा सुमन भी दरवाजे तक अमित को बाय -बाय कहते हुए छोड़ने आई।

अगले कुछ महीनों तक दोनों एक दूसरे से बात करते रहें और कुछ महीनों बाद सुमन ने भी अपनी पढ़ाई पूरी कर लिया और अब नौकरी करने लगी। फिर एक दिन दोनों ने निश्चय किया क्यों न इस दोस्ती के सफर को कभी न खत्म होने वाली सफर बना लें। फिर दोनों अपने-अपने घर में एक दूसरे के बारे में बताकर शादी करने की बात कहीं। घर वालों ने भी उनकी खुशी के लिए उनको एक दूसरे का हमसफ़र बना दिया।

जीवन के कई साल साथ बिताने पर जब अमित और सुमन अपने खुशी भरे परिवार और बच्चें को देखते है तो उनकी जुबां से निकल पड़ता है की ये बच्चें, हमारे जीवन में ट्रेन के उस डिब्बे की तरह है जिसके सफर ने हमें हमसफ़र बना दिया।

****

गिद्ध

-श्यामल बिहारी महतो
बोकारो, झारखंड,
मो. नं- 6204131994

बैंक की सीढ़ियां उतरा ही था कि उन चारों ने सुदामा को घेर लिया था, जमीन पर मरा हुआ जानवर को जैसे गिद्ध घेर लेते हैं। फर्क सिर्फ इतना था। गिदध मरे हुए जानवरों को खाते हैं और ये चारों जिंदा लोगों की बोटी बोटी नोच कर खाते हैं। सब अपना अपना महीने भर का हिसाब लिएखडा था। सबसे जल्दी में दारूवाला था,उसी ने पहले अपना मुंह खोला और बोला-" सुदामा,फटाफट मेरा डेढ़ हजार निकाल, तुम्हारा कमीना साथी करमचंद को भी पकड़ना है ,स्याला फिर कहीं भाग न जाए"

" कल तो बारह सौ ही बताया था...।"

" और बाद में करमचंदवा के साथ दो बोतल पी गया था,उसका कौन देगा तुम्हारा बेटा.. पीने के बाद तुमको होश रहता ही कहां है..ला..।"

"मैं नहीं,वो करमचंद बोला था-वो देगा.....।"

"तुम बोला था-तुम दोगे ..।"और दारूवाले ने सुदामा का कालर पकड़ लिया-" चल जल्दी निकाल....।"

सुदामा सहम गया। उसने तत्काल उसे डेढ़ हजार देकर चलता किया तो सूदवाला तन कर सामने खड़ा हो गया-" सुदामा, मेरा भी जल्दी से चुकता कर दो-पांच हजार बनता है।"

" पांच हजार कैसे ?तीन हजार मूल और एक हजार सूद-चारे हजार न हुआ ..?"

" आर पिछले महीने समधी के आने पर दो हजार और लिया था उसका मूल आर सूद कौन देगा.तुम्हारा बाप ..?"

सुदामा सूद वाला से भी न बच सका।वो पूरे पांच हजार ले चलता बना।

मीट और राशन दुकान वाले कब तक पीछे खड़े बगुले की तरह देखते रहते एक साथ दोनों सामने आ गये

" तीन हजार मेरा..भी निकाल दो सुदामा भाई।" मीट वाला बोला

इस बार सुदामा ने कोई आना कानी नहीं की। चुप चाप तीन हजार दे दिया फिर बोला-" अभी आ रहा हूं.. गुरदा-कलेजी रख देना...।"

" मेरे खाते में छह हजार चार सौ चालीस रूपए है-इस बार पूरा लूंगा..।" राशन वाले सेठ ने लाठी ठोकते हुए सा कहा

" इस बार डेढ़ हजार कैसे बढ़ गया सेठ जी..?" सुदामा कुनमुनाया था

" समधी -समधीन आई थी तब दो दिन उन लोगों को शिकार-भात खिलाया था,भूला गया ?तेल -मशाला किस भाव बिकता है मालूम है तुमको..?" सेठ का तेवर कम नहीं हुआ-" खाने के समय ठूंस ठूंस कर खाओगे और देने के समय खीच -खीच -पूरा दो नहीं तो आज से उधार बंद..।"

" सेठ जी चार हजार ले लो-अगले महीने पूरा दे दूंगा...।" सुदामा ने मिन्नत किया

" बड़ी बेटी को सलवर कुरती खरीद देनी है.. काफी पुराना हो गया है,-फटने भी लगा है..!"

" मुझे कुछ नहीं सुनना है, छः हजार चाहिए तो चाहिए ही, नहीं तो उधार बंद...।" सेठ सीधे सीधे धमकी पर उतर आया था।

सेठ को न देने का मतलब घर का राशन पानी बंद !

रोने और पैर पकड़ने पर भी सेठ का पत्थर कलेजा पिघलने वाला नहीं था,यह बात सुदामा भली-भांति जानता था। देने में ही भलाई था।

चला तो हाथ में मात्र डेढ़ हजार रूपए था। आधा तनख्वाह पहले ही नागा में कट गया था और आधा आदमखोरों ने ले लिया। अब किस मुंह को लेकर घर जाए। बार बार उसकी आंखों के सामने बड़ी बेटी सरिता का पुराना सलवर कमीज और छाती के बढ़ते आकार घूमने लगा था। देर रात वह घर पहुंचा। बच्चे सो चुके थे और पत्नी जाग रही थी। सालों बाद सुदामा कलेजी-गरदा लिए बगैर घर पहुंचा था।

****

Alienation and Identity Crisis in the Select Novels of R.K.Narayan and Raja Rao

-Dr.Anupam Soni
Associate Professor,
Dept of English,
Bundelkhand College,
Jhansi, India

The paper aims at delineating the alienation and identity crisis in the selected novels of R.K. Narayan and Raja Rao. Alienation and identity crisis is a global problem and modern man faces the problem of alienation. In the modern age, people have become ambitious and they a have self-centered view of life. Modernity creates ambitions and when ambitions are not fulfilled human beings feel restlessness. This restlessness leads them towards alienation and they explore their identity in the modern world. R.K. Narayan and Raja Rao are prominent writers of Indian English literature. They are known as the writers of common people. In their novels, they try to explore the predicament of common people who face alienation and search their identity in Indian society. Most of the protagonists of Narayan and Rao face the problem of alienation because they fail to meet the challenges of life. The present paper aims to explore the cause and effect of alienation and identity crisis in R.K. Narayan's The Dark Room and Raja Rao's The Serpent and the Rope.

Keywords: Alienation, Modernity, Predicament, Prominent

Modern age is known as the age of distress, difficulties and full of various dilemmas. Modern man is in a dilemma about his own existence in this wide world. He explores his identity in family and society and when he fails to find it, he feels himself estranged from humanity and the surrounding world. Such type of state of a person is known as the state of alienation. Edmund fuller presents his view on alienation. He says, "Man suffers not only from war, persecution, famine and ruin, but from inner problems…a conviction of isolation, randomness and meaninglessness in his way of existence" (Qtd. in Saleem 67). Alienation is an ambiguous concept but it has always been a phenomenon of central concern. In the state of alienation, a person feels himself lonely, meaningless and worthless. Oxford dictionary defines the term 'alienation as, "The action of estranging or state of estrangement in feeling or affection or as loss derangement of mental faculties" ("Alienation")

The term 'alienation' is derived from the Latin word 'alienare' which means to remove or take away. Alienation is more than a feeling of dissatisfaction that develops in a person's life. There are many causes that are responsible for alienation such as loss of identity, isolation, generation gap and fear. In a state of alienation, a person feels himself estranged from family, society or even from himself. In such state, he refuses his relationship with his near or dear ones. About alienation, Muhammad Iqbal Shah writes, "The feeling of being stranger or sense of loneliness in the surroundings is termed 'Alienation'" (Shah 43).

The main cause of alienation is identity crisis. It appears both in inherent and extrinsic terms as a natural consequence of the existential dilemma. The literature of the present era has not been remained untouched by the universal problem of alienation. The theme of alienation and identity crisis has influenced Indian English literature to a great extent. The writers of Indian English literature have dealt with the theme of alienation from various angles in their writings. Overcoming this crisis as experienced in modern times and presenting its cause and effect is the ultimate purpose of Narayan and Rao. They carefully probe the psyche of their protagonists. In

their novels, they deal with the life of common men and women who become the victims of alienation for the waves of modernity and due to constant harassment and exploitation. R.K. Narayan remarks:

After Independence, however, the writer in India hopes to express through his novels and stories the way of life of the group of people with whose psychology and background he is most familiar, and he hopes that this picture not only appeal to his own circle but also a larger audience outside. (Qtd. in Iyengar 360)

In R.K. Narayan's The Dark Room, the readers can see the alienation from the opposite sex. The state of alienation from the opposite sex occurs when a member of either sex fails to understand the psychology and common needs of the member of the opposite sex. Alienation from the opposite sex can also be seen in The Guide, Swami and Friends and Vendor of Sweets. The protagonists of Narayan have more psychological pressure than physical. Dr. G.N. Agnihotri remarks:

The heroes of Narayan do not control the events but the events control them. They are helpless creatures, torn by desires and tossed this way and that way by the caprice of fortune. His heroes and heroines both depend upon chance or luck for their happiness or unhappiness. If things go contrary they just run away and sometimes even become Sanyasi. (Agnihotri 96)

In The Dark Room, Savitri tries to adjust with his whimsical husband and explores her identity in the patriarchal society but when she fails to find it, she feels alienation not only from family and society but also from herself. The novel, The Dark Room is a story of a sensitive housewife, Savitri who faces the atrocities of her adulterous husband, Ramani. Savitri finds herself bounded in the strict patriarchal norms of society. The bond of marriage becomes the cause of her destruction. Savitri tries much to cope with her husband but her husband ignores her common needs and does not understand her psychology. She starts feeling lonely due to constant neglect and torture by her husband. She confines herself in the dark room. She feels alienated from her husband from society and even from herself. Her self-alienation always encourages her to embrace death and at a moment she tries to commit suicide. She feels that in a patriarchal society a woman has no identity of her own. In her words, "What possession can a woman call her own except her body? Everything else that she has is her father's, her husband's or her son's? (The Dark Room 88)

In The Dark Room, Narayan portrays marital unhappiness and domestic disharmony. Ramani is a very dominating and cynical husband and he is also a very strict father for his children. He keeps full control over his family. His rude behavior and constant harassment is enough for Savitri to go through mental agony. Her mental agony is expressed through her words: I am afraid to go even a hundred yards from the house unescorted; yes, afraid of everything. One definite thing in life is fear. Fear, from cradle to the funeral pyre, and even beyond that, fear of fortune in the other world. Afraid of husband's displeasure and of the discomforts that might cause to him, morning to night and all night too. How many nights have I slept on the bed on one side, growing numb by the unchanged position, afraid lest any slight movement should disturb his sleep and cause him discomfort (The Dark Room 91).

Savitri explores her identity in her husband's home but when she doesn't find it, she takes shelter in the dark room. About the Indian dark rooms, K.R.S Iyengar writes:

The dark room' used to be an indispensable a part of an Indian house as a kitchen, and was a place for 'safe deposits,' both a sanctuary-and a retreat, but modern houses are apt to dispense with the dark room' Even in

the old houses, the installation of electric lights has effectively destroyed the traditional character of the 'dark room'. Narayan has thus done well to preserve-like the mummified curiosities of ancient Egypt- the 'dark room' in the pages of his novel. (Iyengar 371)

In the novel, dark room is a place which is used to store the junk of the house. When Savitri becomes helpless and feels that there is no ray of hope for her in her husband's home, she also begins to feel herself like junk, which has no use. She silently tries to face the atrocities of her husband but her inner self always seeks her place in the house of Ramani and also encourages her to make a protest against her husband. Ultimately, she revolts her husband and shouts on him:

Do you think that I will stay in your house, breathe the air of your property, drink the water there, and eat food you buy with your money? No, I'll starve and die in the open, under the sky, a roof for which we need be obliged to no man. (The Dark Room 87-88)

The aggression and frustration make Savitri alienated and she decides to leave her husband's home and also tries to commit suicide by drowning herself into the river. S.C. Harrex writes that here the dark room symbolizes as, "The emotional and domestic claustrophobia which can result from a circumscribed marital orthodoxy." (Qtd. in Adhikari 100) The aggression of Savitri depicts the agony of a tormented wife. She leaves the house of her husband empty-handed. Narayan expresses the existential agony of an Indian housewife through the character of Savitri. She says, "What is the difference between a prostitute and married women? - The prostitute changes her men, but a married woman doesn't; that's all, but both earn their food and shelter in the same manner" (Dark Room 93).

Through the interior monologue of Savitri, Narayan depicts the mental anguish of the Indian women who have no support and who explore their existence in family and society. Savitri revolts against her husband but when she becomes conscious, she regrets, "She feels that she does not have the courage to talk back to her husband and she has never done it in her life" (Dark Room 115-16). After leaving the home of her husband, Savitri realizes that she can find her existence neither in her husband's home nor society and finally she returns to her husband's home and again takes shelter in the dark room.

Like Narayan, Raja Rao also portrays the predicament of his alienated protagonists. Rao's protagonists feel psychological pressure because of caste system, gender discrimination, hypocrisy and other social evils that prevail in Indian society. The psychological condition of the protagonists of Raja Rao depicts that they are internally puzzled and try to find their own existence. They struggle hard to maintain their existence in the society but ultimately fail to retain their identity and become the victims of alienation. Madeleine is the central female character of the novel. She is the wife of Ramaswami. She is a French woman, but despite having a French origin, she serves Rama to the core of her heart. Madeleine loves Rama spiritually while Rama wants physical satisfaction. When Rama does not find physical satisfaction, he attracts towards Savitri. Rama's neglectful behaviour hurts Madeleine and she becomes frustrated and her frustration ultimately takes place of insanity. Her loneliness and frustration increase when she loses her son, Krishna (Pierre) who dies of pneumonia. After the death of her son, Madeleine needs much care and attention of Rama but Rama does not understand her needs. Madeleine wants Rama's company and support and for it, she is ready to bear any atrocity of Rama. She says:

For you, a woman is still the other, the strange, the

miracle. You could never show the familiarity European men show towards their wives. You warship women even if you torture them. But I like to be tortured and to be your slave (S. R. 100)

Madeleine searches her place in the life of Rama but she fails to find it. She realizes that she is alone and she has no goal to live. She breaks her relationship with Rama and renounces the world. In her letter to Rama, she writes, "It is all like a ghost story... I am sure it would also be wise to give Rama his freedom" (S.R. 399). Savitri is another female character in the novel. Like Madeleine, she is also a victim of alienation. She seeks her identity in the male-dominated society. She loves Rama but she is forced to marry Pratap. The forceful marries brings a typhoon in her life. Saroja, Rama's half-sister also feels suffocated in male-dominated society. She does not like India's superstitious traditions. She also struggles for her existence and feels alienated. Besides the female characters, Ramaswami is also a victim of alienation and identity crisis. After separation from Madeleine, Rama attracts towards Savitri but Savitri's marriage with Pratap makes him lonely once again. Like Madeleine, Rama also feels alienated and thinks that his life is meaningless. He wants peace and true knowledge and finally, he goes to the shelter of his Guru to attain peace and true knowledge. In this regard, M. K. Naik writes, "The theme of true love and marriage thus lead to the larger theme of the quest of self-knowledge ..." (Naik 168).

Thus most of the characters of the novels of Narayan and Rao feel alienated and suffer from identity crises due to various reasons. The female characters of The Serpent and Rope are educated and conscious and fight for their rights but like Savitri, the protagonist of The Dark Room, they also become victims of patriarchal norms and orthodox traditions of India. A conflict arises in their lives and it gradually leads them towards alienation. Narayan and Rao have seen the physical and psychological problems of common people of India and through the characters of their novels; they make aware their readers to the physical and psychological problems of Indian people.

Work Cited

1)Adhikari, Ramesh Prasad. "Existential Maturity of Savitri in the Dark Room." English Literature and Language Review, vol.6, no.6, 2020, pp.99-104. http://arpgweb. com/ journal/journal/I Accessed 28 Aug.2021

2)Agnihotri, G.N. Indian Life and Problems in the Novels of Mulk Raj Anand, Raja Rao and R.K. Narayan. Meerut: Shalabh Book House, 1984.

3)"Alienation" Wikipedia, The Free Encyclopedia, 20 Aug. 2021. https://en.wikipedia.org/wiki/Marx%27s_theory_of_alienation

4)Iyengar, K.R.S. Indian Writing in English. New Delhi: Sterling Publishers, 2017.

5)Naik, M.K. A History of Indian English Literature. New Delhi: Sahitya Academy, 2002.

6)Narayan, R.K. The Dark Room. Chennai: Sudarsan Graphics Pvt. Ltd., 2017.

7)Ramya, C. "Arun Joshi as an Adept in Effecting a Focus on the Predicament of Modern Man, Especially His Alienated Self in the Contemporary Indian Milieu: An Appraisal." International Journal of Innovative Research in Technology, vol.6, no.1, 2019, pp381-86. http://ijirt.org/ master/publishedpaper/IJIRT148342_paper.pdf Accessed 29 Aug.2021.

9)Saleem, Abdul. "Theme of Alienation in Modern literature." European Journal of English Language and Literature, vol.2, no.3, 2014, pp.67-76. www.eajournals.org Accessed 20 Aug.2021.

****

Art and Craft in the Selected Novels of Nayantara Sahgal : A Critique of Artistic Characterization

-**P.Ramesh**
Ph.D. Research Scholar(Part Time),
Dept of English,
Arignar Anna Goverment Arts college,
Namakkal-637002

-Dr.S.Veeramani
Research Supervisor,
Assistant Professor,
Dept of English,
Kulithalai-639120

Abstract:

This study entitled "Art and Craft in the Selected Novels of Nayantara Sahgal: A Critique of Artistic Characterization" aims to establish that the application of specific rhetorical strategies, art and craft have helped Sahgal's literary works to become a prestigious and popular political genre. The study takes for special consideration the fictions of Nayantara Sahgal to illustrate the point. Sahgal presents a true picture of the Indian intelligentia confronted with the various problems of India. The literary annals of Sahgal is a wide world, that reflects the humane concern, the urban sophistication, the historical and social perfections, and the psychological realism of Sahgal. Nayantara Sahgal's literary oeuvre reveals her as a perspective and conscientious social critic in constant proximity to contemporary social evils. Nayantara Sahgal is a political sensitive of an artistic with the sensitivity of a humanist. She stands for the new humanism and the new morality. Her chief literary feature of her fictional art lies in her Keen involvement with Indian people. in Sahgal's literary cannon, the significant themes other than politics, that dominate her fiction, are the themes of women, love and marriage.

Key Words: Characterization, Rhetorical, Political, Sophistication, Humanist

Introduction

The research paper entitled "Art and Craft in the Selected Novels of Nayantara Sahgal: A Critique of Artistic Characterization" tries to explain what Shagal seems to probe in her novels: how most of her major characters feel in a given situation, how they react to a particular predicament, what conflicts arise in them with regard to their course of action, what their motives are for acting as they do and in general how their feelings and mental processes in a given situation reflects their general character and provide a meaning for their actions, ravings and behavior. There is a detailed presentation of their feelings, emotions and mental processes and the underlying meaning behind them. It enables this study to point out that, the employment of art craft and characters are treated or used as a pattern in the novels of Nayantara Shagal. This paper shows that, Shagal agrees that man is condemned to be free and her novels emphasize on the human conditions, anguish, abandonment and despair. In fact, these human conditions are the chief characteristic of her novels.

Objectives and Methodology of the Study :

Nayantara Shagal is the most expression of the Indian of the writers. Her creating is focused with the precision on the political and cultural implications. The primary objective of this study is to describe artistic characterization qualities and character narration of Sahgal. A second objective is to identify her creative sensibility of employment of politics with personal problems of man and woman's private life. The theme of women, love, and marriage, and Indian social institution are the significant features of Sahgal's novels. This study deals with the novels Mistaken Identity, A Time To Be Happy, This Time of Morning, A Day In Shadow, A Situation in New Delhi, Rich Like Us, and Plans for Departure.

Relevance and Formulation of the Study:

Nayantara Shagal's chief literary characteristic of her fictional art lies in her portrayal characters. Nayantara Shagal's world is largely a world of separation, betrayals, between relations and promiscuity. All in all, it is a materialistic world in which every woman is depicted like her western counterpart. Shagal's women break

away from a marriage, which to her is a prison.

The salient features of Shagal's works are his characters. Her characters are flustered personalities. Sahgal's characters are obsessed with the quest for self-discovery and self-understanding. They lend an obscure life is an unstable environment, which has an impact on their personal identity. In Sahgal's fictions, the characters are searching for their identity. Some characters completely lost themselves. Some of the protagonists acquire double and multiple identities. Some characters present their mistaken identities. Some of them undergo the process of identity formation. In Sahgal's novels many of the characters are outsiders. Some are by choice, but more are forced to be outsiders because of their social and economic status, gende, race, and politics. Nayantara Shagal's fictions are interwoven with the issues of self - identity, fragmented selves, split personalities,

multiple, confused and mistaken identities. This research paper also presents escaping and obscure characters, which the research attempts to examine.

Critical Interpretation of the novel Mistaken Identity :

Sahgal's next novel Mistaken Identity (1988) is comedy in the tradition of Indian folk tales and the 'Arabian Nights' The elements of fantasy and parody seem to have been compounded to produce the comic effect in the portrayal of Bhusan Singh, a princely playboy of the Raj period in this novel. As one racks on one may even wonder whether for the first time Sahgal is consciously experimenting with the form of the novel however, controlled and cautious she may be Unlike the protagonists of her earlier novels, Bhusan Singh, the narrator protagonist of Mistaken seems to be anti-hero if not a novel picaro in prison. The title of the novel itself suggests its comic potential as well as its mock heroic representations of the historical reality. The novel which for all practical purpose is Bhushan's story, of his mistaken identity and of his several love- affairs becomes with the liaison of the Ranee with a communist worker, a story of some deeper meaning. The ending is in itself a political revolution. It is also a social revolution. Both mother and son are dreamers and rebels

The middle aged 'ranee" represents a strong force of change. In her own way, she has always been a rebel. Her character has been one of restless questioning. She is a stronger person than her husband and refuses to accept his continued pursuit of pleasure and new Ranee. After a long sojourn abroad following his tempestuous affair with a Muslim girl Razia and subsequent mayhem Bhushan was on his way back home when a cruel case of mistaken identity grips him and lands him in the jail. As the case of treason against Bhushan, drags on in the court Sahgai has time to look on his call-mates and the world around them. Razia, Sylla, Willie-May flit in and out of his colorful past as the Indian freedom movement is painted with gentle brush. Sahgal takes a panoramic view of the global events through the spotlight centers of India and her landmark movements.

The novel Mistaken Identity is a significant milestone in Sahgal's long career as a novelist. The novel is a graphic document of the twilight years of the Raj in India and may well serve as a reference point to many events and actions of the freedom movement with different patches of different characters. In this novel, Sahgal takes a world view of the development taking place in the first three decades of this century. Sahgal's penetrating eyes focus on Turkey through Bhushans encounter with the Sheikh during his stay at the

Taj, in Bombay. Sahgal looks at Russia through. Yusuf and his comrades who fawn on everything connected with Russia. As always, Yusuf's daughter and Bhushim fall for each other ostensibly because she saw in him a political commitment and he had never been able to resist a woman's beauty or the culture of Islam" In fact 'her heart went out to a frightened poet". Misunderstandings and mistaken Identities persist and the novel traces out a counterpoint of self - awareness of characters emerging from anonymous stereotypes to individual, who discover their identities linked with larger patterns of cultural symbiosis.

The major women characters are en through the eyes of the male narrator in no way stunts the development of the personalities throughout the narrative. For instance, Bhushan Singh's mother, a product of the conservative and tradition bound times that she lives in comes alive as

the son languishing in prison reminisces about her. The parsi girl Sylla with whom Bhushan shares a special relationship is more than just a typical parsi from Bombay.

There are sensitive touches in characterization which are surprising. One may wonder at the male narrator's effective assessment of the women who enter his life. Sahgal's subtle presence the writer uses a male narrator for a specific purpose to enter the male world of conspirators, jailors, and explores the lives of men with a vision in the early decades of this country. Since the world is visualized through Bhushan's experiences, the women who have made a difference to his life come alive. Sahgal's feminine sensibility helps the reader to appreciate the fact that although the women are representative of their class and the turbulent times they lived in, they have a strong will which is uncontrolled and untainted by their society.

Mother has always been confined to her "zenana". Her windows are painted green so that no sunlight enters her quarters. She sees the outside world through the carriage curtains. What is interesting is' that she is perceptive enough to see the decadent world outside for what is to the free spirit in her surfaced on the occasions of Shiva Pujas. "Mother" Bhushan recounts, "danced like a drunk, a woman possessed hair flying, sari slipping, a woman in flames" (27). There were times when she enjoyed herself most, throwing caution to the winds. Mother's attitude towards God and fate are distinctly different from the views of the women around her. All her maids project the stereotype. Sahgal has deliberately set Mother apart from the rest to emphasize, "I believe, the fact that the concept of the modern woman does not stem merely from the "modern" times in which she lives."

Sahgal here effectively uses Bhushan to show how different Mother was. Her reactions are quite different, as they are meant to be from those of other Hindus. Sahgai has effectively compared mother the truly liberated woman with those who pray out of feat or for favour. Sahgal depicts that mothers personality is not typical. Sylla is not merely a typical Parsi, she is more specifically a typical inhabitant of upper class Bombay. Moving in her charmed circle he has even been totally unaware of textile workers strike that has gone on for six months. This world of Sylla's was the kind of life Sahgal admits to have experienced when she lived in Bombay after marriage. Sylia and her world have evidently grown out of this personal experience. Even Sylla's appearance, her very English ways, set her apart from the common Indian woman. Sylla's parents too fit into the fabric of her world. Her mother plays mahjong, her Father Bridge. They are very polite and always welcome Bhushan to their home.

They are portrayed by Sahgal as typical representatives of their class. The character of Sylla and those of her circle seem amazingly untouched and unaware of the undercurrents of Hindu-Muslim differences. Razia, the Muslim girl Bhusan is obsessed with, is sixteen years old, a blind product of the "purdah'"and the namaz'; trapped in her religious and cultural confines. She is attracted by the fleeting moments of freedom, the strange boy man Bhushan enters her life. Razia did not accept the age old Muslim burka for what is signified: 'a protective shield'. To Bhushan, Razia is like a chimera, a wild fantasy that be knows is forbidden to him and seems, therefore, more endearing. Razia, on the other bard, bad no feelings for Bhushan. He is just a part of her experiment with freedom.

Through Bhusbans narrative, Sahgal examines how each of the three women relate to their social background They all: appear to hold to a romantic vision of love in her characterization of Mother, Sahgal has shown total sympathy with the woman who lives through her husband's callous neglect of her. And who perhaps had to live with the guild of the 'deaths' of her two daughters Bhusan speaks of these two elder sisters of his, They were supposedly stillborn but, after hearing about the widespread practice of female

infanticide, he is quite convinced that his sisters too must have been similarly disposed off, Mother he believes, "I think quite rightly, would have been an unwilling partner in the two crimes. when mother meets Yusuf; it is as if she chooses to live again for the first time in this relationship based on mutual love, Mother feels needed loved, and cherished reading, all the insights into mother's personality and from many similar instances.

The readers might be tempted to believe that Sahgal has finally entered into of an endearing mother- son relationship in the novel.

In the novel Mistaken Identity one must consider the circumstances and the situation that have given size to these detailed accounts of the mother. Since the protagonist/narrator is a man, the world, including the female characters, are seen from his point of view. One, suspects that Bhushan's thorough understanding of mother reveals the narrator's insight rather than the sensitive son's perceptions. Bhushan's detailed description of events in his mother's life before his birth and her reactions at that time are stark, lacking sympathy and almost critical. Admittedly, he has heard of her painstaking pilgrimages, her agonizing pregnancies, and finally her giving births to a breach baby Le, himself. Only dispassionate narrator could analyze the personality of Mother with such thoroughness. This analsis lacks the sentimentalism or emotionalism one would expect in a son. For instance, Bhushara recounts his mother's marriage with a kind of calculated detachment that only heightens the horror of her experience.

It is interesting to note what Bhushan says, when he shares the reminiscence of his past with the other prisoners. He is quite explicit about his relationship with Razia and Sylla, whereas his interaction with Mother is conspicuously glossed over. As the personalities of the three women are carefully and artistically revealed to the reader by Bhushan Singh, the reader is curious to meet them in person, to try and draw his own conclusions independent of the narrator.

But, since the son in the narrator it is natural that the other dimensions of Mother's personality are not easily projected, and that the focus is on the mother-son aspect. The narrator/son faces greater obstacles in dealing with scenes involving Mother's husband and her lover, Yusuf. In contrast, the characterization o either Sylla or Razia does not exhibit any such constraints Sylla is presented young Parsi woman with an independent and

westernized outlook. Razia, takes tentative steps towards freedom at the age of sixteen but is otherwise a typical traditional Muslim, Soon other characters in the novel like Bhaiji the congressed with his charkha, and Nawzer Vacha are quite fascinating and keep the narrative alive through their humorous and witty discussions.

Male figures, like Bhushan's father, his uncle, the ineffective teacher, the old lawyer are all background figures. Even Vacha remains in the background. The prison- mates push him to self questioning but they also do not emerge as forces of influence. But the women Raja, Willie-May, Sylla and his mother, emerge out of the shadows and take charge of his destiny and his dreams. They also take charge of their own lives.

All Sahgal's novels are set against a background of contemporary Indian politics. The characters in these novels belong to the rich, urban milieu consisting of politicians, bureaucrats and high government officials, unsuccessful businessmen and their families. These similarly placed characters move forward in the same way that Indian politics and politicians move forward. Sahgal does not profess any specific political ideology nor does she propagate any definite political values, or reveal futuristic anti-utopias. She neither glorifies ancient India nor exhibits chauvinistic nationalism. Politics can be called her "primordial predilection", the central point of whatever she writes. That is why almost all the major characters of her novels are drawn irresistibly to and deeply involved in the vortex of politics, Against this backdrop, she analyses and interprets various political events with an intelligent and perceptive mind and reads the individual responses of the characters to these events with the unusual sensitivity of a mature artist.

Conclusion:

In the world of Nayantara Sahgal's novels do not meet her characters fleetingly or casually, they exist in relation to a background. In her first novel, A Time to Be Happy it is the narrator who fills, in the background Information of most of the characters for he has either them for many years r they confide in him. Sanad brings to him uncertainly and indecision as do Govind Narayan arid Lakshmi. Others help him to place things in perspective like Prabha and Sohan Bhai. In the succeeding novels other methods are followed and the narrator is replaced

by the omniscient author who has greater freedom than a narrator. And then recollection, reminiscences and flashbacks follow revealing the psychological back-grounds and the influences on the characters. This helps us to see their thought processes. This is one of the most, effective methods of characterization which Nayantara Sahgal uses for she uses it successfully. This is one of the most effective successfully It is here 'that her' objectivity as a creator is put to test. She does not allow her own viewpoint to dominate the viewpoints of her characters.

In A Time to Be Happy the narrator, while he helps in the portrayal of the characters also limits the presentation of his portrayal to some extent. Other characters and viewpoints fail to come into their own. Most of the characters in this first novel are surface characters. They do not acquire any depth, their actions are narrated not really acted. In is Time of Morning her characters emerge more strongly as individuals. With each succeeding novel, Nayantara 8ahgai gets a better hold over the art of characterization. In Storm in Chandigarh the number of characters is further reduced and the political concern is localized to large extent. Here the characters interact with each other and with the situation in which they are placed. The characters are able to analyse their adventure. There is also an increasing dependence on dialogue as a means of character-portrayal. This does not happen to some extent in The Day in Sahdow. The characters in A Situation in Delhi represent political stances and most of them do not emerge as strong characters.

Works Cited

Primary Sources:

Sahgal, Nayantara. This Time of Morning. New York: Victor Gollancy, 1965.

---. A Time To Be Happy. New York: Sterling, 1975.

---. Mistaken Identity. London: William Heinemann Ltd, 19878.

---. Rich Like Us. London: Heinemann, 1985.

---. Storm in Chandigarh. New York: Penguin Books, 1988.

---. A Situation in New Delhi. New Delhi: Penguin, 1988.

---. A Day In Shadow. New Delhi: Penguin Books India Private Limited, 1991.

Secondary Sources :

Jain, Jasbir. Nayantara Sahgal. New Delhi: Arnold Heinmann, 1978. Mirriam, Allott. Novelists on the Novel. London: Routledge, 1959.

Rao, A. V. Krishna. Nayantara Sahgal: A Study of Her Fiction and Non-Fiction. Madras:

M. Sesahachalam. Co, 1976.

Walder, Dennis. Literature in the Modern World. Oxford: OUP, 1990.

---. The Realist Novel. Oxford: OOP, 1995.

Asnani, Shyam M. The Novels of Nayantara Sahgal. New Delhi: Doaba House, 1987. Bhatnagar, Manmohan. The Fiction of Nayantara Sahgal. New Delhi: Creative Books,

1996.

Kohli, Sresh. Nayantara Sahgal and the Art of Fiction. New Delhi: Vikas Publishing House, 1972.

Pontes, Hieda. Nayantara Sahgal. New Delhi: Concept Publishing House, 1985. Sing, R. A. The Novels of Nayantara Sahgal. Bareilly: Prakash Book Depot, 1994.

****

Tracing the Charismatic Life of Maulana Abdul Hamid Khan Bhasani: A Forgotten Hero of Masses

-Shahiuz Zaman Ahmed
SPP College,Namti,India

An undivided India born fighter and politician from a marginalized community, Abdul Hamid Khan was an undaunted leader for legitimate rights of masses who led peasant's movements in India, played important role in transforming East Bengal to East Pakistan and finally was the steering leader of Bangladesh freedom movement. In all three countries- India, Pakistan and Bangladesh he had huge followers from all religious groups. He followed a mixture of blended Ideological views or isms to get justice for the suppressed. Khan had close link with the communists and communism, an admirer of Gandhi's policy of ahimsa, and a secular peace lover. He was also an advocate of armed movement if necessary for establishing peace and justice. Selflessly led several successful political movements in Indian subcontinent and never wished to occupy political power raising himself to the position of a ruler. Instead, if his own political party failed to deliver justice to the people he rebelled against, disassociated with the party and brought its downfall. He was the founder of Pakistan Awami League and National Awamy Party of Pakistan and Bangladesh respectively. During British colonial period Khan fought against the 'Line System' introduced to segregate the poor Hindu Bengalis and Muslim minorities in Assam.

This paper attempts to trace the charismatic life of Maulana Abdul Hamid Khan and his contribution in the field of politics.

Early Life of Abdul Hamid Khan

Mohammad Abdul Hamid Khan Bhasani, the second son of Haji Mohammed Sharafat Ali Khan and Mohammed Mojiron Bibi was born in 1885 at Sherajganj of Pubna district of British Indian territory. He was named by his father as Abdul Hamid Khan, with the nick name 'Chaga Mia.' At the age of five Chaga Mia lost his father. In 1894-95 cholera struck in different regions of Sherajgonj and again he lost his mother, two brothers, his only sister and grandparents. Miraculously Chaga survived and became an orphan at the age of eight. He was compelled to live with his uncle who had captured his father's property. He was admitted to a Maddrassa. While doing his studies, he also had to take care of his uncle's flock as a shepherd. A moment of carelessness in his work led to severe humiliation by his cousin. He was hurt. The 'independent minded' Chaga decided to leave his uncle's house adopting different professions to survive. He spent nights in fishermen's boats on the Jamuna River and caught fish with them. He also worked as a daily wager, sometimes going hungry because of his inability to buy food. For survival, he moved from one village to another.

From childhood he took part in Bengali rural sports. He was also actively involved in Jatra (rural drama), and kobi gaan (poem recitation). He was a good actor, could sing, and became recognized as a good kobial (poem reciter). In those days, the themes of poems were normally about the British and their zamindar's atrocities in rural Bengal.' From these poems Chaga first learnt about the oppressive policies of the British.

Bhasani's Education and Political Training

On a fine day of 1901, when Chaga was on a boat in the Jamuna River near Hossiarpur, Sherajganj met a pir (Sufi saint) Nasir Uddin Bagdadi. The pir was attracted by Chaga and learning that Chaga was an orphan took him to Jaleswar, Assam on the same day. In Assam, Chaga worked as pir's servant. Seeing him hardworking and noticing his devotion to religious spirituality, Bagdadi taught him Arabic and Urdu. As guardian and spiritual teacher Bagdadi helped Abdul Hamid Bhasani (Chaga)

to learn Bengali enrolling him in Pathshala. He also helped Bhasani through private instruction learning and understanding the Quran, Hadith and Fiqh and Persian language. He developed good relationships with the associates and followers of the sufi saint, something that he was able to capitalize on later in life. In 1907, Bagdadi sent Bhasani to Deobond Madrassa for further studies. Bhasani studied in Deoband for two years (1907-09) instead of the usual 6 years of course. Here he could develop his political ideology and strategy to fight against the colonial rule in India.

Restless Bhasani was not happy with anything for long time. But he was a true patriot and became a crusader to fight against the oppressive measures of the ruling class. In 1909 he joined a secret revolutionary group 'Anushilan Samiti' (Gymnastic society) in Calcutta led by revolutionary Hindus. It was very unusual for an alim (Islamic leader) like Bhasani to join the group. In 1913, Bhasani left the group on the advice of Mohammad Ali, a prominent leader of Khilafat Movement and began working with him as a political worker. During this time Bhasani had the opportunity to attend the meetings of great Congress leaders like Surendra Nath Benarjee and Bipin Chandra Pal. Bhasani learned political tools of agitations to be used in his later political career, from these Congress leaders.

At the 33rd session of the Indian National Congress, Calcutta, 1917 Bhasani formally joined the Congress and became a political worker with Mawlana Azad and the Ali Brothers (Muhammad Ali and Shawkat Ali). Bhasani also became an associate of Gandhiji in the Non-Cooperation Movement of India and went to jail together. This marked Bhasani's first incarceration as a politician of national importance. However, Bhasani did not like the call off of the Non-Cooperation Movement by Gandhiji and disassociated from him and choosing to work with Chittaranjan Das till 1925.

Bhasani in Assam Politics (1929-1947)

Assam was a thinly populated state and could fill large areas of depopulated waste but fertile land. The British saw land abundant Assam as a solution to the Bengal problems of growing revolutions, land scarcity and over population. Accordingly, the government encouraged to mobilize a section of Bengal people to settle in land abundant Assam. The British Indian government got huge response from the poor peasants who started migrating towards Assam. This large scale migration led to the rise of Muslim proportion in Assam from 9% in 1921 to 19% in 1931 and 23% in 1941.

The local people could not welcome new settlers and fearing loss of their own identity. They appealed the government to restrict the settlement areas for migrant people. Accepting it, the Government in 1920 decided to execute the proposed 'Line System' of 1914, for keeping the migrant people aside from the local inhabitants. The 'Line System' originated in Nowgaon was divided in to three classes.

1. those in which immigrants might settle freely,
2. those in which they (the immigrants) could not settle, and
3. where a line was drawn on the map or on the ground on only one side of which they could settle.

Assam government's treatment of the Bengali migrants developed with a policy of discrimination. The hatred became so alarming that a section of Assamese now started destroying new settlements. The new settlers were identified as outsiders and their houses were burned down, or their crops were destroyed by elephants. It led to a movement called 'Bangali khedao' (send the Bengalis back). This took the shape of even forcefully evicting the local Assamese Muslims (old stock Assamese Muslims) and the new settlers alike from Assam. It turned into a serious communal problem. Bhasani considered it unjust. and stood against it. He justified his fight against the line system on the grounds

that-

The earth is for all humanity, like the sun light, the air, rain, water(land is also a gift of God. This gift is not for any particular person, not for any tribe or any community(it is for the consumption of all human beings. Human beings, as the best creation of the God, are only his representatives. Those who are trying to deny the God's gift to human beings are working against the greatness of Him. We will restore this divinely given gift of God....We will not tolerate any third party's interference in this. At first he tried for a negotiated settlement on the issue. The concerned authorities did not heed to his initiative. To end with, he decided that only jihad (struggle) can save people from the zul'm (oppression) of the zalim (oppressor).

Bhasani began to unite the migrant peasants in order to protest against the oppression and founded the 'Assam Peasant and Labourer's Association. This association organized meetings in different places in Assam to mobilize public opinion and protest against anti-migrant government actions. In 1937 election he was elected to the State Assembly. Speaking English was seen in Assembly as a sign of aristocracy. But unlike the other politicians Bhasani spoke using the language of the people he represented i.e. Bengali. Since Bengalis comprised a sizable population, Bhasani also demanded recognition of the cultural rights of Bengalis and insisted that Bengali language be one of the languages of Assam and in the Assam Assembly. But the government used repressive measures and continued evicting the migrants. In response to this, at the initiative of Bhasani, on November 19th, 1939, the Assam provincial Muslim League Council held a meeting in Gagmari of Gopalpara. At the meeting Bhasani criticized the government policies and compared it to 'Hitler's repression of the Jews.

Bhasani was also not happy with the rule of Sadullah Government in Assam as this Government too did not act to mitigate the issues of the migrant peasants. Bhasani was the President of the Muslim League, but did not compromise with the premier elected from his own party. In a meeting held at Karimganj Bhasani said 'the difference between Congress Premier Gopinath Bordoloi and the Muslim League Premier Sadullah is of a cap(Bordoloi does not wear a cap while Sadullah wears a cap. Sadullah will not get my support just because he wears a cap'.

He strongly criticized his government in the party meetings and compelled the Government to make a promise by the Premier that two lacs of landless peasants would be given lands. Bhasani immediately revealed this through a statement in the newspaper. It caused panic within the government. Finding no other way the government allocated land to close to 100,000peasents. Bhasani was equally concerned to the rights of the local marginalized inhabitants. In 1944, during the Bordoloi Government, Bhasani demanded equal rights for the peasants, whether Bengali or Assamese or tribal people. He suggested that land should be distributed first to the landless tribal people, then to the Assamese Hindus and Muslims and finally the migrant Bengalis.

By 1946 the Government firmly resorted to evict the migrant settlers from the districts of Mongoldoi, Barpeta, and Gauhati. Bhasani's all form of actions failed to stop the eviction. By that time the Freedom Movement of India was at pick. India was about to be freed from the hands of the British. During those days Mohammad Ali Jinnah, the Muslim League Leader and Jawaharlal Nehru, the leader of the Indian National Congress were busy in drawing support to their respective plan for Pakistan and India. At that pick hours, Jinnah once visited to Bengal and Assam. Bhasani met Jinnah in Sylhet. While describing the inhuman treatment of the government of Assam towards the poor peasants, Bhasani broke into tears with emotion. But unfortunately Bhasani did not get any response from

Jinna. Jinnah observed the Assam situation as an opportunist politician and did not have any sympathy to the oppressed. Instead, Jinnah considered Bhasani not fit for leadership in the Muslim League. Jinnah opined sentimental nonsense and emotion have no place in politics. Jinnah's attitude disheartened Bhasani. Bhasani resorted to a fast unto death 'unless the Government of Assam stopped the eviction of the migrant people. On seeing the downtrodden health condition the followers requested Bhasani to break the fast. But Bhasani stated-"I am not on hunger striker like Gandhiji. I am merely fasting. How can I take food so long as the oppressed continue to starve?'

Bhasani took food after long 61 days and gave a call to observe 31st May as a protest Day against the alleged 'Congress atrocities'. By November 1946, the Government again started evicting in Darrang, Kamrup and Nowgaon. Bhasani along with Mahmud Ali, the General Secretary, APML planned a plan to launch a Civil Disobedient Movement against the eviction and sought permission in this regard from the High Commission of Indian Muslim League. But the High Commission did not accord permission.

Bhasani compared the eviction policy of the Bordoloi Government with the 'tyrannical rule of the infields of the ancient time and characterized it as 'cruel', 'inhuman' and 'barbarous'. Bhasani and his associates now became more belligerent. On 9th March 1947, a crucial meeting of the APML was held. The meeting was presided over by Bhasani taking decision to undertake a Civil Disobedience Movement even without permission of the High Command. Bhasani characterized the Movement- 'a struggle for existence', 'a fight for achieving basic necessities', 'an agitation against the British imperialists' and 'a Jihad against the reactionary policy of the Assam Government'.

The Government of Assam became alert on receiving the news and immediately arrested Bhasani at Tezpur Town Hall on 10th March while addressing a huge gathering. Latter, he was sent to Jorhat Jail. The arrest of Bhasani created a widespread resentment among the League Leaders and the migrant masses in general. Being leader of APML, Sadullah requested Bordoloi for Bhasani's release. But the central government of India was adamant not to bow down and assured the Assam government led by Bordoloi that it would give them all possible help.

However, seeing the growing unrest the government was compelled to release Bhasani from the Jail of Guwahati on the 21st of June 1947. In the same year Pakistan and India received their independence on 14th and 15th August. The district of Sylhet (excluding the Karimganj subdivision) went with East Pakistan (present Bangladesh). Bhasani crossed the border with good number of followers and went directly to the village in Santosh of Tangail, the then East Pakistan, and settled there permanently.

Bhasani and East Pakistan:

In East Pakistan too Bhasani stood against the oppressive policies of the Pakistani Government. Pakistani Government imposed Urdu language on the Bengali speaking people of East Pakistan which the East Pakistanis couldn't accept. The student community of the region first raised their voice against this policy in 1949. Bhasani stood by the side of the students and demanded official recognition of Bengali language. Bhasani got annoyed with the Muslim League Party and founded a new party the Awami (nationalist) Muslim League Party (AMLP). Within a very short span of time the party became popular and leaders like Hussain Shahid Suhrawardy and Sheikh Mujibur Rahman, the most prominent leader of the language movement joined the party. Bhasani was arrested and imprisoned in 1952 when the Language Movement got its momentum. AMLP contested in the election of 1954 and became the

absolute majority party of East Pakistan winning 290 seats against 300. The party formed the government with Fazlul Hoque as chief minister. It was a big achievement of the party. To make AMPL appealing for all religious people, Bhasani, dropped the word 'Muslim' from the Awami Muslim League Party. However, very soon a serious political disagreement arose between Bhasani and H.S. Suhrawardy, the then Prime Minister of Pakistan that led the former to form another political party namely the 'National Awamy Party' (NAP). NAP, under the leadership of Bhasani played the most instrumental role in the Bangladesh Liberal Movement. At the age of 96, Bhasani died in Dhaka on November 17, 1976.

Political Ideology of Bhasani:

Bhasani was a political fighter for the interest of the oppressed. He never thought for his own benefit or to grab power out of politics. Instead, he used to play the role of a king maker. He led several movements and political fights in India's Northeast, East Pakistan and Bangladesh. He opposed all the policies of the governments that could not satisfy the needs of the peasants irrespective of caste, creed and religion. He was an Islamic leader but was absolutely secular in public life. He worked with different giant leaders of different ideologies like Mohandas Karamchand Gandhi, Ali Brothers (Maulana Mohammad Ali and Maulana Sawkat Ali), Mohammad Ali Jinna, Chittaranjan Das, Sir Syed Sadullah, H.S. Suhrawardy, Sheikh Muzibar Rahman, etc. He was also a member of a secret revolutionary group 'Anushilan Samiti (Gymnastic society) in Calcutta led by revolutionary Hindus. Madrassa trained this figure had also good contact with Mao Zedong (Mao Tse-Tung) and Chou En-Lai of People's Republic of China. He believed that Politics should be learned from the common people and the prevailing environment. Bhasani believed that there are good principles and ideas in all great leaders and ideologies. He was an admirer of Gandhiji though had differences of opinion in many respects. His political ideology was a blended one which he extracted from Gandhism, Communism, Islamic ideology and also from the principles of secret revolutionary ideas.

Bhasani was a renowned Islamic scholar and a maulana but never mixed up religion with politics. He was equally vocal for the rights of the oppressed Muslims, Hindus, Tribals and others. He had a mesmerizing personality. He was a true leader of the down trodden people. Thus Bhasani was also known as 'Majlum Jananeta' (Great Leader of the oppressed).

References:

Abdul, M. S. (1994). Mawlana Abdul Hamid Khan Bhasani. Dhaka: Bangla Academy.

Bahar, A. S. (2003). The Re(igious and Philosophical Basis of Bhasani's Political Leadership. Qubec: A Ph. D Thesis, Department of Religion, Concordia University, Canada.

Bimal, L. D. (1985). Assam Muslim Politics and Cohesion. New Delhi: Mittal Publication .

Dasgupta, A. (2000). Emergence of a community: The Muslims of East Bengal Origin in Assam in Colonial and Postcolonial Period . Guwahati: An Unpublished Ph. D. Thesis, Gauhati University .

Guha, A. (1988). Planter Raj to Swaraj Freedom Struggle and Electoral Politics in Assam 1826-1947 . New Delhi: Peoples Publishing House .

Report of the Line Syatem Committee. (1938). Shillong .

Islam, S. (1994). Shadhinata, Bhasani, Bharat. Dhaka: Bangla Academy.

M, Karr. (1997). Muslims in Assam Politics . Delhi: Vikash Publishing House Pvt. Ltd.

Mrinal Talukdar, K. K. (2019). Swarajottar Assam (1947-2019). Nagaon: Jagaran Sahitya Prakashan.

Pisharothy, S. B. (2019). Assam The Accord, The Discord. Haryana: Penguine Random House India.

Quayyum, H. A. (1998). Mazlu'm Jononeta Mawlana Bhasani . Dhaka: Islamic Foundation Bangladesh.

Uddin, M. (1994). Upomohadesher Rajniti-O-Byaktitto . Dhaka: Printing House.

****

Decoding the Economic Philosophy of India since Independence

-Aparna Samudra
Assistant Professor,
Dept of Economics,
RTMN University,Nagpur

Abstract: As India is celebrating Azadi ka Amrit Mahotsav to commemorate seventy five years of its Independence, it stands out among developing countries of the world. As one of the first colonies to achieve independence in the 20th century, India was a pioneer among non-Western nations in trying to forge an explicit development strategy.This paper discusses the philosophy behind three phases ofthe India's economic policies since independence. These phases have been characterized by three different policy regimes. The period of 30 years from 1950–51 to 1979–80 was the phase of socialist experimentation, in which the 'Indian version of socialism' was developed and instituted. The second phase of economic development started at the beginning of the eighties (1980-81) till (2014-15). This was the phase of 'Market experimentation,' in which the oppressive control regime set up during the first phase was modified and physical controls gradually removed. The third phase started with the under the leadership of Hon'ble Prime Minister Shri Narendra Modi in 2014-15 and continues till today with focus on Self Reliant India

Keywords: Azadi ka Amrit Mahotsav, Atmanirbhar Bharat,India's economic philosophy, Socialism, Economic reforms

Introduction: As India is celebrating Azadi ka Amrit Mahotsav to commemorate seventy five years of its Independence, it stands out among developing countries of the world. As one of the first colonies to achieve independence in the 20th century, India was a pioneer among non-Western nations in trying to forge an explicit development strategy. The centerpiece of India's development strategy was modernization through industrialization. India's economic growth and development journey of last seventy five years needs to be understood in the context of economic philosophy it adopted to catalyze the current growth trajectory. This paper discusses the philosophy behind three phases ofthe India's economic policiessince independence.

These phases have been characterized by three different policy regimes. The period of 30 years from 1950–51 to 1979–80 was the phase of socialist experimentation, in which the 'Indian version of socialism was developed and instituted. The second phase of economic development started at the beginning of the eighties (1980-81) till (2014-15). This was the phase of 'Market experimentation, 'in which the oppressive control regime set up during the first phase was modified and physical controls gradually removed. The third phase started with the under the leadership of Hon'ble Prime Minister Shri Narendra Modi in 2014-15 and continues till today with focus on Self Reliant India

Economic Philosophy Characteristics

First phase of Fabian socialism:Drawing heavily for the Pandit Nehru's views, the objective of India's development strategy was to establish a socialistic pattern of society through economic growth with self-reliance, social justice and alleviation of poverty. The economic policies largely paid attention on Òthe ending of poverty and ignorance and disease and inequality of opportunity. These were the basic foundations on which India embarked upon its path of development since gaining independence in 1947. Nehru was drawn to British socialist ideas, under the banner of the Fabian Society which preached socialisation of essential services and basic industries within the framework of parliamentary government

as the best means of eliminating poverty and ensuring work for all.

As analysed in Virmani (2004c) there have been two phases in India's development history since independence. The period of 30 years from 1950–51 to 1979–80 was the phase of socialist experimentation, in which the Indian version of socialism was developed and instituted.

Chakravarty (1987) presents a detailed exposition of the underlying economic rationale and documents some of the ideological and political factors. This phase was characterised by a conscious effort to increase the role of the State in the economy (commanding heights). This was perhaps a reflection of what Chakravarty (1987) calls a profoundly interventionist economic philosophy prevailing at the time among the intellectuals including Pandit Jawhar Lal Nehru. He states that given similar perceptions of the reasons for India's structural backwardness (which he presents), even a more pragmatically inclined politician than Nehru could well have opted for the same set of arrangements for promoting economic development.

The expansion of the State's role took place through multiple channels including nationalisation of industries and financial institutions, reservation of sectors for the government (public sector) investment in infrastructure and other production activities, legislative measures to control and direct private activity and micro-equity driven tax systems with high rates. The underlying socialist philosophy (Marxist/ Leninist/ Stalinist/ Fabian) was constrained by strong belief in genuine people's democracy. The Mahalanobis model was the organising framework for planning and policy. Import substituting industrialisation (import control), capital goods production by the Public sector and reservation of employment intensive industries for traditional (handloom) and small-scale sectors were some of its characteristics.

Looking back, it is clear that there was an inherent assumption that market failure was a serious underlying problem, that the private sector could not be trusted and that the public sector would produce economic and socially superior outcomes. Though the mix of measures used varied over the phase, the vital role of competition as a disciplining force on producers and the concept of modern regulation as against bureaucratic control was sorely missing throughout the first phase of economic development.

Second phase of Experiments in Market Reform: The second phase of economic development started at the beginning of the eighties (1980-81). This was the phase of Market experimentation, in which the oppressive control regime set up during the first phase was modified and physical controls gradually removed.

The process of industrial and import-export decontrol and easing of investment restrictions started during this phase. Initially, this process was driven by practical experience of policy failure and visible damage to the economy. It was consequently very selective and case-by-case. As K.N. Raj (1986), pointed out there was no official resolution or statement about the 'new economic policy', reforms focused on industrial de-control, import controls, particularly imported items required by exporters and tax rates. There were also isolated reforms related to financial sector and capital markets.A more comprehensive and integrated view of market reforms was formulated in the nineties, with wider and deeper reforms initiated in 1991-92 (Virmani (2002b, 2004a).

The trajectory of India's economic reforms has not been linear. During the eighties there were several short episodes of liberalization – first, during the postEmergency tenure of Indira Gandhi (1980–84) and later during Rajiv Gandhi's regime (1984–89).

Reforms began in earnest in 1991, following the general elections in that year. The new Congress (I) government, headed by P.V. Narasimha Rao and with Manmohan Singh as finance minister, took over in June. Soon after the cabinet was sworn in, the government announced the first set of reform measures. It continued to introduce new measures in various key economic sectors during its term. The desire to reform did not end in 1996, when the Congress (I) government was replaced by a coalition headed by the Janata Dal(nor in 1998 and 1999, when coalitions led by the Hindu–nationalist Bharatya Janata Party (BJP) were formed. All these governments pursued economic reforms – perhaps not as quickly as some of the advocates would have preferred and certainly not to the same extent in each sector and every region of the country.

The third phase of Self reliant India: The present Modi led government when came to power in 2014 inherited a pessimisticview of Indian economy with policy paralysis and crony capitalism at the heart of subdued economic growth. The electoral promise of 'sabka saath, sabka vikas' (`Together with all, Development for all´) was the central idea of the economic policies formulated by the government. One medium- to long-term strategy that the government announced to propel the economy towards double-digit growth was the ÒMake in IndiaÓ campaign to boost India's manufacturing sector and exports by attracting foreign investment. The long term structural changes with the motto of Minimum government and maximum governance are likely to be achieved by adoption of policieslike Goods & service Tax, Aadhar and financial inclusion, Industrial Bankruptcy code etc.

The presentgeneration economic policy relies heavily of the concept of Swadeshi. The Prime Minister's call for ÒVocal for LocalÓ during the pandemic and the adoption of Atma Nirbhar Bharat is based on theeconomic philosophy of the RSS, the ideological think tank of the present government. Officially, AtmaNirbhar Bharat has been positioned as a campaign to increase local manufacturing, which would gradually make the country import-free through various economic policies and is seen to be influenced by the book titled The Third Way, by Dattopant Thengadi. Thengadi, who passed away in 2004, was the founder of the Sangh's trade, labour and farmers wings, the Swadeshi Jagaran Manch, the Bharatiya Mazdoor Sangh and the Bharatiya Kisan Sabha, respectively. While speaking on Swadeshi economic policies he emphasized the following points:Value-based competition and cooperation, Economic equality and opportunity, No exploitation of nature but milking of nature, Self- employment and not just salaried employment, stress on savings, and balance between decentralization andcentralization and National self- reliance (not self-sufficiency).

Theeconomic stimulus package during the pandemic has clear and indelible imprints of the confluence of the economic thoughts of Gandhi, Deendayal Upadhyay, and Dattopant Thengadi. Even while taking due care of the necessities of food, medicine and other essential items, the government has invested its energy and resources in metamorphosing and bringing about fundamental structural changes in the economic system via reforms.
The detailed package has facilitated mechanisms where a person may start industrial production through local resources even while eyeing for the global market. For example, reforms in APMC Law, Fisheries, Animal Husbandry, MSME, Agriculture etc. will provide a stable, inclusive, financially accessible and assistive environment to grow. These developments are in tune with the economic thoughts of Saintly Intellectual Dattopant Thengdi

who has repeatedly reiterated that as India is a labour-surplus country, therefore to ensure that the model of economic development is balanced, the labour-intensive industries must be focused.

He had given a motto- 'Industrialization of Rashtra, Labour-intensification of business, and nationalization of Laborers'. Dattopant believed that the partnership, importance and weightage of labourers must be increased in business as labour is easily available in India. The declaration to provide a stimulus of Rs 10,000 crore and Rs 15,000 crore to foodprocessing and dairy reflects that the government has embraced the path suggested by Dattopant Thengdi.

Similarly, Gandhi believed in the idea of Village based economic model and for this it was important to end the license-permit Raj and that people doing animal husbandry must also be treated as a farmer, and that a person is now free to sell his products anywhere. In the regard, the reforms initiated by the Central Government will be an important effort towards the dreams of Mahatma Gandhi.

The idea of JAM (Jandhaan, Aadhaar, Mobile) Trinity based modelling of schemes for the welfare of the poor is driven by the inspiration of Antyoday provided by Deen Dayal. In his model of economic development, 'work for each hand' is critical and essential. The present package reserving Rs 3 lakh crore for collateral free loans will create a way and ecosystem for the talented prowess of youth aiming for self-employment.This shall transform them from 'job-seeker' to 'job-provider'. Besides this, it will provide employment to the local people in their surroundings.

Conclusion:

Tracing the economic history of India's policies we find that what started as Indian style socialism which was withered away with completely market based capitalist economy and a confluence of economic thoughts that suit the Indian needs and doesn't consider the Western policies as universal in present government's policy can be a potent medicine to address longstanding imbalances in the economic structure.

References:

Kumar R &Pratap S,(2020),The Economic Thoughts of Gandhi: Relevance for the Progressive India,Vivekananda Journal of Research January - June 2020, Vol. 9, Issue 1, 11-27 ISSN 2319-8702(Print)

Schottli, Jivanta and Markus Pauli, (2016).Modi-nomics and the politics of institutional change in the Indian economy. Journal of Asian Public Policy, 9(2), pp.154-169.

Thengdi D (1998), Third Way(2nd ed.), Sahitya Sindhu Prakashan

Virmani, A (2004a), Accelerating Growth and Poverty Reduction – A Policy Framework for India's Development, Academic Foundation, New Delhi, January 2004.

Virmani, A (2004b), ÒEconomic Reforms: Policy and Institutions Some Lessons From Indian Reforms,Ó Working Paper No. 121, ICRIER, January 2004

Virmani, A (2004c), ÒIndia's Economic Growth: From Socialist Rate of Growth to Bharatiya Rate of Growth,Ó Working Paper No. 122, ICRIER, February 2004.

Virmani A, (2005), Policy Regimes, Growth and Poverty in India: Lessons of Government Failure And Entrepreneurial Success!, Working Paper No. 170, ICRIER, 2005.

****

Glimpses of Himalaya Tourism Culture, Literacy & Economy
(Special Reference to Uttarakhand Region)

-Dr. Hitesh M Dadmal
Assistant Professor,
P G T Dept. of Economics,
RTMN University,Nagpur

·Abstract:

This paper totally based on Himalaya Tourism with specially Uttarakhand reason. Also assesses the growth and current situation of India over the last decades of Indian tourism development. This present paper analyses some of the problem facing Indian development for two decades which chiefly focuses on the progress of Uttarakhand tourism. In the Indian context & shows the lacuna and shortcoming in the government policies at state & national level that need to be strongly implemented for the achievement of balanced growth & tourism development of the economy. This paper emphasizes on tourism target and goals that are helpful in SWOT analysis & identifying the immediate tasks to be fulfilled in order to improve the progress towards tourism. The paper also covers the achievements, culture, Structure, Paths progress made in respect of targets & goals as cover in tourism glimpses especially reference to Uttarakhand State.

·Key Words:

Culture, Literacy Ratio & Economy, Tourist Destinations with Grade, Tourism Development Goal, SWOT analysis Uttarakhand Tourism, Arrival tourist (DTVs, NRIs, FTAs, ITAs)

·Introduction-

Uttarakhand popularly known as Dev Bhoomi has created on 09th July 2000. Uttarakhand State development mostly depends on tourism. Uttarakhand state surrounded by Himalayan mountain ranges, the origin of glaciers, the border of Nepal to the southeast, Himachal - Haryana - Uttar- Pradesh are its neighboring states. And also the Tibetan border in the northeast. The state is mostly occupied icy regions, densely forest, and natural beauties & highly covered by Himalayan plateaus. Consequently, the state has got the most benefit of tourism. Scare plants, rare herbals, two of India's largest rivers the Ganga &Yamunotri are originated in Uttarakhand. Mussoorie, Almora, Ranikhet& Nainital are Famous tourist places in the region & are frequently visited by lacks of tourist every year. Most pilgrim's places like Kumbha Mela, holy & Scared places like the temple of Haridwar, Rishikesh, Badrinath &Kedarnath have measured tourist pilgrim's places.As per the Uttarakhand development report of 2011, the income of the state has risen by 150% and the reason behind it is the advent of domestic & foreign tourists.

· Objectives of the Study:

1. To examine the growth of tourism in terms of tourist arrivals in Uttarakhand.
2. To know the flow of Month wise number of visitors in Uttarakhand & visitors to tourist in India
3. To know the effect on the tourism market by SWOT analysis
4. To give some policy suggestions in this regard & Status of Inbound Tourism in Uttarakhand
5. To Know The Destination And Their Grads

·Methodology of paper-

The present study is based on secondary sources. Generally, data is collected from primary as well as secondary sources. The present data have been collected through different journals, different books, magazines, which is based on secondary sources. The present study concentrates on the three ways one is paper methodology is based on the descriptive method, second one govt. policies for tourism development and impact on social & economic aspect & lastly concluding SWOT analysis.

· **State Culture, Literacy Ratio & Economy-**

As per the census of 2011, the literacy rate of Uttarakhand is 79.63% with 88.33% literacy for males and 70.70% literacy for females according to the census in 2011. The state stands at 17th position in India when it comes to literacy.

Uttarakhand State has the gain of a big span of conventional subculture with galas & a rich and colourful cultural background. That is why; that is a measurable impact on kingdom tourism. Which might be indicative of the colossal ability for cultural tourism inside the State. In the closing government have to claim that Uttarakhand is the cultural country of India's.

Health is the degree issue of Uttarakhand because there are various blessings in his region. In Uttarakhand, which includes natural healing procedures, ayurvedikupchar, massages, and conventional technique of all, applying methods on health troubles.

To this location also belong some of the holiest Hindu shrines, and for almost 2000 years now pilgrims had been journeying the temples at Haridwar, Rishikesh, Badrinath and Kedarnath inside the wish of salvation and purification from sin.It means this is the variant of Cultural motive or tourism.

Uttarakhand is more often than not depending on its country tourism business & agriculture allied sectors for the nation revenue. There are various varieties of agri-ingredients like Basmati rice, wheat, soybeans, groundnuts, coarse cereals, pulses, and oilseeds are the maximum extensively grown vegetation inside the kingdom. And additionally, great end result like apples, oranges, pears, peaches, litchis, and plums are broadly grown in the country and bring an amazing quantity of sales. Other key industries for the supply of the economy encompass tourism and hydropower projects, PPP model and recent improvement in software program & clinical Institutions like IT, ITES, biotechnology, prescribed drugs, and car industries in the nation. MSME region is the huge issue that is allied support the rural financial system of Uttarakhand State. This region provides maximum employment and girl's empowerment to the nation.

· State Destination with Their Grads-

Uttarakhand is famous for tourism delivered in natural. It is classified as A, B, C, D, Grades according to its importance.

Location	Importance	Grade
1. Dehradun	State Capital	A
2. Haridwar	Place of Religious importance	A
3. Rishikesh	Religious location	A
4. Mussourie	Hill Station	A
5. Badrinath	Famous religious dham	A
6. Kedarnath	Famous religious dham	A
7. Gangotri	Famous religious dham	A
8. Yamunotri	Famous religious dham	A
9. Nainital	Hill Station of prominence	A
10 .Narendra Nagar	Scenic Spot	B
11. Hem Kund Sahib	Religious spot	B
12. Joshi Math	Religious spot	B
13. Kothdwar	Scenic spot	C
14. Rajaji National Park	Wildlife Spot of prominence	B
15. Corbett National Park	Wildlife Spot of prominence	A
16. Pithoragarh	Scenic Spot	B
17. Almora	Hill Station	B
18. Ranikhet	Hill Station	B
19. Bageshwar	Hill Station	B
20. Kausani	Hill Station	B
21. Udham Singh Nagar	Scenic location	B

In the Ghosh Opinion,

If the international market view is taken into consideration the foreign exchange plays a dominant in the field of tourism. The state has developed its economy to a large extent. Consequently, there is a rise in HDI & social security and standard of living. So, tourism is the fast-growing industry at a global level and also a measured source of foreign exchange earnings.

Month wise number of visitors in Uttarakhand-

In the present table, visitors paid by domestic & international tourist has been shown month wise.

Month	Domestic	Foreign	Day	Total
April	712088	7160	165911	885159
May	880148	5861	182432	1068441
June	1057988	19293	407481	1484762
July	783599	18043	211190	1012832
August	744845	7039	239191	991075
September	765926	10107	172128	948161
October	820110	10477	144142	974729
November	770733	7960	174538	953231
December	750305	7572	136628	894505
January	610809	4832	202647	818288
February	612597	5955	152516	771068
March	621231	4785	191190	817206
Total	**9130379**	**109084**	**2379994**	**11619457**

Source- International Journal of Research in Economics and Social Sciences (IJRESS) Vol. 7 Issue 7, July ISSN (o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939&Collection of Tourism Statistics for the State of Uttaranchal

Status of Inbound Tourism in Uttarakhand- At the point when we consider the current table, observe that the home vacationer proportion is higher from the start. In any case, the worldwide and backwoods vacationer proportion is irrelevant . The legitimate date for the period (2000-2013) is not as expected accessible. At the point when we consider, the date from 2014 to 2016. We come to realize that vacationers like NRIs; FTAs and ITAs are expanding continually. At the point when we think, of the period 2014 to 2016, the FTAs normal proportion of 8.17%. Because of NRIs, it is 5.48% and ITAs 1 3.65%. When contrasted with the above table information we infer that the ITAs proportion is considerably more when contrasted with other appearance factors. The vacationer business in any state plays a predominant and measure job in the development of the State economy. This is found on account of Uttarakhand as far as development in the MSME business, coordinated disorderly areas and subs equently development in work promoting the general improvement of the state economy.

Inbound Tourism: Foreign Tourist Arrivals (FTAs), Arrivals of Non-Resident Indians (NRIs) and International Tourist Arrivals (ITAs) 2000-2017 (till June)

Year	FTAs in India (in million)	Percentage (%) change over previous year	NRIs arrivals in India (in million)	Percentage (%) change over the previous year	International Tourist Arrivals in India (in million)	Percentage (%) change over the previous year
2000	2.65	6.7	-	-	-	-
2001	2.54	-4.2	-	-	-	-
2002	2.38	-6	-	-	-	-
2003	2.73	14.3	-	-	-	-
2004	3.46	26.8	-	-	-	-
2005	3.92	13.3	-	-	-	-
2006	4.45	13.5	-	-	-	-
2007	5.08	14.3	-	-	-	-
2008	5.28	4	-	-	-	-
2009	5.17	-2.2	-	-	-	-
2010	5.78	11.8	-	-	-	-
2011	6.31	9.2	-	-	-	-
2012	6.58	4.3	-	-	-	-
2013	6.97	5.9	-	-	-	-
2014	7.68	10.2	5.43		13.11	
2015	8.03	4.5	5.26	-3.15	13.29	1.4
2016	8.80	9.7	5.77	9.67	14.57	9.6
2017(P) (Jan-Jun)	4.89	17.2@	-	-	-	-

(P) Provisional, @ Growth rate over Jan-Jun, 2016

Source: (i) Bureau of Immigration, Govt. of India, for 2000-2016

(ii) Ministry of Tourism, Govt. of India, for Jan-June, 2017

Over the status, In India, Foreign Tourist Arrivals (FTAs) were expanded according to information. One thing is recognized/seen that Indian home vacationers additionally show up in this state. This is benefited for the state economy. At the point when we consider the current table, observe that the home traveler proportion is higher from the start. However, the worldwide and timberland traveler proportion is irrelevant. The appropriate date for the period (2000-2013) isn't as expected accessible. At the point when we consider, the date from 2014 to 2016. We come to realize that travelers like NRIs; FTAs and ITAs are expanding continually. At the point when we think, of the period 2014 to 2016, the FTAs normal proportion of 8.17%. On account of NRIs, it is 5.48% and ITAs 13.65%. When contrasted with the above table information we reason that the ITAs proportion is considerably more when contrasted with other appearance factors. The traveler business in any state plays a predominant and measure job in the development of the State economy. This is found on account of Uttarakhand as far as development in the MSME business, coordinated sloppy areas and therefore development in work prompting the general improvemen t of the state economy.

- **Number of domestic tourist visits in India from 2000 to 2020(in millions)**

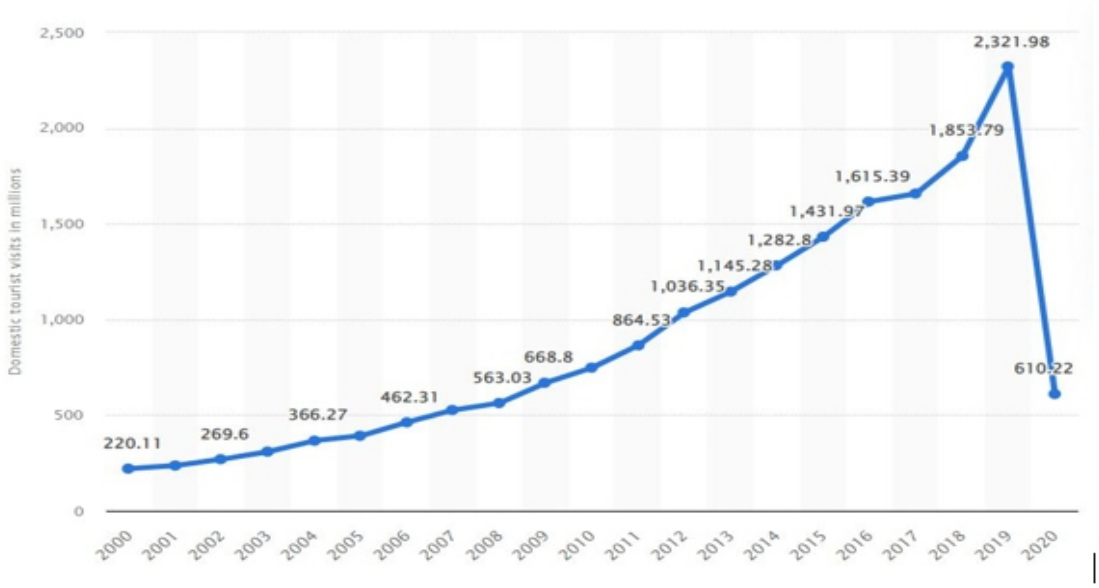

Source-https://www.statista.com/statistics/207012/number-of-domestic-tourist-visits-in-india-since-2000/

The current table is shown the number of homegrown vacationer appearances (DTVs) in India. During the period, (2000-2020) DTVs and yearly development have varied in the travel industry. In 2020, more than 610 million homegrown vacationer visits were made across India, a lessening from the earlier year. Albeit a remarkable ascent in the neighborhoods traveler visits was seen from the year 2000 to the present the nation over, the Covid-19 pandemic stopped the pattern in 2020.

· **SWOT Analysis of Uttarakhand Tourism**

In this section, that is SWOT analysis of Uttarakhand Tourism. A SWOT analysis includes four elements i.E. Strengths, Weaknesses, Opportunities & Threats. In attention of the overall improvement of tourism seeing. The above factors its negative or favorable results on the stability & powerful increase on tourism. In the present SWOT evaluation, we have taken be aware of the budgetary provision of the state & reviews of the ministry of tourism & statistical dept. In addition, on the premise of this, we have SWOT evaluation is clarified.

STRENGTHS

-Human resource development/ advancement
-Measure benefit of Himalaya Region
-experience of following, stream boating, entertainment meccas, mountaineering
-Restrictive slope resorts and snow park Destination
-Natural life and National Parks and night safari
travellers, blessed confidence, Kumbha Mela, Char-dham and Gangotri
-Wellbeing experiences normal social the travel industry region
-Moderate organization of state the travel industry board with the Budget Tourist convenience
-Spread PPP model and Increase private area in the travel industry
-Moderate workforce and gifted ladies

WEAKNESSES

- Lack of interlinkages between neighbour states
- Lack of Exclusive the travel industry office
- Natural deterrent in Transportation
- Disaster the executives
- Seasonal Natural Calamity
- Lacking in the objective of showcasing and marking
- Tourist Social Security and office
- Lack of Proper Infrastructure in the vacationer region
- Tourist labour force are Unskilled and undeveloped
- Region/region helpless principles

OPPORTUNITIES

- Infrastructure Development
- Health Tourism alongside spas
- Employability in Tourist partnered region
- E-Commerce the travel industry in Payments and reservation
- PPP model for the travel industry
- measure investigate in the transportation network
- Traditional Ayurveda medicines focus
- advantage investigating in business, model town and MSME
- Exchange counters and free/Multiple obligation shopping

THREATS

- Unaware with regards to Natural Calamity
- Disaster Mismanagement
- Interstate and neighbour state rivalry
- Threat of Changing climate and Global Warming
- Manipulated and Unawearness Pollution
- Renovation and degeneration spot of objections
- Booster of Human Migration by neighbours
- Lack of Media advertising and different Facilities
- Weaknesses of Price Fluctuations

.

Strengths -

The travel industry improvement and travelers satisfaction are the standard proportions of how the travel industry has grown effectively in the state. Uttarakhand state has started many tasks (PPP projects) for the improvement of the travel industry like gutsy games for youth, bird asylums, untamed life and night safaris, selective slope resort and stations for focused and mental harmony, explorers areas, wellbeing and customary clinical focuses, nature, sacred confidence places, profound focus, Kumbha Mela, Ayurveda and reasonable remaining game plans. Likewise, the state has organized travelers premium products at sensible rates. With the goal that travelers gets the greatest advantage of buying. Prepared Workers and instructed guides are overseen at moderate rates. For the development of the travel industry workforce in different sections is to be appropriately used.

· Weaknesses -

For the state development of the travel industry, some flimsy parts are to be thought of. for example the lesser level of FTAs, NRIs and ITAs level. The FTAs normal proportion of 8.17%, NRIs, is 5.48% and ITAs 13.65%. There are some dependable elements for the travel industry decay proportion, like regular snags in transportation and the absence of broadcasting media and marking. And furthermore, arrangement of disturbing catastrophe the executives, unmanageable travelers social protections and office focus. In the development of the travel industry, the state ought to endeavor to create inventive and novel frameworks contrasted and other International& state levels.

· Opportunities -

The travel industry is the foundation of the development of the economy. What's more, alongside these associated areas additionally create and expanded in different areas. Along these lines, the importance suggested in SWOT investigation is taken in an unexpected way. State the travel industry upholds monetary turn of events so likewise makes different areas. Initially, the travel industry sets out different open doors and furthermore advances the development of coordinated sloppy (MSME) areas. In the association, openings incorporate the travel industry foundation advancement, wellbeing focuses, internet business market, PPP model Projects, lodging industry, MSME and different unfamiliar trade counters and online instalments and so forth grows at the same time in monetary development.

·**Threats** -

Four component in dangers assuming a significant part in Uttarakhand the travel industry. In these variables, dangers of changing climate and a worldwide temperature alteration, remodel and degeneration spot of objective, dangers of value vacillations and unsteadiness and sponsor of human relocation in a traveler place, and so on these elements influence the travel industry area of the fair economy. If the state centers on the above dangers, it tends to be controlled on the impending unfriendly circumstance.

· **Conclusion-**

In the belief part, secondary statistics data is analyzed & evaluated to recognise the repute of tourism inside the country. The country tourism features & facility- natural places & weather, accessibility, quietness, hospitality, national parks, marketplace charge, organisation of gala's and festivals, multi-cuisines, reputation & attraction of vacationer locations, spiritual and religious websites(Kumbha-Melas, pilgrims & shrines) are liked via the travelers but

also are concerned concerning the protection and protection of traveler places.

The concerned state procures huge income from these vacationers and the travel industry related exercises. The strict and otherworldly focus is the main fascination for both across the country and general travelers in the country. Uttarakhand the travel industry board has plans to create (PPP model level) the area into a good vacationer location. The state should zero in on approaching dangers like normal disasters and advancement ought to be adjusted remembering the food of the district in light of the fact that in the past regular cataclysms have affected the travel industry and local people gravely.

In the last, the travel industry development is found in the space of DTVs, NRIs, FTAs, and ITAs. Uttarakhand objections have a solid loving and interest for the vacationer, which helps the state in development of pay. The significance of prime vacationer location has been taken comprehension by the districts; thus, development in state traveler areas helps united areas improvement in farming and modern areas. As expressed above present the travel industry areas advantage the state, economy, human turn of events (HDI) and additionally way of life.

· **References-**

1. Report of Ministry of tourism, gov. of India,2017
2. Bureau of immigration, gov. of India,2016
3. Uttarakhand Tourist Development Board (Department of Tourism, Govt of Uttarakhand, India)
4. Indian Tourism Statistics 2014.
5. Budget Documents of Uttarakhand, Finance Department, Uttarakhand, Different Years.
6. Tourism Policy 2008, Dehradun: Uttarakhand Tourism Development Board, 2008.
7. Ghosh. (1998). Tourism and Travel Manag ement. Publishing House Pvt Ltd.
8. International Journal of Research in Economics and Social Sciences (IJRESS), Vol. 7 Issue 7, July- 2017, pp~277-295
9. Indian Tourism Statistics at a glance,2017 http://researchersworld.com/ijms/vol5/splissue5/Paper_02.pdf
10. Vol.–V, Special Issue - 5, August 2018
11. Durgapal, Bhanu Pratap& Singhal B.P. (2004). Tourism in Uttarakhand. International Journal of Management Studies. Vol.–V, Special Issue - 5, August 2018

2 https://www.statista.com/statistics/207012/number-of-domestic-tourist-visits-in-india-since-2000/

****

.

Influence of Entrepreneurial Skills And Micro-finance on Performance of Women Entrepreneur in Viiupuram District

-R.SENTHILKUMARAN
Full time Research Scholar,
AVS College of Arts & Science, Salem

-Dr.D.SUTHAMATHII
Assistant Professor,
HOD and Department of
the Management Studies and Research,
AVS College of Arts & Science, Salem

ABSTRACT: The purpose of the research attempts to identify the influence of entrepreneurial skills and micro-finance on performance of women entrepreneurs in Villupuram district. The analysis found that there is influence of entrepreneurial skills and micro-finance on performance of women entrepreneurs. The analysis discovered that there is influence of entrepreneurial skills and micro-finance on growth of SMEs. It is also revealed that there is influence of performance of women entrepreneurs on growth of SMEs. Hence, the research concluded that micro-finance institutions should provide training to women entrepreneurs on financial management skill, managerial skills in areas like negotiation skills, business knowledge, and entrepreneurial skills. This will attract them to become enduring women entrepreneurs and also guide other women entrepreneurs with microfinance institutions to grow their firm.

Keywords: entrepreneurial skills, micro-finance, performance of women entrepreneurs, and growth of SMEs.

INTRODUCTION

Women entrepreneurs contribute to the economic relieve of the family and poverty reduction. Female entrepreneurs play an important role in economic growth by creating good employment opportunities for themselves and for others. Women entrepreneurs give different clarifications to management, business, and organization. The core of women's skills and good education comes out of their lives as citizenship in the city. This study aims at finding out the socio-economic status of the female entrepreneurs, their knowledge, skills and earning potential. Entrepreneurs need many skills, in human resource management and financial planning. Fortunately, women can have good upbringing if they have good thinking and commitment to carry out, entrepreneurship during their business course, they make mistakes, learn valuable lessons, and over time gain through mistakes and the experience of teaching themselves these skills. Some skills must be learnt early(otherwise absence of experiences may spell a tragic fate for in their business. Unfortunately, this learning style can sometimes be too late. If women are planning to become entrepreneurs, or if women are enter the world of business ownership, they need to develop the following four skills.

Micro finance is a pretty scheme which saved the poor from the wild money lenders who collected 60 per cent to 70 percent as the rate of interest. This scheme helps the SBE entrepreneurs to initiate small business at their own residence with below 36 per cent of interest. This is a blessing which protects the self-respect of the entrepreneurs. Repayment within the time frame of small loans makes the entrepreneurs qualified to get an enhanced loan amount depending upon the repaying capacity of the small business entrepreneurs. The present article tries to identify the influence of entrepreneurial skills and micro-finance on performance of women entrepreneurs in Villupuram district.

REVIEW OF LITERATURE

Senthilkumaran and Suthamathi (2020) discovered that there is influence of performance of women entrepreneurs on growth of SMEs. Kanimozhi and Natarajan (2017) found that micro finance service does not influence business enterprises. 'yedokun Akintunde Jonathan (2015) revealed that a significant and positive relationship exists between loans accessed from micro finance banks (MFBs) and the

performance of SMEs.

Elizabeth, et al. (2015) discovered that there is positive and significant influence of microfinance services on women empowerment. ‘razio Attanasio, et al. (2015) identified thatthere is positive influence of access to group loans on women entrepreneurship.

Henry and Bwisa (2013) discovered that there is association between microfinance lending and MSE performance. Kimutai Stephen Chelogoi and Akuku Caleb Nyaga (2013) discovered that there is influence of MFI's on small business growth.

Iyeseun ‘. Asieba and Teresa M. Nmadu (2018) found that there is influence of entrepreneurial skills on pharmaceutical business performance. Eunice Abdul, Omolara (2018) discovered that there is influence of entrepreneurial skills on the growth of SMEs in Nigeria and the UK.

Patricia Mburu and Samuel Njoroge (2018) discovered that there is a positive relationship between training, entrepreneurial education and performance of women run small enterprises.Elegwa Mukulu and Millicent Mwihaki Marima (2017) discovered that there is influence of entrepreneurship training components on business growth among the micro and small enterprises.

Charles R. Badatu (2015) discovered that there is influence of trainings on entrepreneurial skills and helped them to start their own businesses. Msoka Elizabeth (2013) identified that performance of small scale businesses was influenced by entrepreneurship knowledge.

Isaga (2015) found that education of the entrepreneurs have positive relationship with the growth of small and medium enterprises.Mariam Ally Tambwe (2015) identified that there is a positive relationship between training related to entrepreneurship and MSEs performance.

RESEARCH GAP

‘yedokun Akintunde Jonathan (2015)(and Elizabeth Wanjiku and Alex Njiru (2015) have revealed that microfinance is positively correlated with performance of women entrepreneurs. The authors discovered that there is positive relationship between the micro finance and performance of women entrepreneurs. Patricia Mburu and Samuel Njoroge (2018)(Elegwa Mukulu and Millicent Mwihaki Marima (2017)(Isaga (2015)(Mariam Ally Tambwe (2015)(and Msoka Elizabeth (2013) have revealed that entrepreneurial skills is positively correlated with performance of women entrepreneurs. The authors discovered that entrepreneurial skills positively correlated with performance of women entre preneurs.A review of the relevant literature on micro finance, entrepreneurial skills, and performance of women entrepreneurs is generally small in the Indian context and especially in related in women entrepreneurs. To bridge the research gap, this research seeks to explore the influence of entrepreneurial skills and micro-finance on performance of women entrepreneurs in Villupuram district.

RESEARCH DESIGN

The descriptive research design challenges to clarify the action of the women entrepreneurs in association to an exacting track meaning. Hence, descriptive research design was employed for this research work. Based on the repay of descriptive research design, the researchers have used the descriptive research to ascertain influence of entrepreneurial skills and micro-finance on performance of women entrepreneurs in Villupuram district.

FRAMEWORK OF THE RESEARCH

The framework used to identify the influence of entrepreneurial skills and micro-finance on performance of women entrepreneurs. Entrepreneurial skills and micro-finance are considered as independent variable. Performance of women entrepreneurs is considered as mediator variable. Growth of SMEsis considered as outcome variable.

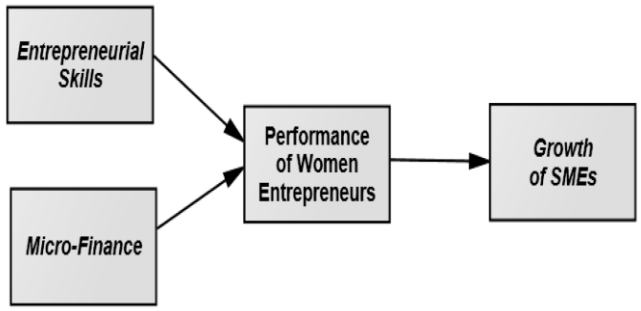

Figure 1: Conceptual framework of the study

OBJECTIVES OF THE STUDY

➢To determine the influence of entrepreneurial skills and micro-finance on performance of women entrepreneurs.

➢To describe the influence of performance of women entrepreneurs on growth of SMEs.

HYPOTHESES OF THE STUDY

➢There is no influence of entrepreneurial skills and micro-finance on performance of women entrepreneurs.

➢There is no influence of performance of women entrepreneurs on growth of SMEs.

QUESTIONNAIRE CONSTRUCTION AND RELIABILITY

Self design tools were employed for collection of primary data. The alpha ranged from 0.79 to 90 for all reports of questionnaire construction. This value of reliability designates the better reliability of the questionnaire.

Table 1: Reliability of the Research

S.No.	Variable	Reliability	Author
1	Entrepreneurial Skills	0.82	Self Developed
2	Micro-Finance	0.88	
3	Performance of Women Entrepreneurs	0.90	
4	Growth of SMEs	0.79	

AREA OF SAMPLE AND JUSTIFICATION

Villupuram district has been elected for this study as area of sampling. Hence, there is a necessary to secure and expand the performance of women entrepreneurs. By understanding this, entrepreneurial skills, micro-finance, performance of women entrepreneurs and growth of SMEs are judged for the study. Pilot study sample size of the research was 50 women entrepreneurs in Villupuram district. The data was collected through convenience sampling technique. Data analysis was done through path analysis. The analysis was employed to identify the influence of entrepreneurial skills and micro-finance on performance of women entrepreneurs.

ANALYSIS AND INTERPRETATION

Table 2: shows Model Fit Indication

Indicators	Observed Values	Recommended Values (Premapriya, et al. 2016)
Chi-Square	1.999	---
p	0.157	Greater than 0.050
GFI	0.987	Greater than 0.90
AGFI	0.909	Greater than 0.90
CFI	0.991	Greater than 0.90
NFI	0.983	Greater than 0.90
RMS	0.011	Less than 0.080
RMSEA	0.001	Less than 0.080

Source: Primary data

From the model fit table, it is identified that the chi-square value was 1.999. The p value was 0.157, which was greater than 5%. The AGFI and GFI scores are higher than 0.90. Victor Charles and Velaudham (2020) and Premapriya, et al. (2016) have found similar result.The calculated CFI and NFI scores are higherthan 0.90.Velaudham and Baskar (2015)(Kantiah Alias Deepak and Velaudham (2019)have found similar result. It was also found that RMSEA and RMS values were less than 0.08, which was suggested by Deepak R. Kanthiah Alias, et al. (2019). The above pointers indicate that it was completely fit Velaudham and Baskar (2016) and Indra, et al. (2020).

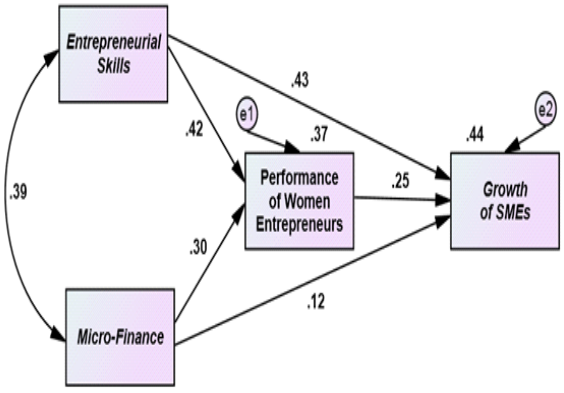

Figure 2: Path analysis of influence of of entrepreneurial skills and micro-finance on performance of women entrepreneurs

Table 4.30.2: Regression Weights

DV		IV	Estimate	S.E.	C.R.	Beta	p
Performance of Women Entrepreneurs	<---	Entrepreneurial Skills	0.570	0.054	10.504	0.423	0.001
Performance of Women Entrepreneurs	<---	Micro -Finance	0.519	0.069	7.496	0.302	0.001
Growth of SMEs	<---	Performance of Women Entrepreneurs	0.141	0.024	5.792	0.254	0.001
Growth of SMEs	<---	Entrepreneurial Skills	0.319	0.032	10.107	0.425	0.001
Growth of SMEs	<---	Micro -Finance	0.115	0.038	2.989	0.120	0.003

Source: primary data

Ho: There is no influence of entrepreneurial skills on performance of women entrepreneurs in Villupuram district.

Influence of entrepreneurial skills on performance of women entrepreneurs calculated value of CR is 10.504. The Beta value was 0.423, which is indicates that 42.3 percent of influence is through entrepreneurial skills towards performance of women entrepreneurs. The p value is 0.001, which is less than 5%. The null hypothesis was rejected. From the result, it is found that influence of entrepreneurial skills on performance of women entrepreneurs. Patricia Mburu and Samuel Njoroge (2018); Elegwa Mukulu and Millicent Mwihaki Marima (2017); Isaga (2015); Mariam Ally Tambwe (2015); and Msoka Elizabeth (2013) have revealed that similar result.

Ho: There is no influence of micro-finance on performance of women entrepreneurs in Villupuram district.

Influence of micro-finance on performance of women entrepreneurs calculated value of CR is 7.496. The Beta value was 0.302, which is indicates that 30.2 percent of influence is through micro-finance towards performance of women entrepreneurs. The p value is 0.001, which is less than 5%. The null hypothesis was rejected. From the result, it is found that influence of micro-finance on performance of women entrepreneurs. Oyedokun Akintunde Jonathan (2015); and Elizabeth Wanjiku and Alex Njiru (2015) have established related result. But, Kanimozhi and Natarajan (2017) found that microfinance service does not influence business enterprises.

Ho: There is no influence of entrepreneurial skills on growth of SMEs in Villupuram district.

Influence of entrepreneurial skills on growth of SMEs calculated value of CR is 10.107. The Beta value was 0.425, which is indicates that 42.5 percent of influence is through entrepreneurial skills towards growth of SMEs. The p value is 0.001, which is less than 5%. The null hypothesis was rejected. From the result, it is found that influence of entrepreneurial skills on growth of SMEs. Mariam Ally Tambwe (2015) has found similar result.

Ho: There is no influence of micro-finance on growth of SMEs in Villupuram district.

Influence of micro-finance on growth of SMEs calculated value of CR is 2.989. The Beta value was 0.120, which is indicates that 12 percent of influence is through micro-finance towards growth of SMEs. The p value is 0.003, which is less than 5%. The null hypothesis was rejected. From the result, it is found that influence of micro-finance on growth of SMEs. Oyedokun Akintunde Jonathan (2015) has discovered similar result.

Ho: There is no influence of performance of women entrepreneurs on growth of SMEs in Villupuram district.

Influence of performance of women entrepreneurs on growth of SMEs calculated value of CR is 5.792. The Beta value was 0.254, which is indicates that 25.4 percent of influence is through performance of women entrepreneurs towards growth of SMEs. The p value is 0.003, which is less than 5%. The null hypothesis was rejected. From the result, it is found that influence of performance of women entrepreneurs on growth of SMEs. Senthilkumaran and Suthamathi (2020) have identified that similar result.

Findings

- The analysis found that there is influence of entrepreneurial skills on performance of women entrepreneurs. Patricia Mburu and Samuel Njoroge (2018); Elegwa Mukulu and Millicent Mwihaki Marima (2017); Isaga (2015); Mariam Ally Tambwe (2015); and Msoka Elizabeth (2013) have revealed that similar result.
- It is found that there is influence of micro-finance on performance of women entrepreneurs. Oyedokun Akintunde Jonathan (2015); and Elizabeth Wanjiku and Alex Njiru (2015) have established related result. But, Kanimozhi and Natarajan (2017) found that microfinance service does not influence business enterprises.
- The analysis discovered that there is influence of entrepreneurial skills and micro-finance on growth of SMEs. Oyedokun Akintunde Jonathan (2015); and Mariam Ally Tambwe (2015) have discovered similar result.
- It is also revealed that there is influence of performance of women entrepreneurs on growth of SMEs. Senthilkumaran and Suthamathi (2020) have identified that similar result.

Suggestions

- As women entrepreneurs develop their entrepreneurial management skills better, more knowledge about management will improve from moderate to high.
- It is recommended that women entrepreneurs develop skills development training programs and infrastructure. This is necessary to maximize employer performance. This will allow them to develop their skills and help the employer complete their work.
- Microfinance institution should have

separate business advisors to women entrepreneurs to give appropriate business guidance as how to manage their businesses enterprises, the need to split their business funds from personal money, and proper ways of pricing and marketing of products.

- Microfinance institutions should provide training to women entrepreneurs on financial management skill, managerial skills in areas like negotiation skills, business knowledge, and entrepreneurial skills. This will attract them to become enduring women entrepreneurs and also guide other women entrepreneurs with microfinance institutions to grow their firm.

Conclusion

Female entrepreneurs play an important role in economic growth by creating good employment opportunities for themselves and for others. Women entrepreneurs give different clarifications to management, business, and organization. The present article tries to identify the influence of entrepreneurial skills and micro-finance on performance of women entrepreneurs in Villupuram district. The analysis found that there is influence of entrepreneurial skills and micro-finance on performance of women entrepreneurs. The analysis discovered that there is influence of entrepreneurial skills and micro-finance on growth of SMEs. It is also revealed that there is influence of performance of women entrepreneurs on growth of SMEs. Hence, the research concluded that micro-finance institutions should provide training to women entrepreneurs on financial management skill, managerial skills in areas like negotiation skills, business knowledge, and entrepreneurial skills. This will attract them to become enduring women entrepreneurs and also guide other women entrepreneurs with microfinance institutions to grow their firm.

REFERENCE

Charles R. Badatu (2015). The Impact Of Entrepreneurship Skills Provision To Women In Micro And Small Enterprises Performance. The Open University Of Tanzania, 1-60.

Elegwa Mukulu and Millicent Mwihaki Marima (2017). Role of Entrepreneurship Training in Growth of Micro and Small Enterprises in Kiambu County. Saudi Journal of Business and Management Studies, Vol-2, Iss-5B, 532-543.

Elizabeth Wanjiku & Alex Njiru (2015). Influence of Microfinance Services on Economic Empowerment of Women in Olkalou Constituency, Kenya. International Journal of Research in Business Management, (IMPACT: IJRBM), Vol. 4, Issue 4, 67-78, ISSN (E): 2321-886X; ISSN (P): 2347-4572.

Eunice Abdul, Omolara (2018). Entrepreneurial skills and growth of Small and Medium Enterprise (SMEs): A comparative analysis of Nigerian entrepreneurs and Minority entrepreneurs in the UK. International Journal of Academic Research in Business and Social Sciences, 8(5), 27–46.

Henry and Bwisa (2013). Effects of Microfinance Lending on Business Performance: A Survey of Micro and Small Enterprises in Kitale Municipality, Kenya, International Journal of Academic Research in Business and Social Sciences, Vol. 3, No. 7, pp.56-67.

Indra, Balaji and Velaudham (2020). Impact of Social Influence and Safety on Purchase Decision of Green Cosmetic. International Journal of Future Generation Communication and Networking, Vol. 13, No. 3, 3036–3042.

Isaga N. (2015). Owner- Managers' Demographic Characteristics and the Growth of Tanzanian Small and Medium Enterprises. International Journal of Business

and Management, 10(5).

Iyeseun O. Asieba and Teresa M. Nmadu (2018). An assessment of the impact of entrepreneurial skills of community pharmacists on pharmaceutical business performance in Jos metropolis, Nigeria. Pharmacy Practice, 16 (1):1110.

Kanimozhi M and Dr. B. Natarajan (2017). Effect of microfinance on small business development in Namakkal district. Internal Journal of Applied Management research, Vol.9, Issue 1, ISSN: 0974 - 8709.

Kantiah Alias Deepak and Velaudham (2019). marital differences towards consumer buying behaviour, AJANTA, volume – VIII, issue – II, 36-45.

Kimutai Stephen Chelogoi and Akuku Caleb Nyaga (2013). The effects of the microfinance institutions on small scale business growth: A survey of Uasin-Gishu County, Kenya, Kimutai Stephen Chelogoi et al./ Elixir Financial Management. Vol.56, pp- 13402-13406.

Mariam Ally Tambwe (2015). The Impact of Entrepreneurship Training on Micro and Small Enterprises' (MSES) Performance in Tanzania. Business Education Journal, Volume 1, Issue 1, 18.

Msoka Elizabeth (2013). Do Entrepreneurship Skills Have an Influence on the Performance of Women Owned Enterprises in Africa? Case of Micro and Small Enterprises in Dares Salaam, Tanzania. International Journal of Business, Humanities and Technology, Vol. 3 No. 3; 53-62.

Orazio Attanasio, Britta Augsburg, Ralph De Haas, Emla Fitzsimons, and Heike Harmgart (2015). The Impacts of Microfinance: Evidence from Joint-Liability Lending in Mongolia. American Economic Journal: Applied Economics, 7(1): 90–122, http://dx.doi.org/10.1257/app.20130489.

Oyedokun Akintunde Jonathan (2015). Entrepreneurial Firms Andmicro Finance Funding in Southwestern Nigeria. International Journal of Research in Business Management (IMPACT: IJRBM), Vol. 3, Issue 10, 67-76.

Patricia Mburu and Samuel Njoroge (2018). Contribution of Entrepreneurial Education and Training to Performance of Small Enterprises Run by Women in Kenya, Developing Country Studies, Vol.8, No.2, 116-123.

Premapriya, Velaudham and Baskar (2016). Nature of Family Influenced by Consumer Buying Behavior: Multiple Group Analysis Approach, Asian Journal of Research in Social Sciences and Humanities, Vol. 6, No.9, pp. 908-915.

Senthilkumaran and Suthamathi (2020). Influence of Entrepreneurial Skills and Personality Skills on Performance of Women Entrepreneurs. High Technology Letters, Volume 26, Issue 8, 858-871.

Velaudham and Baskar (2015). Multiple Group Structural Equation Model Showing Influence of Age in Consumer Buying Behavior towards Air Conditioner in Chennai City. Annamalai journal of management, 89-96.

Velaudham and Baskar (2016). Number of earning members influence over air conditioner buying behavior: multiple group analysis approach. Annamalai Business Review, Vol. 10, Issue 2, 59-68.

Victor Charles and Velaudham (2020). The Impact Of Consumer's Perception Towards E-Tailing In Madurai. High Technology Letters, Volume 26, Issue 10, 583-593.

****

Philip K. Dick's Prophetic Warning

-T. Sowmya
Ph. D Research Scholar,
Dept. of English,
Sri Sarada College for Women
Salem (TamilNadu) India

Abstract:
Science fiction deals with advanced technology, space exploration, time travel, teleportation, other planets, parallel universes, terrestrial and extra-terrestrial life. Science fiction often investigates the potential consequences of the new innovations. Robert Heinlein, Isaac Asimov, and Arthur C. Clarke are generally called "Three grand masters of science fiction". The portrayal of the future in their science fiction highly motivates the little kids and youngsters to touch the sky. Philip K. Dick next comes in the meritorious science fiction writers list. He is a futurologist thus he anticipated exactly how the future technology will change the world. Philip K. Dick received Hugo Award for the Best Novel and John W. Campbell Memorial Award for the Best Science Fiction Novel. This present article scrutinized Philip K. Dick's Short stories "The Gun" and "Mr. Spaceship" to prove that Philip K. Dicks' warning about the future technology is necessary for the today's world. The present research paper states that the scientist, common people and politician must aware of the supreme power of the artificial intelligence. They should not depend on artificial intelligence for all the customary purpose and must know where and how to utilize the artificial intelligence.

Keywords: Artificial Intelligence, Automatic war weapons, Robots, War

Philip K. Dick's Prophetic Warning

"Science fiction isn't just thinking about the world out there. It's also thinking about how that world might be – a particularly important exercise for those who are oppressed, because if they're going to change the world we live in, they – and all of us – have to able to think about a world that works differently".

- Samuel R. Delany

A science fiction is partly science and partly a novel; it is like a science because it deals with the scientific world view and it is like a fiction because some of the characters and events are fictitious or imaginary created by the writer himself. Thus it combines the interest of both science and the fiction. The difference between an ordinary novel and a science fiction is that the ordinary novel deals with the contemporary social background or even with any other background, while the science fiction deals with a particular background the galaxy of modern science.

Science fiction is a typical genre in literature. Other genres illustrate author's creative vision with contemporary issues but science fiction often projects fantasy like children Literature. There is a contrast between children literature and science fiction and this is effectively distinguished by the mode of the fantasy. In children Literature the fantasy is done by magical elements however in Science fiction the fantasy is done by the scientific methods. Those scientific methods are often unproven and seem to be highly impossible. Magical elements never come true but the scientific elements might be proved in near future or in the distant future. The Science Fiction writers are often called as futurologist since they predict the upcoming scientific inventions.

Science fiction deals with the advanced technology, space exploration, time travel, teleportation, other planets, parallel universes, terrestrial and extra-terrestrial life. Science fiction often investigates the potential consequences of the new innovations. H. G. Wells' The War of the Worlds, Jules Verne's 20,000 Leagues Under the Sea, George Orwell's 1984, Aldous Huxley's Brave New World by, and Any Rand's The Fountain head are the most popular earliest science fiction. Science fiction encompasses fantasy, deductive, horror, romance and super hero themes. James Gunn stated in his book, The Road to Science Fiction Around the World, "After World War II, the

genre got exported to Western Europe and then, more slowly, to Eastern Europe and the Far East, generally following the progress of industrialization" (Gunn, 2010). The historical backdrop of science fiction would demonstrate that the genre is emerged in the English-speaking West countries.

Robert Heinlein, Isaac Asimov, and Arthur C. Clarke are generally called "Three grand masters of science fiction". The portrayal of the future in their fiction highly motivates the little kids and youngsters to touch the sky. Philip K. Dick next comes in the meritorious science fiction writers list. He is a futurologist exactly anticipated how the future machines will work. Philip K. Dick received Hugo Award for the Best Novel and John W. Campbell Memorial Award for the Best Science Fiction Novel. This present article has scrutinized Philip K. Dick's Short stories "The Gun" and "Mr. Spaceship" to prove that Philip K. Dicks' warning is necessary for the today's world.

In the story, "The Gun," Dick forecasts how the modern technology would devastate the world. Though people live a very comfort life with the aid of electronic gadgets, they might face many issues in the future due to electronic debris. The background of the story is set in the unknown deserted planet. A team has been sent to the deserted planet to investigate the actual condition of the planet. Mr. Dorle, the Captain and Chief Navigator, Tance, Nasha, and Fomar are the astronauts reach the planets through their spaceship. While their spaceship fly in the space, unfortunately it has been hit by a space missile hence they make an emergency landing. The improper landing and the attack damages the parts of their spaceship so they could not operate their spaceship.

The crew come out from their spaceship and amazed to see the environment of the planet. They could not find a man in the planet so they are perplexed and want to know who actually attack them. Therefore, they silently scrawl and find the hidden attackers but they could not. After some long time search, they come to know Automatic weapons involve in the attack. People in the planet are killed in the hazardous war hence the automatic war weapons have not been deactivated by the human. The automatic war weapons are still in function and it keenly observes the sky and finds any alien object in the sky it starts to attack them. The Automatic Guns are loaded fully so they attack the object whatever flies in the sky.

The crew finds a dead city and explores the evidence the civilization in the dead city. They trace a name board, which carries the name of the residence, 'Franklin Apartment'. This Apartment name board clearly explains the comfort life of the people in the planet. But all are killed in the war and the automatic guns protect the planets in the absence of human being. The crew discuss about the actual condition of the unknown planet:

Nasha character comments: "There must be a hundred of guns like this," Dorle murmured. "There must have been hundreds of guns like this. They must have been used to the sight, guns, weapons, uniforms. Probably they accepted it as a natural thing, part of their lives, like eating and sleeping. An institution, like the church and the state. Men trained to fight, to lead armies, a regular profession. Honored, respected." (Beyond 41)

The crew very intellectually deducts some Guns, which are still active. They draw the conclusion that the automatic guns are attacking them. The Crew annihilates those Guns and they revamp their spaceship successfully. The team leaves the planets after they completely reset their spaceship and they believe they can come and investigate the planet any time since they destroyed the automatic Guns. However, once they leave the planet the parts of the Automatic Guns arrange automatically and ready to attack the visitors. The story "The Gun" proves that if People fail to control the machine then the powerful machines turns against humanity one day. Dick warns the society about the risk of creating highly automated war gadgets through the short story, "The Gun"

The story, "Mr. Spaceship" is set in the far future where mankind is at battle with 'Yukas'. Yuks are the Aliens and its war technique seems to be extremely different from the war technique of human being. They use superpower to wage war against human being and human beings are very

unaware of that technique. Yukas does not deploy mechanical spaceships or ultra modern war gadgets rather they employ living organisms to control their innovative war spaceships. The conflict between Yuka and Human being last for long days and the human race seems to be at the edge since they do not know how to confront the Yukas. In Earth, the scientists decide to solve the issue by handling war technique like Yukas. Therefore, they decide to create spaceship with living organism and they seriously search whose mental ability is fit to control the spaceship. They finally select Philip Kramer's old Professor, Thomas as the right person to control the war spaceship. The old professor is in the deathbed hence he voluntarily donate his living brain to the researchers.

The team built the spaceship with the intellectual brain of Thomas with the expectation of winning the war. Thomas' cerebrum is perfectly fitted into the control unit of the spaceship. After the successfully installation of the human brain in the spaceship they take it for trial. In the trail the spaceship flies far away and successfully functions well and satisfied the teams but unfortunately the spaceship returns and abducts Kramer and ex- lover. This has not been expected by anyone and they do not how to trace and how to control it. Thus the human lacks the power to control the spaceship even they do not hoe to locate the spaceship. Everyone in the team seems perplexed and do not know what they should do to rescue the people inside the spaceship.

The ship had, in a brief second, stolen their power away from them and left them defenseless, practically at its mercy. It was not right; it made hum uneasy. All his life he had controlled machines, bent nature and the forces of nature to man and man's needs. The human race had slowly evolved until it was in a position to operate things, run them as it saw fit. Now all at once it had been plunged back down the ladder again, prostrate before a Power against which they were children. (Beyond 106)

The spaceship flies some distance and Kramer inquired Thomas's brain about their sudden taken off. The Spaceship turns as the complete living organism with Thomas's brain. Philip K. Dick calls the spaceship as 'Mr. Spaceship'. The spaceship then explains Kramer that it kidnaps the Kramer and his x-lover to search a new planet where they can start anew. Mr. Spaceship believes the war between Human, Yukas never end, and consequently the human race will be come to an end. Thus the Mr. Spaceship suggests the couple to start their in the new planet and it calls them as new 'Adam' and 'Eve'. The couples no other way accept the suggestion given by the spaceship.

He turned back, away from the port. "Where are we going?" He smiled at his wife, standing nervous and frightened, her large eyes full of alarm. "I don't know where we are going," he said. "But somehow that doesn't seem too important right now.... I'm beginning to see the Professor's point, it's the result that counts."

And for the first time in many months he put his arm around Dolores. At first she stiffened, the fright and nervousness still in her eyes. But then suddenly she relaxed against him and there were tears wetting her cheeks.

"Phil … do you really think we can start over again—you and I?"

He kissed her tenderly, then passionately. (Beyond 111)

The story ends with the reunion of the couple and the new beginning of a planet. In this story the artificial mechanism acts according to its super intellectual power. No one expect this kind of function from the spaceship. The two stories clearly forecast the actual the power of the machines. People rely on the machine for various purpose and they cannot survive with the help of the machines. In day-to-day life man gradually lacks his unique power including their capacity of speed calculation, speed walking and deep memory power. For all these things, we have a machine with us today. People and scientist strongly believe that they are successfully invent many new machines with incredible powers.

Man must know his power and try to increase his own

power rather he is giving power more and more to the machines. The present world witness number of artificial mechanisms functions with the sensor signals. The artificial intellectual products like robots, super computer, artificial intelligence seems to the signal of the victory. Actually, these are the signal for the devastation of Earth. Man should control all the machines but he gradually gives all the powers to the machine without knowing one the artificial machine will rule the Earth. In the name of trial, test and research numerous artificial intelligence have been invented. One day they will rule the world with super powers

The story "The Gun" proves that there is no end for the machines if man allows the artificial intelligence to built it's own functional bodies. In the world, the robotics arms are invented for the constructional purposes. The science fiction writers frightened that one day these machines will construct similar robotic machines and increase its own community. In Isaac Aimov's "Robots Dream" a robot Elvex has a dream "Dr. Calvin, that I was convinced that I was dreaming. Till then, I had thought there was a flaw in my positronic brain pattern, but I could not find one. Finally, I decided it was a dream (Robot Dream 119)". The robot explains that in it's dream he finds that a Robot wants to save his community so it starts march against human being. The robot psychologist, Dr. Susan Calvin realizes the problem that the Robot wants to get freedom for the entire robot community therefore; they won't work for the humanity. Thus, she orders the scientist to dismantle the Robot in order to control the artificial intelligence.

In Philip K. Dicks stories ne never handle any laws like Asimov's 'Three Laws of Robotics'. Philip K. Dick does not give any safeguard rules like the following laws of robotics:

1. A robot may not injure a human being, or, through inaction, allow a human being to come to harm.
2. A robot must obey the orders given to it by human beings except where such orders would conflict with the First Law.
3. A robot must protect its own existence as long as such protection does not conflict with the First or Second Law.

(Asimov, Robot Visions 8)

These laws protect the human beings from the artificial intelligence and Philip K. Dick does not introduce these kinds of laws in his stories. He directly warns the society that if man wage war highly powerful machines then the only survivor is machine definitely not a man. "The Gun" proves the leftovers of the powerful machine will never left human to survive in future. "Mr. Spaceship" proves that machine will take the entire control and it will decide where and how human beings should survive in the future.

The two stories, "The Gun" and "Mr. Spaceship" warn the readers that people should not create automatic powerful artificial intelligence. These stories prove that such powerful artificial intelligence have the power to overtake us and rule us. The present research paper states that the scientist, common people and politician must aware of the supreme power of the artificial intelligence. They should not depend on artificial intelligence for all the regular and ordinary purpose and must know where and how they utilize the artificial intelligence gadgets. Man should not employ automatic war weapons in the war field. Both the stories describe the war field, which we cannot imagine, and how the automatic war gadgets functions after the war too. So human should not employs automatic war weapons in the war fields and should not invent such gadgets.

Works Cited

Asimov, Isaac. Robot Visions. New York: Penguin group, 1990.

Schneider, Susan. Science fiction and Philosophy From Time Travel to Super Intelligence. A John Wiley&Sons,Ltd., Publication , 2009.

Dick, Philip K. Beyond Lies the Wub. Orion Publishing Group, 1987.

Gunn, James. The Road to Science Fiction: Around the World. White Wolf Pub, 1998.

****

Technological Advances in Health care Industry-Factors Afecting Human Resource Management in Multi-specialty Hospitals in Tamil Nadu

-Shirpi M.
Research Scholar (Part Time – Ph.D.),
Department of Management Studies,
Periyar University, Salem, India.

-Dr.Thirumoorthi P
Associate Professor, ,
Department of Management Studies,
Periyar University, Salem, India

Abstract: Technological advances in the healthcare system becomes more cost effective made through combining vast amounts of data, cloud computing techniques, machine learning and providing AI based solution. These advancements have made human factors as an important element in making the system to deliver better healthcare. There are many factors responsible for the growth of Indian healthcare industry. Technology has made tremendous contribution in medical and non-medical advancements. Lack of attention towards the role of human resource management in the wake of technological development is an important factor standing between success and failure in healthcare industry. Based on the required changes in human skills and their relationship a study has been conducted to identify the influential factors of human aspects and analyze the relationship among various factors of human aspects in healthcare industry. 15 multi-specialty hospitals were studied with 150 sample respondents of physicians, nurses, technical and laboratory assistants. 10 relevant factors of human resource were taken into consideration. 'Technical Knowhow and Up-dation', 'Diagnostic and Consultancy Skills' and 'Machine Operating Skills' are the major factors related to technological and medical advancements in healthcare industry. Changes are expected by the patients in terms of quality in treatment and accuracy in identification of disease of patients will happen only with the advances in medical services which are supported by the human resources.

Key Words: Average score analysis, Human Resources factors and skills, Healthcare Industry, Multi-specialty Hospitals, Technological and Medical advances.

1.Introduction: Hospitals are the places where people come for diagnosis of their health problems and availing treatment. Physicians are providing consultancy and treatment with the help of advanced techniques, machinery and facilities. People come for medication, surgery and medical interventions for monitoring and care for their diseases. Technology and medical advances like information and communication technologies (ICT), Artificial Intelligence (AI), Remote-Monitoring Technology (RMT), Usage of high-speed internet, data analytical techniques developments in scanning and image projection, and advancements in 3D printing and robotics will change the healthcare system. A rapid revolution is taking place in diagnosis and care provision. All monitoring, care and analytical tasks would become technology based in the forthcoming years.

The technological evolution makes the healthcare system more cost effective made through combining vast amounts of data, cloud computing techniques, machine learning and providing AI based solution. These are providing expert insights and laboratory analysis on a large scale with relatively lower cost. With the adaption of technology and AI enabled care, the hospitals become super specialty in terms of healthcare system. This enacts change in infrastructure in the way of healthcare implementation. Of course, these advancements have made human factors as an important element in making the system to deliver better healthcare. This article made an attempt to explore the influential factors of human aspects in technology enabled healthcare system.

2.Indian Healthcare Industry: Healthcare industry in India is very emerging stage and in making a promising future. From Indian Rupees 3150 billion in 2008, the industry has grown to Rs.7700 billion in 2016 and is expected to reach Rs.19600 billion in the year 2020. The potential market is expected to show a growth rate of

23% in 2020. Many foreign patients are visiting India for their treatment due to the quality of treatment at par with any of the western countries at cheaper cost. Medical tourism is expected to grow from Rs.210 billion to Rs.560 billion by 2020. The advanced procedures and technologies which are used in developed countries are available in India. Many hospitals in India are option for quality accreditation by NABH (National Accreditation Board for Hospitals and Healthcare Providers) and JCI (Join Commission International). There are 443 hospitals accredited by NABH and 31 hospitals are accredited by JCI (Indian Medical Association - IMA, 2018).

There are many factors responsible for the growth of Indian healthcare industry. They are raising income, changing disease pattern, affordability of the population, insurance penetration, attractive medical tourism, availability of advanced technologies, etc. Due to technology and medical advances in healthcare system the average life span has increased up to 67.3 years for male and 69.6 years for female (Indian Council for Medical Research - ICMR, 2015). Due to non-communicable disease pattern like diabetics, heart attacks, cancer etc., the infrastructure and investments for treatments are heavy. The governments are allotting sufficient budget for the healthcare. Hence the private players are taking major role in this sector.

3.Technology Advancements in Indian Healthcare Industry : Technological advances in Indian health Care industry in growing like anything. Transplantation of kidney, liver, heart, lungs, bone marrow, eye etc. is made possible now in Indian hospitals. Defects in fetal are detected and getting rectified before birth to save the life of the child. Robotic and computer aided surgeries are performed to achieve precision results. Software based laboratory analysis gives perfect results. X-ray and scan technologies have reached the ultimate advancements to give accurate images. The physician and surgeons can see the images in their mobile and act accordingly in any time and any place. This saves time and avoid coming to hospital when physical presence is not required. Laparoscopic techniques have made many surgeries without cut open and helped to heal faster. While clinical technologies are at the peak, the non-clinical side is also utilizing the technological advancements in terms of registration, record maintenance, appointment fixing, coding and billing. Technology has made tremendous contribution in medical and non-medical advancements.

4.Literature Review: World Health Organization (2000): Human resources are one among three principle health system inputs, with the opposite two major inputs being physical capital and consumables. Human resources when concerning healthcare, are often defined because the different sorts of clinical and non-clinical staff liable for public and individual health intervention. the foremost important of the health system inputs, the performance and therefore the benefits the system can depend largely upon the knowledge, skills and motivation of these individuals liable for delivering health services.[1]

Stepane M.Kanene et. al, (2006): Since, all healthcare is ultimately delivered by and to people, a robust understanding of the human resources management issues is required to make sure the success of any healthcare program. Given the many changes the globalization of healthcare can introduce, it's important that human resources professional be involved at the very best level of strategic planning, and not merely positioned at the more functional, managerial levels.[2]

Zurn P., Dul Poz MR, Stilwell B., Adams '. (2004): Human resource professional face many obstacles in their plan to deliver high-quality healthcare to citizens. a number of these constraints include budget, lack of congruence between different stack holders' values, absenteeism rates, high ratio of turnover and low morale of health care provider.[3]

Harris C., Cotriend P., & Hyde P. (2007): Arabah Hajj in his study recommended that,' a. the necessity to pursue the efficient use of human resources for health constantly, and even non-health, b. prepare a map showing the distribution of human resources for health for all individuals working within the hospital, supported the distribution of the family, and therefore the specialty for all health professions and medical professional, making it easier to ask them when there's a defect or waste within the use of the resources.[4]

Korczynski, (2002): The study finds that relationships are found between a variety of HRM practices, policies systems and performance. The study concluded that trusts may leave increasing tailoring of HR practices to

suit local circumstances, and therefore the potential impact of any HR practice or set of practices on performance could also be mediated by the effect of the implementation process on mental models of people and thus on HR outcomes like motivation, commitment and satisfaction.[5]

The new service management school of thought (Korczynski, 2002) celebrates a group of the new HRM practices, underpinned by the concept of the satisfaction mirror between customers and front-line workers. the assembly line approach to services results in failure because its narrow low-skilled jobs and emphasis on the utilization of technology results in workers either having a poor service attitude or leaving the firm through boredom and dissatisfaction. These successively cause customer perception of low service quality and to a scarcity of customer loyalty.[6]

In the current scenario of healthcare sector, especially for the profit-maximizing hospitals, another distinct challenge to medical rational authority is that the importance given to hospitality of the patients. The customer's need and luxury are increasingly become essential for the hospitals. The doctors and nurses are answerable to their profession first and their organization later (Korczynski, 2002).[7]

Determining and assessing competencies may be a vital precursor to improving professional development and therefore the alignment of individual development with the necessity of a corporation or profession (Calhoun et.al: 2004).[8]

Burgelman RA., Chritensen CM., and Wheel Wright SC. (2009): The human aspect within the description is known as because the cognitive element embodied in knowledge and skills related to production the rendering of services.[9]

Pretorious (2002) brings the human aspects into consideration in defining technology as 'the integration of individuals, knowledge, tools and systems with the target to enhance peoples' lives.[10]

Pretorious (2002): The concept of technology captures the people and systems aspects discussed, also because the knowledge and skills elements, which it might be argued forms an inherent component of the people aspect identified.[11]

Cohen (2004) require both clinical and technology knowledgeable professionals. the utilization of private computers as medical devices currently in use within a good sort of healthcare settings as typical support for this contention.[12]

A number of pertinent aspects got to be considered in analyzing the people or human dimension of healthcare service delivery from a technology perspective, namely the character of the knowledge and skills required, availability of those skills in reference to demand, the culture required in reference to the prevailing culture and therefore the aspect of change management. If technology is therefore deemed to play very fundamental and key role in healthcare service delivery it must be questioned whether healthcare professionals and technologists have the requisite skills and knowledge required and if the capacity exists for the event, implementation, management and utilization of the various technology systems concerned. Adopting a service system orientation in analyzing healthcare services also brings the role of the client or patient into consideration within the service delivery process (Gill, White & Cameron, 2011).[13]

5.Problem Statement: Technology's impact on human resources cannot be ignored. The overall impact of technological changes is that labour-intensive jobs are decreasing, while technical, managerial and professional jobs are increasing. Particularly the technology and medical advances made the healthcare industry to have a dramatic impact on HR issues and challenges. Jobs and organization's structures are being redesigned(revised job descriptions are being written(new programmes are being instituted for employee selection(evaluation and training and new incentives and compensation plans are being implemented. Lack of attention towards the role of human resource management in the wake of technological development is an important factor standing between success and failure in healthcare industry. This forces to make a study on the issues.

Research Questions:

1.Whether technological advances and medical advances require changes in human resource skills?

2.What type skills are required to manage the medical advancements in healthcare?

6. Objectives of The Study:

-To understand the technological and medical advances in healthcare industry in India

[To identify the influential factors of human aspects in technological advances

[To analyze the relationship among various factors of human aspects in healthcare industry

7.Technological Advances in Healthcare System

[Technological and medical advances have a major impact on the nature of healthcare provided for a wide range medical conditions over the period. The diagnosis and treatment will have changes based on advances in genetics, proteomics, robotics, nanotechnology, biomaterials and bio-photonics.

[Advanced surgical and medical systems which will allow for the performance of more precise and technically challenging procedures, less invasive (smaller and fewer incision) surgical procedures, pre-programmed tasks and real-time intraoperative imaging

[Advance imaging techniques which will identify pre-cancerous cells and imaging systems that will be used to target treatments specifically to diseased tissues

[Implantable sensors for continuous monitoring of patients with chronic conditions such as diabetics, heart and kidney disease

[Genetics testing for identifying individuals at risk for developing diseases and providing customized genetically based preventive medicine

[Gene-therapy – Replacing defective genes with normal genes and introducing genes to increase immunity to a disease

[Pharmacogenomics – the utilization of genetics information to predict adverse drug reactions or to develop targeted drug therapies supported specific gene function

[Biomaterials – the use of tissue substitutes and artificial organs with full functioning

[Micro and nano scale robots capable of carrying out diagnostic and surgical procedures within body cavities

[Nano-particles capable of travelling through the body, detecting disease and targeting cancer cells for drug delivery or repairing damaged tissues

[These developments are in the way in which diseases are detected and managed are expected to bring specified changes to the healthcare teams of the future.

8.Human Factors Relevant to Technological Advances: The following factors are taken into consideration based on the interaction with HR department of hospitals which are influencing the technological and advanced medical practices implementation.

i. Qualification while recruitment
ii. Training before joining
iii. Training after joining and during the job
iv. Procedural Assistance Skills
v. Technical knowhow and up-dation
vi. Machine Operating Skills
vii. Lab Technical skills
viii. Counselling skills
ix. Diagnostic and Consultancy skills
x. Report Analytical skills

9.Research Methodology

Type of Research: For this study the Exploratory Research has been undertaken with the Physicians, Nurses, Lab Technicians and technical assistants of selected multi-specialty hospitals in Tamil Nadu.

Population & Sampling Method: The multi-specialty hospitals with 200 and above beds and NABH certification were selected for the study. 15 hospitals have been selected using Simple Random Sampling. 150 sample respondents were chosen using Convenience sampling among doctors, nurses, lab technicians and technical assistants. The sample size distribution is given in table no.1.

Table No.1 Sample Size Distribution

S. No.	Category	Sample Size
1.	Physicians/Doctors	65
2.	Nursing Assistants	25
3.	Lab Technicians	25
4.	Technical Assistants	35
	Total	**150**

10.Analysis and Results: The sample respondents were interviewed and collected the relevant data using a simple structured questionnaire. Average Score Analysis and multiple regression analysis were used to find out the relationship between technological advances and human resource factors. An attempt has been made to analyze the HR aspects of technological advances in healthcare. The average score analysis was done to the listed factors of HR aspects. The results are given in the

following table no.2.

Table No.2: Average score Analysis

Factor/Variable	N	Range		Mean	SD	Mean %
		Min.	Max.			
Qualification while recruitment	150	14	24	21.22	1.81	83.23
Training before joining	150	32	47	41.54	2.23	82.15
Training after joining and during job	150	40	55	46.56	2.88	85.65
Procedural Assistance Skills	150	38	52	49.66	3.12	84.66
Technical Knowhow and Up -dation	150	24	39	43.44	1.45	**88.64**
Machine Operating Skills	150	19	42	36.56	2.11	**86.25**
Lab Technical Skills	150	42	58	47.54	2.83	79.15
Counselling Skills	150	36	56	43.25	2.38	84.33
Diagnostic and Consultancy Skills	150	40	58	28.95	2.32	**87.65**
Report Analytical Skills	150	22	40	33.65	2.16	85.56

Source: Primary Data

The distribution of mean, standard deviation and mean average of HR aspects shows that among 10 factors, the mean score (21.22±1.81) of 83.23% was obtained for the factor ''ualification while recruitment'. The mean score (41.54±2.23) of 82.15% was obtained from 'Training before Joining'. 85.65% of mean score (46.56±2.88) was obtained for the factor 'Training after Joining and during Job'. The factor 'Procedural Assistance Skills' obtained a mean percentage score (49.66±3.12) of 84.66%. 'Technical Knowhow and Up-dation' obtained a mean score (43.44±1.45) of 88.64%.

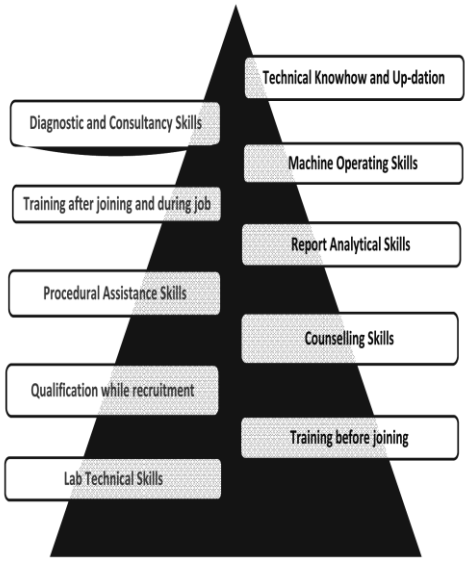

Fig. No.1: Hierarchical Relationship of Human Resource Factors

Fig. No.1: Hierarchical Relationship of Human Resource Factors: ÒMachine Operating Skills' obtained a mean score of 86.25% and mean value of (36.56±2.11). The mean percentage score (47.54±2.83) of 'Lab Technical Skills' was 79.15%. The mean percentage score of 'Counselling Skills' was 84.33. The factor 'Diagnostic and Consultancy Skills' obtained a mean percentage score (28.95±2.32) of 87.65%. 'Report Analytical Skills' obtained a mean percentage score of 85.56%.

From the analysis we could understand that the highest mean percentage was obtained for the factor 'Technical Knowhow and Up-dation'. 'Diagnostic and Consultancy Skills' and 'Machine Operating Skills'are the next two important factors to be considered for technological advancements.

11.Discussions

Hospitals are finding difficult in organizing and managing people as a consequence of technological advances. As per our analysis, it is essential to have 'Technical Knowhow and Up-dation' by all the stakeholders of the system. Studies have reported a huge gap between purported benefits of Hospital Information Technology and the benefits accrued from it. Grossman et.al. (2007) examined physicians' experiences with commercial e-prescribing systems in 21 physician practices, the majority of which had fewer than 100 physicians. E-Prescribing, even in this less complex setting was found to fall well short of the advocated benefits. 'Diagnostic and Consultancy Skills' find a major aspect in healthcare technology. It is understood knowledge management is important in healthcare organizations. Some experts have speculated that physicians will assume more

specialized roles as medical aid become increasingly hooked in to technology, and therefore the patients will only see physicians for 'high tech' specialty care (Mehran Anwari, 2007).[14] 'Machine Operating Skills' 'Training after Joining' get importance among the respondents. Since all the advanced technologies are based on information and digital technology, the machine operating skill should be more precise and errorless. More so, the technicians and physicians should be properly trained while new technological application and machinery are introduced. Sahah Manmoud Diab (2012) in his study found that training courses of medical service quality and to deepen the quality concept between the staff and to achieve the quality dimensions at best degree of technological age. [15]

Al Kudhat Mohammed (2004) together with his study found the existence of a positive relationship between the technology employed in the hospital and the personality traits of newly recruited and technology employed within the hospital. His study also reveals that the existence of the impact of high technology in the analysis and design work and job classification and the nature of the work.[16]

12. Recommendations: i. As hospitals implement the technologies, they should be able to improve the quality of patient care by streamline process, reducing duplication and minimizing the risk of medical errors, such as administration of wrong drug or dosage or even performance of a wrong surgery **ii.**The multi-specialty hospitals which introduce advance technologies must
ensure that all human resources in a health system are properly qualified and trained. The physicians and other staff should be recruited with ongoing need of educational qualifications and specializations and competencies acquired. **iii.**Diagnosis and Consultancy Skills improve with the years of experience. With the objective of better diagnosis using advanced technological outputs, the hospitals must engage them properly. The line of consultancy expertise must be inculcated as an organizational culture. **iv.**A proper performance appraisal and reward system should be introduced to encourage the technical knowhow and updating by the physicians and technicians. **v.**Since the investment for advanced technologies in healthcare system need to be high, the cos-benefit analysis should be taken on human resources also. **vi.**The introduction of advanced technologies (both imported and domestic) must have proper terms and conditions of providing support activities in terms of training and up-dation for the users of the machinery and techniques.

13. Conclusion: The study focuses on the emerging technological applications and medical advances in the healthcare industry. We can expect significant changes in the educational qualifications, training and skills of physicians and supporting staff healthcare industry. Changes are expected by the patients in terms of quality in treatment and accuracy in identification of disease of patients approaching multi-specialty hospitals by having the insurance facilities. Moreover, India becomes an attractive medical tourism destination, it needs to focus on best treatment at cheaper cost. These all happen only with the advances in medical services which are supported by the human resources. Hence the hospitals should formulate HR strategies to keep these developments in mind.

14. References:

1)World Health Organization, World Health Report 2000, Health Systems: Improving Performance,

Geneva 2000.
2) Stefane M. Kabene et. al, The Importance of Human Resources Management in Health care: A Global Context, Human Resources for Health, 2006, Pp. 1 – 17.
3) Zurn P., Dul Poz MR, Stilwell B., Adams O, (2004), 'Imbalance in the health force, Human Resources for Health, 2004, Pp. 2(13
4) Harris C., Cotriend P., & Hyde P., Human Resource Management and Performance in Healthcare Organization, University of Manchester, UK, Journal of Health Organization and Management, 2 (4/5), 2002.
5)Korczynski M, 'HRM in Services Work, New York, Palgrave Publishing, 2002
6)Korczynski M, HRM in Services Work, New York', Palgrave Publishing, 2002
7)Korczynski M, HRM in Services Work, New York, Palgrave Publishing, 2002.
8) Calhoun, G., Deshpande, G., Schedl, P., diminutive is a Positive Regulator of Sex-lethal Early Promoter, A. Dros. Res. Conf. 45: 603C, 2004.
9)Burgelman RA., Chritensen CM., and Wheel Wright SC., 'Strategic Management of technology and Innovation, International, 5th Edition Boston: McGraw Hill, 2009.
10) Pretorius M.W., Technology Assessment in the Manufacturing Enterprise, A Holistic Approach, Proceeding of the 9th International Conference on Management of Technology, 21 – 25 February, 2002, Miami, Florida, USA.
11) Pretorius M.W., Technology Assessment in the Manufacturing Enterprise, A Holistic Approach, Proceeding of the 9th International Conference on Management of Technology, 21 – 25 February, 2002, Miami, Florida, USA.
12) Cohen T., 'Medical and Information Technologies, Coverage', IEEE- Engineering in Medicine and Biology Magazine, 23 (3), Pp. 59 -65, May – June, 2004.
13) Gill, L., White, L., & Cameron, I. D., Interpretations of Service Formation, In Proceedings of the 10th International Marketing Trends Conference, 2011, pp. 1-30, ESCP Europe.
14) Mehran Anwari, Impact of Information Technology on Human Resources in Healthcare, Healthcare Quarterly, Vol. 10, No.4, 2007, Pp. 84 – 88.
15) Salah Mahmoud Diab, (2012), Measuring the Dimensions of the Quality of Medical Services provided in the Jordanian Government Hospitals from the Perspective of Patients and Staff, Ph.D Thesis, 2012.
16) Al Kudhat Mohammed, Methods of Selecting Staff in King Abdullah Hospital in the Light of Technological Development, Ph.D Thesis, 2004.
17) Avantika Tomar and Amit Dhiman, Exploring the Role of HRM in Service Delivery in Healthcare Organizations: A Study of an Indian Hospital, Vikalpa, Vol. 38, No.2, April – June 2013, Pp.21 – 38.
18) Mubarak Ali E. and Abdul Aameeds, 'HRM Issues and Challenges in Healthcare, International Journal of Management Vol. 7, Issues 2, February 2016, Pp. 166 - 176.
19) Richard Weeks, A Technology Perspective of Healthcare Services Management, ACAT Commercial, 2012, Pp. 173 – 185
20). Roma Tripathi and Ankita Srivatsava, Recruitment and selection Process to Healthcare Industry in India, Amity Journal of Healthcare Management, 2 (1), 2017, Pp. 36 -49 .....

****

Proposed Nagalim State : A Challenges To Integrity of Other North -East States

-Pabitra Borah
Department of History,
S. P. P. College, Namti

ABSTRACT: The formation of proposed Nagalim State by National Socialist Council of Nagaland will create many problems for majority of North-East Indian region. Because NSCN demanded Karbianglong, parts of Sivasagar, Dibrugarh, Tinsukia, Jorhat and Golaghat from Assam(Lohit, Tirap and Changleng district from Arunachal Pradesh and Senapati, Urkhul, Sandal and Tamenglung district from Manipur. They also demanded Kachin and Seguine Sector from Myanmar. In the peace process initiated by Central Government of India NSCN agreed that they will give up the Sovereignity issue if other North-Eastern states permit them to annex the territories which they consider as an integral part of proposed Nagalim State. It wil create a major crisis in the entire region. United Committee of Manipur, different Socio-political groups and student organisations of Assam started protest against the formation of Nagalim State. Asom Jatiyatabadi Yuva Chatra Parishad declared that not an inch of Assam's land would be ceded to the Nagas. It is clear that if Nagalim state will create through peace agreement with Central Government then it will create law and order situation in the whole North-East.

Introduction : Nagaland is an important state of North-East India. Located between 930 and 970 Longitude east and 23.50 and 28.30 latitude North the state was formed in 1st December, 1963. It was part of Assam during British rule. The British annexed Naga hills after a long struggle from 1866 - 1904. At first, a portion of Nagaland was formed as a Naga hill district with its headquarter at Kohima and incorporated to chief commissioner Provinee1. The British introduced inner line regulation in 1973 to alienate the warlike Nagas from the inhabitant of plains2. Surrounded by China and Myanmar in the north the state also occupies strategies geo-political importance.

At present the state occupies 16,527 sq. kms. area. The term 'Naga' is used as a generic name. The Nagas are actually divided into many tribes and sub-tribes inhabiting differenbt parts of Patkai range. They speak different dialects and have different manners and customs. There are sixteen major Naga tribes in Nagaland. Angamis, Chakhesangs, Khinmungans, Lothas, Semas, Phoms, Rengmas, Aos, Changs, Konyaks, Sangthams, Yimchungress, Zeliang, Kukis, Wancho and Nocte3.

Ethnically the Nagas belong to Mongoloid with many haterogeneous elements. The nascl form and head forms varied to each groups4. From Pre-historic time the Nagas migrated to India from Mongolia into two groups. The first group entered Arunachal Pradesh from Yunan of China through Myanmar. The other group reside in Myanmar for a period of time and entered Nagaland, Manipur, Dima Hasao and Assam.

Objectives of the Study :

1. To study and highlight the historical background of the Nagas.

2. To study the consequences of the formation of proposed Nagalim state.

3. To highlight the reaction of other North-Eastern states regarding the Naga peace process.

Methodology : The study is based on historical method with descriptive approach. The sources are mainly secondary. The datas are collected from books, journals, Megazines and News paper.

Historical Background : The Nagas for thousand of years lived untouched by modern civilization. They lived as primitive races with their ancient type of creature. The Ahom rulers first came into hostile contact with the different Nagas. With a well conceived policy they deal formed as a Naga hill district with its headquarter at Kohima and incorporated to chief commissioner Provinee1. The British introduced inner line regulation in 1973 to alienate the warlike Nagas from the inhabitant of plains2. Surrounded by China and Myanmar in the north the state also occupies strategies geo-political importance.

At present the state occupies 16,527 sq. kms. area. The term 'Naga' is used as a generic name. The Nagas are actually divided into many tribes and sub-

tribes inhabiting differenbt parts of Patkai range. They speak different dialects and have different manners and customs. There are sixteen major Naga tribes in Nagaland. Angamis, Chakhesangs, Khinmungans, Lothas, Semas, Phoms, Rengmas, Aos, Changs, Konyaks, Sangthams, Yimchungress, Zeliang, Kukis, Wancho and Nocte3. Ethnically the Nagas belong to Mongoloid with many haterogeneous elements. The nascl form and head forms varied to each groups4. From Pre-historic time the Nagas migrated to India from Mongolia into two groups. The first group entered Arunachal Pradesh from Yunan of China through Myanmar. The other group reside in Myanmar for a period of time and entered Nagaland, Manipur, Dima Hasao and Assam.

Objectives of the Study :

1. To study and highlight the historical background of the Nagas.

2. To study the consequences of the formation of proposed Nagalim state.

3. To highlight the reaction of other North-Eastern states regarding the Naga peace process.

Methodology : The study is based on historical method with descriptive approach. The sources are mainly secondary. The datas are collected from books, journals, Megazines and News paper.

Historical Background : The Nagas for thousand of years lived untouched by modern civilization. They lived as primitive races with their ancient type of creature. The Ahom rulers first came into hostile contact with the different Nagas. With a well conceived policy they deal In 1966-67 prime Minister Indira Gandhi open talks with the Naga Groups. This failed to brings any solution. In 1975 Shillong pact was signed with the Nagas. But majority Naga leaders rejected it, because they were not ready to accept the autonomous status and Indian constitution.8 They demanded seperate Nagalim States for the Naga's.

On 31st Janury, 1980 National Socialist Council of Nagaland (NSCN) formed under the leadership of Isak Shisi Suee, Thuingailung Muivah and S. S. Khaplang. They rejected Shillong pact and unitedly fought for independance. In April 1988 Khaplang Group attacked at the Head quarter of Isak-Muivah and killed many caders. Isak and Muivah lucklly escaped from this massacre. From this incident NSCN divided into two groups Isak-Muivah and Khaplang. Attack and counter attack among themselves creates unrest and threathen the life and security of the Naga people.

In 1997 Central Government started peace process with Isak-Muivah. Later in 2001 it was extended to Khaplang group also. Government of India tried to solved the Naga problem politically which create a serious problem to the North-East regarding the formation of Nagalim state. Even after the peace talk the two groups run parallel Government in Nagaland and Isak-Muivah group wanted to formed the Nagalim state by arms. They demanded Karbi Anglong and parts of Sivasagar, Dibrugarh, Tinsukia, Jorhat and Golaghat district from Assam(Lohit, Tirap and Changleng district from Arunachal Pradesh and Tamenglung, Senapati, Urkhul and Sandal district from Manipur. It will increased the total area of Nagalim to 1 Lakhs 20 Thousand Kms. According to NSCN I/M Indian Government divided the Nagalim into four administrative unit i.e. Assam, Arunachal Pradesh, Manipur and Nagaland. On the other hand Myanmar Government divided Naga inhabitant area into two parts Kachin and Seguine sector. Now to form Nagalim NSCN I/M started agreesion on the land of Assam, Arunachal Pradesh and Manipur.9 They give up the sovereignty issue and follow consilatory policy towards annex the area of Myanmar with Nagalim. It increased the difference between Isak-Muivah and Khaplang. Moreover the three states of North East feared for the loss of large area to Nagalim.

On 3 August, 2015 central Government reached an agreement NSCN (I-M). Prime Ministers' office and mediator R. N. Robi term it as 'Framework Agreement'.10 If is introduced in parliament then it will become an act.

Impacts to the other States of North-East :

The proposed greater Nagalim state will create many problems for North-East. At first it will threaten the integrity of Assam, Arunachal and Manipur. Secondly, one can not treating the Nagas as one homogeneous whole. The strength of the Naga society lies in its variety of tribes and their distinct traditional structures. All these have combined under a particular historical process to give shape to a clear Naga identity. Therefore, it would be a grave mistake to try to merge all these distinct identities under the unbrella of one organisation -- the NSCN (I-M). The third is question of territoriality. The map which the British had introduced

for the first time, has become a major bone of contention between the different nationalities of the region. Prior to the coming of the British, the idea of a well defined territory for the Nagas or the other tribes was virtually non-existent. It has, therefore, been a long journey from the Naga 'Village Republic' to the concept of a unified Nagalim covering some 1,20,000 kilometers of land which would include all those who consider themselves to be Naga, irrespective of whether they reside in Assam, Manipur or Arunachal. All Naga organisations within and outside Nagaland are unanimously one in this point. But the colonial administration has left its mark and certain boundaries have been defined and accepted in such a manner that changes in them could tigger a major crisis in the entire region. Manipur is already quite tense with the United Committee of Manipur (UCM) declaring an 'emergency' to deal with the situation that has arisen out of T. Muivah's statement in New Delhi that since he was born in Ukhrul, it is a part of Nagalim. The UCM is of the view that the centre has assured the NSCM (I-M) leadeship that as part of the deal, the three Naga populated districts of Manipur, namely Ukhrul, Tamenglong, Senapati and Sandel would be made part of Nagaland. The merging of these districts with a greater Nagaland would reduce Manipur's territory by more than one forth. The Asom Jatiyatabadi Yuva Chatra Parishad of Assam has also declared that not an inch of Assam's land would be ceded to the Nagas and that if the Centre tries to redraw the states boundaries then, a 'thousand Muivah's will be born in Assam. Other Nationalist Organisation like All Assam Student Union, All Assam Tai Ahom Student Union etc. also supported AJYCP in this issue.

Conclusion: The state Governments of Assam, Arunachal Pradesh and Manipur sharply reacted to the 'Framework Agreement'. The political and social organisations of these states declared that they will not ready to leave one inch land to Nagalim. It is sure that if Nagalim will create by acquiring area from these states it will create law and order situation like in Manipur in 2001 and Merapani in 2014.

Government of Assam always tried to solve the border issue with its neighbouring states in a positive way. Assam first signed an agreement with Mizoram on 28th July, 2021 to settle the border disputes. It extend its hand to Nagaland. A Chief Secretary meeting was held at Dimapur on 31st July, 2021, where a pact was signed and both parties agreed to withdraw police force from disputed areas mainly Dissoi Valley reserve forest and Tsurangkong valley. Education Minister of Assam State Cabinet Dr. Ronuj Pegu and Nagaland's Deputy Chief Minister Y. Patton attended the meeting. It should be noted that a firing incident took place on 25th July, 2021 at Lailapur of Assam-Mizoram border where six police personal of Assam killed and more than 50 injured. From this incident every aspect of the society demanded that the central Government should try its best to assimilate the people of North-East with the main stream of India and take care of the needs of the people. Continuous unrest among the North-East states will help China to penetrates in Indian regions. So the border issues of all North-Eastern states should be solved in positive manner which will be acceptable for all.

References:

1.S. L. Baruah : A Comprehensive History of Assam, Munsiram Monoharlal Publishers, New Delhi, Revised edition, 2005, p. 511.

2. Pannalal Dhar : Ethnic Unrest : In India and Her Neighbours, Deep and Deep Publications, New Delhi, 1998, p. 20.

3. Lakshmi Devi : Ahom Tribal Relations, Lawyers Book Stall, Guwahati, 2nd edition., 1992, p. 20.

4.H. K. Borpuzari : The Comprehensive History of Assam, Vol. I, Publication Board Assam, Guwahati, 1990, p. 17

5.Ahom Tribal Relation : op cit, p. 22.

6.Yusoas Yuns : The Rising Naga, Vivek Publishing House, New Delhi, 1974, p. 21.

7. A Guha : Planter Raj to Swaraj, ICNR, New Delhi, 1977, p. 222

8. Sanjoy Hazarika and V. R. Raghavan : Conflicts in the North-East : Internal and External Dimension, Books Indian Pvt. Ltd., New Delhi 2011, p. 174

9. Kishore Kumar Kalita : Merapani Sakolo Nagalim(Khabor, Sept. 2, 2012, p. 9.

10. Khabor : An Assamese Daily Newspaper, Jorhat Issue, 5th August, 2015.The Assam Tribune, Guwahati, 7th August, 2015.

11. Udayan Misra : India's North East, Identity, Movements, State and Civil Society, Oxford University Press, 2014.

* * * **

Reading Toni Morrison's The Bluest Eye as a Narrative of Black Consciousness

-Arti Surothia
Research Scholar, English
Bundelkhand University ,
Jhansi

-Dr. Anupam Soni
Associate Professor, ,
Dept.of English,
Bundelkhand College,
Jhansi

Abstract

Toni Morrison's family had migrated to North America and it had suffered the banks of racism and marginalization. Morrison explains her motive in writing the novel. She wants to make a statement about the damage that internalized racism can do to the weakest member of a community – a young girl and how her whole existence shattered as she pines for the blue eyes and as a result of that suffers operation at the hands of her mother, father and the society at large. Mauritians fictional characters belong to her own soil i.e black people. Sometimes they embrace the values of a culture into which they have been transplanted. Therefore, they suffer the consequences. This paper attempts to define the irony of condition by exploring the decolonized space in the lives of the black women.

Keywords: racism marginalization community existence de-colonised

Black literature adopts a medium of language which has the intensity to instigate the reader and can bring change to the society. One of the ways in which protest literature can be comprehended is why you are observing its nature, purposes, impact, forms of expression, style and technique. In his foreword Two American protest literature, John Stauffer states:

Protest literature, purposely aims to remember and celebrate deeds of injustice done against a particular person or community at large. Unlawful acts may have been committed in the mask of racism, gender discrimination or social and class divisions. Literature of protest may have A purpose to honor those who have sacrificed themselves for the sake of their people or may help to develop an insight. It is the core quality of protest literature to symbolically and literally name injustice and its perpetrators so that they stand condemned by all right-thinking people. In seeking readers, protest literature aims to bridge all kinds of dichotomy which stands between people as well as secure punishment to perpetrators and provide restitution to the victims. And it also seeks to comprehensively repair the damage inflicted upon individuals, institutions and society by an authoritarian power over a sustained period of time.

Black woman novelists have significantly contributed to reveal their wish for formation and identity in the African American diaspora. Phyllis Wheatley is the pioneer in the pantheon of African-American world of writers andCarried forward by writers like Nile, Zara, Hudson and Aarti. Their works paved the way for writers like Toni Morrison, Gloria Naylor, Toni Cade Bambara, Alice Walker, Andre. Toni Morrison exhorts:

I write for black women. We are not addressing the men, as some white female writers do. We are not attacking each other, as both black and white men do. Black women writers look at things in an unforgiving, loving way. They are writing to respond, rename, renown.(Nellie 64)

We can witness the weight of burning desires in most of Morrison's characters. For Morrison's female characters who are labeled in this way, the troublesome Phase is one through which they meet a better self of their own and those find their peace of mind by resolving their inner complexities and dilemmas. Thereafter, they come to terms with surprising circumstances.The pregnant story of the cola, her absolute surrender to the white power structure, Is however not Morrison's final verdict in the novel. The predicament of the African-American woman seems more glaring and naked as we are taken in by the language and images through which Morrison depicts the whole story.

Morrison, being the one of the most vocal novelists, successfully turned the world focus on the lives of black American who were looked down upon by the whites. The African American perspective tends to define moderation in the national terms of modern American literature and more significantly in the context of black women. She has voiced her protest against the racialised community. She has very effectively expressed multiple important issues concerning the life of the blacks, their psyche, society and plight. The themes are mostly arising from adverse situations like race, gender or class; the term racism is used commonly pessimistically and is usually associated with race-based prejudice. Hernton defines:

"All the learned behavior and emotions on the part of a group of people towards another group whose physical characteristics are similar to the former group behavior and emotions that compel one group to……. treat the other on the basis of its physical characteristics alone, as if it did not belong to the human race."

The protagonists in Morrison's the bluest eye, Sula, Beloved, Jazz, song of Solomon and Paradise are seen either to have divided self or to undergo a phase of hysteria; they are different from others and are therefore leveled as abnormal. Morrison's first novel the bluest eye revolves around "A little black girl yearns for the blue eyes of a little white girl, and the horror at the heart of her yarning is exceeded only by evil of fulfillment."(162) Pecola is an event and is abandoned, ill treated and despised the girl who has a very low self-esteem. She considers herself as worthless and repulsive. She craves to be loved by her family and her school friends. Their support and love will help to remove the feelings of self loathing. Her own mother considers her as ugly and your father's love turns out to be destructive instead of healing. She is subjected to the most dreaded condition of impoverished communities, being an outsider and remaining always on the margin of the White and accepted society. She is subject to her mother's frustration and disillusionment in life. She is the one who plays the role of catalyst and behind people's obsession with blue eyes and mental alienation. She steals her daughter's life beyond rescue and salvation.

The novel The Bluest Eye deals primarily with the internalized pain and disastrous effects of racism in the US. Along with the others around her, Pecola herself thinks That she is a repulsive end of no use. Her protest is more against her ugliness by exploring the way to her mirth. She wishes to possess blue eyes because her blue eyes symbolize being charming and loved. She is so innocent that she considers that the mere possession of blue eyes will vanish all the odds surrounding her life and bring her dignity and love:

"It had occurred to Picola some time ago, that if her eyes, those eyes that held the pictures and knew the sites – if those eyes of hers were different, that is to say beautiful, she herself would be Different."

She, being ugly and black things that such types of girls who do not meet society's parameters are expunged from human society even before she has woken up to a realization of self. Picola symbolizes for the triple indemnity in the female black child; children, blacks, females, and the poor are lowered in the value and thrown to the periphery of the previously existing marginalized community. The innocent Picola, being a black girl, was in a state of dilemma amid the dominant white people. She earnestly wished to fit in among society's standards and things that by getting blue eyes all her memories will Fade away. She craves to be loved by her family and the schoolmates to overcome herSense of self loathing. Picola struggles with her ugliness which can be read in the passage in which she could make it disappear.

Please, God, she whispered into the palm of her hand."Please make me disappear. She squeezed her eyes shut. Little parts of her body faded away. Now slowly, now with the rush. Slowly again. Her fingers went, one by one; then her arms disappeared all the way to the elbow. Her feet now. Yes, that was good. The legs all at once. It was hardest above the thighs. She had to be real still and pull . Her stomach would not go. But finally it, too, went away. Then her chest, her neck. The face was hard, too. Almost done, almost. Only her tight, tight eyes were left. They were always left.(43)

Her mothers exasperation and father 's perverted love change her perception of life.She is subjected to the most cruel circumstances or drained communities, being in expatriate Understanding always on the margins of the white and accepted society stop she finds herself in a bubble word which is beyond any change. Being in the bubble she cannot come out nor anyone can enter into it. The bigotry on the basis of race from the society may be endured but there is no escape from the affliction when the blue comes from one's own family. Pecola observes:

"If she looked different, beautiful, maybe Cholly would be different, and Mrs Breedlove too. Maybe they'd say, "why, look at pretty -eyed Picola. We must not do bad things in front of those pretty eyes."(44)

When Pauline was in the hospital expecting the delivery of her second child, she was carried by the white doctor as a specimen for being a woman of color. She suffered psychologically when her private parts were demonstrated by the doctors without consideration. The white doctors claimed about the black Woman that the black women don't feel pain and deliver their children like animals.

Pecola was convinced that changing our eyes would change others' perception about her. By owning blue eyes, she will also change the way she perceives the world of a white child. Hence throughout her life, she tragically hands for self dignity and craves for love in a family paradoxically called Breedlove. For Cynthia A Davies:

"Pecola is the epitome of a victim in a world that reduces a person to objects and then makes them feel inferior to objects. In this world, light skinned women can feel superior to dark ones, married women to whores and so on and on."

The only part of her body that Pecola wishes to get disappeared are her eyes. The"C" can never fade away, so the girl can never be Pecola. She can never be affirmed as beautiful the way the imitation of life's character is, or be considered as a subject. In fact her presence and desirability are taken notice of by almost all the people who directly abuse and thoughts of her being ugly are shown by a variety of characters.

Self hatred is immensely destructive. It is not something one is born with but something that can be acquired through years after years in lack of care and love. The main character Pecola desires to be loved and accepted but none of her wishes come true. It has a heart shattering blow to her psche.The cycle of misery reaches it full circle leaving no room for hope when she is raped by her own father.The sense of self -loathing eventually makes her insane. Through the depiction of Pecola's life, the type of oppression faced by every black woman in America can be clearly seen. She is oppressed physiologically,culturally and psychologically by the stereotypical image of white people's beauty. Rejection and imitation in the novel proved to be disastrous for the girl in the long run ruining her to the extent of becoming insane.

Works- Cited:

Stauffer, John. "Foreword to American Protest Literature" What is American Protest Literature???,

bu.digication.com/ the united states of America/ John_Stauffer_to_America_Protest_Literat, accessed on Jan.5,2021

Calvin, Hernton. "Sex and Racism in America" Grove Press,1965

Morrison, Toni. "The Bluest Eye" London: Vintage Books,1999

Morrison, Toni. "Behind the Making of the Black Books" Black World,1974

C, Davies. "Self, Society and Myth" in Toni Morrison's Contemporary Literature. Vol.23,1982,

****

EMPHASIZED GENDER ISSUES AND INEQUALITIES IN THE FORM OF ART IN INDIAN CONTEMPORARY ART: A STUDY

-Dr. Binoy Paul
Department of Visual Art,
Assam University, Silchar
Phone (M): 9859689455
Email: binoyart@gmail.comi

Abstract:

The notion of gender is an important issue that has greatly influenced the increasing rate of violence against people in recent years, perhaps an important issue that needs further attention. The terms, gender and gender match suggest that these two concepts are similar. Eliminating this error and transforming the position into conscious awareness is managed with the contribution of various responsibilities as well as the awareness of social responsibility. At the same time, an assessment can be made on art and the social activities of art can be mentioned because art is an important way of communicating the messages conveyed by artists through their creative work in the 20th century. In this study, try to explore the concept of gender is expressed in contemporary art. This idea has been studied in terms of painting, sculpture, and various forms of art.

Keywords: Contemporary Art, Artists, Gender

Introduction:

Women as seductress, temptress, wanton lover; or woman as a spouse, mother, and goddess, However, there has probably never been a society or culture without its marginalized renegades and transgressive personas. As a female rebellious, seductive, incompetent lover; or women as wives, mothers, and goddesses. However, sometimes no society or culture has ever been without marginal renewal and disobedient personality.

During the freedom movement, the socio-political changes were encouraging for women and helped them to path out into various areas earlier were considered as male domains. Amrita Sher-Gil (1913-41) in India in the mid-1930s categorically changed the role of women in art. Her contribution to the development of modern Indian painting is very well-acknowledged. She became the single largest role model for the women artists of India to contribution have being huge as a woman artist.

In the early 1960s that we see some serious work being done by some women artists, Number of women artists went abroad to study art. This was also the time when more women went ahead for enrolled themselves in art colleges and afterward worked professionally in the field of art. Pioneers among them are Devayani Krishna, Pilloo Pochkhanawala, Meera Mukherjee, Nasreen Mohamedi, Amina Ahmed Kar, Anjoile Ela Menon, Naina Dalai and Anupam Sud Lalita Lajmi, Sumchi Chand Arpita Singh, Gogi Saroj Pal, Nalini Malini, Nilima Sheikh, Latika Katt, and Arpana Caur drew attention to the fact that women had taken in the world of art. They are exhibiting their works in national and international platforms. These artists cover a plethora of themes in their creations. It is observed that they are looking at life from their independent perspective and responding creatively to their situations. This development is quite significant as the woman has established herself as a freethinking individual who works for her own identity, without any constraints, compulsions, or inhibitions. The development of this approach is quite interesting and makes one wonder what she thinks about herself as a woman.

Representation of various issues in contemporary Arts:

Today's Indian artists are taking risks of combining genres and defying corrective limits. Sometimes displaying a sharp political awareness, rather than relying on the customary, the works often explore the newer potential within the situation around them, aiming to generate points of context-sensitive references to politics, personal concerns, and historical debates.

Since then, many female visual artists have taken up environmental issues in a variety of ways. Some, such as the Indian sculptor Pilloo Pochkhanawala had a college education in Bombay and got a bachelor's degree in Commerce. She started her career as an advertising designer. Pilloo Pochkhanawala, an experimentalist, during the 1970s, determined the conceptual representation of rockscapes on sea beaches. Its forms and thought evolved out of industrial materials like steel-

scrap assembled with usual forms of stone for suitable expression. Pilloo was influenced by the works of Picasso, Alexander Caldor, David Smith, and Henry Moore. She did not have any preliminary training, well-known sculptor Pansare guided her and encouraged her to use the material that she wanted to explore. He also encouraged her to start from the subject matter which had deeply impressed her mind. Pilloo started with a series of versions of a seated woman as she felt that it was a symbol of the total acceptance of fatalism. In some figures, she did not render the details of the face or the body but an easy form of a seated figure with a to some extent apt head expressing the quality of anguish and determination. She has worked to convey a strong linear rhythm. She experimented with materials such as wood, stone, molten lead, and cement. In addition to these, he also created a discipline to prepare drawings as a guide for his sculpture. She also resorted to carving, constructing, and modeling. Pilloo's wide-ranging interests in theatre, drama, classical dance are reflected in this way in her works. From her childhood, her mind was frequently thinking about death as an inevitable element for a living being. Her series on *'Death-masks'* is the result of the same, though both these artists intense on the conceptual representation treated their modeling individually. Pilloo Pochkhanawalla's early sculptures revealed both her Indian heritage and the impression that Henry Moore's organically shaped reclining figures had made on her. Soon, the *holes* in the works began to enlarge and the works became increasingly abstract. She began to use wax and plaster to achieve the swirling movements and gestures of abstract expressionist sculpture which during the '70s and '80s same abstract spontaneity was reflected in the works of David Smith Like many others of the period. She began incorporating junk and scrap material into her works of the later period when exploration of space and texture became her overriding concern. She has worked with several media including welded steel, copper, ceramic, wood, lead, cement, and marble chips, but aluminum alloy, especially cast aluminum remained her favorite. She is perhaps the first person in India to represent the rock-scape of sea-beach, the age-long subject of the painting, in the medium of sculpture. She believes strongly that every step of the working process is an integrated part of the whole concept and its realization. Pilloo's statement how she did turn to sculpture? *"In 1951, I went to Europe in connection with a commercial assignment. I was then in the advertising field and had no thought of becoming a sculptor. of course, once abroad, I took the opportunity of visiting the major museums. I did take in the vast collections of paintings, but every time I looked at the major works of modern sculptors I felt struck by a visual bolt.*

"It was my sudden grasp of the third dimension that left me mortified by the sculptures. The paintings did not ruffle my inner composure. I was mortified by the sculptures because I was seized by the fear of the challenge of tackling something so difficult. I suppose the mind was sorting out the message that was beginning to take shape.

"I knew that my keen interest in the drawing will not by itself lead me on to a discovery of sculptural line, form, volume, void, and the like. What made everything so challenging and confusing was my intense and instant admiration for the new sculpture of the time." Some of her famous works are *Light Energy, Lacuna, Pagan Cult, Metal-Scape II, The Fossil, Execution, Sky-Scape I, Time Past (detail), Time Cycle, Cave, Ophelia*.

Latika Katt's sculptural forms are organized in structures of concave and convex forms. The compositions of Latika Katt are defined by minute details as well as the overwhelming presence of nature. According to the sculptor, this is not the only cakewalk to be considered the only male preservation so far. Her statement *"I always felt sculpture has to be marvelously clear and transparent in terms of translating the expression of the sitter/subject. I would often ask my subjects if they would sit for me. The expression on their faces is what drew me to my subjects. My works were born of the effort of thoughts and observation, rising into the reality of the lived moment from the characteristics of what I saw,"* she explains.

As one would agree that artist mainly involve themselves in the act of beautifying the interior and exteriors of a place with their simplicity in work and using simple forms. It needs to evoke passion and a classic soul. Here at once, beauty becomes the outer body but yet not as materialistic as it may sound. The paradox of dematerialization of materialization recognizes no absolute separation between the realms of sense and intellect. It also raises questions on the visual and the illusionist, the real and the imaginary. Latika's works mostly signify her ideology of space and her space, it questions and contradicts the norms of the world and revolves around the true being. Latika's mode of reaching out to touching and modelling involves pushing, digging, stretching scribbling, and anything through which she can leave a mark on her identity. The artist

intends to create a dimensional, imaginative world that goes far beyond the obvious.

Meera Mukherjee was born in 1923 in Kolkata and studied at the Indian Society of Oriental Art School at age 14. In 1947, she enrolled at the Delhi Polytechnic, where she studied a diploma in painting, graphics, and sculpture. She went to Germany in 1953 to study painting at the Hochschule fur Bildende Kuenste in Munich. Her statement *"I have never made art for art's sake. Nor have I done what I have done with any hope of gain. The beginning of every work I have taken on has been an impulse. However, ideas, emotions, are only the beginning, to realize them in forms, calls for sustained physical as well as mental effort."* (Artist statement, Meera Mukherjee: A Retrospective, 1963-1983, exhibition catalog, Jehangir Art Gallery, Bombay, April 1983. India today, 2020)

She left painting at the end of a single term in favor of sculpture, a discipline by which she gained international fame. Her sculpture was extremely prejudiced by the traditional Dhokra sculptures of West Bengal, Ghorous of Bastar, and Malhars in Bihar. She gave them a new twist in the use of techniques that place too much emphasis on surface texture.

She worked as an apprentice. It was during this time that she learned the disguised method of sculpture, also known as the cire-perdue or the lost wax method. From there she discovered her process for bronzing, which required the work of wax to sculpt first, strips, and rolls were subsequently added to preserve the touching nature of the substance, to create and adorn the surfaces. Despite the hardness of the bronze, its finish will look subtle, organic, and decadent, equipping the work with a unique variety of lyrics and rhythms. Her sculptures are based on the daily activities of ordinary people. Her subjects included fishermen, weavers, women sewing, labourers, and other workers. She also discovered elements of Bengali calligraphy, nature, music, and dance. Mukherjee felt that her artistic moment was crystallized by the way some artists did it, which at that time came on the scene of Indian art, transformed, transformed, and embraced.

They all bring professionalism and femininity to the creative process of leading their respective fields. Presenting an array of images of women in their compositions with deep themes and descriptions of women in their creative process, they have touched on women and portrayed not only femininity but also subjectivity in social, economic, and political contexts as a whole. The female image presented by these artists is not only the result of their ideas, they consider how others will see or perceive the woman. Over time, the Indian feminine form has always emphasized the concept of beauty. Social and economic factors also played a very important role in influencing the perception of the image of women in the visual and literary art of the Indian subcontinent.

Conclusion:

From the evidence traced in the discussion, it is seen that Indian Art has travelled through a long journey crossing different periods. The contributions made by the different rulers and their impacts were truthfully studied. Besides the changing concept of the post-independent era till modern time, it was authentically documented. The contribution of women artists in the history of modern Indian art is justified by tracing the root of his different forms and ways of creating his creations which made him a distinguished and immortal persona in the Indian art scenario.

References:

Burnham, J. (1968). *Beyond Modern Sculpture,* George Braziller. New York, Page. No. 34-47

Craven, Roy, C., *'A Concise History of Indian Art',* Prager Publishers, New York, 1976.

fDalima, Yashodhara and Sambrani, Chaityana, et. al., *'Indian Contemporary Art Post Independence,'* New Delhi, Vadehra Art Gallery, 1997.

Dalima, Yashodhara, '*Contemporary Indian Art: other Realities',* Bombay, Marg Publication, 2002.

Kapur, Geeta, *'When was Modernism: Essays on Contemporary Cultural Practices in India ',* New Delhi, Tulika Books, 2000.

Mago, Pran Nath, *'Contemporary Art in India - A Perspective',* National Book Trust, New Delhi, 2001.

Mitter, Partha, '*Art and Nationalism in Colonial India 1850-1922', Occidental Orientations,* Cambridge University Press, 1994.

Mitter, Partha, *'The Triumph of Modernism. India's Artists and the Avant-garde 1922-1947',* Reaktion Books, London, 2007.

Narzary, J. J. (2009). *'Examining the environmental sculpture in the context of three sculptures by RamkinkarBaij'*, Department of History of Art, Kala Bhavana, Visva-Bharati, Santiniketan, 2009, page no 155-160

Sahiar, D. H. (1962). Indian Contemporaries. *Marg*, 25-80.

****

Mising Tribe and Traditional Village Administration System

-Dr. Papu Kumar Ngatey
Assistant Professor,
S.P.P. College, Namti

Abstract: The Mising tribe of Assam possesses a democratic type of traditional village administration system known as Ké:bang. Ké:bang is a village administration of all Misings, where the socio-political issues and welfare of the tribe are discussed. The social controls of the Mising people are achieved by through customary laws of the society. Any violation of the societal rules is achieved by through customary laws of the society. There is also another organization of the youth called Yame-mimbir ope. Basically developmental and welfare matters are discussed by the village youth organization. This village administration performs the function of the legislature, executive and Judiciary of the village society. It focuses on the traditional village administration system of Mising tribe of Assam.

Key words: Customary Laws, Youth Organization, Village Administration

Introduction: Every tribe's group of the world has its traditional concept of village administrative system. Every society has its own means of controlling the social behavior of its persons in order to reach its desired goal. Conflict and cooperation are found in all societies and conflict is tried resolve through traditional legal method. Whereas prevalent their own traditional rules, norms, customs, regulations, which maintain peace, harmony, justice, and unity among their society. Hence, Melton has mentioned about tribal law that, Òfoundation of tribal law is depended on the values, mores, and norms of tribes as directed by their customs, traditions, and practices (Melton,A.P., 2005, p-120).ÓThe traditional self-governing system of the village administrative system denotes the age-old socio-political institutions which are maintaining order in society, settling clashes and governed the village (Talukdar, 2002, p-161). The Kébang of the Adi group tribes (Adi groups including- Padams, Minyongs, Tasis, Galongs, Misings, etc) is the best example of a village council, which is based on democratic (Talukdar, 2002 p-164). The Mising people are similar to the Adi group of Arunachal Pradesh. Hence Mising posses a democratic type of social structure in common with Adi society. Like other tribal groups of the North East Region of India, the concept of the village administration justice system has also prevailed in Mising society.

Objectives: To analyzed the village administration system of Mising tribe

To know about the functions of village administration system

Methodology: For the purpose of this study, data collected from both primary and secondary sources. Primary data has been collected through observation, personal interviews and interview schedules. Secondary data have been collected from different research article, books and journal etc.

Ké:bang (Council):Traditional village administration system:

Every Mising village is run by the village council. The democratic nature of this village administration is known as 'Ké:bang', which means public meeting. The Ké:bang held to discuss various matters, problems, cultural and welfare measures of the village. The problems may be related to problems of road communication, harvesting, disputes, distress and developmental, etc., In general, Ké:bang has mostly related to the judicial matters especially problems related to settling interpersonal, inter-family, and inter-village disputes within the village. Besides this Ké:bang, there are also found some kind of organization like 'Yame-Mimbir Ope' (Youth Organization), which is consisting of unmarried girls and boys. Though, in the case of the main position they are distributed among the married persons.

In the olden days, every Mising village had a village council or Dolung Ké:bang for the smooth running

of the village. Nowadays the Ké:bang has lost its traditional glow due to many reasons. Though, the Ké:bang system is still existed in the rural areas Mising Village and also depended on it. As mentioned by A.C. Talukdar, Indeed, even today the traditional villagecouncil system keeps on working in each tribal village (Talukdar, 2002, p-161).

Gam (Ké:bangAbu) Chief of the Council:

There is no permanent presiding officer of the Ké:bang. Generally, an aged and experienced person of the village presided over the Ké:bang. He is known as Ké:bang-Abu (Gam). The term 'Gam' is defined by J.Nath in his book, 'Cultural Heritage of Tribal Society' that, ÒIn fact 'Gam' is a Tibetan word which means leader as 'Gam' in the word 'Gam-po'(Gam=leader, po=people) to mean King or leader of the people.(Nath, 2000, p-103)Ó The Gam is neither hereditary nor ascribed status, it is achieved through the personal virtue, like good knowledge in traditions, customs, customary laws, and history of tribes, etc., During the British rule, some village elders were appointed as a 'Village headman' (popularly known as Gam) also considered as a Ké:bang-Abu in Village council. Some essential qualifications of Gam's are – such as depth knowledge about traditions, customs, authoritarian mind, and knowledge about own history, capacity to take decisions, sharp in presence of mind. The chief was specified a noticeable position at all social and religious get-togethers and celebrations of the village (Vidyarthi and Rai, 1985,p-31).

Members of Dolung-Ké:bang(Village council):

All the matured male persons of the village are automatically the members of theKé:bang(Talukdar, 2002,p-165).Women are not allowed to take as a member of the decision making process in Ké:bang. Women are considered witnesses only. As mentioned by Dr. N.C. Pegu that, 'Ordinarily, the womenfolk were debarred from attending such Ké:bangor from being a member of the jury(but they could attend as complainant, accused or witness'(Pegu,1981,p-73).But nowadays women are participated in the Dolung-Ké:bang and playing an important role in the decision-making process.

Murong (Public Hall):

'Murong' is the place of the discussion of Dolung Ké:bang. It is considered the most significant and functional traditional socio-cultural institution of the Mising community (Kuli, 2014, p-23). Nowadays instead of Murong in some villages, Namghar is also used for solving disputes among Mising society particularly in the area of Majuli. Generally, Murong house is situated in the middle place of the village. It's a symbol of unity, the integrity of Mising village. They were learned about traditional beliefs, practices, dance, music, etc. in the Murong. In this hall, they performed 'Po:rag' (post harvesting festival) festival. It is an open stage platform (chang-ghar) made from bamboo, thatched, cane, and wood.

The procedure of Complaint in Ké:bang: Thecomplaint procedure is very simple in Mising society. There is no need for a written complaint, the victim person verbally conveyed a complaint in the form of a packet of betel-nut to the village council and request to investigate the complaint. After the request of the victim person the Ké:bang fixed a date for the hearing of the matter. The Barik (informer) informed the villagers and accused the person to appear before the Ké:bang on the fixed date.

The procedure of justice: Before the discussion of the matter, both the parties (accused and victim) were taken an oath before the Ké:bang in the name of Do:nyi-Po:lo (Sun-Moon) that whatever they said was based on real fact. In any meeting, the topic of matters is introduced and discussed, debate by the elder members. All the present members have the right to express his ideas, views, comment, etc. on the discussion. But there is no written format of discussion that is prevalent in the Ké:bang. Ké:bang tries to compromise the dispute within them. If the guilt is proved in the Ké:bang, then the accused has to pay the compensation for the loss or damage and if the accused is denied the guilty or if there is not enough proof to accuse someone, then the cases are handed over to supernatural power through oath and ordeals.

Functions of Dolung Ké:bang: Administrative Functions: Dolung Ké:bang is the most important self-governing administrative organization in a

Mising village. The role of a Dolung Ké:bang is the most important function in maintains harmony and peacefully running of a village and also maintain day to day administration of the village. Ké:bang decides community hunting-fishing, maintenance of the inter-village relationship, construction of Dormitory, cleaning of road, the celebration of community festivals, observations of taboos, etc., within the village.

Judicial Functions: In the realm of judicial functions of the village, Ké:bang is considered as the supreme justice system of that particular village. It is a common rule that all the villagers are accepting/obey the rules, regulations, and judgments of the Ké:bang. The jurisdiction of a Dolung Ké:bang is included all the disputes between clans, public property-related cases, land disputes, water, forests, family disputes, marriage, divorce, theft, dacoit, rape, adultery, elopement, etc. decide in the Ké:bang. After judgment Ké:bang awards punishment and fines to the accused persons according to customary laws. Generally, the Ké:bang avoid the rigorous type of punishment but impose fine on the offender. The fine and punishment are dependent upon his/her wrong deeds. Some sorts of punishment are given by Ké:bang's are like cash fine, shaving the hairs, Public Boycott, etc., On the other hand in case of lack of evidence, the cases are hand over to the supernatural power. For example, Ké:bang conducts oath and ordeal taking in the name of Do:nyi-Po:lo (SUN-MOON). Developmental Functions:The Dolung Ké:bang also looks after the matter related to the welfare of the village community. Developmental functions of Ké:bang includes the constructions/reconstructions of Murong/Namghar, bamboo bridge, road, help the people during the natural disaster, decide the boundary of the village, community fishing, annual festival, etc., After the discussion of the meeting, they prepare a plan for action to be taken on that particular matter and distributes the portfolio, responsibility among the villagers. Development function of village council is also included in the sphere of As Varrier Elwin observes, it decides where and when to clear jungles for cultivation, where and in what way the festivals and taboos are to be observed, where and when to conduct the community hunting and fishing, etc(Elwin, 1965).

Defense and Political functions: In the early period these two functions were considered as an important function of Ké:bang because warfare and aggressions frequently happened in Mising society. To protect the village from inter-village conflict, aggression from other villages, etc., were the main function of this part. So these matters were carefully discussed in the Ké:bang with maintaining strict privacy at the presence of all the villagers. The young unmarried peoples of the villages were maintained the patrolling duty in the night and kept the village secure.

Therefore Ké:bang or the village council is an important part of Mising society. It functions as a coordination body of the socio-political, socio-religious administrative sphere of Mising society. It also plays a key role in the development of Mising society in the sphere of the socio-cultural side.

Classification of Ké:bang:

The Ké:bang is classified into three stages or types. These are given below-

Bogum-Bokang-Ké:bang (Tribe assembly)

Bango-Ké:bang (Regional Council)

Dolung-Ké:bang(Village Council).

Dolung-Ké:bang (Village-Council):

The literary meaning of Dolung-Ké:bang is 'Village-Meeting'. Simply it denotes discussion within the village. It is found in every Mising society and always responsible for the day to day administration, maintenance of peace, the harmony of the village. All the aged male persons of the village are the active members of the village council. It is an intra-village socio-legal self-governing body where the cultivation field, forests, ponds, river, etc. of the village fall under their jurisdiction area. Function as a local self-governing body of the village to hear, deliver judgment, and discuss any issues relating to social, political, religious, and judicial matters. Customarily the villagers abide by the decision of

the Ké:bang. Dolung-Ké:bang is found in every Mising society.

Bango-Ké:bang(Regional Council):

The next stage of the self-governing body is the 'Bango-Ké:bang' (Regional Council). It's an inter-village judicial council of an area covering more than one village. If disputes, conflicts, and cases arise between two villages, and if a matter does not settle in the Village council, such types of matters are brought to the Regional Council for discussion. Customarily the active leader of the village council has automatically become the members of the Regional council.

Bogum-Bokang-Ké:bang (Tribe assembly):

Bogum-Bokang-Ké:bang is the supreme self-governing of the Mising society. It's just like a supreme court of the justice system for deciding the cases which could not be settled by the village council and regional council. They also discuss their socio-cultural-religious problems that may threaten the main structure of life. Nowadays Mising Bane-Ké:bang plays an important role in Mising society instead of Bogum-Bokang-Ké:bang and considered as the main organization Mising society.

Yame-Mimbir -Ope (Youth Organization):

The youth organization is one of the most important organizations in Mising society. Unmarried boys and girls are the general members of this organization. The village council is the decision maker's body of the village and that decisions are implemented through the help Youth organization. Youth organization has different functions performed in the society to the betterment of their socio-economic and cultural condition.

'Yame-Mimbir' youth organization is the one most cooperative organization among Mising society. Whenever a family needs manpower to any occasions such as construct a house, reaping crops, clearing cultivation field, to collect vegetables from the jungle, conduct a feast in a ceremony, rituals,(Dod:gang, Marriage), etc. the family just formally placing the proposal before to Migom-Bora with a packet of betel-nut and the Barik (informer) informed the all the youth to help the family in need. Thereafter the youth organization is also responsible for maintenance and performed Bihu, Ali-Aye-Lrigang,Po:rag festival in the village. The main official team members of the Youth organization are-

Migom-Bora (Head of the youth organization)
Udor-Bora- (Assistant of Migom-Bora)
Deka-Bora (Head of the Young Unmarried Boys)
Tiri-Bora (Manager of the Young Unmarried Girls)
Dhuliya-Bora (Head of the Drummer)
Barik- (Informer)
Patgiri- (Main official of the Young Girls)
Borani- (Assistant of Patgiri reserved for female
Powari- (Main Dancer)(Pamegam, 2005p-127)

The role and function of 'Yame-mimbir' organization are most important in the village concerning the smooth functioning of the village. The main aim and duty of this organization are to help the villagers whenever they need it. They helped the people to construct houses, a harvest of crops and other socio-religious ceremonies, etc., without any financial benefits.

Role of Ké:bang in Civil Cases:

Law is a formal instrument or agency to control human behavior. It is a set of rules, which govern our behavior.Generally, civil cases are related to debt, non-clearance of dues, money suit, mortgage, misappropriation, inheritance, marriage, adoption, divorce, public property theft, destruction of public property, etc. in Mising society. Dolung-Ké:bang is the main decision maker's body of a Mising village. All the disputes arise between families, clans, and individuals over civil cases are decided in the dolung- Ké:bang following their customary laws. Naturally, dolung Ké:bang does not impose rigorous punishment, instead of that kebang penalizes the offender to pay fine, ex-communication.

Role of Ké:bang in criminal cases:

Naturally, Ké:bang always avoids the eye for an eye and tooth for tooth laws. Hence, the Ké:bang takes correctional methods to reform the offenders. TheKé:bangoffers enough time for the offender to reform themselves. Criminal cases are like Murder, Rape, unnatural offense, physical assault, etc. Such

types of offenders are punished according to the nature and seriousness of the crime. Generally, such type of case is imposed fine, ex-communication and purification rites are imperative. But nowadays the murderer is a direct reference to the Police. Theft cases like, bike, car lost are also direct referred to the Police station.

Conclusion: From the above discussion, it is clear that one can assumed a picture of traditional decision making systems of Mising society. The different kinds of punishment and penalties are given to an offender. It is also clear that there is no capital punishment and bloodshed punishment in Mising society. The village council (Dolung-Ké:bang) gives a chance to both parties for compromise after settling of clash. Customary laws try to correct the offender rather than punish the offender. Besides, the customary laws are also played an important role in agricultural activities as well as daily life of Mising people. The traditional decision making bodies customarily had power over the whole domain of socio-religious, development and criminal matter. But present day situation, in any case, under the modern legal paradigm, there has been impressive decrease in the forces and power of these traditional decision making bodies of Mising society.

REFERENCES:

1. Barooah, J., (2011) Customary laws of Akas of Arunachal Pradesh, Law Research Institute, Guwahati, p-44

2.Elwin, V., (1965), opt. cited from A. C. TALUKDAR, (2002), Traditional self-governing institutions Among the Tribes of Arunachal Pradesh in A. Goswami (ed), Traditional self-governing institutions Among the Hill Tribes of Northeast India, Ankasha Publishing House, New Delhi, 2002, p-166

3.Kuli, J.J., (2014), Mising Folklore, Kaustabh Prakshan, Dibrugarh, p-23

4.utum, Interviewed with Loknath Kutum, Age-66, Retired Head Master and renowned folk artist of Majui. Village Chumoimari.

5.Martin, E.A., (2003), Oxford Dictionary of Law, Oxford University Press, p-280

6. Melton, A.P., (2005), Indigenous Justice Systems and Tribal Society, in Wanda, edited by D.McCaslin, Justice as Healing: Indigenous ways .writings on community peacemaking and restorative Justice from the Native Law center, St.paul, MN(Living Justice Press, p-120

7.Murdock, G.P., 1960, Social structure, Macmillan, New York, p-2

8.Ibid. p-2

9.Nath, J., (2000), The cultural heritage of the tribal society, Monsons Publications, New Delhi, p-103

10.Ibid. p-102

11.Ngatey, Interviewed with Mr. Nilamoni Ngatey, Age-50, renowned folk artist of Majui. Village -Motiyabari.

12.Padun, Dhaniram, Interviewed with Dhaniram Padun Age-65, elder villager of Burha Sen Sowa Mising, Majuli.

13.Pamegam, T.C., (2005), Misingor Janma aru Mrityu Shusi, Edited by Bhrigumoni Kagyung, Tarun Chandra Pame Gamor Rachanawali, 2ndpart, p-127

14.Pegu, N.C., (1981), The Mishings of Brahmaputra Valley, Assam, Print Craft Pvt., p-73

Talukdar, A.C., (2002), Traditional self-governing institutions Among the Tribes of Arunachal Pradesh in A. Goswami (ed), Traditional self-governing institutions Among the Hill Tribes of Northeast India, Ankasha Publishing House, New Delhi, 2002, p-161

15.Ibid. p-164

16.Ibid. p-161

17.Ibid p-165

18.Vidyarthi, L.P., and B. K. Rai, (1985), The Tribal Culture of India, New Delhi, Concept Publishing Company, p-31

****

Impact of COVID-19 on Debit Card Driven Transactions in India

-Dr. Vinod Kumar Yadav
Assistant Professor,
Department of Commerce,
Rajiv Gandhi (Central) University,
Ronohills(Doimukh-791112

-Dr. Tade Sangdo
Assistant Professor,
Department of History,
Rajiv Gandhi (Central) University,
Ronohills(Doimukh-791112

Abstract: The demonetization and ongoing COVID-19 pandemic have strong impact on the cashless payment in India. These incidents are predominantly and proactively associated with the promotion and popularity of cashless transactions across the country. The former was an anthropogenic incident whereas the latter is an accident that took the whole economy and society into its grip and thereby whole Indian economy got adversely affected. These incidents facilitated the materialization the vision of cashless Indian economy to a great extent. The continuous and comprehensive development in advanced technology has made the cashless society feasible. The Government of India has been very sincere and serious to the development of non cash payment system in India. The endorsement and expansion of cashless payments aretemporal obligationsagainst the twenty first century generation. The current paper is an attempt to study the impact of COVID-19 pandemic ondebit cards driven transactions in India. Under the current study, it has been observed that the ongoing pandemic has significantly adversely impacted the debit cards operated transactions in the country. However, factors responsible to this situation are not well known except the loss of jobs and works of the majority of workforce accommodated in the unorganized sector.

Keywords: COVID-19, Cashless, Debit Card, Transaction, & Unorganized Sector.

BACKGROUND:

Transformation and convergence are two prominent forces shaping the payment industry across the globe. The global payments landscape is on the verge of fundamental transformation. The world of payments of the twenty first century will be altogether different. Alternative payments such as e-wallets, mobile and digital currencies, are playing an increasingly prominent role in the payments space. The National Payment Corporation of India (NPCI) has been actively engaged in expanding the range of services to its diverse customers (Global Payments Report, 2020).KMPG India (2020) has observed that COVID-19 has a profound and significant impact on digital modes of payment in India. Indians have proclivity and propensity to deal in cash. However, COVID-19 has marked an evident impact in marginalizing cash transactions. COVID-19 has been proved a silver lining in many ways in India. Apprehension towards digital payments, lack of awareness, poor infrastructure, technicality, cost involved, etc. have been major reasons behind non-adoption of digital payment by common masses in India.Lee (2020) has observed that there has already been significant downfall in cash usage. Moreover, it has been noted that the future of contactless payment is very promising as COVID-19 is expected to cause a drastic decline in cash transaction habit of common people.

Research & Markets (2020) has outlined that the corona virus outbreak has not only transformed the pattern of shopping but the payment pattern also. Moreover, COVID-19 pandemic has brought unprecedented growth in contactless payments. Luthi (2020) has noted that cashless payments have recorded an unprecedented growth during the COVID-19 pandemic period. Cashless payment methods are often beyond the outreach of unbanked people. Therefore, cash remains the only payment option for many people.Runkel (2020) has concluded that the transition from cash transaction to cashless transaction has been very difficult across the globe due to low general acceptance of cash payment methods, limited access to advance technologies, and heavy reliance on conventional markets. However, these are not the latest reasons for the lower acceptance of cashless payments in the society.

Chakrabarty (2020) has said that the dearth of currency notes led by demonetization in 2016 forced people to adopt cashless transaction mode. The advancement in digital payment technology and its gradual adoption in

post demonetization period enabled society to cope up with COVID-19 pandemic life style. Youssef (2020) has claimed that demonetisation-2016 laid down foundation for the wide spread adoption of digital payments and digital wallets. Thus, today's India is no more unfamiliar with cashless payments. Younger generation is more confident with digital payments or cashless transaction than elderly generation due to technological exposure and awareness.Ramachandran (2020) has asserted that the COVID-19 pandemic has recorded manifold growth in digital transactions. Three overarching requirements of cashless India are higher internet penetration, laying of fibre optic cable network throughout the country, and leveraging the power of satellite to connect the remote and difficult locations. Internet is not the only barrier to adoption of digital payments but awareness to digital payments and security of data also.Singh (2020) has said that the RBI has witnessed the unprecedented growth in the popularity of cashless transactions after the outbreak of corona virus, despite decline in transactions led by slowdown in economy. However, cash economy is deeply embedded into the payment system of our country.

Cox (2020) has observed that the pandemic has enhanced our reliance on cashless payments. Contactless and mobile payments have made spending money more convenient than ever for consumers. Digital payment is not just an option, but the need of hour. Beniwal & Ghosh (2020) have claimed that COVID-19 pandemic has achieved what demonetisation-2016 could not i.e. cashless or digital payments. India's per capita digital payments has grown more than five times. However, India is still far away from going beyond its strong conventional attachment to cash. Digital payments are largely an urban phenomenon. Shukla (2020) has observed that demonetization disaster 2016 caused havoc on Indian economy, which has not been fully recovered so far. However, one of its implications that is the popularity of cashless transaction in the society that will be helpful in managing the pandemic problem.Mukhopadhyay (2020) has described many pros of going cashless for India like reduction in high cash maintenance cost, financial record, tax collection, financial inclusion, control over leakage, etc. it has been concluded that India has started migrating towards a cashless economy.Podile & Rajesh (2017) have observed that the demonetization-2016 forced society to endorse cashless transactions. India has been shifting from cash to cashless economy. People are gradually getting familiar and comfortable with cashless transactions. India cannot become a cashless economy until and unless prevailing issues and negative perceptions of people to cashless transactions are addressed.

There has been a big dilemma to identify the demonetization and COVID-19 pandemic as burden or blessing as at the outset both the incidents proved catastrophic to our Indian economy and society as well. But when it is seen from the perspective of growth and development of non cash or cashless or digital payments in India then they seem to be the positive incidents as they proved bedrock in the development of cashless society leading to the formation of cashless economy in India. Both the incidents, especially COVID-19 pandemic brought the Indian economy and society to a complete standstill. Indian economy needs to take an urgent call to address the issues and challenges posed by demonetization and COVID-19 to streamline the economic activities for the inclusive and sustainable growth and development of the country. Neither demonetization nor COVID-19 pandemic was cashless or non cash oriented at the outset. However, circumstances created by these incidents made them deeply linked and suitable to digital or cashless payment promotion in India. Therefore, the so called association between plastic money driven transactions and pandemic needs to be empirically analyzed and verified, otherwise it would be merely ahunch not a valid proposition.

OBJECTIVE OF STUDY

The present study has following two main objectives:

- To analyze the impact of COVID-19 pandemic on debit card driven transactions [i.e. frequency and amount of transactions] in India.
- To study the gap between pre COVID-19 and post COVID-19 debit cardoperated transactions in India.

METHODOLOGY-

The current research paper is an empirical cum exploratory by nature, which is purely based on secondary data. For the purpose of studying the impact of COVID-19 on debit cardsdriven transactions, the overall study period has been categorized into two parts as Pre COVID-19 period and Post-COVID-19 period. The first twelve months of post COVID-19 i.e. April

2020 to March 2021 have been taken as post COVID-19 period, and corresponding twelve months of the 2019-2020 i.e. April 2019 to March 2010 have been taken as pre-COVID-19 period. The ongoing COVID-19 pandemic took both the Indian society and Indian economy into its grip from April 2020 onwards. Therefore this time period has been taken as the justified time period of study. Paired t test has been applied for the purpose of data analysis under the current study.

REFERENCE PERIOD:

This study is an attempt to study and analyze the impact of COVID-19 pandemic on debit card driven transactions in India. The first COVID-19 case was identified on 31st December 2019 in Wuhan city of China. However, the first COVID-19 case was identified in India on 30 January 2020. COVID-19 was declared a pandemic by the WHO on 11th March 2020. Government of India announced lockdown in the last week of March 2020 with effect from 25th March 2020. Thus, Indian society and economy started observing the explicit influence of COVID-19 from April 2020 onwards. Therefore, under this study the first twelve months of post COVID-19 period [i.e. from April 2020 to March 2021] and the corresponding twelve months of 2019-2020 as pre-COVID-19 period [i.e. from April 2019 to March 2020] have been taken as the basis of current study.

RESEARCH HYPOTHESES:

H01:There is no significant difference between pre COVID-19 and post COVID-19 period debit cardsdriventotal monthly transactions.

H02: There is no significant difference between pre COVID-19 and post COVID-19 period debit cards driven total monthly transactions' amount.

H03:There is no significant difference between pre COVID-19 and post COVID-19 period per debit card operated total monthly transactions.

H04: There is no significant difference between pre COVID-19 and post COVID-19 period per debit card operated total monthly transactions' amount.

DATA ANALYSIS & INTERPRETATION

The ongoing pandemic has brought the entire global economy, especially Indian economy to a standstill. The entire global society was forced to stay home so as to avoid public contact because of the widespread danger of corona virus spread. Food is one of the unavoidable basic needs of the society. We may stop doing work for a while but healthcare and hunger areinevitable for human beings. Therefore, procurement of items fulfilling the basic needs of human being is essential irrespective of the situation whether be it pandemic or anything else. Physical distancing as a strong measure of control of corona virus spread reduced the widespread cash transactions, and promoted debit or credit cards driven and internet operated cashless transactions. Cashless transactions proved better alternative to cash based conventional transactions while maintaining zero public contact. Thus, society gradually switched to cashless or digital transactions from the direct cash transactions. The COVID-19 pandemic has brought a drastic change in the pattern of marketing and behaviour of the society as well. Thus, the ongoing pandemic has left no stone unturned from promoting and popularizing the cashless payments across the world. Plastic money i.e. debit or credit card is the most popular medium of cashless or non cash transactions in India as itcan be used in multiple ways while purchasing goods or availing services off line or online.

Null hypotheses framed for the present study have been analyzed in Table 1, Table 2, Table 3, and Table 4 respectively.

Table 1: Status ofDebit Cards Driven Total MonthlyTransactions

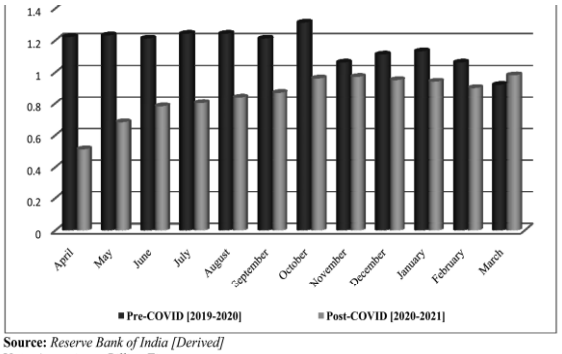

Source: *Reserve Bank of India [Derived]*

Note:*Approximate Billion Figures*

Q,L n .	F wn mrf cqcq	A pgrga l Valu	r- Valu	J ct cj m Significa ce (α)	N- Valu	F₀:Accepted Rejected
/	Rfcpc gq 1m qge difference between pre-C 19 and post COVID-19 peric debit cards driven total montl transactions	0,0.	Y5.1]	,. 3.	,. . 3	P chcarcb

Table2:StatusofDebitCardsDrivenTotalMonthlyTransactions'Amount

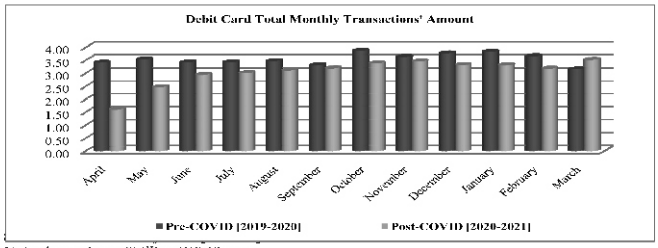

Note: *Approximate Trillion INR Figures*

S.No.	Hypotheses	Critical Value	t-Value	Level of Significance (α)	P-Value	H_0 :Accepted/ Rejected
2	There is no significant difference between pre COVID-19 and post COVID-19 period debit cardsdriventotal monthly transactions' amount.	2.20	[3.28]	.050	.007	Rejected

Table 3: *Status of Per Debit Card Total Monthly Transactions*

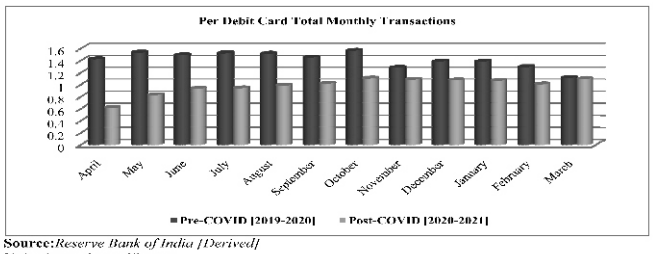

Source: *Reserve Bank of India [Derived]*
Note: *Approximate Figures*

.		l Value	Value	Significance (α)	Value	Rejected
3	There is no significant difference between pre COVID-19 and post COVID-19 period per debit card driven total monthly transactions.	2.20	[6.78]	.050	0	Rejected

Table 4: *Status of Per Debit Card Total Monthly Transactions' Amount*

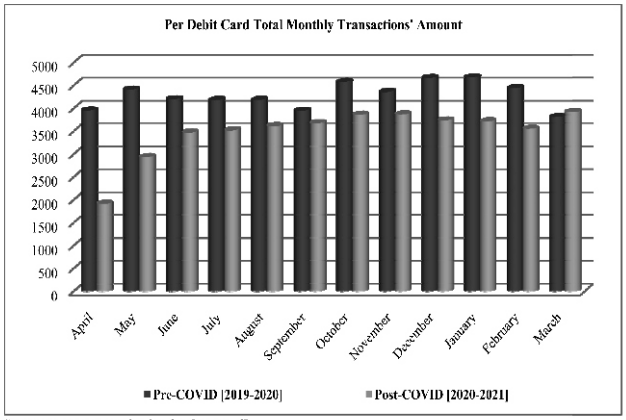

Source: *Reserve Bank of India [Derived]*
Note: *Approximate INR Figures*

S.No.	Hypotheses	Critical Value	t-Value	Level of Significance (α)	P-Value	H_0 :Accepted/ Rejected
4	There is no significant difference between pre COVID-19 and post COVID-19 period per debit card driventotal monthly transactions' amount.	2.20	[5.06]	.050	.0004	Rejected

As per the analysis of the debit card driventransactions based on RBI data from April 2019 to March 2020[as Pre COVID-19 Period] and from April 2020 to March 2021[as Post COVID-19 Period], it has been crystal clear that there has been a significant difference between Pre COVID-19 and Post COVID-19 one yearduration debit card driven transactions [both in volume and value]. Thus, it denotes that during the post COVID-19 one year period debt card operated transactions [both in volume and value] have been significantly reduced as compared to pre COVID-19 one year period debit card operated transactions [both in volume and value]. This result indicates thefact thatthe spending capacity of the majority of the population has been significantly reduced due to numerous explicit and implicit reasons. Theabrupt job loss of job or work of the millions of working population made them economically paralyzed because of loss of job led by lockdown and widespread fear of corona virus spread. Thus, earning capacity of the majority got jeopardized that has been reflected through significant reduction in the post COVID-19 one year period debit card operated transactions. Therefore, it can be concluded that the debit card driven transactions [both in volume and value] have been significantly reduced during the post COVID-19 one year period [2020-2021] as compared to the corresponding period debit card driven transactions of 2019-2020 as pre COVID-19 period.

Conclusion

It has been in wide circulation through diverse media channels that COVID-19 has attracted Indian consumers towards debit and credit cards driven cashless transactions all over the country irrespective of the geographical, social, and economicscenario. Undoubtedly cashless or digital transactions have been consistently growing with the introduction of advancedtechnology, and ongoing digital infrastructure development across the country. Universal acceptance of cashless is the demand of the hour, and our rational response to the ever growing needs of the dynamic economic world. However, the non cash transactions can never fully replace the direct cash transactionin developing countries like India, where a large population of the country is still today far away from the access of the basic formal education, fulfillment of minimum basic needs, and general employment opportunity. Therefore,majority of working population of India is

engaged in the informal sector. Furthermore, there are many other overt realities like lack of cyber security, weak digital infrastructure, no concerted action with regard to awarenessto cashless or digital payments, widespread illiteracy and poverty, technical issue and costly affair, digital divide, etc.that can be attributed to the non adoption of cashless transaction by common masses of India. In India, debit card is the most accessible and affordable medium of cashless or digital transactions. Thus, understanding of the impact of the pandemic on debit cards driven transactions would develop insightstocurrent status of employment and earning of the majority population that gets reflected through the value and volume of the transactions made.

Reference:

1.Beniwal, V., & Ghosh, S. (2020, July 13). Virus boosts digital payments in India where cash ban failed. The EconomicTimes. https://economictimes.indiatimes.com/industry/banking/finance/banking/virus-boosts-digital-payments-in-india-where-cash-ban-failed/articleshow/76931917.cms?from=mdr

2. Chakrabarty, A. (2020, December 24). How demonetization is helping India transact under the shadow of COVID-19 in 2020. Financial Express. https://www.financialexpress.com/money/how-demonetisation-is-helping-india-transact-under-the-shadow-of-covid-19-in-2020/2157129/

3. Cox, R. (2020, December 18). COVID-19 and contactless: Is the retail industry ready for a cashless society? Open Access Government. https://www.openaccessgovernment.org/covid-19-and-contactless-is-the-retail-industry-ready-for-a-cashless-society/100607/

4.KMPG India. (2020, August). Impact of COVID-19 on Digital Payments in India. https://assets.kpmg/content/dam/kpmg/in/pdf/2020/08/impacting-digital-payments-in-india.pdf

5.Lee, Nathaniel. (2020, December 3). The coronavirus pandemic has caused a surge in demand for contactless payments, accelerating the shift from cash to digital options. CNBC. https://www.cnbc.com/2020/12/03/covid-19-pandemic-accelerating-the-shift-from-cash-to-digital-payments.html

6.Luthi, Ben. (2020, December 4). COVID-19 Accelerates the Move to Cashless Payments. Invetopedia. https://www.investopedia.com/covid-19-changing-the-landscape-for-cashless-payments-5089731

7.Moorgate, OPUS Advisory Services International Inc, & BNY Mellon. (2020). Global Payments 2020: Transformation and Convergence. https://www. bnymellon.com/content/dam/bnymellon/documents/pdf/articles/global-payments-2020-transformation-and-convergence.pdf

8.Mukhopadhyay, B.. (2016). Understanding Cashless Payments in India. Springer Open-Financial Innovation, 2 (27), p.01-26. https://jfin-swufe.springeropen.com/track/pdf/10.1186/s40854-016-0047-4.pdf

9.Podile, V., & Rajesh, P. (2017). Public Perception on Cashless Transaction in India. Asian Journal of Research in Banking and Finance, 7(7), p.63-77. https://www.researchgate.net/publication/318484701_Public_Perception_on_Cashless_Transactions_in_India

10.Ramachandran, T. V. (2020, July 28). Cashless India: Nothing Elitist about it. The Hindi Business Line. https://www.thehindubusinessline.com/opinion/indias-set-to-become-a-cashless-economy/article32214260.ece

11.Research and Markets. (2020, May). COVID-19 Impact on Global e-Commerce & Online Payments-2020. https://www.researchandmarkets.com/reports/5026196/covid-19-impact-on-global-e-commerce-and-online

12.Runkel, Corey. (2020, August 4). Pandemic Catalyzes Transition to Cashless Benefits. Yale School of Management. https://som.yale.edu/blog/pandemic-catalyzes-transition-to-cashless-benefits

13.Shukla, S. (2020, March 27). Modi's demonetization will be of use during the coronavirus lockdown. The Print. https://theprint.in/opinion/pov/modis-demonetisation-will-be-of-use-during-the-coronavirus-lockdown/389237/

14.Singh, A. (2020, July 17). A Cashless Dividend: Indian Digital Payments spike over virus fears. SME Futures. https://smefutures.com/a-cashless-dividend-indian-digital-payments-spike-over-virus-fears/

15.Youssef, Ray. (2020, September 22). Pandemic is Pushing Cash Off its Throne. Business World. http://www.businessworld.in/article/The-Pandemic-Is-Pushing-Cash-Off-Its-Throne/22-09-2020-323237/.

****

Relevance of Dr.Sarvepalli Radhakrishan's Educaional Ideas In 21 st Century

-Dr. Biman Ch.Borah
Assistant Professor,
Department of Education,
Swahid Peoli Phukan College, Namti,Sivasagar,Assam

ABSTRACT: Dr. Sarvepalli Radhakrishnan was a great Indian philosopher, a renowned diplomat, a great teacher, a great humanist, a spiritualist, a man of vision, a man of mission, a man of principles, an idealist, an orator with gift of the gab, an original thinker, an eminent author. He was one of the greatest educationists in India. He not only enlightened India but also the whole world by his outstanding personality and intellect. His birthday is celebrated as the Teacher's day in India. He was the torch-bearer of the Indian education. His contribution to the field of education, philosophy, religion, culture, science etc. was immemorial. Dr. Sarvepalli Radhakrishnon contribution to education has been unique.The greatest contribution of Dr. Sarvepalli Radhakrishnan to education is the Report of the University Education Commission 1948-49 which is a document of great importance as it has guided the development of university education in India since independence. Dr. Radhakrishnan defines education as the instrument for social, economic and cultural change and should aim at a balanced growth of the individual.For social and national integration, for increasing productively, education should be properly utilized. The importance of education is not only in knowledge and skill, but it is to help us to live with others. According to him education should not merely give us some techniques so that we lead successful lives, but should also help us discover Òlasting valuesÓ. The teaching profession was his first love and those who studied under him still remember with gratitude to his great qualities as a teacher. In this milieu, the present paper has tried to focus on the educational thoughts of Sarvepalli Radhakrishnan- Concepts and Functions of Education, Aims of Education, Curriculum, Methods of Teaching, Discipline, Role of Teacher and Relevance of his educational thoughts in today's India.

Key Words: Education, Philosophy, Religion, Educational thoughts, Man-Making

1.0 Introduction: Dr. Sarvepalli Radhakrishnan was a great Indian philosopher, a renowned diplomat and a teacher. He was the first Vice President of India and the second President of India. As a tribute to this great teacher his birthday 5th September is commemorated as Teachers Day through out the country. When his students requested him to allow them to celebrate his birthday, he asked them to celebrate the day as Teachers Day, honoring the contribution of the teachers towards the community. His respect for the teaching profession and his contribution towards the Indian education system is memorable across the country.

2.0 Objectives: The objective of the paper is to analyse the educational thoughts and ideas of Dr. Radhakrishnan and his basic conception of education and its process.

3.0 Methodology: The present paper is primarily based on secondary sources of data. The data were collected mainly from different Books, Journals, Articles and websites etc.

4.0 Discussion:

4.1 Meaning & Functions of Education: Dr. Radhakrishnan defines education as the instrument for social, economic and cultural change.For social and national integration, for increasing productively, education should be properly utilized. The importance of education is not only in knowledge and skill, but it is to help us to live with others.Dr. Radhakrishnan opined that only the right kind of education could solve many problems of the society and the country. Education has to give us a second birth, to help us realize what have already in us. The meaning of education is to emancipate the individual and we need the education of the wholeness- mental, physical, intellectual and spiritual. He thinks that education which does not inculcate spiritual feelings in students is not true. Without a spiritual bent of mind, the physical and intellectual development of a person remains stunted. This situation is detrimental to

the progress of mankind.

The concepts and functions of education according to Radhakrishnan are given below: Education- Training of Intellect, Heart and Spirit: Radhakrishnan desires, education tobe complete, must be humane, it must include not only the training of the intellect but the refinement of the heart and the disciplined spirit. No education can be regarded as complete if it neglects the heart and the spirit.

Humanism in Education: No nation in this world can hold its place of primacy in perpetuity. What counts is the moral contribution we make to human welfare. Let us, therefore, try and develop the qualities of charity in judgment and compassion for people who are suffering. If we adopt such an approach, the tensions of the world will dimish rapidly.

Education to Develop Scientific Spirit: Science is to be used for productive work. We should develop spirit for inquiry and dedication in the pursuit of science and scholarship.

Education and Human Values: There is a great deal of intellectual and technical skill but the ethical and spiritual vitality is at a low ebb. Man's completeness results from the pursuit of truth and its application to improve human life, the influence of what is beautiful in nature, man and art, and spiritual development and its embodiment in ethical principles.

Education and Spiritual Values: Education is the means by which we can tide up our minds, acquire information, as well as a sense of values. A true democracy is a community of citizens differing from one another but all bound to a common goal.

Education – A search for Integration : Education aims at making us into civilized human beings, conscious of our moral and social obligations. We must know the world in which we live, physical, organic and social. We must have an idea of the general plan of the universe and the search for truth. When we attain truth our burdens are lightened and our difficulties are diminished. It lights up our pathway with the radiance of joy. Education to Develop the Spirit of Enquiry: We should develop the spirit of enquiry and dedication to the pursuit of science and scholarship. We waste our years in college in trivialities and inanities. We need education in character.

Education to Train People for Freedom and Democracy: Education must be develop democratic attitude. Educational institutions should train people for freedom, unity, and not localism, for democracy, not for dictartorship. If we twist the minds of the young out of shape, they will be a danger to society. Our young should have a sense of purpose.

Education for scientific sprit: Science is to be used for productive work. We should develop spirit for inquiry and dedication in the pursuit of science and scholarship.

Education and Self-Discipline: We must train the young to the best possible all round living, individual and social. We must make them intelligent and good.

Functions of University: A university is not a mere information shop – it is a place where a man's intellect, well and emotions are disciplined. A university man should be unattached without being unconcerned, unambitious without being indolent, without being sentimental. warm-hearted. Universities are expected to prepare young men and women with not only information, knowledge & skill but also with the spirit of dedication and detachment. Universities are not mere places of learning, they are homes of culture. Man making is the task that has been assigned to the universities in our country today.

Education of Women: Women are human-beings and have as much right to full development as men have. In regard, to opportunities for intellectual and spiritual development, we should not emphasize the sex of women even as we do no emphasize sex of men. In all human beings, irrespective of their sex, the same drama of the flesh and the spirit, of finitude and transcendence takes place.

4.2 Aims of Education:

Development of Personality: A satisfactory system of education aims at a balanced growth of the individual and insists on knowledge and wisdom. Education should develop in the minds of the students a love of sustained thinking, adherence to truth and the power of resistance to popular sentiments and mob passion. The guiding motto of an education system should be the development of personality and faith, formation of character, cultivation of social, moral and spiritual values. In Radhakrishnan's opinion, the aim of all education is man-making.

Development of Character: According to Radhakrishnan, Character development is an important aim of education. To him character of a man is the

aggregate of the tendencies of his mind or the sum-total of the impressions created by his action and speech. Real character of a man can be judged from his common actions and not from his great performance. Radhakrishnan said, character is destiny and integrity of character is necessary in every walk of life. Education will be incomplete if it does not initiate in the child the values of love, truth, goodness and beauty. He felt that character building is key to all education.

Preservation, Enrichment and Transmission of Culture: Radhakrishnan defines culture as the transformation of one's being to produce sweetness of temper, sanity of mind and strength of spirit. Radhakrishnan attached great importance to cultural aspect of education. Man has created his culture at a great cost of time and labour. A country enriched in culture is advanced in many respects. Education has to play a key role to preserve, enrich, transmit and modify the culture of a country. Education makes the culture fruitful.

Development of Spiritual Values: Radhakrishnan has given a right place to education for developing spiritual values among the people. Radhakrishnan has attached great importance to spiritual education. Without a spiritual bent of mind, the physical and intellectual development of a person remains stunted. This situation is detrimental to the progress of mankind. Radhakrishnan said, human development should not be confused with the acquisition of mechanical skills or intellectual information. Education should develop human attitude and manly spirit through the refinement of heart and development of good habits.

Development of Vocational Efficiency: Radhakrishnan emphasized education for the development of vocation efficiency. This aim of education is to enable the child to attain certain skills in order to become economically self-sufficient. In order to enable him to become self-reliant, education should aim at imparting vocational courses. He viewed that by increasing his own income through involvement in national farms and factories an individual can increase the wealth of the nation.

National Integration: National Integration is an important aim of education. It is also one of the basic needs of India. Religious education, mass education programmes like social services, community living, and study of social services were emphasized for the development of nationalism

4.3 The Nature of Curriculum: Radhakrishnan has defined his concept of curriculum in his University Education Commission Report published in 1949. He wants that a student should study a number of subjects such as philosophy, literature, science, ethics, politics, theology, geography, history, agriculture, natural science, economics, human science and civics. In the curriculum for women, Radhakrishnan wants to include some subjects which may be particularly useful for their specific duties in life. They should also be given education in home science, cooking, fine arts, ethics and religion. Thus Radhakrishnan wants that curriculum must be related to one's life.Radhakrishnan also suggested Religious and Spiritual education, Vocational courses, Women education and mass education in curriculum.

4.4 Methods of Teaching: Radhakrishnan attaches great importance to observation, experiments and the relationship of nature and society in the method of teaching. He is of the view that teaching of moral values should be through real and living examples. He wants that the student should come close to society and nature in order to understand the same. In learning industrial subjects he recommends the use of imitation method. He thinks that man through regular practice in the Yoga and Meditation may be helped in reaching his goal. He also accepts the importance of internal knowledge for experience in different subjects.

4.5 Discipline: Radhakrishnan believed that lack of self-control results in a deterioration of standards of scholarship, character and integrity. He believed in discipline that only would lead to self-realization. He stresses that the students should be trained to approach life's problems with fortitude, self-control and a sense of balance which the new conditions demand. There should be adequate provision for games and other corporate activities.Yoga and spiritual activities are not possible without discipline.

4.6 The Role of Teacher: Emphasizing the important of teacher, Radhakrishnan said thatTeacher is the corner stone of the arch of education. Really, without quality and effective teacher the educational institution, curriculum, teaching aids, Educational planning etc. are meaningless. Dr Radhakrishnan views on an ideal teacher are contrary to many of the common teaching

practices today. He encouraged the students to question and criticize their teachers. According to Radhakrishnan, a true teacher always helps us to think for ourselves in the new situations which arise. They try to widen our knowledge and help us to see clearly.

5. Relevance of Radhakrishnan's Educational Ideasin 21st Century:

If we look into the present educational scenario of our country, we get lots of murky depiction of it. Dr. Radhakrishnan's contribution to education has been exclusive and exceptional. He has made a solid and splendid contribution to the modern India and world.

1. The educational thoughts of Dr. Radhakrishnan throw immense values in modern times. Dr. Radhakrishnan opined that only the right kind of education could solve many problems of the society and the country.

2. The report of the University Education Commission (1948-49) under Radhakrishnan's Chairmanship was, perhaps, his greatest contribution to education in free India. It covered a wide range of subjects, like falling academic standards, status and salaries of teachers, de-linking of jobs from degrees, religious education, medium of instruction, reservation of seats for the backward, among other things. Though the report was unanimous, not all its recommendations were accepted or implemented. The only major and immediate result of the recommendations, was the establishment of the U.G.C., with substantial benefits to the autonomy and development of Indian Universities.

3. Dr. Sarvapalli Radhakrishnan strongly advocated for free and compulsory education for all the children of the country irrespective of caste, creed, gender and socio-economic status. All Committees and Commissions in India have accepted this educational ideal in the country.

4. Radhakrishnan supported the idea of equal rights and opportunity for both men and women in the field of education. Radhakrishnan advocated for inclusive education with special emphasis on changing the fates of women and the deprived sections of society through education. India being a developing country has made progress in many areas like agriculture, industry, transport, sciences and technology including the technology for space travel. To continue this progress, India needs educated citizens, the basic requirement of which is surely Universal literacy or Universalization of Education.

5. Radhakrishnan's thought of Self-development, Man making, Self- expression respectively are the three important educational attempts for individual and national development.

6.Modern age is the age of science and technology. Students are very much interested to use it in various spheres of life. As a result the human qualities day by day discouraged. Without development of human qualities in children, education is meaningless. Radhakrishnan was of the opinion that, science helps us to build up our outer life, but another discipline is necessary to strengthen and refine the living spirit. Though we have made enormous progress in knowledge and scientific inventions, we are not above the level of past generations in ethical and spiritual life.

7. Radhakrishnan emphasized spiritual education in India. Education in India should aim at fostering spiritual values, faith in God, good manners, honesty and fellow-feeling. This has great relevance for modern times particularly in this age of science and technology.

8.Radhakrishnan laid emphasis on the development of vocational efficiency in the students. He suggested for introduction of agriculture as a subject in rural schools, opening of agriculture colleges and Rural Universities in the rural areas. Like Gandhi, he opined for vocational education along with general education. The present education system is unable to develop new enterprises and employment for the youth. In this context, Radhakrishnan's thought on vocational education is quite relevant and useful.

9. According to Radhakrishnan national integration is an important aim of education. It is also one of the basic needs of India. Religious education, mass education programmes like social services, community living, and study of social services were emphasized for the development of nationalism. But at present education has a little impact on adult mind to tolerate and pay regards to other faiths and beliefs. In this connection, views of Radhakrishnan are very much relevant.

10. Radhakrishnan considered International Understanding as an important objective of education. He advocated for the creation of new world order, growth of world community and world citizenship. He emphasized education as a means for creating International understanding and mutual cohesion among the people

across the border. It is essential to fight against various problems like terrorism, environmental pollution, poverty, unemployment and diseases from the world. He viewed that culture is international and science is cosmopolitan. He also viewed that education as an important means of creating a sense of fellow-feeling, cohesion and attitude of sharing among the students. In this regard, his recommendations are quite praiseworthy and noteworthy.

11. In present education scenario in India, we see teacher-student relationship gradually diminishing. In this backdrop, Radhakrishnan educational thought on teacher and student relationship is very significant. He believed that education is possible through close and cordial teacher-taught relationship. Without which no education is possible.

12. Methods of teaching like Observation, Experiments, Discussion, Learning by meditation, Text book method, Seminar, Tutorial system, The relationship of nature and society, Real and Living examples, Imitation method, Yoga and Meditation, Internal knowledge for experience in different subjects, Intuition, Question-answer and Discussion, closer to society and nature and creative methods etc. are quite useful for Indian educational institutions.

13. Radhakrishnan's ideas on democracy and politics are very much significant. He wanted to establish a classless society where there is no exploitation, ill-feeling, corruption, inequality etc. i.e., Ramrajya. He wishes for world democracy. It is exclusively depend upon education.

Conclusion: From the above discussion, it is accomplished that Radhakrishnan's educational thoughts – concepts and functions of education, aims, curriculum, methods of teaching, discipline and the role of teacher are very relevant in the 21st century. Though Radhakrishanan is no more in the world but the volumes of work done and left with us will inspire the human civilization forever. There are very few men who have so deeply influenced the mortals in every nook and corner of the world and have so universally loved and respected as well. Every Indian will salute this great personality forever. Dr. Sarvepalli Radhakrishnan is a pioneer of the wholesome and boom of the educational philosophy and he flagged it on the heart of educational sphere. A multi dimensional creative genius, he made his original contributions in all diverse fields of life. Once upon a time a reporter asked to Radhakrishnan regarding the happiest moment of his life. He said the happiest moment of my life is when I am in the classroom among the students. It was very difficult to present in any language on account of the towering stature of personality of Dr. Radhakrishnan and successive stages of his creative contribution in philosophical, educational, social, diplomatic and political field. He is also a great exponent of Hindu Philosophy. He was not obvious certain inherent religious and social evils and he was fully vocal for their education. He himself left the office of the President and in his valedictory address said, 'Our slogan should be not power at any price, but service at any cost'.

References:

1. Aggarwal, J.C. (2010). Theory and Principles of Education, 13th Revised Edition, New Delhi: Vikas Publishing House Pvt. Ltd.

2.Bhatia, S. & Sarin, A. (2004). Philosophical Foundation of Education in India, Jaipur: ABD Publishers.

3.Choudhury, S. (2006). Educational Philosophy of Dr. Sarvepalli Radhakrishnan, New Delhi: Deep and Deep Publications Pvt. Ltd.

4.Chinchu, K.R. (2013) Dr. S. Radhakrishnan,s Educational Ideas, Heart Beats, Retrieved on 05 February 2015, from http://chinchukr21.blogspot.in/2013/06/dr-s-radhakrishnans-educational-ideas.html

4.First University Education Commission Report, 1948-49, Ministry of Education Government of India

5.Sarvepalli, Radhakrishnan (1956). Occasional Speeches and Writings, Volume 3. New Delhi: Publications Division, Ministry of Information & Broadcasting, Govt. of India. p. 142.

6.Sarvepalli, Radhakrishnan (1957). Occasional Speeches and Writings, Second Series, New Delhi: Publications Division, Ministry of Information & Broadcasting, Govt. of India. p.88.

7.Sarvepalli, Radhakrishnan(1963) Occasional Speeches and Writings, Third Series, New Delhi: Publications Division, Ministry of Information & Broadcasting, Govt. of India. p.87.

8.Sarvepalli, Radhakrishnan (2009). The Pursuit of Truth, New Delhi: Hind Pocket Books.

****

Cyber Security strategy In India : An Overview

-Dr.Prashant Prabhakarrao Saraf
Associate Professor, Military Science,
Shri Shivaji College, Parbhani
Mo.9423444663

Abstract :Today, railways, airlines, banks, stock markets, hospitals, besides all the services related to normal life are connected with computer networks. Many of these are completely dependent on the Internet. Now the work and administration of military services have also been connected with computer networks. Cyberspace is an area where the government of any country can be terrorized without any bloodshed. Terrorists through cyberspace can extract vital information from computers and use it to make threats and disrupt services. Cyber terrorists can sabotage networks using new communication technology tools and methods. Along with hacking, viruses can infect computers on a large scale, disrupting online services. This has become very important in view of the increasing interconnectedness of various economic sectors and the increase in internet usage with 5G. The present research paper aims to focus on the same matter.

Introduction :

As fast as we are moving towards the digital world, the number of cyber crimes is also increasing at the same rate. Cyber experts have expressed the possibility of a major cyber attack in India as well. Cyber security refers to the protection of the entire cyber space, including critical information infrastructure, from any form of attack, damage, misuse and espionage.Cyber attacks have been occurring with increasing frequency in India. For example, in the year 2016, the leak of personal information of 3.2 million debit cards of bank account holders and their data theft was a major cyber attack in India. There has been an increase in the use of malware etc. by a group from China called 'Red Echo' to target India's power sector on a large scale. A report published in the New York Times outlined the possibility that a power outage in Mumbai in the year 2020 could be the result of an attack by a Chinese state-sponsored group.

Cyber security strategy has now become an integral part of national security. Its sphere of influence is no less than military influence and its importance covers all aspects of a country's governance, economy and welfare. In today's time internet is used in almost every field. The concept of cyber crimes has also evolved with the development of the Internet and its associated benefits.

This article discusses cyber crime, need for updating cyber security framework, challenges of cyber security approach and efforts made by the government.

What is Cyber Crime :

Cyber crimes are committed in different forms. A few years back, there was a lack of awareness about crimes that took place through the internet. In the cases of cyber crimes, India is also not behind those countries, where the rate of incidence of cyber crimes is also increasing day by day. Its impact on Indian society is visible.

In cybercrime cases, a cyber criminal may use a device to obtain personal information of the user, confidential business information, government information or to disable a device. Selling or buying the above information online is also a cyber crime.

There is no doubt that this is a criminal activity, carried out by the use of computers and Internet. Cybercrime, also known as 'electronic crime', is a crime in which a computer, network device or network, as an object or device, is used to commit any crime. Where such crimes are carried out through them (computers, network devices or networks), while targeting them, crimes are also committed against them.

Why is the need for updating the cyber security framework :

An integral part of National security

The shift in military doctrine in favor of the need to enhance cyber command reflects the importance of

shifting cyber security strategy.The need for an efficient cyber security infrastructure as an integral part of national security was first emphasized by the Kargil Review Committee, 1999.

For common people

Photos, videos and other personal information shared by one person on social networking sites may be improperly used by another person, which can lead to serious, even life-threatening, events.

The growing importance of the digital economy

India ranks third in the world after the US and China in terms of the largest number of Internet users, but India's cyber security system is still in its infancy.Presently, the digital economy comprises 14-15 percent of the size of India's total economy and the target is to reach 20 percent by the year 2024.

Increase in digitization after the pandemic

Critical infrastructure is being rapidly digitized since the coronavirus pandemic, including financial services, banks, electricity, manufacturing, nuclear power plants, etc.

The challenge of data protection

In the 21st century, data is as important as money. Due to the huge population of India, many international companies are trying to reach here.

Therefore it is necessary to address the issues related to data sovereignty, data localization and internet governance, etc.

Impact of Cyber Security

The scope of impact of cyber security is not limited to the military sector but it covers all aspects of the governance, economy and welfare of the country. In such a situation, in view of the important role of cyber capability in the military, governance and economic sphere, there is a need to adopt a comprehensive cyber security doctrine in India soon.

Challenges of Cyber Security Approach :

Lack of Human Resources

There is a dearth of skilled people in Indian Armed Forces, Central Police Organizations, Law Enforcement Agencies to understand the technical aspects related to various software and hardware required for this sector.Apart from this, cutting-edge technology like Artificial Intelligence (AI), Blockchain Technology (BCT), Machine Learning (Machine Learning -ML), Data Analytics, Cloud Computing and Internet of Things (IoT) there is a dearth of savvy professionals.According to many experts, at least three million cyber security professionals are needed at present.

Lack of active cyber Defence

India, like the European Union, lacks proactive cyber defenses like the General Data Protection Regulation-GDPR or the US's Clarifying Lawful Overseas Use of Data-CLOUD Act .

Lack of uniformity in the working of regulatory organizations

USA, Singapore and UK have only one organization working in the field of cyber space whereas in India there are many central bodies which deal with cyber issues. Therefore, each body has a different reporting structure, leading to a lack of uniformity in the working of regulatory organizations.

Dependence on other countries for cyber security tools

India lacks indigenization in hardware as well as software cyber security tools.This makes India's cyberspace vulnerable to cyber attacks induced by state agents and non-state agents.

External challenges

Social media is becoming a powerful tool of 'information' dissemination, leading to the rapid spread of misleading news, which continue to threaten cyber security.

Government's efforts towards cyber security :

The 'Information Technology Act, 2000' was passed in India, the provisions of which along with the provisions of the Indian Penal Code are sufficient to deal with the impact of cyber attacks inclusively.

Sections 43, 43A, 66, 66B, 66C, 66D, 66E, 66F, 67, 67A, 67B, 70, 72, 72A and 74 of the Information Technology Act 2000 deal with hacking and cyber crimes.

The 'National Cyber Security Policy, 2013' was released

by the government, under which the 'National Critical Information Infrastructure Protection Center (NCIIPC)' was formed for the protection of sensitive information.

Under this, there is a provision of imprisonment from 2 years to life and also punishment or fine.

In order to develop human resources in the field of information security at various levels, the government has started the project 'Information Security Education and Awareness: ISEA'.

The Indian Computer Emergency Response Team (CERT-IN) was made the nodal agency to analyze, anticipate and warn cyber security threats.

A 'Cyber Swachhata Kendra' has also been set up to deal with cyber crimes in a coordinated and effective manner in the country. It is a part of the Digital India campaign of the Government of India under the Ministry of Electronics and Information Technology (MeitY).

India is coordinating with countries like US, UK and China for sharing of information and adopting best practices in terms of cyber security.

A National Cyber Security Strategy 2020 is being prepared by the Office of the National Cyber Security Coordinator at the National Security Council Secretariat.

The National Security Council (NSC) is a three-tier organization that deals with political, economic, energy and security issues of strategic concern.

Way ahead:

Raising awareness

In order to take concrete measures against digital warfare and hackers targeting business organizations and government processes, India will have to take joint measures with other countries and increase awareness in the context that any individual or organization not immune to digital warfare alone.

Strengthening the existing cyber security infrastructure

National Cyber Coordination Center (NCCC), National Critical Information Infrastructure Protection Center (NCIIPC) and Computer Emergency Response Team (CERT) are the cyber security agencies at present. It is needed further to strengthen them.

Inclusion of cyber security in academic courses

Central universities, private universities, industry associations, industrial training institutes and other educational institutions should include cyber security courses, in the Syllabus.

Integrated Approach

Given the growing influence of mobile phones and telecommunications, the National Cyber Security Policy and the National Telecom Policy will have to effectively collaborate for the formulation of a comprehensive policy by the year 2030.

Conclusion:

A clear public policy on cyber security and cyber warfare will play an important role in boosting the confidence of citizens, as well as helping to strengthen confidence in allies and send a strong and clear message to potential adversaries that will help build a more stable and will provide a strong foundation for establishing a secure cyber ecosystem. In view of the social diversity of India, it has to be ensured that it is necessary to improve the awareness and laws regarding cyber security.

References :

1. Talat Fatima, Cyber Law in India, wolters Kluwer Publication, New Delhi, Feb 2017.

2. Shukla Sandip Kumar , Agrawal Mahindra, Cyber Security in India: Education, Research and Training, Spinger Publication, Kanpur, March 2020.

3.https://cis-india.org/internet-governance/cyber security

4.https://www.academicapress.com

5.The financial Express, why India needs updated Cyber security strategy, Article 24/06/2020

6.https://www.financialexpress.com

****

An Ecocritical Study Of Manipuri Myths In Linthoi Chanu's Wari

-Anannya Nath
Master of Arts,
Department of English,
Tezpur University

ABSTRACT

At any given time, folklores of a region hold didactic values about the people. stories consist within them, knowledges while also signifying relationships. Myths can be usually considered as a story or as developments from it, with allegoric and parabolic elements. There is no doubt that in the context of our relocation of attitude towards ecology, folklore plays and would play an important role. Folklore in the form of tales, sayings, songs, ballads, dances and other music and poetry can be highly illuminative of man and Nature relationship. In this paper, I try to examine myth as ecologically significant in the short story collection, Wari (2019), by Linthoi Chanu. Inextricably, the question of postecolonial elements would be marked out so as to reinforce the ensuing tussle between Nature and civilisation.

KEYWORDS: Myth, Ecology, Culture, Manipur, Folklore, Conservation.

At any given time, folklores of a region hold didactic values about the people. The word, 'folklore' literally means the 'lore of the people', thus, signifying their inherent wisdom and knowledge (Singh, 01). The wisdom that is assigned to folklore transcends common understanding. Many a times, these are dismissed as primitive, irrational and fantastical. Margaret Kovach, in her theoretical book, Indigenous Methodologies: Characteristics, Conversations and Contexts, speak of two forms of stories within indigenous societies. There are those which hold mythical value and extend itself to moral codes and those which are passed down as experiences from generation to generation. Both forms teach of consequences of one's choices as well as the lack thereof (Kovach, 95). Thus, it is right to assume that stories consist within them, knowledges while also signifying relationships.

Out of these two, myths can be usually considered as a story or as developments from it, with allegoric and parabolic elements. When such myth enters literature, they become dominant artistic motifs. The ecological motif associated to myth holds much significance. This parallel between Nature and culture is replete in Indian tribal societies as well, rather, more pronounced than the rest. There is no doubt that in the context of our relocation of attitude towards ecology, folklore plays and would play an important role. Folklore in the form of tales, sayings, songs, ballads, dances and other music and poetry can be highly illuminative of man and Nature relationship.

The aim of this paper is to examine myth as ecologically significant in the short story collection, Wari (2019), by Linthoi Chanu. These stories belong from Manipur and are, in fact full of didactic relevance in ecological impetus. Inextricably, the question of postecolonial elements would be marked out so as to reinforce the ensuing tussle between Nature and civilisation. It is derived as a portmanteau from the combination of words 'postcolonial' and 'ecological' and concerns to address issues which are derived from the current contexts of marginalization of Nature, waste colonialism, environmental racism, discriminatory intellectual property rights, and the absence of Nature as a category in the theorizing of postcolonialism (Nayar, 71).

The primary texts taken for this purpose are the

short stories in Wari, namely, "Near Immortal", "Hags of the Mountain", and "The Scarlet Haophi". The secondary sources for study include previous research done on myth and Nature, ecology and postecolonial frameworks of studying civilisation by researchers and academicians alike.

Linthoi Chanu's Wari literally means 'story'. True to the title, the author's collection consists of eight short stories set in a promising Manipuri backdrop. The 'nativizing' of certain key words create nuanced understanding of a culture radically different from the mainstream. In her author's note, Chanu makes explicit the reasons for writing the collection. She calls it her "desire to revisit the memories of our innocent fears and curiosity from childhood, to repaint them with words".

The first story, "Near Immortal" is based on the premise of witchcraft, one of the most feared superstitions of all time. Accused of practising Khoidouwa, a type of Manipuri black magic "believed to be practiced by witches who want to become immortal or to postpone their death by sucking the soul out of other healthy people", an old woman is shunned within the community. As deaths do follow after her ceremonial acts of voodoo that includes keeping her fingers crossed while casting her spells, she is easily earmarked as the evil witch. Even though it is an "invisible master" she responds to, there is little pity towards her involuntary acts of submission.

In the story, Tharo, the old woman who has outlived her succeeding generation, is treated with disdain. Her great-grandkids offer her little comfort. She is fed like a stray and removed to the edges of life. In her turn, Tharo detests the young. She associates youth to suffering rather than to bounty and often, it is the old men she preys on. She thinks:

"Youth was a mirage… it was a magic shop, always promising but was it worth the sacrifices she had made and the pain she had inflicted herself with?" (Chanu, 05)

While this barely justifies her actions, the very fact that she detests youth is evident enough of the shackles imposed on her, even when she was young. She wishes to die, but her 'master', the naval spirit does not let her to. The myth embedded in this story speaks of an unassailable fact: anything against the natural flow of things is cursed. Tharo's near immortal life does not give her freedom, rather, it distances her from everyone. This is suggestive that nobody should outlive their course on earth because it corrupts the balance in Nature. The greed to live life beyond one's assigned lot by extracting healthy souls go against the natural harmony. Such a Mephistophelian bargain does little to serve Tharo. Even though she is alive for long, she is not really living a fulfilling life.

If the myth of Khoidouwa deals with the issue of natural equilibrium, the short story 'Hags of the Mountain' has a conservational undertone. It is based on the legend of 'loudraobi', "a popular mythological creature from the legends of Manipur". They prey on men who come to hunt and make them captive husbands and are generally portrayed as "heinous hags with claws and thorny tongues used for impairing their prisoner's feet to avoid escape". The story has in its centre, a western academic, Dr Roderick Ferdinand who accidently breaks away from his group and digresses into the forest they are visiting. There, he has an uncanny encounter with a man with a gun who shows him the way back and quickly leaves. Chanu, in order to keep the element of mystery alive, chooses to keep the suspense on until the very last moment. Even then, not everything is explained clearly. Who the man is, largely remains a mystery. Besides, no one apart from Dr Roderick meets him.

The association of these hags to entrapment has largely to do with the question of ecological conser-

vation. In fact, the hags are the Slow Loris- with their toxic bites, they are an endangered species of the state. In order to bring awareness towards this, they are shown as vile. By infusing fear in the name of legend, it is assumed that people would be discouraged to venture into the wild and kill these already depleting species. Making the forest dwelling mythological figures feminine also accentuates how Nature and femininity are seen to be one common entity. Both remain on the fringes of anonymity and are required to be civilised by culture. This duality of myth corresponds to the postecolonial theory which "seeks a deconstruction of power structures that circumscribe Nature and women by their colonial modes of operation" (Nayar, 71).

In her story, "The Scarlet Haophi", the issue of conservation is entwined with a surreptitious dominance of the fantastic elements of the other world. Chanu draws explicitly from the Meitei legend of 'Laina Chenba' in the story which underlines the belief of spiriting away of children and people by wild spirits or guardian deities. In Manipur, natural spaces such as trees, land and water are considered to be the abode of many ancient gods and people in ancient times feared 'disturbing' them. With the coming of civilisation, every space came to be occupied and with it, dire consequences too.

The story of "The Scarlet Haophi" revolves around the child protagonist, Ebehaibi and her parents. As they settle down in an area that used to be a sacred grove in ancient times, a bizarre incident follows. A woman arrives at their doorstep, selling haophis, one of which Ebehaibi buys. The night of the purchase, as the child sleeps with the haophi- the scarlet scarf, she vanishes into a wonderland for two days. Towards the end, she encounters her long dead family ancestors and is reminded of the sacredness of the place. Her rational, unbending father ultimately realises the sanctity of the place, and in honour of the spirit he has so unknowingly disturbed, ekes out a pond.

Kapila Vatsyayan, in his article, "Ecology and Indian Myth" states that such veneration emerges not from any "animistic primitive fear", rather, "it is wisdom contained in the language of myth and symbol" (Vatsyayan, 61). However, it does underpin the basic philosophy of "non-pollution, discipline, restraint, awareness of inter-dependability and inter-relatedness" (Vatsyayan, 180). The myths act as essential symbols not merely because they refer to tangible entities with intangible allusions, but because both "draw energy and vitality from the interconnection by which each one remains inseparable from" (Mathur, 26).

The three stories examined here exemplify one basic idea: it is futile to even think of overpowering Nature. While living alongside it constitutes the ecological quotient of total integration, there is a subtle undercurrent of fear aided reverence towards things larger than human understanding. Such reverence helps to stop exploiting the elements, even at the dawn of civilisation. Decolonisation, therefore, is not limited to culture alone. It transcends to enter those parts of civilisation which are marginal and therefore vulnerable. Postecolonial theory therefore seeks to establish an arrangement between the different forms of living and non-living which is grounded on the "principle of life inherent in all living beings and sustained by harmony in Nature" (Mathur, 27).

Nature has her own ways of renewal and replenishment when left to herself. She follows a code of ethics which ensures the same. Therefore, every act of extracting from Nature has to be undertaken with an awareness and responsibility to "return what is taken from it" (Mathur, 27).

As a part of this association, the interconnectedness between femininity and Nature is also noteworthy. Postecolonial theory, much like ecological criticism examines the parallel and tries to augment the epistemology of these connections. In the stories under study, the mystical forces are out and out feminine. Tharo is an old woman, the hags look for husbands and the guardian deity of the sacred grove, Haoreima Ema Shampubi is a woman. Seen as givers of life and respite, the two entities are primordially considered sacrificial. On the other hand, Nature's havoc is also linked to the chaotic feminine principle of shakti, that require the order of masculinity. This understanding undercut and justifies the demands expected of them which goes beyond logical reasoning. Feminist critics have remained largely critical of this association, firstly because it puts woman at a disadvantage and secondly because it justifies injustice. However, if Nature can reclaim her power, so can the divine feminine. The awareness of harnessing "restraint, concern and control of impulses directed towards indiscriminate plundering of natural resources for one's own benefit" (Mathur, 27) also suggests practicing the same towards women.

It is indeed true that the Indian thought is replete with motifs that "govern the collective psyche of the people and value system by which people live" (Mathur, 27). The significance of the myths lies in cooperation among all the ecological elements. In fact, such nurturing is only possible through participation and experience because to understand the language of such myths, one has to adapt to clairvoyance. Tribal societies, more than anyone else have lived in proximity with Nature since time immemorial. Thus, they can be seen as the custodians of this mythical language, and Linthoi Chanu's short stories elucidate the same quite meticulously. Furthermore, the accumulated traditions, in the form of folklore could throw significant light towards re-understanding and re-evaluating ecology, particularly in the age of technology. This has become a more relevant subject in South and South-East Asia (Saikia, 03).

WORKS CITED

Chanu, Linthoi. Wari. 2019.

Da Silva, Jill. "Ecocriticism and myth: The case of Erysichthon." Interdisciplinary Studies in Literature and Environment (2008): 103-116.

Kovach, Margaret. "Indigenous methodologies: characteristics, conversations and contexts." (2009): 201.

Mathur, Nita. "Myth, Image and Ecology." Indian Anthropologist 31.1 (2001): 19-28.

Nayar, Pramod K. "Postecolonial Theory: A New Ontopology and Radical Politics." Journal of Contemporary Thought (1999): 71-83.

Saikia, Arupjyoti. "Folklore and environment." Indian Folklife 28 (2008).

Singh, Huirem Behari. "A study of Manipuri Meitei folklore."

Vatsyayan, Kapila. "Ecology and Indian myth." India International Centre Quarterly 19.1/2 (1992): 156-180.

****

Insurgent Movement In Assam And Its Outside Support
(With Special Reference The Neighbouring Countries)

-Dr.Biman Chandra Das
Assistant Professor,
Dept of Political Science,
SPP College,Namti,India

Abstract: The outside support is found to have played a decisive role on boosting the insurgency movement in Assam. The foreign involvement had been seen after the end of Cold War. In Asia, Africa, Europe and Middle East states have supported many insurgencies. It is noteworthy that the outside support is essential to the success of any insurgent movement. States can offer insurgents a wide range of assistance .The external provision such as, logistic, arms stockpiling and operational planning is essential without which they cannot fulfill their strategic goals and achieve a level of tactical effectiveness. The nature of outside support is not only political and moral, but also in the form of money, equipment, training and other tangible assistance. The objective of securing outside support is to secure safe-haven where bases could be established and set up. This paper deals with the involvement of foreign countries in the rise of insurgency problems in Assam. In this paper, an attempt has been made to discuss the various types of support received by the insurgents groups and motive of the the neighbouring countries.

Introduction:

Since independence the North Eastern region of India has been facing the problem of insurgency. The North Eastern states of India are geographically and culturally distant from the rest of India. They are home to a number of ethnically and linguistically distinct groups and tribes. This is a region which could never be fully colonized by the British. At the time of Indian independence there was an attempt to institutionalize some local autonomy for the region's people by creating autonomous district councils under the Sixth Schedule of the Constitution. Since that time numerous ethnic groups from this region have called for greater autonomy or independence.The state of Assam has been seriously affected by armed insurgency involving various insurgent groups over the last four decades. They have denounced existing political community and sought to withdraw from it. Instead, they want to constitute a new autonomous political community of their own. For this purpose, the insurgent groups of Assam have been fighting against India since 1980s. The roots of this problem can be traced back to the colonial period. Colonial officials actively encouraged immigration into Assam. Against this background, the Assam Students' Movement started in 1979 raising the demand of detection and deportation of illegal immigrants from the neighbouring countries. The movement provided the means through which a new radical group claimed an independent Assam.

It is noteworthy that the insurgent groups of Assam maintained a link with foreign countries as external support is essential to the success of any insurgent movement. In this regards, some neighbouring countries played a crucial role in the development of insurgency movements in Assam.The external provision such as, logistic, arms stockpiling and operational planning is essential without which they cannot fulfill their strategic goals and achieve a

level of tactical effectiveness. In this context, specific emphasis shall be laid on exploring the involvement of some neighbouring countries in supporting the insurgent group like United Liberation Front of Assam (ULFA).

The present study was undertaken with the following objectives

Objectives

1. To study the possible connection between some neighbouring countries and the insurgent movement in Assam.
2. To examine the motivation of the outside supporter.
3. To identify the various types of support

Methodology: The data for the study was drawn from both primary and secondary sources. Primary data were collected fromthe Annual Report of Ministry of External Affairs and Home Ministry, questions asked in Lok Sabha to the Ministry of External Affairs and Home Ministry, press statement by political leaders, interview of surrendered United Liberation Front of Assam members, police personal and content analysis. The Secondary data shall be collected from various sources, such as books, articles, journals, news papers, unpublished work and various web sites.

Discussion-Insurgent groups have always maintained link with external powers. For instance, the Kashmir insurgent groups are continuously receiving help from the neighbouring countries. The Nepalese Maoist insurgents are using India as a sanctuary, so that they can utilize it as a base for political, logistic, and financial support for the movement.

Political support- Some neighbouring governments provided political support to the insurgent of North- East through ISI. The ISI connection was officially confirmed on 22 January, 1994 by the Home Minister, S.B. Chavan. The Government has received reports that the Pak ISI has been helping the North East terrorists to purchase and transportation of arms consignments from abroad to the North Eastern Region. The reports also indicate that the ISI was providing assistance to the North Eastern militants in terms of money, and motivated the misguided youths for training across the border. Tripura Chief minister Manik Sarkarin the Chief Ministers meeting in New Delhi on July 7, 1999 stated that the porous border between India and Bangladesh is used by the insurgent groups as their corridor for movement to and from their camps in the neighbouring country. On the other hand, Anup Chetia states that, the smaller neighbouring countries are apprehensive of India's supremacy both in terms of geography and military power. Therefore, they wanted to help insurgents so that India bleeds internally.

Material support: Some countries supporting insurgency in the Northeast by freely allowing the smuggling of arms from its territory. Apart from training camps and tacit support to insurgent groups, arms trafficking is one of the main issues responsible for worsening bilateral relations and affecting the entire region stretching from Southeast Asia to China and Sri Lanka. For instance, in April 2004 a huge cash of arms was seized by Bangladesh Police in Chittagong Urea Fertilizer Limited (CUFL) jetty.

Findings

1. The study reveals that the insurgent groups from India's North East have been availing unofficial support from some neighbouring countries.
2. Such support is in fluctuation depending on the change of government.

3. It is a fact that no India's neighbouring country wish to be directly in war against India due to its strength of armed forces and geographical magnitude. At the same time they do not want to see India playing the role of big brother in this region. They wanted to bleed India internally so that, they would try to wage proxy war against India by providing assistance to the insurgent groups of India.

Conclusion-Thus, the findings of the study reflect that there is no formal agenda in some neighbouring countries to support or favour insurgency of other nations.

References-

Bhattacharyya, Rjeev. (2013), Lens and the Guerrilla (Insurgency in India's Northeast, Manas Publication: New Delhi, p.190

Chakma, Bhumitra. (2012), Bangladesh-India Relations: Sheikh Hasina's India positive Policy Approach, RSIS Working Paper, Singapore ,p.9. https://www.files.ethz.ch/isn/155611/WP252.

De, Barun. and Samander, R. (ed.) (1997), State Development and Political Culture: Bangladesh and India,New Delhi: pp. 82-83.

Insurgency in India's Northeast Cross-border Links and Strategic Alliances Wasbir Hussain. www satp. in.

Bangladesh in a bind over Indian rebels, Asia Times, October 05, 2001.

Interview with ULFA Pro-Talks Chairman Arabinda Rajkhowa, Lakuwa, 1 Nvember 2018.

Interview with ULFA Pro-Talks Secretary Anup Chetia in Jerai Gaon Assam, May 24, 2015.

Kamboj, Anil, Bangladesh Factor Affecting Insurgency in North-East 06 May, 2005 http://www.ipcs.org/comm_select.php?articleNo=1733

Kumar, Anand. (2012), Return from the Precipice Bangladesh's Fight Against Terrorism, New Delhi, Pentagon Security International,p.12. https://idsa.in/system/files/book/book_BangFightTerrorism.pdf

Kumer, Praveen. (2003) Bangladesh as India's Internal Security Concern, IPCS Article No.1255, December

Mehrotra, Mansi. (2009), Bangladesh: A Sanctuary for Terrorists Operating Against India. Claws Journal. http://www.claws.in/images/publication 1399529456/202009. (accessed on 22/12/2018)

Pant, Harsh V. (2007) India and Bangladesh: Will the Twain Ever Meet? Asian Survey, Vol. 47, No.2, March/April, P.232.

Pant, Harsh V. (2011), India's relations with Bangladesh, in David Scott (ed.) Handbook of India's International Relations, Routledge: London, p.89.

News Paper-Bangla rules out Chetias's extradition, The Assam Tribune, April 03, 2004. P.1.

Dholabhai, Nishit ."Ulfa peaceniks spill beans: Pro-talks group confirms outfit's links with ISI & Bangla,' The Telegraph, 7 February 2009.

ISI trained Ulfa.' The daily star, 11 August, 2011.

India Identifies 99 NE Ultra camps in Bangla, The Assam Tribune, November 04, 2002,

****

विंध्य आजतक
vindhyaaajtak.com
हर खबर पर बारीक नजर

विंध्य आजतक.com
WhatsApp group

https://chat.whatsapp.com/GnYdEo0lkXdlcyDHplTPD1

https://www.facebook.com/vindhyaaajtak/

https://t.me/VindhyaAajTak

राष्ट्रगान

जन गण मन अधिनायक जय हे भारत भाग्य विधाता!
पंजाब सिन्ध गुजरात मराठा द्राविड़ उत्कल बंग
विन्ध्य हिमाचल यमुना गंगा उच्छल जलधि तरंग
तव शुभ नामे जागे, तव शुभ आशिष मागे,
गाहे तव जय गाथा।
जन गण मंगलदायक जय हे भारत भाग्य विधाता!
जय हे, जय हे, जय हे, जय जय जय जय हे।